अथ

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णव

अर्थात्

सर्वदेवप्रतिष्ठामयूख

(सरस्वती-भाषाटीका और चित्रों सहित)

महामहोपाध्याय श्रीप्रभुदत्तशास्त्री गौड़, महामहोपाध्याय श्री विद्याधरजी गौड़
पुत्र-श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य मीमांसाशास्त्री, कर्मकांडशास्त्री
पौरोहित्य रत्न द्वारा सम्पादित।

सन् १९८२
फोन ६४६६२

ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, राजादरवाजा वाराणसी।

मूल्य ९६)

मुद्रक—स्वतन्त्रभारत प्रेस, वाराणसी।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

अर्थात्

सर्वदेवप्रतिष्ठामयूख

(सरस्वती--भाषाटीका चित्रों सहित)

रचयिता: —

पं० दौलतराम गौड

उत्तरप्रदेशीयसरकार द्वारा सम्मानित, प्राध्यापक--श्रीसंन्यासी-संस्कृत-कालेज, वाराणसी ।

●

प्रकाशकः—

ठाकुर प्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर

राजादरवाजा, वाराणसी ।
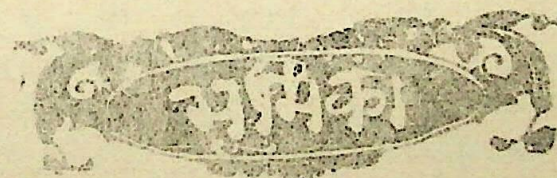
(१) सब देवताओं की प्रतिष्ठा वैशाख, ज्येष्ठ और फाल्गुन महीने में होती है। चैत्रमास में विकल्प से करने का विधान है। विष्णु को छोड़कर अन्य सब देवताओं की प्रतिष्ठा माघ महीने में होती है। (२) मातृ, भैरव, वाराह, नरसिंह तथा त्रिविक्रम की प्रतिष्ठा दक्षिणायन में होती है। (३) देवी की प्रतिष्ठा भी दक्षिणायन में होती है यह भी मत है। माघ तथा आश्विन महिने में देवी की प्रतिष्ठा सब कार्यों को करने वाली होती है। (४) विष्णु की प्रतिष्ठा—चैत्र, आश्विन, सावन, माघ, वैशाख, फाल्गुन, आषाढ़, ज्येष्ठ और पौष महिने में होती है। (५) श्रावण तथा भाद्रपद में लिंग की स्थापना उत्तम होती है। (६) दक्षिणायन में उग्र देवताओं की प्रतिष्ठा होती है। (७) नूतन स्थापित लिंग का स्पर्श स्त्री और शूद्र न करें। (८) शूद्र, अनुपनीत, तथा पतित लिंगादि का स्पर्श न करें। (९) जिस प्रतिमा का मुख पूरब हो ऐसी स्थिर प्रतिमा का पूजन उत्तरमुख होकर करे। (१०) चल प्रतिमा का अर्चन पूर्वमुख होकर करे। (११) सात अंगुल से बारह अंगुल तक की प्रतिमा का पूजन घर में करे। (१२) पट्ट और यन्त्रकी प्रतिमा का स्नान प्रति दिन नहीं होता है। मलिन होने पर या पर्व के दिन स्नान होता है। (१३) पत्थर, लकड़ी, लोहे, लेप्य, लेख्य, बालु, मनोमयी तथा मणि की ये आठ प्रकार की प्रतिमा श्रीमद्भागवत में कही है। देवीभागवत के मत से लोहे और महुवे की लकड़ी की प्रतिमा कही है। (१४) घर में दो लिंग, दो शालिग्राम, द्वारका के दो चक्र, दो सूर्य, तीन गणेश, तीन शक्ति तथा दो शंख की पूजा न करे। किसी के मत से दो चक्र को

पूजा होती है। (१५) मत्स्य, कूर्म आदि दश अवतारों का घर में अर्चन न करे। (१६) अग्नि से जली तथा खण्डित प्रतिमा का घर में अर्चन न करे। (१७) शालिग्राम की शिला टूटी फूटी पूज्य है। उसमें सम शालिग्राम की पूजा होती है। सम में दो की नहीं होती है। विषम की अर्चा नहीं होती है। उसमें भी विषम में एक की पूजा होती है। (१८) कृष्ण और शालग्राम की पूजा स्पर्शकर शूद्र, सधवा या विधवा स्त्री और अनुपनीत न करे। तद्वत् शंकर की भी न करे। (१९) खण्डित मूर्तियों की प्रतिष्ठा मलमास तथा शुक्रास्तादि में कर सकता है। (२०) शालिग्राम शिला की प्रतिष्ठा नहीं होती है। (२१) मद्य, चाण्डाल, आग द्वारा जली, ब्राह्मण रक्त से दूषित, मुर्दा, पापी से स्पर्श हुई खण्डित-टूटने पर, स्थान भ्रष्ट, पूजा न करने पर, घोड़ा, गदहा, रजस्वला, पतित और चोर से स्पर्श होने पर फिर से मूर्ति की प्रतिष्ठा करे। (२२) प्रतिमा, शिवलिंग, प्रासादकलश आदि के भंग होने पर स्वामीका मरण होता है। अतः शान्ति करे। (२) द्वादशलिङ्ग को छोड़कर शिवका नैवेद्य-पत्र, पुष्प, फल तथा जल अग्राह्य है। शिव और सूर्य का नैवेद्य भक्षण से चन्द्रायण करे। अभ्यास में द्विगुणित करे। जानकर अभ्यास में सान्तपन करे। (२४) पञ्चायतन चर लिंगों में और प्रतिमाओं में अन्न आदि का स्वयं भी ग्रहण करने में दोष नहीं है। (२५) कलियुग में शिव और विष्णु की पूजा अत्यन्त उत्तम मानी गयी है। (२६) श्रीमद्भागवत-पुराण में कहा है कि—विसर्जन तथा आवाहन स्थिर मूर्ति में नहीं होता है। अस्थिर मूर्तियों में विसर्जन तथा आवाहन आदि करे या न करे। स्थण्डिल में तो आवाहन तथा विसर्जन दोनों ही होते हैं। (२७) संन्यासी प्रणव से ही शंकर की पूजा करे। (२८) स्त्री 'शिवाय नमः' इस मन्त्र से ही शंकर की पूजा करे। (२९) शूद्र द्वारा स्थापित लिंग और विष्णुको प्रणामादि न करे। करने पर महान् दोष होता है। तद्वत् पाखण्डादि द्वारा पूजित लिंगादि के अर्चन में नरकादि होता है। (३०) शिवार्चन सदा उत्तराभिमुख करे। किसी का मत है कि—प्रातःकाल पूर्वमुख, सन्ध्याकाल पश्चिमाभिमुख रात्रि में उत्तराभिमुख शंकरका पूजन करे। (३१) शिवपूजा में प्रसिद्ध दिशा ग्रहण करे। (३२) शिवस्थापन में झल्लक, सूर्य मन्दिर में शंख, दुर्गास्थान में वंशवाद्य और मधुरी न बजावे। (३३) अनादिसिद्ध प्रतिष्ठित लिंग आदि के भंग हो जानेपर महाभिषेक स्नान करे, यह त्रिविक्रम मत है। (३४) पालल्यादिषु भिन्नेषु पतितेषु च। मूषकाद्यैश्च दष्टेषु मूलमन्त्रा-

युतं जपेत् ॥ (३५) चौरैरपहृतं बिम्बं पुनः प्राप्तं यदि द्विज । पुनः प्रतिष्ठां कुर्वीत नयनोन्मीलनं विना ।। (३६) चोरभूतैर्द्विजैः स्पृष्टे अधमस्नपनं चरेत् । उत्तमं स्नपनं कुर्यात् प्रवेशे गर्भमन्दिरे ।। (३७) शृगालबिडालाद्यैः प्रविष्टे गर्भवेश्मनि । अधमस्नपनेनैव शान्तिहोमं समाचरेत् । काककुक्कुटगृध्राद्यैः स्पृष्टे बिम्बे प्रमादतः । पूर्ववत्स्नपनं कृत्वा शान्तिहोमं समाचरेत् ।। खद्योताद्यैश्च संस्पृष्टे अधमं स्नपनं चरेत् । न भृङ्गमक्षिकाद्यैस्तु स्पृष्टे दोषो भवेद् ध्रुवम् ।। तथा पिपीलिकाद्यैश्च न तत्प्रायश्चित्तविशेषतः । रेतोरुधिरविण्मूत्रापेयमांसादिवस्तुभिः ।। देवबिम्बे तु संस्पृष्टे कुर्यात् स्नपनमुत्तमम् । (३८) न तिथिर्न च नक्षत्रं न कालस्य प्रतीक्षणम् । प्रायश्चित्तेषु कर्तव्यं सद्य एव च निष्कृतिः ।। (३९) चतुर्भुजः स्थितो देव आसीनोऽष्टभुजो भवेत् । शयानेस्त्वेच्छया योज्या भुजाः सर्वत्र वेच्छया ॥ (४०) यवसर्षपमुद्गेषु ब्रह्मा रुद्रो हरिः क्रमात् । वायुः पूज्यस्तु निष्पावे स्कन्दश्चैव प्रियङ्गुके । माषेष्विन्द्रः कुलत्थेऽग्निः शालितण्डुले यमस्तिले । वरुणो राजमाषे श्रीराढक्यां श्यामगः शशी ।। (४१) देवालये सभास्थाने तटाके गृह एव वा । उत्पन्ने रक्तवल्मीके कुर्यात्तस्य प्रतिक्रियाम् ।। धर्मस्थाने तु वल्मीके जाते मरणमादिशेत् । इन्द्रस्थाने श्रियं ब्रूयादाग्नेये च तथाऽश्रियम् ।। याम्ये बन्धुविनाशः स्याद्राक्षसे गृहिणीं हरेत् । वारुणे बन्धुलाभः स्याद्वायव्ये दूर आगतिः । सौम्ये सुखं तथा रौद्रे दुर्वाक्यं मरणं भवेत् ।। (४२) वाङ्मयं प्रणवं सर्वं तस्मात् प्रणवमभ्यसेत् । प्रणवेन विहीनं यत्तन्मन्त्रं प्राणहीनकम् ।। सर्वमन्त्रेषु मन्त्राणां प्राणः प्रणव उच्यते । प्रतिष्ठाका विषय—महत्वपूर्ण—ईश्वरसंहिता, पौष्करसंहिता, जयाख्यसंहिता, विष्णुसंहितामें है । अग्निसंहिता में रत्नस्थापन के मन्त्र कहे हैं । प्रतिष्ठाकल्पलता, प्रतिष्ठाकौमुदी, प्रतिष्ठाकौस्तुभ, प्रतिष्ठाचिन्तामणि, प्रतिष्ठातत्त्व, प्रतिष्ठातन्त्र, प्रतिष्ठादर्पण, प्रतिष्ठादीधिति, प्रतिष्ठानिर्णय, प्रतिष्ठापद्धति, प्रतिष्ठामयूख, प्रतिष्ठारत्न, प्रतिष्ठाविवेक, प्रतिष्ठासंग्रह, प्रतिष्ठासमुच्चय, प्रतिष्ठासार, प्रतिष्ठोद्योत, प्रतिष्ठेन्दु, प्रतिष्ठासरणी, प्रतिष्ठात्रैविक्रमी, प्रतिष्ठारत्नमाला, पूर्तकमलाकर, प्रतिष्ठाप्रभु, मत्स्यपुराण, निर्णयसिन्धु, प्रतिष्ठाभास्कर, धर्म सिन्धु आदि से भी सहायता ले सकते हैं ।

श्रीदौलतराम गौड

❋ प्रतिष्ठाविषयानुक्रमणिका ❋

प्र० ६

प्र० ७

विषय	पृष्ठ

विषय	पृष्ठ

प्र०

१

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

[श्रीगणेश और अम्बिका का पूजन]

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य
श्री अशोक कुमार गौड़

प्र०

१

प्र०

२

गणेश पूजन अत्यावश्यक

महापुराण तथा निबन्धमतों से सर्वप्रथम श्रीगणेशजी का ही पूजन होना नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है।

आजकल के वैदिकगण श्राद्धारम्भ में, प्रायश्चित्तारम्भ में तथा उपाकर्म आदि में श्रीगणेश जी का अर्चन नहीं करते इसमें क्या मूल है वे ही जानते होंगे। बहुत देशों में माता अम्बिका पूजन श्रीगणेश जी के साथ होता है।

दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

पत्नी के साथ यजमान शुभमुहूर्त में शुभासन में बैठ कर केशव, नारायण और माधव इन तीनों नामों से अलग २ आचमन करे। तदनन्तर 'पवित्रेस्थः' इस मन्त्रसे सुवर्ण कुश आदि की पवित्री धारण करे और 'अपवित्रः

पत्न्या सह यजमानः शुभमुहूर्ते कृतनित्यक्रियः रङ्गवल्लिकादिविभूषिते शुभासने प्राङ्मुख उत्तरमुखो वा उपविश्य स्वपत्नीं स्वदक्षिणतः चोपवेश्य रक्षादीपं प्रज्वाल्य पुरोहितादिद्वारा ग्रन्थिबन्धनं तिलकं च कारयित्वा-आचमनं कुर्यात्—ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय नमः। इति मन्त्रेण त्रिराचम्य ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः॥ तस्य ते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम्॥ इति मन्त्रेण कुशादिनिर्मितपवित्रीं धृत्वा ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा। यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ इति पूजनसामग्रीमात्मनं च संप्रोक्ष्य अष्टदले श्रीगणेशं गौरीं च संस्थाप्य स्वशान्तिपाठं पठेत्। तद्यथा ॐ आनो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो

पवित्रो वा' इसमन्त्रसे अपने ऊपर तथा यज्ञीय सामग्री पर पुष्प आदि से जल छिड़के। फिर अष्टदलपर श्री गणेश की माता अम्बिका और गणेश का स्थापन करे फिर स्वशाखीय 'आ नो भद्रा' इत्यादि मन्त्रों का शान्तिकामना के लिये

दब्धासोऽअपरीतासऽउद्भिदः ॥ देवानोयथासदमिद्वृधेऽअसन्नप्रायुवोरक्षितारोदिवेदिवे ॥१॥
देवानांभद्रासुमतिर्ऋजूयतान्देवानाᳪरातिरभिनोनिवर्त्तताम् ॥ देवानाᳪसख्यमुपसेदिमावयन्दे-
वान्ऽ आयुः प्रतिरन्तुजीवसे ॥ २ ॥ तान्पूर्व्वयानिविदाहूमहे वयम्भगम्मित्रमदितिन्दक्ष-
मस्रिधम् ॥ अर्य्यमणं वरुणᳪसोमंमश्विनासरस्वतीनःसुभगामयस्करत् ॥ ३ ॥ तन्नोवातो
मयोभुवातुभेषजन्तन्मातापृथिवीतत्पिताद्यौः ॥ तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना
शृणुतन्धिष्ण्यायुवम् ॥ ४ ॥ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेवयम् ॥ पूषानो
यथा वेदसा मसद्वृधेरक्षितापायुरदब्धःस्वस्तये ॥ ५ ॥ स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनःपूषा
विश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥ ६ ॥ पृषदश्वा मरुतः
पृश्निमातरःशुभंयावानोविदथेषुजग्मयः ॥ अग्निजिह्वामनवःसूरचक्षसोविश्वेनो देवाऽ अवसाग-
मन्निह ॥ ७ ॥ भद्रङ्कर्णेभिःशृणुयामदेवाभद्रम्पश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः ॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳪसस्तनूभि-
र्व्यशेमहिदेवहितंयदायुः ॥ ८ ॥ शतमिन्नुशरदोऽअन्तिदेवायत्रानश्चक्राजरसन्तनूनाम् ॥ पुत्रा-
सोयत्रपितरोभवन्तिमानोमद्ध्यारीरिषतायुर्गन्तोः ॥९॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता-

सपितासपुत्रः ॥ विश्वेदेवाऽअदितिः पञ्चजनाऽअदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ १० ॥ द्यौः शान्ति-
रन्तरिक्षꣳ शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः ॥ वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः
शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामाशान्तिरेधि ॥ ११ ॥ यतोयतः समीहसे ततो
नोऽअभयङ्कुरु ॥ शन्नः कुरुप्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः ॥ १२ ॥ गणानान्त्वागणपतिꣳहवामहेप्रिया-
णान्त्वाप्रियपतिꣳहवामहेनिधीनान्त्वानिधिपतिꣳहवामहेव्वसोमम ॥ आहमजानिगर्भधमात्व-
मजासिगर्भधम् ॥ १३ ॥ अम्बेऽअम्बिकेम्बालिके नमानयतिकश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिका-
ङ्काम्पीलवासिनीम् ॥ १४ ॥ इति शान्तिपाठं पठेत् । ततः—ॐ लक्ष्मीनाराणाभ्यां नमः । ॐ उमामहे-
श्वराभ्यां नमः । ॐ वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । ॐ शचीपुरन्दराभ्यां नमः । ॐ मातृपितृचरण-
कमलेभ्यो नमः । ॐ इष्टदेवताभ्यो नमः । ॐ कुलदेवताभ्यो नमः । ॐ ग्रामदेवताभ्यो नमः । ॐ
वास्तुदेवताभ्यो नमः । ॐ स्थानदेवताभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो नमः । ॐ सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो
नमः । ॐ सिद्धिबुद्धिसहिताय श्रीमन्महागणधिपतये नमः । इति प्रणम्य ततः-ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च

पाठ करे । फिर—लक्ष्मी-नारायण, उमा-महेश्वर, वाणी-हिरण्यगर्भ, इन्द्राणी-इन्द्र, माता-पिता, इष्टदेव, कुलदेवता,

ग्रामदेव, वास्तुदेव, स्थान देवता, आदि सब देवोंको, सब ब्राह्मणों को और सिद्धि-बुद्धि सहित गणेश जी को प्रणाम

प्र० ६

कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये । अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु नास्ति तेषाममङ्गलम् । येषां हृदिस्थो भगवान्मङ्गलायतनं हरिः ॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव । विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेऽङ्घ्रियुगं स्मरामि ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः । तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ अनन्यांश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते । तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

करे। फिर 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इन मन्त्रों से श्रीगणेश जी को प्रणाम करे। 'सर्वमंगल-मांगल्ये' इस मन्त्र से

म० ६

गौरी (अम्बिका) को नमस्कार करे। 'सर्वदा सर्वकार्येषु' इन मन्त्रों से भगवान् कृष्ण का ध्यान करे। 'सर्वेष्वारंभ-

स्मृते सकलकल्याणभाजनं यत्र जायते। पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥ सर्वेष्वा-
रम्भकार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः। देवा दिशन्तु न सिद्धिं ब्रह्मेशानजनार्दनाः ॥ विश्वेशं माधवं
ढुण्ढिं दण्डपाणिं च भैरवम्। वन्दे काशीं गुहां गङ्गां भवानीं मणिकर्णिकाम् ॥ इति नमस्कृत्य
सङ्कल्पं कुर्यात्—ॐ विष्णुः ३ ॐ नमः परमात्मने श्रीपुराणपुरुषोत्तमाय ॐ तत्सत्
श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्त्तमानस्य श्रीब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे द्वितीययामे
तृतीयमुहूर्ते श्रीश्वेतवाराहनाम्नि प्रथमकल्पे स्वायंभुवस्वारोचिसोत्तमतामसरैवतचाक्षुषेति षण्मनू-
नामतिक्रम्यमाणे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे
निखिलजनपावने आर्यावर्तैकदेशे अविमुक्तवाराणसीक्षेत्रे महाश्मशाने आनन्दवने गौरीमुखे
त्रिकण्टकविराजिते भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे विक्रमशके बौद्धावतारे अमुकनाम्नि संवत्सरे अमुकायने

कार्येषु' इससे सिद्धियों को देने वाले ब्रह्मा, शिव और जनार्दन का ध्यान करे। विश्वनाथ, वेणीमाधव, ढुण्ढिराज,
दण्डपाणी, कालभैरव, काशी, गुहा (गुफा देवी) गंगा भागीरथी, भवानी (भवानी नाम की देवी या अन्नपूर्णा)

अमुककृतौ महामाङ्गल्यप्रदमासोत्तमेमासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरणे अमुकराशिस्थितेचन्द्रे अमुकराशिस्थितेसूर्ये अमुकराशिस्थितेदेवगुरौ शेषेषुग्रहेषु यथायथाराशिस्थानस्थितेषु सत्सु एवं ग्रहगुणविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकगोत्रः शर्माअासु मूर्तिषु लिङ्गे च देवकलासान्निध्यार्थं मम सभार्यस्य सपरिवारस्य सकलपापपक्षय-पूर्वकं दशापरान् दशापरान् आत्मना सहैकविंशतिपुरुषान् पितृतो मातृतश्चोद्धर्त्तु कामनया क्षेमस्थैर्यदीर्घायुरारोग्यैश्वर्यस्थिरलक्ष्मीपुत्रपौत्रधनधान्यगजाश्वरथगोमहिष्यादिसम्पदभिवृद्धिपूर्वकं निरतिशयसानन्दब्रह्मपदप्राप्तिश्रीसर्वफलाक्षय्यसुखकामः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तिकामश्च धर्मार्थकाममोक्षचतुर्विधपुरुषार्थसिद्धद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सनवग्रहमखां स्वकृतशैलप्रासाद प्रतिष्ठासहितां परिवारवाहनादियुतामेकरात्राधिवासनपक्षेण विष्ण्वादिमूर्तीनां लिङ्गस्य च अचल प्रतिष्ठां पञ्चाहे चतुरहे तृतीयाहे षडहे श्वः सद्यो वा करिष्ये। तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनं मातृकापूजनं सप्तघृतमातृकापूजनमायुष्यमन्त्रजपं साङ्कल्पिकनान्दीश्राद्धमाचार्यादिवरणं च

और मणिकर्णिका (जहाँ शंकर के कान का कुण्डल गिरा) को नमस्कार करे। फिर प्रधान संकल्प करे। उसमें

जिस वस्तु की कामना हो उसकी योजना करे। तदनन्तर दूसरा संकल्प करे। उसमें—पुण्याह—वाचन, मातृकापूजन, वसोर्धारापूजन, आयुष्यमन्त्रजप, अभ्युदय कामना के लिए नान्दीश्राद्ध और आचार्य, ब्रह्मा, ऋत्विक् आदि का वरण करे। तीसरे संकल्प में यज्ञ में कोई विघ्न न हो इसके लिए आदि में गणेश एवं अम्बिका का पूजन करे।

करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिद्धये गणेशाम्बिकयोः पूजनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य हस्ते अक्षतान् गृहीत्वा आवाहयेत्—ॐ हे हे रम्ब त्वमेह्येहि अम्बिका त्र्यम्बकात्मज। सिद्धिबुद्धिपते त्र्यक्षलक्षलाभकयोः पितः॥ नागास्य नागाहार त्वां गणराजं चतुर्भुजम्। भूषितं स्वायुधैर्दिव्यैः पाशाङ्कुशपरश्वधैः॥ आवाहयामि पूजार्थं रक्षार्थं च मम क्रतोः। इहागत्य गृहाण त्वं पूजां यागञ्च रक्ष मे॥ ॐ गणानान्त्वागणपतिꣳ हवामहेप्रियाणान्त्वाप्रियपतिꣳ हवामहेनिधीनान्त्वानिधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम॥ आहमजानिगर्भधमात्वमजासिगर्ब्भधम्॥ सिद्धिबुद्धिसहिताय महागणाधिपतये नमः महागणाधिपतिमावाहयामि स्थापयामि। ॐ हेमाद्रितनयां

यों संकल्पकर दहिने हाथमें अक्षतों को ग्रहणकर आवाहन करे। हे रंब, नागास्यं नागहारम् और आवाहयामि पूजनार्थम्, इन पौराणिक श्लोकों से तथा 'गणानां त्वां' इस वैदिकमन्त्रसे सिद्धि-बुद्धि सहित श्रीगणेशजी का आवाहन एवं स्थापना करे।

'हिमाद्रि तनयां देवीम्' इस पौराणिक श्लोक से तथा 'अम्बे ऽअम्बिके' इस वैदिक मन्त्र से गणेशजी की माता गौरी का आवाहन और स्थापन करे। 'अस्यै प्राणाः' इस पौराणिक श्लोक से एवं 'मनो जूतिः' इस वैदिक मन्त्रसे श्रीगणेशजी तथा गौरी जी की मूर्तियों में प्राणों का सञ्चार (स्थापन) करे।

प्र०

देवीं वरदां भैरवप्रियाम्। लम्बोदरस्य जननीं गौरीमावाहयाम्यहम्। ॐ अम्बे ऽअम्बिके ऽम्बालिके नमानयति कश्चन ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकाङ्काम्पीलवासिनीम् ॥ गौर्यै नमः गौरीमावाहयामि स्थापयामि। अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥ ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमन्तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमन्दधातु ॥ विश्वेदेवास ऽइह मादयन्तामो३म्प्रतिष्ठ ॥ गणेशाम्बिके सुप्रतिष्ठिते वरदे भवताम्। विचित्ररत्न-खचितं दिव्यास्तरणसंयुतम्। स्वर्णसिंहासनं चारु गृहीष्व सुरपूजित ॥ ॐ पुरुष ऽएवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ आसनार्थे अक्षतान् समर्पयामि। सर्वतीर्थसमुद्भूतं पाद्यं गन्धादिभिर्युतम्। विघ्नराज गृहाणेदं भगवन्भक्तवत्सल ॥ ॐ एतावानस्य

१०

'विचित्ररत्नखचितम्' और 'पुरुष ऽएव' इन से गणेश और अम्बिका को आसन या अक्षत समर्पण करे। 'सर्वतीर्थसमुद्भूतम्' तथा 'एतावानस्य' इन से पाद्य जल समर्पण करे।

'गणाध्यक्ष नमस्ते' और 'त्रिपादूर्ध्व' इससे अर्घ्यजल समर्पण करे। 'विनायक नमस्ते' तथा 'ततो विराट्' इन से अर्घ्याङ्ग आचमनीय जल दे।

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पूरुषः ॥ पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ पादयोः पाद्यं समर्पयामि। गणाध्यक्ष नमस्तेऽस्तु गृहाण करुणाकर। अर्घ्यं च फलसंयुक्तं गन्धमाल्याक्षतैर्युतम् ॥ ॐ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः ॥ ततो विष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥ हस्तयोरर्घ्यं सम०। विनायक नमस्तुभ्यं त्रिदशैरभिवन्दित। गङ्गोदकेन देवेश कुरुष्वाचमनं प्रभो। ॐ ततो विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ॥ स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ अर्घ्याङ्गमाचमनीयं सम०। मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्। तदिदं कल्पितं देव स्नानार्थं प्रति गृह्यताम् ॥ ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ॥ पशूँस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्या ग्राम्याश्च ये ॥ स्नानीयं जलं स०। स्नानान्ते पुनराचमनीयं स०।

'मन्दाकिन्यास्तु' और 'तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः' इनसे स्नानकेलिए जल दे। स्नानके बाद फिर आचमनकेलिये जल दे या पाद्य, अर्घ्य, आचमनीय, स्नान तथा फिर आचमन करनेकेलिये जल इनको बिना मन्त्रों के दे। ऐसी कर्मकाण्डियों की प्रथा है।

फिर—'पयः पृथिव्याम्' 'दधिक्राव्णो' 'घृतं मिमिक्षे' मधुवाता' और 'अपाꣳरसम्' इन मन्त्रोंसे क्रमसे दूध,

(अथवा गणेशाम्बिकाभ्यां नमः—एतानि पाद्यार्घ्याचमनीयस्नानीयपुनराचमनीयानि समर्पयामि)

प्र० ॐ पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षे पयोधाः ॥ पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ प्र०

पय-स्नानं समर्प० । स्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं सम० । एवं सर्वत्र । ॐ दधिक्राव्णोऽअकारिषञ्जि-

१२ ष्णोरश्वस्यव्वाजिनः ॥ सुरभिनोमुखाकरत्प्रणऽआयूꣳषितारिषत् ॥ दधिस्नानं समर्पयामि ।

ॐ घृतम्मिमिक्षेघृतमस्ययोनिर्घृ तेश्रितोघृतम्वस्यधाम ॥ अनुष्ष्वधमावह मादयस्वस्वाहाकृतम्वृष-

भव्वक्षिहव्यम् ॥ घृतस्नानं समर्प० । ॐ मधुव्वाताऽऋतायतेमधुक्षरन्तिसिन्धवः ॥ माध्वीर्नः

सन्त्वोषधीः ॥ ॐ मधुनक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवꣳ रजः ॥ मधुद्यौरस्तुनः पिता ॥ ॐ मधु-

मान्नोव्वनस्पतिर्म्मधुमाँ२ऽअस्तुसूर्य्यः ॥ माध्वीर्ग्गावोभवन्तुनः ॥ मधुस्नानं समर्पयामि ।

ॐ अपाꣳ रसमुद्वयसꣳ सूर्य्ये सन्तꣳ समाहितम् ॥ अपाꣳरसस्ययोरसस्तम्वोगृह्णाम्युत्तममुपया

१२ मगृहीतोसीन्द्रायत्वाजुष्टङ्गृह्णाम्येषतेयोनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतमम् ॥ शर्करास्नानं समर्प० । (पञ्चामृत

दधि, घृत, सहत और चीनी (शर्करा) द्वारा भगवान् को स्नान करावे । प्रत्येक वस्तुके स्नान के बाद शुद्धोदक जल

द्वारा स्नान करना अत्यावश्यक है। या 'पञ्चामृतम्' और 'पञ्च नद्यः' इनसे पाँचों (दूध, दहि, घृत, सहत और चीनी) वस्तुओं से एक साथ प्रमाण के द्वारा मिलाकर स्नान कराना कहा है। तदनन्तर 'कावेरी नर्मदा वेणी' तथा 'आपो हिष्ठा'

मयाऽऽनीतं पयो दधि घृतं मधु। शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः॥ सरस्वतीतुपञ्चधासोदेशेभवत्सरित्॥ पञ्चामृतस्नानं समर्प०) कावेरी नर्मदा वेणी तुङ्गभद्रा सरस्वती। गङ्गा च यमुना तोयं मया स्नानार्थमर्पितम्॥ ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन॥ महेरणायचक्षसे॥ शुद्धोदकस्नानं समर्प०। स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्प०। युवासुवासाः परिवीतऽ आगात्सऽ उश्रेयान्भवति जायमानः। तन्धीरासः कवयऽ उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः॥ ॐ सुजातोज्योतिषासह शर्म्मवरूथमासदत्स्वः॥ वासोऽअग्नेव्विश्वरूपं सं व्ययस्वव्विभावसो॥ अधोवस्त्रं समर्प०। वस्त्रान्ते आचमनीयं समर्प०। नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्। उपवीतं मया दत्तं

इन से शुद्धोदक जल से स्नान करा दे। स्नानान्त में आचमनीय जल समर्पण करे। 'युवा सुवासाः' 'सुजातो ज्योतिषा' इन से देवताओं के लिए पहनने का वस्त्र अर्पण करे वस्त्रान्त में आचमनीय जल दे।

प० १३ २ १३

'नवभिस्तन्तुभिः' और 'यज्ञोपवीतं परमम्' इनसे गणेशजी को ही यज्ञोपवीत समर्पण करे। 'शीतवातोष्णसन्त्राणम्' इस पौराणिक श्लोक से देवताओं को दुपट्टा समर्पण करे।

प्र० गृहाण परमेश्वर ॥ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्। आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः। यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि ॥ यज्ञोपवीतं समर्प०। शीतवातोष्णसन्त्राणं लज्जाया रक्षणं वरम्। देहालङ्करणं वस्त्रमतः शान्ति प्रयच्छ

१४ मे ॥ उपवस्त्रं समर्प०। श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्। विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ त्वाङ्गन्धर्व्वाऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः ॥ त्वामोषधेसोमोराजा विद्वान्न्यक्ष्माद्मुच्च्यत ॥ गन्धं समर्प०। अक्षताश्च सुरश्रेष्ठाः कुङ्कुमाक्ताः सुशोभिताः। मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥ ॐ अक्षन्नमीमदन्तह्यवप्रियाऽअधूषत ॥ अस्तोषतस्वभानवो विप्प्रानविष्ठयामतीयोजान्विन्द्रतेहरी ॥ अक्षतान् समर्प० ॥ माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो। मयाऽऽहृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ ओषधीःप्रतिमोदद्ध्वम्पुष्पवतीःप्रसू-

'श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यम्' तथा 'त्वाङ्गन्धर्वा' इनसे देवों को गन्ध (चन्दन) समर्पण करे। 'अक्षताश्च' और 'अक्षतन्नमीमदन्त' इससे चावलों को दे।

'माल्यादीनि सुगन्धीनि' तथा 'ओषधीः प्रति इनसे भगवान् को पुष्पमाला आदि समर्पण करे।
'दुर्वाङ्कुरान्' और काण्डात्काण्डात्, इनसे गणेशजी को मंगलकामनाके लिए सुन्दर दूर्वा अर्पण करे।

प्र०

वरीः ॥ अश्वाऽइवसजित्वरीर्व्वीरुधः पारयिष्ण्वः ॥ पुष्पमालां समर्प० । दूर्वाङ्कुरान्सुहरितानमृतान्मङ्गलप्रदान् । आनीतांस्तव पूजार्थं गृहाण गणनायक ॥ ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्तीपरुषःपरुषस्परि ॥ एवानोदूर्व्वेप्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ गणेशाय नमः दूर्वाङ्कुरान्समर्प० । नानापरिमलैर्द्रव्यैर्निर्मितं चूर्णमुत्तमम् । अबीरनामकं चूर्णं गन्धं चारु प्रगृह्यताम् ॥ ॐ अहिरिवभोगैःपर्य्येतिबाहुञ्ज्यायाहेतिम्परिबाधमानः ॥ हस्तघ्नोव्विश्वाव्वयुनानिव्विद्वान्पुमान्पुमांसम्परिपातुव्विश्वतः ॥ नानापरिमलद्रव्याणि समर्प० । सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यं सुखवर्द्धनम् । शुभदं कामदञ्चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ सिन्धोरिवप्राद्ध्वनेशूघनासोव्वातप्प्रमियः पतयन्तियह्वाः ॥ घृतस्यधाराऽअरुषोनव्वाजीकाष्ठाभिन्दन्नूर्म्मिभिःपिन्वमानः ॥ सिन्दूरं समर्प० । नैवेद्यं पुरतो निधाय-

१५

'नानापरिमलैर्द्रव्यैः' तथा 'अहिरिव भोगैः' इनसे देवोंको अनेक द्रव्यों से मिश्रित अबीरनामक चूर्ण समर्पण करे।
'सिन्दूरं शोभनम्' और 'सिन्धोरिव' इनसे अम्बिका को मुख्यरूप से सिन्दूर समर्पित करे। तदनन्तर—नैवेद्य

‘जो देयवस्तु पेड़ा, लड्डू आदि हों’ भगवान् के आगे रखकर—‘वनस्पतिरसोद्भूतः, तथा ‘धूरसि’ इन मन्त्रोंसे देवताओंकेलिए धूप अर्पण करे ।

वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः । आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ धूरसि धूर्व्व धूर्व्वन्तं धूर्व्व तं योऽस्मान्धूर्व्वति तन्धूर्व्व यं व्वयन्धूर्व्वामः ॥ देवानामसि व्वह्नितमं सस्नितमम्पप्रितमं जुष्टतमन्देवहूतमम् ॥ धूपं समर्पयामि । साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया । दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्य तिमिरापहम् ॥ भक्त्या दीपं प्रयच्छामि देवाय परमात्मने । त्राहि मां निरयाद् घोराद्दीपज्योतिर्नमोऽस्तु ते ॥ ॐ अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्यो ज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा ॥ अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्यो वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा ॥ ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा ॥ दीपं समर्पयामि । हस्तौ प्रक्षाल्य-नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु । ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परांगतिम् । शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि

‘साज्यं’ च वर्तिसंयुक्तम्’ और अग्निर्ज्योतिः’ इससे देवों को प्रज्वलित घृतयुक्त दीपक को समर्पित करे । तदनन्तर दोनों हाथों का प्रक्षालन करे ।

'नैवेद्यं गृह्यतां देव' 'शर्कराखण्डखाद्यानि' तथा 'अन्नपते' इनसे नानाप्रकारके नैवेद्योंको अर्पण करे। 'इदं फलं मया' और 'यत्पुरुषेण हविषा' इससे देवों को ऋतु जन्य फलों को दे। फिर नैवेद्यकेबाद आचमनीय

च। आहारो भक्ष्यभोज्यञ्च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥ ॐ अन्नपतेऽन्नस्यनोदेह्यनमीवस्य शुष्मिणः॥ प्रप्रदातारन्तारिषऽऊर्ज्जन्नोधेहिद्विपदेचतुष्पदे॥ नैवेद्यं निवेदयामि। नैवेद्यान्ते आचमनीयं समर्प०। मध्ये पानीयं समर्प०। उत्तरापोशनं समर्प०। इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव। तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि॥ ॐ यत्पुरुषेणहविषादेवायज्ञमतन्न्वत॥ व्वसन्तोस्यासीदाज्यङ्ग्रीष्मऽइध्मःशरद्धविः॥ ऋतुफलानि सम०। चन्दनं मलयोद्भूतं कस्तूर्यादिसमन्वितम्। करोद्वर्तनकं देव गृहाण परमेश्वर॥ ॐ अꣳशुनाते अꣳशुःपृच्यतांपरुषापरुः॥ गन्धस्ते सोममवतुमदायरसो ऽअच्युतः॥ करोद्वर्तनार्थे गन्धानुलेपनं समर्प०। पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम्। एलादिचूर्णसंयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्॥ ॐ याःफलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः॥ बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्चन्त्वꣳहसः॥ मुखशुद्ध्यर्थं

जल तथा मध्यमें पीने का पानी एवं उत्तरापोशन जल दे।

'चन्दनं मलयोद्भूतम्' और 'अꣳ० शुना ते' इससे करोद्वर्तनकेलिए गन्धानुलेपन चन्दन समर्पण करे।

'पूगीफलं महद्दिव्यम्' तथा 'याः फलिनीर्या' इससे मुखशुद्धि के लिए पान, सुपारी, लवंग, इलायची आदि [जो गली-गली न हो] देवों को अर्पण करे।

ताम्बूलपत्रं पूगीफलादिकं च समर्प०। हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥ ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्ग्रेभूतस्यजातः पतिरेकऽआसीत॥ सदाधारपृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्म्मैदेवायहविषाविधेम॥ कृतायाः पूजायाः साद्गुण्यार्थं दक्षिणाद्रव्यं समर्प०। कदलीगर्भसंभूतं कर्पूरं तु प्रदीपितम्। आरार्तिकमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव॥ ॐ आरात्रिपार्थिवᳬरजःपितुरप्प्रायिधामभिः॥ दिवःसदांᳬसि बृहतीव्वितिष्ठसऽआत्त्वेषंवर्त्ततेतमः॥ ॐ इदᳬहविःप्रजननम्मेऽअस्तुदशवीरᳬसर्व्वगणᳬस्वस्तये॥ आत्मसनिप्रजासनिपशुसनिलोकसन्न्यभयसनि॥ अग्निःप्रजाम्बहुलाम्मेकरोत्वन्नम्पयोरेतोऽअस्म्मासुधत्त॥ कर्पूरनीराजनं समर्प०। नानासुगन्धिपुष्पाणि ऋतुकालोद्भवानि च। पुष्पाञ्जलिर्मया दत्तो गृहाण परमेश्वर॥ ॐ यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्न्यासन्॥ तेहनाकं

'हिरण्यगर्भ गर्भस्थम्' और 'हिरण्यगर्भः सम्' इससे देवों की पूजा की सिद्धि के लिए दक्षिणा (रुपया गिन्नी आदि) समर्पण करे। 'कदलीगर्भसंभूतम्' 'आरात्रिपार्थिवम्' 'इदᳬ० हविः' इनसे कपूर द्वारा आरती करे।

'नानासुगन्धिपुष्पाणि' 'यज्ञेन यज्ञम्' 'राजाधिराजाय' और 'विश्वतश्चक्षुः' इन मन्त्रों से देवों को पुष्पाञ्जलि समर्पण करे ।

म॰ म्महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥ ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । स मे कामान्कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु ॥ कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः । ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमः सार्वायुष आन्तादापरार्धात्पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया ऽ एकराडिति तदप्येषश्लोको ऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुत्तस्या ऽवसन् गृहे । आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति ॥ ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ॥ सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव ऽएकः ॥ मन्त्रपुष्पाञ्जलिं समर्प॰ । पदे पदेभ्यः परिपूजकेभ्यः सद्यो ऽश्वमेधादिफलं ददाति । तां सर्वपापक्षयहेतुभूतां प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥ यानि कानि च पापानि ज्ञाताज्ञातकृतानि च । तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणपदे पदे ॥ ॐ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषङ्गिणः ॥ तेषां ꣳ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ॥ प्रदक्षिणां समर्प॰ । अथ

'पदे पदेभ्यः' तथा 'यानि कानि च पापानि' इन मन्त्रों से देवताओं के लिए 'प्रदक्षिणा' अर्पण करे ।

प्र०

तदनन्तर किसी भी सुन्दरतम पात्र में—जल, गन्ध, पुष्प, दूर्वा आदि को रख दोनों हाथों से ग्रहण कर क्रम से—'रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष' और द्वैमापुरः कृपा सिन्धो' इन दोनों पौराणिक श्लोकों से गणेशजी को अर्घ्यपात्र वाला अर्घ्य जल दे।

विशेषार्घ्यं दद्यात्—एकस्मिन् जलपात्रे चन्दनाक्षतपुष्पदूर्वाफलादिद्रव्यं कृत्वा हस्ताभ्यां गृहीत्वा श्लोकान् पठेत्—ॐ रक्ष रक्ष गणाध्यक्ष रक्ष त्रैलोक्यरक्षक। भक्तानामभयं कर्ता त्राता भव भवार्णवात्॥ द्वैमातुर कृपासिन्धो षाण्मातुराग्रज प्रभो। वरद त्वं वरं देहि वाञ्छितार्थ फलप्रद॥ अनेन सफलार्घ्येण सफलोऽस्तु सदा मम। विशेषार्घ्यं समर्प०। ॐ विघ्नेश्वराय वरदाय सुरप्रियाय लंबोदराय सकलाय जगद्धिताय। नागाननाय श्रुतियज्ञविभूषिताय गौरीसुताय गणनाथ नमो नमस्ते॥ भक्तार्तिनाशनपराय गणेश्वराय सर्वेश्वराय शुभदाय सुरेश्वराय। विद्याधराय विकटाय च वामनाय भक्तप्रसन्नवरदाय नमो नमो नमस्ते। नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः। नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः॥ विश्वरूपस्वरूपाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे। भक्तप्रियाय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक॥ लम्बोदर नमस्तुभ्यं सततं मोदकप्रिय। अविघ्नं

२०

फिर—'विघ्नेश्वराय वरदाय' 'भक्तार्तिनाशनपराय' 'नमस्ते 'ब्रह्मरूपाय' 'विश्वरूपस्वरूपाय' लंबोदर नमस्तुभ्यम्, 'त्वां विघ्नशत्रुदलनेति और 'गणेश पूजने कर्म' इन पौराणिकश्लोकों से प्रार्थना करे।

हे गणाध्यक्ष, रक्षा करो रक्षा करो। हे त्रैलोक्यरक्षक, रक्षा कीजिये। भक्तोंको अभय देनेवाले तथा आप भवार्णव रूपी दुःखोंसे रक्षा करनेवाले हैं, कृपासिन्धो, मातुर, द्वैमातुराग्रज, हे प्रभो, हे वरद, आप इच्छित कामनाके लिए वर दीजिये।

जो हम आपको अर्घ्य प्रदान कर रहे हैं उससे हमें सफल करो। फिर—विघ्नेश्वर, वरद, सुरप्रिय, लंबोदर, संपूर्ण संसारके हितैषी, नागके सदृश मुखवाले, वेदप्रतिपादित यज्ञादि कर्मों से विभूषित, गौरीपुत्र, गणनाथ, भक्तोंके दुःखों

कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ त्वां विघ्नशत्रुदलनेति च सुन्दरेति भक्तप्रियेति सुखदेति फलप्रदेति। विद्याप्रदेत्यघहरेति च ये स्तुवन्ति तेभ्यो गणेश वरदो भव नित्यमेव ॥ गणेशपूजने कर्म यन्न्यूनमधिकं कृतम्। तेन सर्वेण सर्वात्मा प्रसन्नोऽस्तु सदा मम। अनया पूजया गणेशाम्बिके प्रीयेतां न मम।

को नष्ट करनेवाले सर्वेश्वर शुभकर्मको देनेवाले सुरेश्वर सम्पूर्ण विद्याओंको धारण करनेवाले, विकटरूप, वामनरूप, भक्तोंपर प्रसन्न होनेवाले वरदरूप, ब्रह्मरूप, विष्णुरूप, रुद्ररूप, हस्तिरूप, विश्वरूपस्वरूप, ब्रह्मचारिरूप, लंबोदर, भक्त प्रिय, तथा मोदकप्रिय, विनायक, आपको नमस्कार है।

इति गणेशाम्बिकार्चनाम्।

मेरे द्वारा होने वाले सभी कार्यों में सर्वदा अविघ्न कीजिये। विघ्नोंको और शत्रुओंको नष्ट करनेवाले सुन्दर स्वरूप

भक्तप्रिय, सुखद, फलप्रद, विद्याप्रद तथा पापोंको नाश करनेवाले इसतरह आपको जो स्तुति करते हैं उनको हे वरद, आप नित्य हो वर देनेवाले हैं।

गणेशपूजनमें जो कर्म [कार्य] कम या अधिक प्रमाद वश हो गया हो उससे सर्वात्मा गणेशजी मुझपर सदा प्रसन्न हों। निर्विघ्नतासिध्यर्थ गणेशका विसर्जन समग्र कार्योंके अन्तमें ही करे। यही शिष्ट और बहुमत शास्त्रीय है—ऐसा प्रतीत होता है। सर्वत्र गणेश और अम्बिका का पूजन प्रचलित है, परन्तु पद्धतिकारों तथा निबन्ध मत से गणेश पूजनका ही महत्त्व है।

[श्लोकों द्वारा गणेशाम्बिकापूजनम्]

गणेश और अम्बिका का आवाहन करे—

आवाहयामि गणनाथमुमासुतं तं सिन्दूरशोणवपुषं गजवक्त्रशोभम्।
दुर्गां च तस्य जननीं हरिपृष्ठसंस्थां भक्त्याऽऽह्वयामि सुतहार्दगलत्कुचाढ्याम्॥

इससे आसन दे—

आवाहिताय च ददामि यथा स्वशक्त्या स्वर्णासनं मणिमयं कुसुमासनं वा।
एकेन दत्तमुकुलेन विराजमानी गृह्णातु भक्तिनिहितं सदयाम्बिका च॥

इससे पाद्य जल दे—

पादार्थमेतदुदकं सुरसिन्धुरेवागोदावरीशतद्रुसरयूयमुनादिकाभ्यः।
भक्त्याऽऽहृतं सुरभिवस्तुभिराढ्यमम्बु प्रीत्या गृहाण सदयं सविनायका मे॥

इससे अर्घ्यं जल दे—

अर्घ्यं गृहाण मम देव तथाऽम्ब मे प्रीतौ सदा प्रमुदितौ भवतां भवन्तौ ।
अष्टाङ्गमर्घ्यमुदितं मुनिभिः पुराणैर्भक्त्या मया तु विहितं जलमात्रमेव ॥

इससे पंचामृत दे—

स्नाहीश दुग्धदधिसाज्यमधुपपूर्णैर्गोदकैः समितसौरभवस्तुयुक्तैः ।
अम्बां च साम्ब यतस्त्वमुदीक्षितोभूः स्नानार्थमेव शिवया जगतः शिवाय ॥

इससे शुद्धोदकस्नान करावे—

गाङ्गोदकं च यमुनोदकमेतदीश गोदावरीजमिदं सरयूजलं च ।
रेवोदकं च मम भावनया प्रणीतं शुद्धकं परिगृहाण प्रसन्नपरि ॥

इससे वस्त्र दे—

कौशेयमेतदरुणं वसनद्वयं यद् भक्त्याऽर्पितं परिगृहाण समानवर्णम् ।
लम्बोदरस्य जननि त्वमपीदमम्ब पीतारुणं वसनयुग्ममिदं गृहाण ॥

इससे यज्ञोपवीत दे—

कार्पासमेतदखिलं नवतन्तुसिद्धं ग्रन्थित्रयैर्युतमिदं परमं पवित्रम् ।
अग्र्यं पवित्रमथ केशहरिप्रतिष्ठं यज्ञोपवीतादिकं कृपया गृहाण ॥

इससे गन्ध दे—

कर्पूरवासितजलेन सुघृष्टमेतं श्रीभद्रदारुजमिमं सुविलेपनाय ।
गन्धं गृहाण शिवपुत्र शिवाय मे च हार्दिगन्धग्रहणाय शिवे प्रसीद ॥

इससे अक्षत दे—

शाल्यादिधान्यतुषकण्डनजाः सुदिव्या नापि क्षता न दलिताः परतोऽवदाताः ।
ये तण्डुला गणपते प्रणयान्मया ते भालेऽर्पिताः परि गृहाण दयस्व माम् ॥

इससे पुष्पमाला दे—

पुष्पाणि गन्धरसवर्णसुरूपभाञ्जिकालोपजानि विनयेन मयाऽऽहृतानि ।
लम्बोदराय जननीसहिताय तुभ्यं भक्त्याऽर्पये परिगृहाण दयस्व माम् ॥

इससे दूर्वा दे—

दूर्वा सदैव हरिता जगतः शरण्या सौभाग्यसन्ततिकरी द्विविधा मता या ।
तस्याः समस्तरसपूर्णसदङ्कुरांस्ते भक्त्याऽर्पये परिग्रहाण गजानन त्वम् ॥

इससे सौभाग्य द्रव्य दे—

नानाप्रसूनपरिधूननसङ्गृहीतमामोदपूरितदिशं नयनप्रमोदम् ।
सौगन्ध्यसात्म्यजनकं पटवासनाय भक्त्याऽर्पितं परिगृहाण परागपुंजम् ॥

प्र०
२४

इससे धूप दे—लाक्षादिगुग्गुलुमयं गुडभागपूर्णं सर्पिःसमन्वितमिदं पुरतः प्रकीर्णम् ।
धूपं गृहाण कृपया मम वक्रतुण्ड त्वं चापि देवि गिरिजे सुरभिं गृहाण ॥

इससे घृतादि दीपक दे—कार्पासवर्तिगुणितं घृतपूरितं तं ध्वान्तापहं सकलमङ्गलहेतुभूतम् ।
दीपं प्रभापटलबोधितवस्तुजातं भक्त्याऽर्पितं प्रति गृहाण गजास्य दुर्गे ॥

इससे नैवेद्य दे—अन्नं चतुर्विधमिदं कृतमोदकं च पक्वं घृते विविधमिष्टफलैः समेतम् ।
एकं गृहाण गणनायक मोदकं त्वं शेषान् द्विजातय इमान् प्रददे प्रसीद ॥

इससे फल दे—यद्यत्फलं सुविमलं मधुरं सुपक्वं तच्छ्रीफलादि तव तुष्टय अर्पितं च ।
तेन प्रसीद गणनायक जन्मलाभं दुर्गेऽत्र देवि वरदे कुरुतं फलाढ्यम् ॥

इससे ताम्बूल दे—ताम्बूलमर्पितमिदं सुधयासमेतं जातीफलेन सदनेन लवङ्गकेन ।
कर्पूरपूगपरिपूतमेव देव तुण्डेन चर्वगिरिजे च गृहाण मोदान् ॥

इससे दक्षिणाद्रव्य दे—द्रव्यं हिरण्यरजतादि यथा स्वशक्तिगन्धादिपूजितमिदं बहुकार्यमूल्यम् ।
भक्त्याऽर्पयामि तव पादसरोजयुग्मे शान्तिं प्रयच्छतु भवान् भुवनेश्वरी च ॥

भ० २५

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

[प्रायश्चित्तप्रयोग, दशदान, मंगलस्नान और शिष्टाचार प्राप्त जलयात्राप्रयोग]

श्री दौलतरामगौड़ वेदाचार्य
श्री अशोक कुमार गौड़

प्र०
२६

अथ प्रायश्चित्तप्रयोगः

तत्र प्रतिष्ठायागं चिकीर्षुः आरम्भदिनात्पूर्वं कस्मिंश्चित्सुदिने मूर्तिप्रतिष्ठाधिकारसिद्ध्यर्थं षडब्दं त्र्यब्दं सार्द्धाब्दं वा यथाक्रमम् अशीत्यधिकशत-नवति-पञ्चचत्वारिंशत्संख्यानां गवां मूल्यं

(१) दर्भेष्वासीनो दर्भान्, धारयमाणः पवित्रपाणिः सन् पूर्वाभिमुख आचम्य प्राणानायम्य प्रायश्चित्तानुज्ञां कुर्यात्। तद्यथा नक्षत्रे राशौ जातस्य शर्मणः (वर्मणः, गुप्तस्य) मम जन्मभ्यासाज्जन्मप्रभृति-एतत्क्षणपर्यन्तं मध्ये संभावितानां सर्वेषां पापानां सद्य अपनोदनद्वारा समस्तपापक्षयार्थं स्मृतिविहितधर्मशास्त्रोक्तप्रकारेण यथाशक्तिसर्वप्रायश्चित्त कर्तुं योग्यतासिद्धिमनु गृहाण। ततः शान्तिपाठं पठेत्।

(२) ततः सङ्कल्पं कुर्यात्। तद्यथा—विष्णुः ३ अस्य श्रीभगवतः आदिविष्णोरादित्यनारायणस्य अचिन्त्यया अपरिमितया शक्त्याध्रियमाणस्य महाजलौघस्य मध्ये परिभ्रममाणानामनेककोटिब्रह्माण्डानामेकतमे अव्यक्तमदहङ्कारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाद्यैः-आवरणैरावृते अस्मिन् महति ब्रह्माण्डकरण्डमण्डले आधार-शक्तिकूर्मानन्ताद्यैः अष्टदिग्गजोपरि प्रतिष्ठितस्य अतल-वितल-सुतल-रसातल-महातल-तलातल-पातालाख्यलोकसप्तकस्य उपरितले पुण्यकृतनिवास-भूतसत्य-तपो-जनमहत्सु भूर्भुवर्लोकस्याधोभागे महानालायमाणफणिराजशेषस्य सहस्रफणाफणीमण्डलमण्डिते दिग्दन्तिशुण्डादण्डोत्तम्भिते लोकालोका-चलवलयिते लवणेक्षु-सुरा-सर्पि-दधि-दुग्ध-शुद्धार्णवैश्च परिवृते जम्बू-प्लक्ष-शाल्मलि-कुश-क्रौञ्च-शाक-पुष्कराख्यसप्तद्वीपाना महेन्द्रद्वीप-कशेरु-ताम्र-गभस्ति-नाग-सौम्य-गन्धर्व-चारणरम्भाख्यनवखण्डात्मके महामेरुगिरिकर्णिकोपेतमहासरोरुहाख्यमाणपञ्चाशत्कोटियोजनविरतीर्णभूमण्डले लक्षयोजन-विस्तृतजम्बूद्वीपे सुमेरुनिषधहेमकूट-हिमाचल-माल्यवत-पारियात्रक-गन्धमादन-कैलास-विन्ध्याचलादि महाशैलाधिष्ठिते लवणसमुद्रमुद्रिते-भारत-किंपुरुष-हरिलावृत-रम्यक-हिरण्मय-गुरुभद्राश्व-केतुमालाख्यनववर्षोपशोभिते जम्बूद्वीपे-भारतवर्षे भरतखण्डे मेरोर्दक्षिणे पार्श्वे कर्मभूमौ स्वाम्यवन्ति-कुरुक्षेत्रादि-समभूमार्धरेखायाः पूर्वदिग्भागे विन्ध्याचलस्य दक्षिणदिग्भागे दण्डाकारण्ये गोदावर्याः दक्षिणे तीरे सकलजगत्स्रष्टुः परार्द्धद्वयजीविनः ब्रह्मणः प्रथम-परार्धे पञ्चाशदब्दात्मिके अतीते द्वितीयपरार्धे प्रथमवर्षे प्रथमपक्षे प्रथमदिवसे द्वितीये यामे तृतीये मुहूर्ते स्वायंभुव स्वारोचिष उत्तम-तामश-रैवत-चाक्षुषाख्येषु षट्सु मनुषु व्यतीतेषु अद्य सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे महायुगे त्रेताद्वापरेषु गतेषु वर्तमाने कलियुगे प्रथमे पादे शालि-वाहनशकाब्दे चान्द्रसावनसौरादिमासप्रमिते प्रभवादीनां षष्टिसम्वत्सराणां मध्ये अमुकवर्षे अमुकायने अमुकऋतौ अमुकमासे अमुकतिथौ

पुरतो निधाय प्रायश्चित्तं कुर्यात्। शक्तिश्चेत् क्लिन्नवासाश्चतुरः, सप्त, द्वादश, अष्टादश, चतुर्विंशति-रष्टाविंशतिर्वा धर्माधिकारिणः सभ्यान् प्रदक्षिणीकुर्यात्। इमान् श्लोकान् पठेत् आचारात्—

ॐ समस्तसपत्समवाप्तिहेतवः समुत्थितागःकुलधूमकेतवः। अपारसंसारसमुद्रसेतवः पुनन्तु मां ब्राह्मणपादपांसवः॥ आपद्घनध्वान्तसहस्रभानवः समीहितार्थार्पणकामधेनवः। समस्ततीर्थाम्बु

अमुकवासरे अमुक शुभनक्षत्रे शुभयोगे शुभकरणे एवं गुणविशेषणविशिष्टायामस्यां शुभतिथौ सर्वपापहरणनिपुणश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थममुकगोत्रोत्पन्न-स्यामुकनामधेयस्य मम जन्माभ्यासाज्जन्मप्रभृति-एतत् क्षणपर्यन्त मध्यवर्तिनि काले बाल्ययौवनकौमारवार्द्धक्यासु रहसि प्रहासे च मनोवाक्कायकर्मे-न्द्रियव्यापारैः ज्ञानेन्द्रियव्यापारैश्च जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यवस्थासु काम-क्रोध-लोभ-मोह-मद-मात्सर्यादिभिः त्वक्-चक्षुःश्रोत्र-जिह्वा-घ्राणैः वाक्पाणि-पाद-पायूपस्थैः ज्ञानतः अज्ञानतश्च चिरकालेषु निरन्तराभ्यस्तानां प्रकाशकृतब्रह्महत्या-सुरापान-स्वर्णस्तेय-गुरुतल्पगमन-महापातकचतुष्टयव्यतिरिक्तानां रहस्य-कृतब्रह्महत्यादि-सुरापानसमोपातकानां निक्षेपहरणादिस्वर्णस्तेय-समोपातकानामाज्ञापयितृत्वानुग्राहकत्व-प्रयोजकत्व-प्रोत्सारकत्वादानां महापातकसमो-पातकानां सकरीकरणानां, मलिनीकरणानां-जातिभ्रंशकराणां प्रकीर्णकानां नवानां नवविधानां बहूनां बहुविधानां सर्वेषां पापानामपनोदनार्थं स्मृत्युक्त-षडब्दषड्गुणित-कृच्छ्रात्मकमशीत्यधिकसहस्रसङ्ख्याकप्राजापत्यकृच्छ्रात्मकं सर्वप्रायश्चित्त प्राच्योदीच्याङ्गसहितं प्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायतत्सङ्ख्याक-गोमूल्यतच्चतुर्थांशअविधातुमशक्यत्वात्तत्प्रत्याम्नायभूतायुतगायत्री-जप-प्राणायामशत–द्वयतिलहोमसाहस्रसहितमात्रवेदपारायणद्वादशसहस्रब्राह्मणभोजन-विधिवत्समुद्रगानदीस्नानादिकं कर्तुमशक्यत्वात् तत् प्रत्याम्नायभूतं यथाशक्ति विष्णुपूजनपूर्वकं सर्वप्रायश्चित्तं ब्राह्मणसन्निधौ आचरिष्ये" इति सङ्कल्प्य—

(३) क्लिन्नवासा इति–"सचैल वाग्यतः स्नात्वा क्लिन्नवासाः समाहितः। क्षत्रियो वापि वैश्या वा पर्षदं ह्युपतिष्ठति" इत्यङ्गिरोवचनात्। इदं च दिनान्तेऽपराह्णे वा कार्यम्। 'दिनान्ते नखरोमादीन्। प्रवाप्य स्नानमाचरेत्' 'व्रतं निशामुखे ग्राह्य बहिस्तारकदर्शने' इत्यादिवचनैस्तथाविधानादिति।

(४) चत्वारो वा त्रयो वापि वेदवोदग्निहोत्रिणः। ये तु सम्यक् स्थिता विप्राः कार्याकार्यविनिश्चिताः। प्रायश्चित्तप्रणेतारः सर्वे ते परिकीर्तिताः। आङ्गिरसस्मृतौ।

(५) प्रदक्षिणा कुर्यात् इत्येतन्मयूखे उत्तम्।

पवित्रमूर्तयो रक्षन्तु मां ब्राह्मणपादपांसवः ॥ विप्राघदर्शनात्सद्यः क्षीयन्ते पापराशयः । वन्दनान्मङ्गलावाप्तिरर्चनादच्युतं पदम् ॥ आधिव्याधिहरं नृणां मृत्युदारिद्र्यनाशनम् । श्रीपुष्टिकीर्तिदं वन्दे विप्रश्रीपादपङ्कजम् ॥

[1]ततो द्विजास्तं पृच्छेयुः—किन्ते कार्यं वदास्माकं किं वा मृगयसे द्विज । तत्त्वतो ब्रूहि तत्सर्वं सत्यं हि गतिरात्मनः ॥

---

(१) ततः शक्तौ सत्यामशेष्ये हे परिषत् भवत्पादमूले मया समर्पितां महद्भिर्निश्चितपरिषद्दक्षिणां स्वीकृत्य मामुद्धरस्व इति दण्डवत्साष्टाङ्गं प्रणमेत् इति यजमान प्रति परिषद्वाक्यम् ।

आङ्गिरसस्मृतौ— प्रायश्चित्ते समुत्पन्ने श्रीमान् सत्यपरायणः मृदुरार्जवसंपन्नः शुद्धिं यायाद् द्विजः सदा ॥ उपस्थान ततः शीघ्र मतिमान् धरणीं व्रजन् । गात्रैश्च शिरसा चैव न च किञ्चिदुदाहरेत् ततस्ते प्रणिपातेन दृष्ट्वा तं ममुपस्थिम् । विप्राः पृच्छन्ति यत्कायमुपवेश्यासनेशुभे ।

अथ परिषदं प्रति यजमानवाक्यम्—हे सदस्याः शुद्धचेतसः ब्रह्मज्ञानिनः वासिष्ठादिमहर्षिसमाः अखिलशास्त्रतत्त्वविदः श्रुतिस्मृतिपारङ्गताः सत्कर्मानुष्ठानपराः सात्त्विकाः दर्शनमात्रेण पापक्षयकारिणः दयालवः महान्तः भवन्तः नक्षत्रे राशौ जातस्य शर्मणः (वर्मणः,गुप्तस्य) मम जन्मप्रभृति० अपनोदनार्थं मया विज्ञापितानि पापानि अवधार्य अशेषस्मृत्युक्तसर्वप्रायश्चित्तविधिषु मत्पापानुगुणमेकविधं प्रायश्चित्तं पर्यालोच्य निश्चित्य मामुपविश्य पापेभ्यः उद्धृत्यं अनुगृह्णन्तु इत्युक्त्वा पुनः प्रणमेत् ।

यजमानं प्रति परिषद्वाक्यम्—भो यजमान, युष्मद्विज्ञापनप्रकारं नक्षत्रे राशौ जातस्य शर्मणः (वर्णणः, गुप्तस्य) तव जन्माभ्यासाज्जन्मप्रभृति एतत्क्षणपर्यन्त मध्यवर्तिनि काले बाल्ये वयसि कौमारे यौवने वार्धके जाग्रत्स्वसुषुप्त्यवस्थासु मनोवाक्कायकर्मभिः कृतानां त्वयोदितानां सर्वेषां पापानां सद्य अपनोदनार्थं धर्मशास्त्रं पर्यालोच्य अस्माभिः निर्णीतं प्राच्योदीच्याङ्गसहित यथाशक्तिव्याप्तकृच्छ्रात्मकं विंशतिकावेरीस्नानरूपकं मृत्तिकादिदश-

[सत्येन द्योतते सूर्यः सत्येन द्योतते शशी । सत्येन द्योतते वह्निः सर्वं सत्ये प्रतिष्ठितम् ॥]
अस्माकं चैव सर्वेषां (सत्यमेव परागतिः) सत्यमेव परं बलम् । यदि चेद्रक्षसे सत्यं नियतं प्राप्स्यसे (सुखम्) शुभम् । यद्यागतोऽस्यसत्येन न त्वं शुद्ध्यसि कर्हिचित् । स्वल्पं वाऽथ

प्र०

३०

विघस्नानरूपकं विधायकानुवादकमुखेनाचरस्व युष्मत्पापनोदनार्थं विधायकान् ब्रूमः । ततो यजमानः त्रीन्-पञ्च-सप्त-नव-एकादश-वा ब्राह्मणान् वृत्वा गन्धपुष्पाक्षतैरलङ्कृत्य चतुर्थांशदक्षिणां दत्वा 'अस्मिन् मया चिकीर्षिते सर्वप्रायश्चितकर्मणि विधायकं त्वां वृणे ।'

विधायकान् प्रति यजमानवाक्यम्—भो विप्रा-ज्ञानसम्पन्नाः श्रुतिस्मृतिविचक्षणाः । दयालवः साधुवृद्धाः लोकानुग्रहतत्पराः । शरणं वः प्रपन्नोऽस्मि भवन्तस्तारमन्तु माम् ।

हे विधायकाः, नक्षत्रे राशौ जातस्य मम जन्मप्रभृति० अपनोदनार्थं परिषन्निर्णीतं स्मृत्युक्तप्रायश्चित्तं भवन्तः परिषदः श्रुत्वा अनुवादकमुखेन मामुद्धरन्तः । इति प्रणमेत् ।

विधायकान् प्रति परिषद् वाक्यम्—भो विधायकाः नक्षत्रे राशौ जातस्य शर्मणः (वर्मण, गुप्तस्य) अस्य यजमानस्य जन्माभ्यासात्० अपनोदनार्थमस्माभिः निर्णीतं स्मृत्युक्तविधिवत्षडब्दषड्गुणितकृच्छ्रात्मकप्रत्याम्नायभूतं यथाशक्ति कृच्छ्रात्मकं कावेरीस्नान (गङ्गास्नान) रूपकं प्राच्योदीच्याङ्गसहितं एतत्सर्वं प्रायश्चित्तमनुवादकं प्रति उपविश्य यजमानस्य समस्तपापक्षयार्थमनुवादकेन सह पर्यालोच्य इमं यजमानं भवन्तः परिशुद्धं कुर्वन्तु । "तथास्तु"–इति विधायकाः ।

अनुवादकवरणम्—'अस्मिन् मया चिकीर्षिते सर्वप्रायश्चित्ते कर्मणि मम समस्तपापक्षयार्थमनुवादकं त्वां वृणे' इत्यानुवादकं वृत्वा वस्त्राद्यैर-लङ्कृत्य निश्चितचतुर्थांशदक्षिणां दत्वा परिषत्सन्निधौ स्थाप्य परिषदं प्रति यजमानप्रार्थना ।

अथानुवादकं प्रति विधायकवाक्यम्—हे अनुवादक, सावधानं समाकर्णय भो विद्वन्, भगवद्भक्तशिवभक्तानामग्रेसरसत्कर्मानुष्ठानपरशिवपूजा-पुरन्दरत्र्यालो हे अनुवादक, इहागच्छ सावधानमनाः समाकर्णय इदानीममुकगोत्रोत्पन्नस्यामुकनामधेयस्य यजमानस्य जन्माभ्यासाजन्मप्रभृति–एतत्क्षण-

३०

प्र०

३१

प्रभूतं वा धर्मविद्भ्यो निवेदयेत् । रहस्यकृतपापानि उपांशु न च संस्मरेत् । इति पृष्टो गन्धाक्षत-पुष्पैः सभ्यान् सम्पूज्य गोवृषयोर्मूल्यं तेषां पुरतो निधाय सङ्कल्पयेत्—ॐ तत्सत् 'करिष्यमाण-प्रायश्चित्ताङ्गत्वेन इदं गोवृषनिष्क्रयद्रव्यं सभ्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृज्ये ।' सभ्याश्च तद् द्रव्यं विभज्य गृह्णीयुः ।

पर्यन्तं महापातकचतुष्टयव्यतिरिक्तानामाज्ञापयितृत्वादिमहापातकवृतातिष्ठारूपादिपातकानामनृतवचनराजकामिपैशून्यादिब्रह्महत्यादिसमोपपातकानां वेदविस्मृतिरेतः पान-रजस्वलामुखास्वादनादि सुरापान-समोपातकानां-निक्षेपहरणादिस्वर्णस्तेयसखिपत्नीगमनादिगुरुतल्पगमने समोपपातकानां गोवधा-दितत्संयोगसमोपपातकानां कन्याविक्रयादिसङ्कीर्णकानामुष्ट्रस्तेयादिमलिनीकरणानां चाण्डालगमनाद्यपात्रीकरणानां परान्नभोजनादिजातिभ्रंशकराणां सीमन्तादिक्रमादिप्रकीर्णकानां सर्वेषां पापानामपनोदकमशेषभागनिर्णीतं सर्वप्रायश्चित्तममुकसङ्ख्यात्मकप्राजापत्यकृच्छ्रप्रत्याम्नायरूपममुकनामधेयायास्मै यजमानायानुवादेति त्वाम् प्रेरयामः । त्वमखिलदैवसविस्तरमूर्ध्वबाहुः सन् अस्मै यजमानाय उच्चैरेव त्रिवारं वद । सोप्यनुवादकः तथैव करवाणी-त्युक्त्वा यजमानं प्रति वदेत् ।

यजामानं प्ररिषत्सन्निधौ अनुवादकवाक्यम्—अमुकगोत्रोद्भवामुकशर्मन् भो यजमान, अशेषापरिषद् विज्ञापनामाकर्ण्य त्वया समर्पितां दक्षिणां स्वीकृत्य त्वदुक्तनिमित्तानां सर्वेषां पापानामपनोदकं सर्वप्रायश्चित्तं निश्चित्य विधायकमुखेन उपदिशंति मां प्रेरयन्ति अहमपि त्वमोपदिशाभि सावधानमनाः समाकर्णय ।

ततो यजमानः सङ्कल्पं कुर्यात्—'शुभतिथौ नक्षत्रे राशौ जातस्य शर्मणः (वर्मणः, गुप्तस्य) जमस्यासा० अपनोदनार्थं षड्गगुणितप्राजापत्यकृच्छ्रात्मकं रूपकं प्राच्योदीच्याङ्गसहितं सर्वप्रायश्चित्तं परिषद्विधायकसन्निधौ करिष्ये'' इति सङ्कल्प्य—

(२) अत्र च 'पापं विख्यापयेत्पापी दत्वा धेनुं तथा वृषम्' इति वचनात् यद्यपि प्रत्यक्षत एव गोवषयोर्दानं प्रतीयते, तथापि निष्क्रयेणैव तद्दानम् विधिवदनुष्ठातुमशक्यत्वात् तत्प्रत्याम्नायभूतं परिषन्निर्णीतं विधायकविहितमनुवादकेनानुवादितं शक्तिरप्नप्राजापत्यकृच्छ्रात्यकयथाशक्तिकावेरीस्नान-

म०

३१

प्र० ३२

ततः प्रायश्चित्ती ब्रूयात्—अमुकस्य मम जन्म[३]प्रभृति अद्य दिनं यावत् ज्ञाताज्ञात-कामाकाम-

"बहुभ्यो न प्रदेयानि गौर्गृहं शयनं स्त्रियः । विभक्तदक्षिणा ह्येता दातारं पातयन्त्यघः ॥"—इत्यङ्गिरोवचनात् बहुभ्यः प्रत्येकैकगोदानस्यनिषिद्ध-त्वात् । 'एको वाऽध्यात्मवित्तमः' (या० स्मृ०) इति एकसभ्यपक्षे त्वेकं साक्षाद् गोदानमपि कर्तव्यम् । इदं च गोवृषदानमेकप्राजापत्यकृच्छ्रप्रायश्चित्ते भवति न तु ततो न्यूने पादतो ह्रासादौ । तथा च विष्णुः—पादव्रते वस्त्रदानं कृच्छ्रार्द्धे तिलकाञ्चनम् । पादहीने तु गामेकां कृच्छ्रे गोमिथुनं स्मृतम् ॥ इति । अत एव महापातकादिष्वधिकं कल्प्यमिति मिताक्षरायाम् । अनयैव दिशा शक्त्याद्यपेक्षया दक्षिणाविकल्पमिति महार्णवे ।

(३) जन्मप्रभृति पापानि सुबहूनि कृतान्यपि । षडब्देनैव शुद्धयन्ति महतः पातकादृते ॥ इति वचनात् जन्मप्रभृति इति पदप्रयोगः ।

(४) सकृच्च असकृच्च सकृदसकृत् । सकृदसकृत् कृतानि इति सकृदसकृत्कृतानि । (एकवारमनेकवारं च कृतानीत्यर्थः) ज्ञानं च अज्ञातं च कामश्च अकामश्च ज्ञाताज्ञातकामाकामाः । ज्ञाताज्ञातकामाकामैः सकृदसकृत्कृतानि ज्ञाताज्ञातकामाकामसकृदसकृत्कृतानि । कायिकं च वाचिकं च मानसिक च सांसर्गिकं च स्पृष्टं च अस्पृष्टं च भुक्तं च अभुक्तं च पीतं च अपीतं च कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकस्पृष्टास्पृष्टभुक्ताभुक्तपीतापीतानि । ज्ञाताज्ञातकामाकामसकृदसकृत्कृतानि च तानि कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकस्पृष्टास्पृष्टभुक्ताभुक्तपीतापीतानि च इति ज्ञाताज्ञातकामाकामसकृद-सकृत्कृतकायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकस्पृष्टास्पृष्टभुक्ताभुक्तपीतापीतानि । पातकं च अतिपातकं च उपपातकं च पातकातिपातकोपपातकानि । पापकातिपातकोपपातकेषु लघुपातकानि पातकातिपातकोपपातकलघुपातकानि । पातकातिपातकोपपातकलघुपातकानि च सङ्करीकरणं च मलिनीकरणं च अपात्रीकरणं च जातिभ्रंशकरं च प्रकीर्णकं च पातकातिपातकोपपातलघुपातकसङ्करीकरणमलिनीकरणापात्रीकरणजातिभ्रंशकरप्रकीर्णकानि । सकलानि च तानि पातकातिपातकोपपातकलघुपातकसङ्करीकरणमलिनीकरणापात्रीकरणजातिभ्रशकरप्रकीर्णानि च सकलपातकाति० प्रकीर्णानि । कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकस्पृष्टास्पृष्टभुक्ताभुक्तपीतापीतानि च तानि सकलपातकातिपातकोपातकलघुपातकसंकरीकरणमलिनीकरणापात्री-करणजातिभ्रंशकरप्रकीर्णानि च कायिकवाचि०प्रकीर्णानि । ज्ञाताज्ञातसकृदसकृत्कृतानि च तानि कायिकवाचिकमानसिकसांसर्गिकस्पृष्टास्पृष्टभुक्ताभुक्त-पीतापी०प्रकीर्णानि । ज्ञाताज्ञातकामा०प्रकीर्णानि च तानि पातकानि च ज्ञाताज्ञातकामा० प्रकीर्णकपातकानि तेषामिति विग्रहः । सकलपदं पात-कातिपातकोपपातकादीनां विशेषणम् ।

पातकपदमनुपातकपरम्—स्मृतिषु तथैवोक्तत्वात् । सकलानि पातकानि—यावन्ति अनुपातकानि अतिपातकानि उपपातकादीन न चीत्यर्थः ।

म० ३२

प्र० म०

सकृदसकृत्कृत-कायिक-वाचिक-मानसिक-सांसर्गिक-स्पृष्टास्पृष्ट-भुक्ताभुक्त-पीतापीत-सकलपातकातिपातकोपपातक-लघुपातक-सङ्करीकरण-मलिनीकरणापात्रीकरण-जातिभ्रंशकरप्रकीर्णकपातकानां मध्ये सम्भावितानां पापानां निरासार्थमनुगृह्य प्रायश्चित्तमुपदिशन्तु भवन्तः । [पुत्रादिश्चेदाचरति तदा 'ममास्य पित्रादेः' इति वाच्यम्]

२२

ब्राह्मणप्रार्थना—'आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तं भवद्वशमिदं जगत् । यक्षरक्षःपिशाचादिसदेवासुरमानुषम् ॥ सर्वे धर्मविवेक्तारो गोप्तारः सकला द्विजाः । मम देहस्य संशुद्धिं कुर्वन्तु द्विजसत्तमाः ॥ मया कृतं महाघोरं ज्ञातमज्ञातकिल्बिषम् । प्रसादः क्रियतां मह्यं शुभानुज्ञां प्रयच्छत ॥ पूज्यैः कृतः पवित्रोऽहं भवेयं द्विजसत्तमैः ॥' इति । (पुत्रादिश्चेत्प्रायश्चित्तकर्ता तदा अस्मच्छब्दस्थाने

तत्तत्संज्ञकानां पातकानामुच्चारणेनैव सर्वेषां संग्रहात्सकलपदस्य वैयर्थ्यमिति वाच्यम् । भुवनेश्वरीकृष्णचतुर्दशामूलशान्त्यादिषु सर्वपदवदत्रापि सकलपदस्य सार्थक्यात् । अतिपातकेति—'अतिपातकादिष्वनेन कर्मणा लघुपातकमेव नश्यति न तु गुरुपातकम् । अन्यथा—"अतिपातकिनस्त्वेते प्रविशेयुर्हुताशनम्" इत्यादिवचनानां वैयर्थ्यापत्तेः ।

(१) १—द्वन्द्वः, (२) कर्मधारयः, (३) द्वन्द्वः, (४) तत्पुरुषः, (५) द्वन्द्वः, (६) कर्मधारयः, (७) द्वन्द्वः, (८) तत्पुरुषः, (९) कर्मधारयः (१०) कर्मधारयः ।

(२) रोगी वृद्धस्तु पौगण्डः कुर्यादन्यैर्व्रतं सदेति ब्राह्मे । कुर्यात्—कारयेदित्यर्थः ।

२३

'अस्य' 'एतत्कृतम्' 'प्रसादः क्रियतामस्य' पवित्रोऽयं भवेच्च' इत्यादिवाच्यम्] ततः 'मामनुगृह्णन्तु भवन्तः' इत्युक्त्वा पुनः प्रणमेत् । [मामित्यत्र 'एतम्' इत्यन्यकर्तृके] ततो गन्धाक्षतपुस्तकं सम्पूज्य गोमूल्यं निबन्धपूजात्वेन निवेदयेदित्याचारः । ततोऽनुवादकं सम्पूज्य तस्मै दक्षिणां दद्यात् । ततः—अनुवादकस्याग्रे—"अमुकशर्मणस्तव जन्मप्रभृत्यद्य दिनं यावत् ज्ञाताज्ञात-कामाकाम-सकृदसकृत्कृतकायिक-वाचिक-मानसिक-सांसर्गिक-स्पृष्टास्पृष्ट-भुक्ताभुक्त-पीतापीत-सकल-

---

(१) ततः सभ्याग्रणीः—शृणुध्व भो इद विप्रैर्यत्तवादिश्यते व्रतम् । तत्ते यत्नेन कर्तव्यमन्यथा तद्वृथा भवेत् ॥

"ततस्ते प्रायश्चित्तिनमुत्सार्य परस्परं प्रायश्चित्तस्वरूपं यत्र यथोचितं धर्मशास्त्रानुसारेण विचार्य तस्य शरीरद्रव्यादिशक्तिमुत्तलमध्यमाधम-पक्षांश्च विचार्य अस्मिन् पक्षेऽयं शक्त इति निश्चित्य पुस्तकवाचनपूर्वकमनुवादकस्याग्रे कथयेयुः, इति रुद्रकल्पद्रुमे । अत्र पर्षदनन्तर्गतोऽन्य एव ब्राह्मणो भृतिदानेनुवादकः कल्पनीयो न तु पर्षदन्तर्गतः, तस्य 'प्रायश्चित्तं तु निर्दिश्य कथं पापात्प्रमुच्यते । यत्पवित्रं विजानीयाज्जपेद्वा वेद-मातरम् ॥' इति प्रायश्चित्तानुवादकत्वे दोषश्रवणात् । 'आहूय श्रावयेदेकः पर्षदा यो नियोजितः' इत्यङ्गिरोवचनाच्च । विदुषा ब्राह्मणेन तु पर्षद मन्तरेणापि स्वयमप्यालोच्य प्रायश्चित्तस्वरूपं निर्णेतुं शक्यते ।

(१) "अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः । परदारोपसेवा च कायिक त्रिविधं स्मृतम ॥ पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः । असंबद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम् । (२) परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसाऽनिष्टचिन्तनम् । वितथाभिनिवेशश्च मानसं त्रिविधं स्मृतम् ॥ (३) ननु संसर्गजपास्य प्रकीर्णकेऽन्तर्भाविन सङ्कल्पवाक्ये सांसर्गिकपदं न वाच्यम् इति चेन्न । संसर्गजपापस्यानुपातकादिष्वनन्तर्भावात् । तथाहि महापातकि-ससर्गजस्य पापस्य "तत्संसर्गी च पञ्चमः" इति वाक्येन महापातकेऽन्तर्भावः । तदन्यपातकिसंसर्गजस्य तत्तत्पातकेऽन्तर्भावकरणे प्रमाणभावेन तत्र तत्रान्तर्भावस्य कर्तुमशक्यत्वात् महापातकातिरिक्तपातकिसंसर्गजपापं भिन्नमेव । तत्संग्रहाय सांसर्गिकपदमिति । (४) लिङ्गार्चनचन्द्रिकायाम्—अस्पर्श-

पातकातिपातकोपपातक - लघुपातक-सङ्करीकरण—मलिनीकरणापात्रीकरणजातिभ्रंशकरप्रकीर्णकपातकानां मध्ये सम्भावितानां पापानां निरासार्थं सभ्यैरुपदिष्टं षडब्द-त्र्यब्द-सार्द्धाब्दान्यतमं सर्वप्रायश्चित्तं गोनिष्क्रयद्रव्यदानप्रत्याम्नायद्वारा पूर्वाङ्गोत्तराङ्गयुतं त्वयाऽऽचरितव्यं तेन तव[पित्रादेः] शुद्धि-

---

दोषनाशार्थं सूतकान्ते प्रयत्नतः। रौद्रेण चरुणा कार्यो होमो रुद्रसहस्रम्। संस्कारप्रकाशे—अनातुरः खानि खानि न स्पृशेदनिमित्ततः॥ इति च स्पृष्टास्पृष्टदोषः (५) 'उपवासवता कार्यं सायं सन्ध्याहुतीर्विना। इति। श्राद्ध कृत्वा यो मर्त्यो न च भुङ्क्ते कदाचन। देवा हविर्न गृह्णन्ति कव्यानि पितरस्तथा॥ इति भुक्ताभुक्तदोषः। असकृज्जलपानाच्च सकृत्तांबूलभक्षणात्। उपवासः प्रणश्येत इति। पादौ प्रक्षाल्य विप्राणां न पिबेद्यपि स पुमान्। रौरवे नरके घोरे पतत्येव न संशयः॥ धर्मतत्वप्रकाशे। इति पीतापीतदोष इत्यादिदोषाणां संग्रहाय स्पृष्टास्पृष्टेत्यादिवचनम्। न त्वस्थिस्पर्शः—मांसभक्षण—अनिर्दशगोक्षीरपानात्मकानाम्, तेषामुपपातकादावन्तर्भावात्। शेषत्रयस्य पातकाजनकत्वादिति। पातकपदमनुपातकपरम्। अनुपातकान्याहुः विष्णुः—"पितृपितृव्यमातामहमातुलश्वशुरनृपपत्निपितृष्वसृ—मातृष्वसृ—श्रोत्रियर्त्विगुपाध्याय—मित्र—पत्नीभिरागमनं स्वसृसख्याः सगोत्रायाः (अतिपातकेति। मातृगमनं दुहितृगमन स्नुषागमनमित्यतिपातकानि। अतिपातकिनस्त्वेते प्रविशेयुर्हुताशनम्। अत एवैतत्प्रायश्चित्ते-नातिपातकादिषु लघुपातकमेव नश्यति न तु गुरुपातकमिति)। उत्तमवर्णायाः कुमार्या अन्त्यजामा रजस्वलाया प्रव्रजितायानिक्षिप्ताश्चेति। पित्रादिपत्न्यो हीनवर्णा ग्राह्याः। (६) उपपातकानि, मनुः—गोवधोऽयाज्यसंयाज्यं पारदार्यात्मविक्रिया। पितृमातृगुरुत्यागः स्वाध्यायाग्न्योः सुतस्य च॥ परिवित्तितानुजेन परिदेवनमेव च। तयोर्दानं च कन्यायास्तयोरेव च याजनम्। कन्याया दूषण चैव वार्द्धुषित्व व्रताच्युतिः। तडागारामदाराणामपत्यस्य च विक्रयः॥ व्रात्यताबान्धवत्यागो भृतकाध्ययन तथा। भृतादध्ययनादानमपण्यानां च विक्रयः। सर्वाकरेष्वधीकारो महायन्त्रप्रवर्तनम्। हिंसौषधीनां स्त्र्याजीवोऽभिचारो मूलकर्म च॥ इन्धनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामपपातनम्। आत्मार्थं च क्रियारम्भो निन्दितान्नादनं तथा। अनाहिताग्नितास्तेयमृणानां चानपक्रिया। असच्छास्त्राभिगमनं कौशीलव्यस्य च क्रिया॥ धान्यकुप्यपशुस्तेयं मद्यपस्त्रीनिषेवणम्। स्त्रीशूद्रविट्क्षत्रवधो नास्तिक्यं चोपपातकम्। खराश्वोष्ट्रमृगेभानमजाविकवधस्तथा। सङ्करीकरणं ज्ञेयं मीनाहिमहिषस्य च॥ कृमिकीटवयो

भविष्यति तेन त्वं कृतार्थो भविष्यसि [तव पित्रादिः कृतार्थो भविष्यति] इति ब्रूहि इति वदेत्।
ततः सभ्येन प्रेरितोऽनुवादकः–[इत्येनमुपदेशं प्रायश्चित्तिनं प्रति त्रिर्ब्रूयादिति मयूखे]
"भवदनुग्रहः" इति वदेत् पर्षदं विसृजेच्च[१]।

हत्यामद्यानुगतभोजनम् । फलैधःकुसुमस्तेयमधैर्यं च मलावहम् । निन्दितेभ्यो धनादानं वाणिज्यं शूद्रसेवनम् । अपात्रीकरणं ज्ञेयमसत्यस्य च भाषणम् । ब्राह्मणस्य रुजः कृत्वा घ्रातिरघ्रेयमद्ययोः जैह्म्यं च मैथुनं पुंसि जातिभ्रंशकरं स्मृतम् ॥ अनुक्तनिष्कृतीनां च पापानां चापनुत्तये । इत्यनेन मनुना यदुक्तं तत्प्रकीर्णकमिति ।

प्रसङ्गतो महापातकान्युच्यन्ते–तथा च मनुः––ब्रह्महत्या सुरापानं स्तेयं गुर्वङ्गनागमः ॥ महान्ति पातकान्याहुः संसर्गश्चापि तैः सह ॥ इति । स्तेयं = सुवर्णस्तेयम् । गुर्वङ्गना-सपत्नमाता ।

(१) भो यजमान, तव जन्माभ्यासाज्जन्मप्रभृति एतत्क्षणपर्यन्तं मध्यवर्तिनि काले संभावितानां सर्वेषां पापानां ब्रह्महत्यादिमहापातकचतुष्टय-व्यतिरिक्तानां महापातकदिपाकानां महापातकचतुष्टयसमोपपातकानां सङ्करीकरणानां मलनीकरणानामपात्रीकरणानां जातिभ्रंशकराणां प्रकीर्णकानां एवं नवानां नवविधानां बहूनां बहुविधानां सर्वेषां पापानां सद्यः अपनोदकममुकसङ्ख्याकप्राजापत्यकृच्छात्मकं सर्वं प्रायश्चित्तं विशोधकं भवति । एतत्प्रायश्चित्तं साक्षात्कर्तुं समर्थेन गोमूल्यादिप्रत्याम्नायरूपं प्राच्योदीच्याङ्गसहितं सम्पूर्णमनुश्रेष्ठेयम् एवं परिषन्निर्णीते विधायकविहिते प्राच्योदीच्याङ्गसहिते सर्वप्रायश्चित्ते त्वयानुष्ठिते सति परिषत्सन्निधौ विज्ञापितेभ्यः सर्वेभ्यः जन्माभ्यासाज्जन्मप्रभृत्येतत्क्षणपर्यन्त मध्यवर्तिनि काले बाल्य-कौमार-यौवन-वार्धकेषु-कायिक-मानसिक-वृत्तिषु जाग्रत्स्वप्न सुषुप्त्यवस्थासु काम-क्रोध-लोभ-मोह-मदमात्सर्यैः वाक्पाणि-पाद-पायूपस्थैः त्वक्चक्षुः-श्रोत्र-जिह्वा-घ्राणैश्च कृतेभ्यः इह जन्मनि महापातकचतुष्टायव्यतिरिक्तेभ्यः रहस्यकृतमहापहापातकेभ्यः आज्ञापयितृत्वानुग्रहकत्वप्रयोजकत्वोपदेष्टृत्वानुग्राही-तृत्वोत्साहकत्वादिभ्यः महापातकेभ्यः अनृतवचनराजगामिपैशून्यगुर्वलीकयागस्थक्षत्रियवधविज्ञातगर्भवधात्रिगोत्र-स्त्रीवध-पितृभगिनीमातृभगिन्यात्म-भगिनीवधसभामध्ये ब्राह्मणापमाननृपकर्ण परदोषाजल्पनसदापापाहरणसदापैशून्यभाषणसदाकोपकरण-सद्ब्राह्मणभूहरण-असच्छास्त्राध्यापनकरणादिभ्यः ब्राह्महत्यासमपासकेभ्यः वेदविस्मृति वेदनिन्दा-कूटसाक्षि सुहृद्वध-अन्त्यजान्नभक्षणरेतपान-रजस्वलादुखास्वादन-योनिचुम्बन-कांस्यपात्रस्थनारिकेलोदक-

प्र०

ततः कुशयवतिलजलान्यादाय—श्रीमदनन्तवीर्यस्य आदित्यनारायणस्य अचिन्त्यापरिमित-शक्त्या ध्रियमाणस्य महाजलौघमध्ये परिभ्रममाणानामनेककोटिब्रह्माण्डानामेकतमे अव्यक्तमहद-हङ्कारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशाद्यावरणैरावृते अस्मिन् महति ब्रह्माण्डखण्डयोर्मध्ये आधारशक्ति-

---

पान ताम्रपात्रस्य उष्णोदक पान-कांस्यपात्रस्थयव्यभक्षणलवणसहितगोक्षीरपान-रजकतीर्थस्नानगुर्वविक्षेपगुरुधनहरणादिभ्यः सुरापान समपातकेभ्यः निक्षेपहरण-अश्वहरण-भूहरण-स्वर्णहरण-रौप्यहरणस्त्रीहरण धेनुहरहण-ब्राह्मक्षेत्रणहरण स्रुक्स्रुवहरण-अरणीहरणेध्महरण-नानाविधपात्रहरण-नानाविध-धान्यहरणादिभ्यः स्वर्णस्तेयसमपातकेभ्यः सखीपत्नी-कुमारी-स्वगोत्रस्त्री-अन्त्यजस्त्री-क्षत्रिचर्मकारस्त्रीमद्यपस्त्र्यादि-गमन नृपपत्नीगमन-मातामही-मातुल-पत्नी-पितृष्वसृ-ऋत्विग्गुपाध्याय-मित्रपत्नीगमन।श्वयोनि-गमननिक्षिप्तस्त्री-प्रवराजितस्त्री-गमनादिभ्यः गोवध-वत्सवध वृषहरी-गजबलिवर्दाश्चोष्टस्वरुखे चरहनन-अजवध-द्रुमच्छेदनविष्णुशिवालय-तडागभेदन-अयाज्ययाजन-परदाभिगमन-आत्मविक्रय-मातृ-पितृ-गुरुत्याग-अग्नित्याग-कन्यादूषण-वार्धुषिक-जीवन-व्रतोपवासराहित्य-तड़ागारामविक्रय-धर्म-विक्रय-भृतकाध्ययन-हिंसोपजीवन-सत्रान्नभक्षण-आत्मार्थपाक-निन्दितान्नभक्षण-ऋणानपहरण-कौटिल्य-धान्य-पशु-रौप्यस्तेय-शूद्र-विट्-क्षत्रिय-वध-लवणविक्रय-जीवहिंसापयोगिमन्त्रविधानपराम्न-परिपुष्टत्वसर्वकार्याधिकार कमहत्प्रतिग्रहकूटव्यवहारब्राह्मण प्रवृत्तिच्छेन-पाकभेदहरण-विधवा-वेश्या-वार्धकी-दासिगमादिभ्यः तत्ससर्गसमपातकेभ्यः मनुष्य-विक्रय-पत्नीविक्रय-मातृविक्रय-कन्याविक्रय-गजविक्रया-नडुहविक्रय-वस्त्रविक्रयोष्ट्रविक्रय अश्वविक्रय-मृगविक्रय-नानाविधारण्य-विक्रय-गोधूमविक्रय-तिल-विक्रय-तण्डुलविक्रय-पुण्यादि विक्रय-नानविधधान्य-विक्रय-पलाण्डुविक्रयनीलविक्रय-हिग्वादिनानाविधविक्रय-दन्तविक्रय-रसविक्रय-केशविक्रय-वस्त्रविक्रय कार्पासविक्रय-खड्गादिनानाविधायुधाधविक्रयो-लूखलादिनानाविधग्रहोपकरणविक्रय कस्तूरी-नेपालधिक्रय-कम्बलविक्रय-गङ्गास्थानादिपुण्यफलविक्रय-असामनुयुगसङ्क्रान्त्यादिनुण्यतिथिकृतकर्मविधवस्तु-विक्रय-खरेभमगमीनाजसर्प-हंस-सारस-मयूरवधणु-कपारावस-डिडिढमचाषकरोतसारिकातित्तिरगृध्र-श्येयकाकोलूक चाककोकिलकारण्डव-चकोर-भारद्वाज-हेरण्ड-पाशक-पिङ्गलादिनानाविध-पक्षिवध-मूषिकमार्जारिरुरुवाराहादिनानाविधमृगवध-कीटमक्षिकात्कुण-पिपीलिका ध्यानस्यजन्तुवध-तदितर जन्तुवधादिभ्यः सङ्कलीकरणेभ्यः उष्ट्रस्तेय-खरस्तेय-खेचरस्तेय-जापस्तेय-आरण्यमृगहरण-व्याघ्रहरण-भल्लूकहरिणीहरण-कृष्णमृगहरण-सारमकपोतजाल-

३७

वराहकूर्मानन्ताद्यष्टदिग्गजोपरि प्रतिष्ठिते सप्तपातालोपरिभागे सप्तान्तलोकषट्कस्याधोभागे महा-
कालयमानशेषस्य सहस्रफणामणिमण्डिते दिग्दन्तिदन्तशुण्डादण्डोत्तम्भिते लोकालोकाचलवल-
यिते लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिक्षीरोदकार्णवपरिवृते जंम्बूप्लक्षशाल्मलिकुशक्रौञ्चशाकपुष्करसप्तद्वीप-

---

पादहरण-शिशुमारहरण-कच्छपभूम्भिहरण-स्वदत्तापहरण-रत्नहरण-बालहरण-कन्यकाहरण-नारीहरण-शृङ्गिहरण-हरिद्राहरण-मलकहरण--अलाबूहरण-
घृतकोषातकीवार्ताकशीगुरुकपटोली--कारवल्लीकूष्माण्डकोपातकीहरण--चूततिन्तिणीहरणोपोतक्यादिनानाविधग्रामारण्यसंभवशाकहरणकदलीपर्णहरण -
मधुपर्णादिहरण--मन्थनदण्डहरण--शमीदर्भस्रुक्स्रुवादियज्ञपाहरण--अरणीहरण--गोधूममाषमुद्गसंभवभक्ष्यपण्यहरण--पायसपरमान्न--चित्रान्नहरण--नाना-
विधपिष्टमयनानाविधभक्ष्यहरण--तैलपक्वघृतपक्वातिहरण लेह्यादिहरण-चित्रशाकहरण-कपु रुद्रादिहरण-शुद्धक्षीर-दधि-तक्र-नवनीतमध्वाज्यादिहरण-
एत्रिकटूहरण--पूर्णचन्द्रोदयवसन्तकुसुमाकहरण-जानन्तभैरवराजमृगाङ्कसूपत्याग्निकुमारस्वर्णभस्मज्वरांकुशग्रहणीकवाडादिनानाविधौषहरण हिङ्गूरहरि-
तालककुसुमहरण-लाक्षातैल गन्धितैलहरण कूष्माण्डघृतचिन्तादिलेह्यहरण--पिप्पलादिरसायनहरण--ननाविधौषधादिहरण-दृषदुपलोलूखलशूर्पादिगृहोप-
करणहरणङ्कुशखड्गपाशभिण्डिपालादिहरण-धनुशस्त्रोत्पलशङ्ख-चक्र-गदा--खेटक--तूणीर्प्रासपरिखादिविविधशस्त्रायुधहरण--मार्गनिरोधतडाग-वनकूप--
कासारक्षेत्रहर--परिधातपुस्तकफलकसूत्रालेख्यशालग्राम-शिवलिङ्गाद्यनेकमूर्तिहरण--चाण्डालीतुरुष्कीराजकीगमनन--चर्मकारप्ररुड़कैवर्तक--भिल्ल--मद्यप-
स्वर्णकारसौचिकेसीगमनकुलानापिततक्षककारुकदारुकस्त्रीगमन-विधवा-वेश्या--दासीगमनऋतुकालपरित्यागकन्यागमन-पुंमैथुनायोनिरेतसोत्सर्जन-तडाग-
मार्गजल-करसुरसाद्यवकीर्णत्वपशुयोनिरेतोत्सर्जनखरोष्ट्राजावत्तमाहिषीगमन-कुग्रामवास-कुत्सितसेवनोष्ट्रादडुहमहिषीवस्तारोहणाद्वाहिता पुनरुद्वाहकरण-
मातृ-पितृ-परिणीयकन्यापरिगृहात्मपुत्रीगमनस्नुषागमनस्वदारपरित्याग-कारागृहनिवृत्यर्थं मद्यपानरोगनिवृत्यर्थं स्तन्यपानादिभ्यो मलिनीकरणेभ्यः परान्न-
भोजन-शूद्रसत्रान्नभोजन-क्षत्रिय-वैश्यदासिदासीदामान्नभोजन-पर्युषितान्नभोजन-दुर्भिक्षे दुष्टशाकादिभक्षण-सदा परान्नभोजन-कृसरान्नभोजन-शूद्रवाण-
स्थानभोजन-एकादश्यन्नभोजन-यत्यन्नयतिप्रेरितान्न-यतिपात्रस्थान्नभोजन-उच्छिष्टान्नभोजन-शूद्र-क्षत्रिय-वैश्य-दासी-दासापतितादिपंक्तिभोजन-करमर्दित-

प्र० ३६

मण्डिते कांस्यताम्रगभस्तिनागगन्धर्वचारणभारतादिनवखण्डखण्डिते भारतवर्षे भरतखण्डे अयोध्या–मथुरा—माया–काशी–काञ्च्यवन्ती—द्वारवती–कुरुक्षेत्रपुष्करादिनानातीर्थयुक्तकर्मभूमौ मध्यरेखायाः पूर्वदिग्भागे भागीरथ्याः पश्चिमे तीरे जगत्स्रष्टुः परार्द्धद्वयजीविनो ब्रह्मणो द्वितीये

तक्रपानपीतशेष तोयपानखरोष्ट्रहरिणीमहिषीक्षीरपानास्थिकेशादिदुष्टान्नभोजन-भोजनकाले दीपनाशनवटाकश्वित्थैरण्डपत्रभोजन-भिन्नपात्रभोजन-शवाश्रितग्रामभोजन-रजस्वलाशेषान्नभोजन-परिवित्ति-परिवेत्तान्नभोजनअन्योन्यमृष्टान्नभोजन-भोजनकाले-अपानवायूत्सर्जनभोजन काले क्षुत्तृभम्मामनुक्रान्तादिपर्व दिवसे-द्विवारभोजनदेवपूजा-वैश्वदेवादिकमोपराग-श्राद्धमोजनमूत्रमपुरीषोत्सर्जनमृत्तिकाशौचाभावशिवनिर्माल्यभक्षणाग्रहादिकारदेवालयाधिकारेभ्यो जातिभ्रंशकरेभ्योः सीमन्तादिक्रययमलव्युत्क्रमसंकार-क णाक्षणराभ्यास-चौलोपनयन-कालागमिक्रमब्रह्मचारिद्वादशायां दण्डाजिनमौञ्ज्याग्निकार्यब्रह्मयज्ञभिक्षाव्रतलोपवेदाभ्यास–गुरुशुश्रूषाध्ययनाध्यापनादिराहित्य-वेदव्रत–गोदान- समावर्तनराहित्य–उपाकर्मान्वारम्भणीयेष्टीपालाशहोमस्थालीपाकप्रतिपद्धोमाग्रहणाराहित्यग्रहस्वधर्म-ब्रह्मयज्ञोपासन-देवतार्चनराहित्य-श्राद्धकरण-प्रतिसांवत्सरिकपरित्याग–पार्वण विस्मरण–श्राद्धभोतृन्योन्यसंसर्गाहितान्यग्निहोत्रलोप-दर्शपौर्णमासलोपग्रहस्थधर्मादिक्रमनिषिद्धदियताम्बूल भक्षणाभ्यङ्गावस्थायां मूत्रपुरीषोत्सर्जनसूर्यग्रहणादिपुण्यकाले-कुरुक्षेत्रादिपुण्यदेशे श्राद्धभोजन-गङ्गाप्रयागादिसकाशान्महिष्याद्रंकृष्णाजिनोभयतोमुखीतुलापुरुषगवादिप्रतिग्रहधर्मविक्रयी—नाम–विक्रयी–लिङ्ग–धारी—सकाशात्प्रतिग्रहपरार्थगायत्रीजपकरणुपरार्थपुनरुपनयनादी गायत्रीप्रदानग्रामकूष्माण्डप्रतिग्रह-दशदानशावतार-शिवलिङ्ग-शालग्राम-शङ्खताम्र-कांस्यपात्र प्रतिग्रहरामलक्ष्मण-हरिहरार्धनारीश्वरश्रीमूर्तिप्रतिग्रहाततायिपाषण्ड-चाण्डाल व्रात्यादिसकाशद्वतिग्रहयज्ञोपवीतादि-प्रतिग्रह-चातुर्मास्य-कार्तिकमाघ-वैशाख-आषाढ़मास-व्रतोपवासराहित्यकदल्याम्रादिनानाविधफलवप्रतिग्रहमस्तसंन्यासिन। प्रतिग्रहकालपुरुषप्रतिग्रहमांसप्रतिग्रह-विहितधर्मपरित्याग-निन्दितकर्मनिषेवण-परवर्मभेदनइन्द्रियनिग्रहाकालभोजन सहायभार्गगमनानपसवभार्या-दासी-भृत्यादि-ताडनस्वयमेव हलं गहीत्वा कृषीकरणाभ्यङ्गा-वसिष्ट तैलभक्षणतुरुष्कहस्तस्पर्शतुरुष्कग्रहनिवासकालक्षीरकरणे इष्टद्रोहामिद्रोह-इष्टदेवतापरित्यागादिप्रकीर्णकेभ्यः एवं नानाविधेभ्यः ज्ञानतः सकृत्कृतेभ्यः अज्ञानतोऽज्ञानतश्चा-

प्र० ३६

प्र०

४०

परार्द्धे तस्य प्रथमवर्षे प्रथमपक्षे प्रथमदिवसे अन्हो द्वितीययामे तृतीयमुहूर्ते प्रथमघटिकायां सप्तमे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे बौद्धावतारे विक्रमशके वर्तमानेऽमुकनाम्नि सम्वत्सरे उत्तरायणे वसन्तऋतौ अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकनक्षत्रे अमुकयोगे अमुककरने अमुकराशिस्थिते चन्द्रे अमुकराशिस्थते सवितरि अमुकराशिस्थे देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथास्थानस्थितेषु सत्सु एवं गुणविशिष्टे देशे काले च अमुकशर्मणो मम जन्मप्रभृति अद्य दिनं यावत् ज्ञाताज्ञात-कामाकाम सकृदसकृत्-कृत-कायिक-वाचिक-मानसिक-सांसर्गिक-स्पृष्टास्पृष्ट—भुक्ताभुक्तपीतापीत—सकलपातकातिपातकोपपातक—लघुपातकसङ्करीकरण—मलिनीकरणापात्रीकरण-जातिभ्रंशकरप्रकीर्णकपातकानां मध्ये संभावितानां पापानां क्षयद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं पर्षदुपदिष्टं षडब्द-त्र्यब्द-सार्द्धाब्दान्यतमं प्रायश्चित्तं पूर्वोत्तराङ्गयुतं गोमूल्यदानरूपप्रत्याम्नायद्वाराऽहमाचरिष्ये, इति प्रधानप्रतिज्ञासङ्कल्पं कृत्वा—

प्र०

४०

भ्यस्तेभ्यः अत्यान्ताभ्यस्तेभ्यः चिरकालाभ्यस्तेभ्यः एव षोडशविधेभ्यः पापेभ्यस्त्तो भूयान्मुमुक्तो मुयात् । इत्यनुवादं कुशकुसुमपाणिस्तिष्ठन्प्रेषयित्वा सभ्या सर्वे तथास्त्विति त्रिवारं वदेयुऽ ।। इति केचित् ।

गो वधो दशविधऽ गौतमः—कूररज्ज्वा कण्ठवन्धो दारुबन्धस्तथागले । निराधारे स्थले बन्धस्तथा ग्रासनिपीडनम् ।। ताडन रज्जुदण्डाद्यैस्तथा सञ्चरो घनम् । शृङ्गच्छेदस्तथावाऽऽह्नो द्विवारं दोहनं तथा । वत्सेमृते क्षीरबाणमादी नंवर्मवक्तता । इति दशधाहिंसा गवां प्रोक्ता मनीषिभिः ।।

प्र०

म०

४१

शरीरेप्सितप्रायश्चित्तस्याङ्गत्वेन केशश्मश्रुनखानि वापयिष्ये (वप्स्ये) इति सङ्कल्प्य—

ॐ यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च । केशानाश्रित्य तिष्ठन्ति तस्मात्केशान् वपाम्यहम् ॥ इति मन्त्रं पठित्वा शिखामादौ कृत्वाऽधस्तात् सर्वतः केशादीनि वापयेत् । ततः—

ॐ आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजापशुवसूनि च । ब्रह्म प्रज्ञां च मेधां च त्वं नो देहि वनस्पते ॥

ॐ अन्नाद्याय व्यूहध्वꣳ सोमो राजाऽयमागमत् । स मे मुखं प्रमार्क्ष्यते यशसा च भगेन च ॥

इति द्वादशाङ्गुलप्रमाणेन अपामार्गादिकाष्ठेन प्राङ्मुख उदङ्मुखो वा दुर्गन्धिनाशाय दन्तधावनं कृत्वा तूष्णीं मार्जनात्मकं स्नानं कुर्यात् । ततः—'करिष्यमाणप्रायश्चित्ताङ्गत्वेन यजमानशरीर-

---

(१) वापयेदिति-अनुपातके महापातकेऽतिपातके दण्डेन गोमरेण त्रैवर्णिकस्वामिकाया गोरपालननिमित्तमरणे पालकस्य च सशिखं वपनम् । एवं सत्रेऽपीति वचनात्सशिखं वपनमिति । यतेर्विधवानां च सशिखं वपनम् महापातकादावपि सधवानां द्व्यङ्गुलछेदनं वपनम् । राजपुत्रविद्वद्ब्राह्मणानमिच्छया वपनाभावः । तदा च द्विगुणं प्रायश्चित्तं दक्षिणा च द्विगुणा । अभ्युदयार्थमपि प्रायश्चित्तमुक्तं तत्र वपनाभावः । न च दक्षिणायाः प्रायश्चित्तस्य वा द्वैगुण्यं तत्रेति । पुत्रादिद्वारा प्रायश्चित्ताचरणोऽपि वपनं सोध्यस्यैव । संस्काराणां तद्गतत्वस्यैव न्याय्यत्वात् । इदं वपनं निषिद्धकालेऽपि कार्यम् । 'क्षौरं नैमित्तिकं कार्यं निषेधे सत्यपि ध्रुवम् । पुत्रादिमृतियात्रासु प्रायश्चित्ते च तीर्थके ॥ इति स्मृतेः । इदं जीवत्पितृकेणापि कार्यम् । मुण्डनं पिण्डदानं च प्रेतकर्म च सर्वशः । न जीवत्पितृकः कुर्यात् गुर्विणीपतिरेव च ॥ इति निषेधस्य रागप्राप्तविषयत्वात् विधिस्पृष्टेऽनवकाशात् ।

४१

प्र० ४२

सम्बन्धसमस्तपापक्षयार्थं भस्मादिभिर्दशविधस्नानानि करिष्ये'—इति सङ्कल्प्य तत्र प्रथमं भस्मस्नानम् श्रौतं स्मार्तं वा तदभावेऽन्यद्वा भस्म आदाय वामपाणौ गृहीत्वा दक्षिणहस्तेनाच्छाद्य—'ॐ अग्निरिति भस्म वायुरिति भस्म जलमिति भस्म स्थलमिति भस्म व्योमेति भस्म सर्वं ह्वा इदं भस्म मन एतानि चक्षुंषि भस्मानि' इति मन्त्रेण भस्म अभिमन्त्र्य—ॐ ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदा शिवोम् इति शिरसि। ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि। तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्—इति मुखे। ॐ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः। सर्वेभ्यः शर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः—इति हृदये। ॐ वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः। श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमो बलाय नमो बलप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय

प्र० ४२

---

(१) एतानि दश स्नानानि स्त्रीशूद्राणाममन्त्रकाण्येवेति प्रयोगदीपे। अथवा ईशानाय नमः, तत्पुरुषाय नमः, अघोराय नमः, बलदेवाय नमः, सद्योजाताय नमः। इति प्रणवेन च शिरो मुख-हृदय-गुह्य पाद-सर्वाङ्गेष्वभिलिप्य स्नायात्। (२) केशनखेति-ग्रहणं संप्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्ते चिकीर्षिते। दिनान्ते नखरोमादीन् स्नानमाचरेत्।

भस्मगोमयमृद्वारि पञ्चगव्यादिकल्पितैः। मलापकर्षणं कार्यं बाह्यशौचोपसिद्धये॥ दन्तधावनं पूर्वेण पञ्चगव्येन संयुतमिति विष्णुवचनात् कृच्छ्राणां व्रतरूपाणां श्मश्रुकेशादि वापयेत्। अक्षिरोमशिखावर्जम्। इति वशिष्ठोक्तेश्च प्राजापत्याद्यनुष्ठाने वपनमावश्यकम्।

प्र०

नमः—इति गुह्ये । ॐ सद्यो जातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः । भवे भवेनाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः—इति पादयोः ॐ इति प्रणवेन सर्वाङ्गे मस्तकादिपादान्तं भस्म विलिम्पेत् । ततः शुद्धगोमयमादाय—[2]ॐ अग्रमग्रचरन्तीनामोषधीनां रसं वने । तासामृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम् ॥ यन्मे रोगं च शोकं च नुद गोमय सर्वदा । इत्यभिमन्त्र्य सूर्याय प्रदर्श्य—ॐ मा नस्तोके तनये मा न ऽआयुषि मा नो गोषु मा नो ऽअश्वेषुरीरिषः । मा नो व्वीरान् रुद्र भामिनो व्वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥ इति मन्त्रेण दक्षिणहस्तगृहीतगोमयेन शिरस्तो-नाभ्यन्तं, वामहस्तगृहीतेन नाभितः पादान्तं विलेपनम् । देशभेदान्मन्त्रावृत्तिः । ततो मृत्तिकां गृहीत्वा—ॐ अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे । शिरसा धारयिष्यामि रक्ष मां त्वं पदे-

म०

४३

(१) प्रायश्चित्तममूखे—ईशानेन शिरो देशे मुखं तत्पुरुषेण तु । हृदोदेशमघोरेण गुह्यं वामेन सुव्रत । सव्येन पादौ सर्वाङ्गं प्रणवेन तु शोधयेत् ॥ इति । ॐ प्रसद्य भस्मना योनिमपश्च पृथिवीमग्ने ।! सꣳ० सृज्य मातृभिष्ट्वं जोतिस्मान्पुनरासदः ॥

(२) प्रायश्चित्तमयूखे—अग्रमग्रमिति स्मृत्वा मानस्तोकेन वा पुनः । गोमयैर्लेपयेत्प्राज्ञः सोदकैर्भानुदर्शितः ॥ योगियाज्ञवल्क्यः—त्रिधां कृत्वामुदं पातु गोमयं वा विचक्षणः अधमोत्तममध्यानामङ्गानां क्षालनं च तैः । कौर्मे—गोमयस्य प्रमाणन्तु येनाङ्गं लेपयेत्ततः ।

(३) न रात्रौ मृत्तिकास्नानं नैव भोमार्कवारयोः । सन्ध्ययोर्नैव गोमूत्रं म शुध्यै गोमयं निशि । मृत्तिकां गोमय चापि न निशायां समाहरेत् । न गोमूत्रं प्रदोषेसु गृह्णीयाद् बुद्धिमारः । न प्रातर्मृत्तिकास्नानं न च भोमार्कवारयोः । मध्यन्दिने तु कर्तव्यं नातिमध्यन्दिने रवौ ।

पदे॥ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना । मृत्तिके ब्रह्मदत्तासि काश्यपेनाभिवन्दिता ॥ मृत्तिके हर मे पापं यद्दैवं यच्च मानुषम् । मृत्तिके देहि मे पुष्टिं त्वयि सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥ त्वया हतेन पापेन जीवामि शरदां शतम् ॥ इति पठित्वा—ॐ नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतꣳ सपर्यत ॥ दूरे दृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शꣳसत ॥ इति सूर्याय प्रदर्श्य, ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्यपाꣳसुरे स्वाहा ॥ इति गोमयवदनुमन्त्रावृत्तिः लिम्पेत् अत्रापि । अथ जलस्नानम्—ॐ आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ॥ विश्वꣳहि रिप्रम्प्रवहन्ति देवीः ॥ इति मन्त्रेण नद्यादौ निमज्ज्य—

अश्वकान्तेति वे शुद्धा मृत्तिकामहरेच्छनैः । नमो मित्रस्येत्यादित्याय दर्शपे समृदा करोत । गन्धद्वारामिति जप्त्वास्वान्यङ्गान्यलेपयेत् शिवपुराणे-अश्वकान्त इति स्मृत्वा मन्त्रेणामन्त्र्यमृत्तिकाप्त् । उद्धृतासीति मन्त्रेणपठेत् सुसमाहितः । नमोमित्रस्येति ऋचा दर्शयित्वा च मानवे । आरुह्यंति च गात्राणि सयालभ्य द्विराचायेत् । आलभेत मृदाङ्गानि इदं विष्णुरितित्यु वा । आयुष्कामऽ शिरो लेपमृदा कुर्याद्द्विजः पुरा। श्रीकामः पादयोः शौच मृदापूर्व समाचरेत्

पारस्करः—एकया तु शिरः क्षाल्यं द्वाभ्यां नाभेस्तयोपरि । मृद्भिश्च तिसृभिः कार्यं षड्भिः पायु तथैव च । कटिवस्त्यूरुजंघाश्च पादौ च तिसृभिस्ततः । तथा हस्तौ परिक्षाल्य द्विराचामःसमाहित ।

(१) इदमापः—आपो हि ष्ठा इति वा तत्र मूलं मृग्यम् । मात्स्ये—सावित्र्यादाय गोमूत्रं गन्धद्वारेति वै सकृत् । आप्यायस्वेति च क्षीर दधिक्राव्णेति चै दधि । तेजोऽसिति घृतं तद्वद्देवस्येति चोदकम् । कुशमिश्र जपेद्द्विद्वाःपञ्चगव्य भवेत्ततः ॥

ॐ उदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि ॥ इत्युन्मज्जेत्। नद्याद्यभावे—ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्॥ समूढमस्य पाᳫँसुरे स्वाहा ॥ इति मन्त्रेण स्नायात्। शक्त्यभावे—ॐ आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऽऊर्जे दधातन ॥ महेरणाय चक्षसे ॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः ॥ उशतीरिव मातरः ॥ तस्मा ऽअरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ ॥ आपो जनयथा च नः ॥ इति तिसृभिर्मार्जयेत्। गायत्र्या गोमयवद् गोमूत्रमनुलिप्य, गोमयं पुनः पूर्ववदनुलिम्पेत्। ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्॥ भवा वाजस्य सङ्गथे ॥ इति दध्यनुलिप्य ॐ दधिक्राव्णो ऽअकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ॥ सुरभि नो मुखा करत्प्रण ऽआयूᳫँषि तारिषत्॥ इति दध्यनुलिप्य—ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धाम नामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥ इति घृतमनुलिप्य ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवे[1] शिवनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥ अभिषिञ्चामि इति कुशोदकेन स्नायात्। ततो नाभिमात्रजले तिष्ठन् स्नानाङ्गतर्पणं कुर्यात्—यज्ञोपवीती प्राङ्मुखः साक्षताभिरद्भिः—

(१) देवस्य त्वेत्यनन्तरमश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यामभिषिञ्चामीति वाक्यशेषः पूरणीय इति निबन्धकृतः ।

म० ४५ म० ४५

ॐब्रह्मादिदेवांस्तर्पयामि। ॐभूर्देवांस्त०। ॐभुवर्देवांस्त० ॐस्वर्देवांस्त०। ॐभूर्भुवः स्वर्देवांस्त०। इति एकैकमञ्जलिं देवतीर्थेन दत्वा, उदङ्मुखो निवीती सयवाभिरद्भिः प्राजापत्यतीर्थेन—ॐ कृष्णद्वैपायनादिऋषीं स्त०। ॐ भूऋषींस्त०। ॐ भुवः ऋषींस्त०। ॐ स्वऋषींस्त०। ॐ भूर्भुवः स्वऋर्षींस्त० इति द्वौ द्वाञ्जलो दत्वा दक्षिणामुखः प्राचीनावीती पितृतीर्थेन सतिलाभिरद्भिः—सोमं, पितृमन्तं, यमम्, अग्निष्वात्तं कव्यवाहनादींस्त०। भूः पितॄँस्त०। भुवः पितॄँ स्ता०। स्वः पितॄंस्त०। भूर्भुवःस्वः पितॄंस्त। इति तर्पयित्वा तीरगत्य "ॐ अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाःकुले मम। भूमौ दत्तेन तोयेन तृप्ता यान्तु पराङ्गतिम्॥ इति मन्त्रेण तटेऽञ्जलिं

---

(१) प्रयोगप्रदीपे—अत्र विष्णोर्देवतात्वेन श्रावणान्नात्र पित्रादीनां देवतात्वम्, सङ्कल्पत्वाच्चार्घावाहनाग्नौ करणविकरणवनेजनपिण्डाक्षय्योदकस्वधावाचनानामभावः। सर्वे यैव धर्माः सर्वेषु विप्रेषु विष्णोरेव पूजनम्। अथ पद्धतिः—देशकालौ संकीर्त्य—विष्णुश्राद्धाङ्गत्वेन विष्णोः पूजनं करिष्ये—इति संकल्प्य विष्णुं संपूज्य प्रायश्चित्ताङ्गं विष्णुश्राद्धं करिष्ये" इति संकल्प्य उदङ्मुखान् कुशवटून्वोपवेश्य धूरिलोचनसंज्ञकानां विश्वेषां देवानामिदमासनम्। प्रद्युम्नसङ्कर्षणवासुदेवानामेतदासनम्। धूरिलोचनौ विश्वेदेवाः दत्तं गन्धाद्यर्चनमक्षयं वा स्वाहा नमः। प्रद्युम्नसंकर्षणवासुदेवाः दत्तं गन्धाद्यर्चनमक्षयं वः स्वाहा नमः धूरिलोचनौ विश्वेदेवाः यथाकालं दास्यमानं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तमन्नमक्षयं वः स्वाहा नमः एवमन्येभ्यः। अथवाऽऽपान्न द्विगुणं चतुर्गुणं वा तन्निष्क्रयं वा हिरण्यं स्वाहा नमः। सकृत्सकृदपोदानम्। अश्नत्सुजपः शिवा आपः सन्त्वित्यादि। अघोराप्रद्युम्नसङ्कर्षणासुदेवाः सन्तु—हति प्रार्थना। गोत्रन्नो वर्द्धतामित्यादि। धूरिलोचनौ विश्वेदेवाः इदं हिरण्यं तन्निष्क्रयं वा दक्षिणामक्षयं वः स्वाहा नमः। ॐ विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। ॐ वाजे वाजे ॐ आमा वाजस्येत्यनुगनमिति विष्णुश्राद्धं मयूखे। नारायणभट्टैस्तु मूलपद्धत्यनुसारेणोक्तम्।

प्रक्षिप्य ॐ ये कचासमत्कुले जाता अपुत्रा गोत्रिणी मृताः । ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पोनिष्पीडनोदकम् ॥ इति तीरे वस्त्रं निष्पीड्य ईपवीती ॐ यन्मया दूषितं तोयं शरीरमलसंभवात् । तद्दोषपरिहारार्थं यक्ष्माणं तर्पयाम्यहम् ॥ इति यक्ष्मतर्पणं कृत्वा ॐ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यन्मया दुष्कृतं कृतम् । तत्क्षमस्वाखिलं देवि जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥ इति नदीं क्षमापयेत् । ततो धौते वाससी परिधाय द्विराचम्य भस्मना त्रिपुण्ड्रं चन्दनादिनोर्ध्वपुण्ड्रं वा पार्वणेन विधिना विष्णुश्राद्धं साङ्कल्पिकं कुर्यात् । अथवा शालिग्रामशिलायां श्वेतचन्दनादिभिर्विष्णुं षोडशोपचारैः सम्पूज्य ब्राह्मचतुष्टयं च सम्पूज्य

(१) निधाय वैष्णवं श्राद्धं साङ्कल्पं निजकालया ॥ धेनुं दद्यात् द्विजेभ्योऽथ दक्षिणां च स्वशक्तितः ॥ इति शातातपवाक्यात् । (२) गोदानाशक्तौ यथाशक्ति तन्मूल्य दद्यात् । प्रयोगदीपे अत्र दक्षिणा न भवति । (३) अथ प्रत्यक्षगोदानम्–उदङ्मुखं ब्राह्मणमुपवेश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा-अङ्गीकृतप्रायश्चित्तस्य पूर्वाङ्गत्वेन विहितं गोदानं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य गोप्रतिगृहीत्रे ब्राह्मणाय एतत्ते पाद्यं दत्वा एवमर्घ्यंगन्धादिभिरभ्यर्च्य कुण्डलमुद्रिकादि दद्यात् । ततः स्वपुरतः प्राङ्मुख्याः सवत्सायां गोस्थापनम् । सवत्सायै गवे नम इति तस्या गन्धमाल्यवस्त्रादिभिः पूजनम् । ब्राह्मणहस्तेषु प्रोक्षितादिकृत्वा वामहस्ते ससुवर्णमाज्यं पात्रं गृहीत्वा तत्र प्रक्षिप्य दक्षिणहस्ते सयवकुशजलमादाय देशकालौ सकीर्त्या-ज्यादिग्धं योपुच्छं गृहीत्वा–गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश । यस्मात्तस्माच्छिवं मे स्यादिहलोके परत्र च इति उक्त्वा अदो गोत्राय अदः प्रवराय अदः शाखाध्यायिने अदः शर्मणे ब्राह्मणाय अदो गोत्रः अदः शर्माऽहं प्रारीप्सि तत्प्रायश्चित्तसाद्गुण्यकाम इमां सवत्सां गां रुद्रदैवतां यथाशक्त्यलंकृतां तुभ्यमहं सम्प्रददे । नममेति ब्राह्मणहस्ते गोपुच्छसजलमाज्यपात्रान्वितं दद्यात् । ब्राह्मणः तां प्रतिगृह्य कोदात् इति पठेत् गोदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थे हिरण्यं दक्षिणां तुभ्यं संप्रददे इति दक्षिणां दद्यात् ।

ब्राह्मणचतुष्टयं विष्णूद्देशेन भोजयिष्ये—ब्राह्मणचतुष्टयपर्याप्तं भोजनमिष्टलड्डुकादिकम् आमान्नं तन्निष्क्रयं वा दास्ये—इति तेन श्रीभगवान् पापापहा महाविष्णुः प्रीयताम् । इदमेव प्रायश्चित्ताङ्गं विष्णुश्राद्धमित्यभिधीयते । ततः प्रायश्चित्ताधिकारसिद्ध्यर्थं प्रारिप्सितप्रायश्चित्तपूर्वाङ्गतया विहित-गोदानप्रत्याम्नायत्वेन यथाशक्ति गोमूल्यं सुवर्णादिद्रव्यं वह्न्यादिदैवतं तुभ्यमहं संप्रददे—इति दत्वा प्रायश्चित्तस्य पूर्वाङ्गतया विहितं महाव्याहृतिभिराज्येनाष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिं वा होमं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य —स्थण्डिले त्रिभिर्दर्भैस्त्रिः[1] परिसमूहनम् । गोमयोदके त्रिवारमुपलेपनम् । स्फ्येन स्रुवेण वा उदक्संस्थाः प्रागग्रास्तिस्रो रेखाः स्थण्डिलप्रमाणाः प्रादेशमात्रा वा कृत्वा अनामिकाङ्गुष्ठेन यथोल्लेखनक्रमं रेखाभ्यस्त्रिः पांसूनुद्धृत्य—ईशानकोणे निक्षिपेत् । मणिकपात्रसत्वे

---

(१) दर्भांस्तु त्रीन्समादाय त्रिभुमेरपसारणम् । पांसूनामुत्तरासंस्थं तज्ज्ञेयं परिसमूहनम् । कृमिकीटपतङ्गाद्या भ्रमन्ति वसुधातले । तेषां संरक्षणार्थाय कुर्यात्परिसमूहनम् । परिसदूहनादयः पञ्चापि भूसंस्कारास्त्रस्त्रिः कर्तव्या इति कातीयश्रौतसूत्रे (१।७।२७) निरूपितं कर्कादिभिः (२) कर्तव्यं दक्षिणारम्भं त्रिरुदक्संस्थमेव च। गोमयोदकमाय तेन त्रिरुपलेपनम् । पुराइन्द्रेण वज्रेण हतो वृत्रो महासुरः । मेदसा व्यापिता भूमिस्तदर्थमुपलेपनम्

(३) रेखात्रयमुदक्संस्थ प्रागग्रं स्थण्डिलारधि । अथवैतत्प्रकुर्वीत द्वादशाङ्गुलमायतम् । खादिरं स्फ्यं प्रजल्प्याथ तिस्रो रेखाः समुल्लिखेत् । स्थण्डि-लोल्लेखनं कुर्यात्स्रुवेण च कुशेन वेति॥अथोल्लिखति तद्यदेवास्यै पृथिव्या अभिष्ठितंवाऽमिष्ठ्यूतं वा तदेवास्या एतदुद्धन्त्यथ यज्ञियामेव पृथिव्यामाधत्ते तस्माद्वा उल्लिखति श० ब्रा० (२।१।१।२) (४) विचरन्ति पिशाचा ये आकाशस्थाः सुखासनाः। तेभ्यः संरक्षणार्थाय उद्धृतं चैव कारयेत् । स्वार्थे णिच् ।

प्र० ४६

तदुदकेन तदभावे कमण्डलूदकेन न्यूब्जहस्तेनाभ्युक्षेत् इति पञ्चभूसंस्कारान् कृत्वा ताम्रपात्रस्थं विधिनामानं लौकिकाग्निं वेद्यां स्वाभिमुखं स्थापयेत्। तत्र मन्त्रः—ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुपब्रुवे ॥ देवाँ२ऽआसादयादिह ॥ इति मन्त्रेण अग्निं संस्थाप्य अग्नेरुत्तरत आचार्यब्रह्मणो-र्वरणं कुर्यात्। अद्य अमुकोऽहं प्रायश्चित्तहोमकर्मणि आचार्यब्रह्मणोः पूजनपूर्वकं वरणं करिष्ये—इति

---

(५) उत्करं गृह्यरेखाभ्योऽरत्निमात्रे निधापयेत्। द्वारमेव तु द्रव्याणां दिशि स्मृतमिति (गृह्यासंग्रहे)॥ (६) उत्तानेन तु हस्तेन प्रोक्षणं समुदाहृतम्। तिरश्चाऽवोक्षणं प्रोक्तं नीचेनाभ्युक्षणं स्मृतम्। (७) एते पञ्चभूसंस्काराः अग्न्यार्था न भूशुद्ध्यर्थाः। अशुद्धे देशे अग्निस्थापनानौचित्यात्। तस्माद्यत्राग्नेः स्थापनं तत्रैते कर्तव्याः। अपः श्रौते तान्त्रिकादौ च सर्वत्र भवन्ति। यत्र स्थापिते एवाग्निस्तत्र न भवन्ति। (८) पात्रान्तरेणार्पिते ताम्रपात्रादिके शुभे। अग्निप्रणयनं कुर्याच्छरावे वाऽथ नूतने ॥ इति। (९) शालाग्निसत्वे तु तत्रैव होमः-आज्येनैव तु शालाग्नौ जुहुयाद्व्याहृतीः पृथक्। इति विशेषविधानादिति रुद्रकल्पद्रुमे।

(१) अभिमुखमग्निं प्रणयन्ति (गो० सू०)। अग्नेः स्वाभिमुखस्थापनेऽपि तस्य होमकाले पर्युक्षणात्प्राक् प्राङ्मुखत्वमेव। (२) अग्निं कुण्डस्य स्थण्डिलस्य वाऽग्निकोणे निधाय तत्रैव आमादं क्रव्यादं चैतदङ्गारद्वयरूपमग्निं परत्यज्य शेषमग्निं कुण्डमध्येऽग्निं दूतमिति स्थापयेत्। क्रव्यादामादोरङ्गारयोः स्थण्डिलाद् बहिः प्रक्षेपस्तु प्रामादिकः स्पष्टं चैतत् धृष्टिरसीति (शु० य १।१७) महीधरकृतेभाष्ये। सम्पुटेनाग्निमानीय स्थाप्याग्नेर्दिशि कुण्डतः। आमक्रव्यभुजौ तस्मादुद्धृत्वा कुण्डे विनिक्षिपेत्। (३) सर्वत्र स्मार्ते कर्मणि यजमान एव कर्ता नान्य ऋत्विक। श्रौते अध्वर्योरिव स्मार्ते कर्मणि तस्यानुक्तत्वात्। अतोऽत्र प्रायश्चित्ते विवाहादौ न आचार्यं वृत्वा कर्मारम्भणीयमेव न सर्वत्रावश्यकम्, यजमानस्यैव कर्तृकत्वात्। तदसंभवे प्रधानमात्रं वा यजमानेन कर्तव्यम्। अन्यत् सर्वमाचार्येणैव कर्तव्यम्। यजमानासान्निध्ये तु तदनुमत एव प्रधानानुष्ठानं त्यागं च कर्यादिति। केचिन महाव्या-

म० ४६

सङ्कल्प्य गन्धाक्षपुष्पैः सम्पूज्य वरणसामग्रीं गृहीत्वा गन्धाक्षतपुष्प[illegible]यज्ञोपवीत-
पुष्पमालालङ्करणादिभिः करिष्यमाणामुकहोमकर्मणि आचार्यकर्मणि आचार्यकर्म कर्तुमाचार्यत्वेन
त्वामहं वृणे। वृतोस्मीति प्रत्युक्तिर्ब्रह्मणः। आचार्यं प्रार्थयेत्—आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां
बृहस्पतिः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् आचार्यो भव सुव्रत॥ तथा—प्रायश्चित्तहोमकर्मणि
कृताकृतावेक्षणादिब्रह्मकर्मकर्तुं ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे वृतोऽस्मीतिप्रतिवचनम्। ब्रह्माणं
प्रार्थयेत्—यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदधरो विभुः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव
द्विजोत्तम॥ अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोऽभ्यर्थिता मया। सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं शान्तिकं
विधिपूर्वकम्॥ अस्मिन् होमकर्मणि त्वं मे आचार्यो भव। अहं भवानीति प्रत्युक्तिः। त्वं मे

हुतिहोमे गुह्योक्तहोमेतिकर्तव्यतां नेच्छन्ति तदयुक्तम्। 'एष एव विधिर्यत्र क्वचिद्धोमः'' इत्यनेन च प्राप्ताया होमेतिकव्यताया अपवादमन्तरा बाधा-
योगात्। अन्ये तु निरुप्याज्यमधिश्रित्य स्रुक् स्रुवं सम्मृज्योद्वास्योत्पूयावेक्ष्य जुहुयादेवठं० सर्वत्र (का० श्रौ ४) इति पूर्णाहुतिधर्ममिच्छन्ति
तदप्ययुक्तम्। श्रौतानां धर्माणां वाक्यमन्त्ररेण स्मार्ते कर्मण्यप्रवृत्तेः।

ब्रह्मा भव। भवानीति प्रत्युक्तिः। इति वरणं विधाय 'अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनं पीठं कुशैराच्छाद्य अग्नेरुत्तरतः पूर्वं वृतं ब्रह्माणं तत्रोपवेश्य प्रतिनिधिभूत आचार्य आत्मासनमग्नेः पश्चात्, यजमानासनञ्चाग्नेरुत्तरतः प्रागग्रैः कुशैः सम्पाद्य' अग्नेरुत्तरतः पश्चिमभागे एकमासनं पूर्वभागे द्वितीयमासनं प्रागग्रैः कुशैः कल्पयित्वा प्रणीतापात्रं द्वादशाङ्गुलदीर्घं चतुरङ्गुलखातं सव्यहस्ते कृत्वा दक्षिण

---

(१) ब्रह्मवरणात् पूर्वमाचार्यवरणाम्—यजमानः शुचिः स्नातः श्रद्धायुक्तो जितेन्द्रियः पादशौचार्घाचामाद्यैराचार्यादीन् समर्चयेत्। इति वसिष्ठवचनेन वरणे आचार्यपूर्वकत्वप्रतीते। (२) पञ्चकुण्डयादावुदङ्मुखे होतरि दिग्वर्यासेन उदीची दिक् प्राचीवद्भवति, तेन प्राची दक्षिणा, दक्षिणा प्रतीची चोत्तरेति उदङ्मुखः सर्वम् का०श्रौ० ५।१०।३। इति सूत्रे देवयाज्ञिकाः। अतो होता उदङ्मुखस्तदा ब्रह्मा पूर्वस्यां दिश्युपविशेत्। पात्रासादनादिक पश्चिमर्मादशीति बोध्यम्। एव पित्र्ये कर्मणि दक्षिणा प्राचीवद्भवति। अपरा च दक्षिणा, उत्तरा चापरा, पूर्वा चोत्तरेति दिग्विपर्योपः श्रौतसूत्रे ५।८।२। उक्तः। (३) आसनं ब्रह्मणः कार्यं वारण वा विकङ्कतम्। हस्तमात्रं चतुःशक्ति मूलदण्डसमन्वितम्। इति। ब्रह्माचार्यप्रणीतानामासन च त्रिभिः कुशैः। न द्वाभ्यां नैकदर्भेण ऋषयो वहवो विदुः। उत्तरे सर्वपात्राणि उत्तरेऽपां प्रणयनं किमर्थं ब्रह्मदक्षिणे॥ यमो वैवस्वतो राजा वसते दक्षिणः दिशि। तस्मात्सं रक्षाणार्थाय ब्रह्मा तिष्ठति दक्षिणे॥ प्रत्यक्षब्रह्मणोऽभावे पञ्चाशता कुशैर्ब्रह्मा कर्तव्यः। पञ्चाशत्कुशको ब्रह्मा तदर्धेन तु विष्टरः। ऊर्ध्वकेशो भवेद् ब्रह्मा लम्बकेशस्तु विष्टरः॥ दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः॥ इति छन्दोगपरिशिष्टे।

(१) विधानदीपिटायाम्·—कुशतुर्यमथादाय कुर्यात्तेनासद्वयम्। एकं वायव्यकोणेऽग्नेर्द्वितीयं तूत्तरेऽग्नितः। ततो दक्षिणहस्तेन द्वादशाङ्गुलदीर्घकम्। चतुरङ्गुलमुत्सेध चतुरङ्गुलमायतम्। चतुरङ्गुलखात च गृहीत्वा वारण शुभम्॥ (२) प्रणोतादमसं वामे हस्ते कृत्वोत्तरेण च। उदपात्रं समुद्धृत्य तत्र सपूरयेज्जलम्। पूर्वासने निधायैनमुत्तरेऽथ निधापयेत्। प्रणीता उत्तरे स्थाप्या वितस्त्यन्यरतोऽग्नितः। इति। चमसानां तु वक्ष्यामि दण्डाः स्युश्चतुरंगुलाः। त्र्यगुलं तु भवेत् खातं विस्तारे चतुरगुलम्। त्रिकङ्कतमयाः श्लक्ष्णास्त्वग्नि-

हस्तोद्धृतपात्रस्थजलेनापूर्य दर्भैराच्छाद्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्य पश्चिमासने निधाय आलभ्य पूर्वा-
सने निदध्यात्[४]। पूर्वादिदिक्षु प्रागग्रैरुदगग्रैश्च त्रिभिस्त्रिभिश्चतुर्भिश्चतुर्वा कुशैरग्निं परिस्तरेत्[५]।

लाश्चामसाः स्मृताः, इति। यज्ञपार्श्वोक्तेः त्र्यगुलखातोऽपि। दण्डस्य चतुरङ्गुलत्वोक्तावपि अत्र दण्डो द्व्यंगुल एव अधिकस्य प्रयोजनाभावात्। अत एव
दण्डः खलु प्रणीतानां स्यादप्यङ्गुष्ठमात्रकः इति क्वचिदुक्तम्। विकङ्कतामया इति तु सौमिकचमसविधायकमविरोधादत्रापि गृह्यते इति। भूमौ
प्रणीतापात्रं निधाय तत्रोदकपूरणं न कर्तव्यम्—नो भूमौ नैव हस्ते च न काष्ठोपरि संस्थिते। उदकं पूरयेत्तत्र आकाशवति संस्थिते। इति।
निषेधात्। आकाशवल्लक्षणमग्निगृहे मध्यमातर्जनीयुक्ता अङ्गुष्ठेन समन्विता। आकाशसहिता ख्याता प्रणीतापूरणे भवेत। (३) दर्भैराच्छादनं यद्यपि
कातीयश्रौतसूत्रे नोपलभ्यते तथापि उत्तरेणाग्निं दर्भेषु सादयित्वा दर्भैरपि दधाति-इति हिरण्यकेशिगृह्योक्तेः, देवयाज्ञिकैः पारकस्य दर्भैराच्छा-
दनस्य स्वीकृतत्वाच्च स्मार्ते कर्मण्यपि तदनुष्ठेयमेवेति। (४) कातीय श्रौतसूत्रे ॐ प्रणय इति ब्रह्मणाऽनुज्ञातेनाध्वर्युणा प्रणीताः प्रणीयन्ते अत्र मन्त्र-
पाठनिषेधात् तत्रत्योम्प्रणयेत्वाकारकानुमतिग्रहणस्थानीयं ब्रह्ममुखावलोकनमिति बोध्यम्। (५) उदगग्रैः प्रागग्रैश्च दर्भैरग्नीन्परिस्तृणाति, उदगग्राः
पश्चात्पुरस्ताच्च (आ० गृ०) परिस्तरणं वा सर्वेषां प्रागुदग्भिः (का० श्रौ० ४।१३।४५) उत्तराग्रं पूर्वदेशे पूर्वाग्रं दक्षिणे ततः।
उत्तराग्रं पश्चिमे तु प्रागग्रमुत्तरे तथा (पुरश्चर्यार्णव / चतुर्दिक्ष्वथवा दीर्घैः पूर्वपश्चिमयोर्दिशोः। उदगग्रैरितरयोः प्रागग्रैर्याज्ञिकैस्तृणैः इति प्रयोग-
चिन्तामणौ एकमेकमेखलके कुण्डे मेखलाधः परिस्तरेत्। द्विमेखले द्वितीयां मध्यमायां त्रिमेखले। स्थण्डिले सिकतानां तु बाह्यभूमौ
परिस्तरेत्। वह्नितस्तु परित्यज्य द्वादशांगुलतो बहिः। परिस्तरणदर्भास्तु षोडश द्वादशाऽपि वेति। ईशानं कोणमारभ्य पुनरीशान-
कोणगा। कुशैस्त्रिस्त्रिभिः कुर्यात्सव्येनाग्नेः परिस्तृतिरिति। पश्चादुत्तरतो वा स्यात्पात्रासादनमग्नितः उत्तरे चेदुदक्संस्थं प्राक्संस्थं
पश्चिमेभवेत्। प्राग्बिलान्युदग्राणि प्राक्संस्थान्यग्नितो यदि। प्रागग्रोदग्बिलान्यग्नेरुदक्संस्थानि चैव हीति। प्रागग्रैर्दर्भैरग्निं परिस्तृ-
णाति—अपि वोदगग्राः पश्चात्पुरस्ताच्च भवन्ति। दक्षिणाग्रानुत्तराग्रान्करोत्युत्तरानधरान्यदि। प्रागुदग्राः (हिरण्यके गृ० १।१।१७)

पुरस्ताद्दक्षिणतः पश्चादुत्तरतः । [1]तत्र पुरस्तात् पश्चाच्च उदगग्रैः, दक्षिणत उत्तरतश्च प्रागग्रैः । ततः अर्थवन्ति वस्तूनि अग्नेः पश्चिमतः प्राक्संस्थानि प्राग्बिलान्युदगग्राणि, उत्तरतश्चेत् उदक्संस्थानि उदग्बिलानि प्रागग्राणि कार्यक्रमेण द्वन्द्वमासादयेत् । पवित्रच्छेदनानि त्रीणि कुशतरुणानि, द्वे पवित्रे साग्ने अनन्तर्गर्भे, प्रोक्षणीपात्रम्, आज्यस्थाली, सम्मार्जनकुशाः त्रयः पञ्च वा, उपयमन कुशास्त्रिप्रभृतयस्त्रयोदशपर्यंताः, समिधस्तिस्रः पालाश्यः प्रादेशमात्र्यः, स्रुवः खादिरः,

(१) द्वन्द्व पात्राण्युदाहरतीति श्रुते । (श. ब्रा. १।१।२।२१।) कार्यक्रमेणेति । प्रांच प्राञ्चंमुदगग्नेरुदगग्नं समीपतः । तत्तथाऽऽसादयेद् द्रव्यं विनियुज्यते ॥ इति (छन्दो. प) विपुलस्थानासंभवे तु प्राञ्च प्राञ्चमित्युक्तवाक्यात्तथा कायमिति देवयाज्ञिकाः । यद्यथा विनियुज्यते इति वचनाद्विनियोग (कार्यं क्रमेण पात्रासादनं कर्त्तव्यमिति कर्कादयः । देवयाज्ञिकास्तु आसादनक्रमेणणेत्याहुः तत्र वचनं नोपलभ्यते । (२) प्रोक्षणीपात्रमिति । वैकङ्कतं पाणिमात्रं प्रोक्षणीपात्रमुच्यते । हंसमुखप्रसेक च त्वग्बिलं मूलदण्डकम् । (३) आज्यस्थाली प्रकर्तव्या तैजसद्रव्यसंभवा । महीमयी वा कर्त्तव्या यथालाभं प्रकीर्तिता ॥ इति छन्दोगपरिशिष्टवचनात् आज्यास्थाल्या प्रमाण यादृच्छिकम् । (४) स्रुवसंमार्जनार्थाय पञ्च वाऽथ त्रयोऽपि वा । प्रादेशमात्रान् गृह्णीयात् समार्जनकुशसंज्ञकानिति ॥ संमार्गाय त्रयः प्रोक्ता उपग्रहकुशास्तथा त्रयो वा पञ्च सप्त नवैकादयश वा ता ॥ त्रयोदश समुद्दिष्टाः सर्वहोमेषु याज्ञिकंरिति । शाङ्खायनगृह्यकारिकायां तु–उ ग्रहकुशानांसख्या स्यात्पञ्चविंशति उक्तम् । (१, प्लक्षार्काश्वत्थान्यग्रोधप्लक्षवैकङ्कतोद्भवाः । वेतसोदुम्बरौ बिल्वश्चन्दन सरलस्तथा । शालश्च देवदारुश्च खदिरश्चेति याज्ञिकाः । इति । विशीर्णा विदला ह्रस्वा वक्रास्तु सुषिरा कृशा । दीर्घा; स्थूला घुणैर्जुष्टाः कर्मसिद्धिविनाशिकाः ॥ नाऽङ्गुष्ठादधिका कार्या समित् स्थूलतराक्वचित् । प्रागग्राः समिधो देयास्तथा काम्यंष्वपाटिताः ॥ शान्त्यर्थेषु सवल्काद्रा विपरीता जिघांसतः । वेदः समित्पवित्रं च त्रयं प्रादेशसंमितम् ॥ इध्मश्च द्विगुणः कार्यस्त्रिगुणः परिधि स्मृतः । इति ।

गव्यमाज्यम्, पूर्णपात्रं षट्पञ्चाशदधिकमुष्टिशतद्वयं तण्डुलपूरितं वा, बहुभोक्तुः पुरुषाहार परिमितं वा, कर्मोपयोगिनी दक्षिणा, गौर्ब्राह्मणस्य वरः, इत्युक्तो वरो वा। एतानि वस्तूनि अग्नेः पश्चात् प्राक्संस्थानि स्थापयेत्। पात्रासादनानन्तरमुपकल्पनीयानि—सुवर्ण-रजत-ताम्र-पद्म-पलाशादिपात्रं, यज्ञियकाष्ठम्, हरितानि सप्ताधिकानि कुशपत्राणि, पञ्चगव्यं च, गोमूत्रादि पृथक् पृथागति। तत्र पात्राणि प्राग्बिलान्युदगग्राणि स्थापयेत्। त्रिभिर्दर्भैः द्वे प्रच्छिद्य प्रादेशमात्रे पवित्रे कुर्यात्। प्रोक्षणीपात्रं प्रणीतासन्निधौ निधाय तत्र पात्रान्तरेण हस्तेन वा प्रणीतोदक मासिच्य पवित्राभ्यामुत्पूय पवित्रे प्रोक्षणीषु निधाय दक्षिणेन हस्तेन प्रोक्षणीपात्रमुत्थाप्य

---

(२) कपिञ्जलाधिकरणन्यायेन यत्र बहुत्वं श्रूयते तत्रापि सामर्थ्यात्त्रित्वसंख्यैव ग्राह्या, तयैव तदर्थस्य कृतत्वात् किमर्थमधिकानां ग्रहणम्। अयमेव न्यायः परिस्तरणकुश-संमार्गकुशोपयमनकुशेष्वपि ज्ञेय इति। (३) जरत्निमात्रः स्रुवोऽङ्गुष्ठापर्ववृत्तपुष्करः, खादिरः स्रुवः, इति च (का. श्रौ. १।३।) (४) त्रिकाण्डमण्डने—घृतार्थे गोघृतं ग्राह्यं तदभावे तु माहिषम्। (५) तच्च परार्घ्यं चेति द्विविधम्। तत्र पञ्चाशदधिकमुष्टि शतद्वयपरिमितं परार्घ्यम्। तदुक्तं यज्ञपार्श्वे—अष्टमुष्टि भवेत्किञ्चित् किञ्चिदष्टौ च पुष्कलम्। पुष्कलानि च चत्वारि पूर्णपात्रं तदुच्यते॥ पुरुषाहारपरिमितमपरार्घ्यम्। पुरश्चर्यार्णवे—षट्त्रिंशत्पलमानेन निर्मितं ताम्रपात्रकम्। तण्डुलैस्तत्समापूर्य सहिरण्यं सदक्षिणम्। दद्याद्विप्राय तत्तुष्ट्यै पूर्णपात्रमितीरितम्। छन्दोगपरिशिष्टे—ब्रह्मणे दक्षिणा देया या यत्र परिकीर्तिता। कर्मान्तेऽनुच्यमानायां पूर्णपात्रादिका भवेत्॥

सव्ये कृत्वा तदुदकं दक्षिणेनोच्छाल्य (दक्षिणहस्तमुत्तानं कृत्वा मध्यमानामिकाङ्गुल्योर्मध्यपर्वभ्यां जलस्योच्छालनं कृत्वा) प्रणीतोदकेन प्रोक्षेदिति प्रोक्षणीसंस्कारः। पवित्राभ्यां प्रोक्षणीभिरद्भिः आज्यस्थालीमुत्तानहस्तेन देवतीर्थेन संप्रोक्ष्य, सम्मार्जनकुशान्, उपयमनकुशान्, समिधः तिस्रः, स्रुवम्, आज्यम्, पूर्णपात्रम्, दक्षिणाश्च सादनक्रमेणैकैकशः संप्रोक्ष्य, असञ्चरे अग्निप्रणीतयोर्मध्ये प्रोक्षणीपात्रं सपवित्रं स्थापयेत्। आसादितमग्नेः पश्चान्निहितायामाज्यस्थाल्यामाज्यं गृहीत्वा अग्नावारोपयेत्। अधिश्रिते आज्ये ज्वलदुल्मुकमाज्यस्य समन्ताद् भ्रामयेत्। दक्षिणेन स्रुवमधोमुखं प्राञ्चं प्रतप्य सव्ये कृत्वा सम्मार्जनकुशाग्रैर्मूलतोऽग्रपर्यन्तम्, कुशमूलैः अधस्ताद्भागे

---

(१) प्रकृतौ येषां वस्तूनामुपयोगस्ता एव आसाद्यन्ते, वक्ष्यन्ते च। येषां विकृतौ उपयोगः तानि न आसाद्यन्ते किन्तु उपकल्प्यन्ते न प्रोक्ष्यन्ते च। प्रकृतौ अपि इन्धनादि नासाद्यते अचोदितार्थत्वात्। चोदिते हि यर्थात् प्राप्नोति तदेवासाद्यते याज्ञिकैः। विकृतावपि प्राकृतकार्यापन्नस्य वैकृतस्यासादवादि प्रवर्तत एव। (२) अत्र प्रोक्षण्युदकस्योच्छालनामति केचित् पद्धतिकाराः। प्रोक्षणीपात्रमेव सव्यहस्तस्थ सव्यहस्तसंलग्नं दक्षिणेनोर्ध्वं कुर्यादिति कर्कदेवयाज्ञिकादयः, सूत्रस्वारस्यं वैवमेवेति।

(१) अस्य संस्कारः हविर्ग्रहण्यामपः कृत्वा ताभ्यामुत्पुनाति सवितुर्व इति, ताः स्थानं तयोः, सव्ये त्वा दक्षिणेनोदिङ्गयति देवीराप इति, प्रोक्षिता स्थेति तासां प्रोक्षणम् इति कातीयसूत्रैर्लभ्यते (का॰ श्रौ. २।३।२२।) (२) उत्तानेन तु हस्तेन प्रोक्षणं

अग्रमारभ्य मूलपर्यन्तम् सम्मार्जनकुशान् अग्नौ[4] प्रहरेत्। ततः प्रणीतोदकेन स्रुवमभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्य कराभ्यां सम्मार्ज्य [1]आत्मनो दक्षिणतः कुशोपरि निदध्यात्। आज्यमुत्तार्य उत्तरतः स्थापयित्वा अग्नेः पश्चात् आनयेत्। अङ्गुष्ठाभ्याम्[3] अनामिकाभ्यां च धृताभ्याम् उदगग्राभ्याम् पूर्वपवित्राभ्याम् आज्यम् उत्पूय अवेक्ष्य अपद्रव्यनिरसनं कृत्वा प्रोक्षणीश्च पूर्वपवित्राभ्याम् उत्पूय तासु पवित्रे निदध्यात्। उपयमनकुशान् दक्षिणेनादाय वामहस्ते कृत्वा पवित्रे प्रणीतासु

वह्नेरुत्तरः स्थाप्या प्रणीता प्रोक्षणी तथा। उभयोरपि समुदाहृतम्। (३) असञ्चरः प्रणीताग्न्योरन्तरेण प्रकीर्तितः। इति कारिकायाम्। वेदाग्रैरन्तरतः प्राक् संमार्ष्ट्यनिशित इति विपर्यस्य कर्तव्यमन्तरं द्वादशाङ्गुलमिति विधानदीपिकायाम्। (४) अयं सम्मार्जनप्रकारः तान् कृतसंमार्गान् प्रोक्ष्याग्नौ प्रहरेदिति कारिकाकारः। दर्शपूर्णमासादावपि बर्हिर्मूलैः प्राङुत्क्रम्य इति कात्यायनश्रौतसूत्रे उक्तः। (५) तान् कृतसंमार्गान् प्रोक्ष्याग्नौ प्रहरेदिति कारिकाकारः। दर्शपूर्णमासादावपि

बर्हिर्मूलैः प्राङुत्क्रम्य इति कात्यायनश्रौतसूत्रे उक्तः। (५) तान् प्रणीताभिः सयौतीति (श. ब्रा.) वाक्यात्। केवलसंयवनार्थत्वे तु अग्नीषोमीये अग्नौ प्रक्षेप उक्त इति। (६) प्रणीतानां सर्वार्थत्वादिति भावः। निरूढे च-का श्रौ ६।२।४। प्रतिप्रसवानुपपत्तिः तत्रापि संयवनाभावात्। पशौ प्रणीताप्रतिषेधानुपपत्ति तत्र संयवनाभावेव तत्प्रतिषेजस्य व्यर्थत्वात्। अतश्च श्रवणाकर्मणि पुरोडाशसंयवनं चरुश्च सूत्रकारोऽपि प्रणीताद्युवसत् (का. श्रौ ८।२।१५) इति संयवनाभावेऽपि उपसदि प्रणीता विद्यते। अतश्च श्रवणाकर्मणि पुरोडाशसंयवनं चरुश्च सर्वत्र प्रणीताभिरेव कर्तव्यमिति।

(१) पुनः प्रतप्य तौ मन्त्रैर्दर्भानग्नौ विनिक्षिपेत्। आत्मनो दक्षिणे भागे स्थापयेत्तौ कुशान्तरे॥ इति पद्धतिकाराः। आज्यस्य दक्षिणतो निधानमित्यन्ये, श्रुते तथा दृष्टत्वादिति। (२) उत्तरत उद्वासयति हविश्च (का० श्रौ० ३।४) इति कातीयसूत्रात्। (३) उदग्रे अङ्गुष्ठाभ्यामनामिकाभ्यां च सङ्गृह्य त्रिराज्यमुत्पुनाति। (खा० गृ० १।२।१४) (४) पर्युक्ष्याग्निं प्रणितासु निक्षिपेत्तत्पवित्रकम् इति परशुराम-

निदध्यात् । ततः विधिनामाग्ने सुप्रतिष्ठितो वरदो भव इति प्रतिष्ठाप्य ध्यायेत्—ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम् । सुवर्णवर्णममलं समिद्धं सर्वतोमुखम् ॥ सर्वतः पाणिपादश्च सर्वतोऽक्षि शिरोमुखः । विश्वरूपो महानग्निः प्रणीतः सर्वकर्मसु ॥ विधिनाम्ने अग्नये नमः । इति संपूज्य रेखाः पूजयेत्—पूर्वरेखायाम्—ॐ ब्रह्मणे नमः । मध्यरेखाया—ॐ विष्णवे नमः । उत्तर-रेखायाम्—ॐ रुद्राय नमः । ततोऽग्निजिह्वापूजनम्—ॐ कराल्यै नमः—ॐ धूमिन्यै नमः—

कारिकोक्तेः । (५) विधानपारिजाते अग्निनामानि—लौकिकः पावको ह्यग्निः प्रथमः परिकीर्तितः । अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते ॥ पुंसवने चमसो नाम सीमन्ते मङ्गलाभिधः । प्रगल्भो जातसंस्कारे शोभनः सर्वकर्मसु ॥ पार्थिवो नामकरणे प्राशनेऽन्नस्य वै शुचिः । सभ्यनामा तु चूडायां व्रतादेशे समुद्भवः ॥ गोदाने सूर्यनामा स्याद्विवाहे योजकः स्मृतः । वैश्वानरो विसर्गे स्याच्छान्तिके वरदः स्मृतः ।। चतुर्थीकर्मणि शिखा जातवेदास्तथाऽपरे । आवसथ्यस्तथाऽऽधाने वैश्वदेवे तु पाचकः ॥ ब्रह्माग्निर्गार्हपत्य स्याद्दक्षिणा-ग्निस्तथा शिवः । विष्णुराहवनीयः स्यादग्निहोत्रे त्रयोऽग्नयः ॥ लक्षहोमेऽभीष्टदः स्यात्कोटिहोमे हुताशनः । एके धृतार्चिषं प्राहुः प्रायश्चित्ते त्रिविस्तथा ।। रुद्रादौ (पूर्णाहुतौ) तु मृडो नाम प्रोष्ठिके बलवर्धनः । मृतदाहे तु क्रव्यादः क्रोधाग्निश्चाभिचारिके ॥ वश्यार्थे वशकृत्प्रोक्तो वनदाहे तु पोषकः । ज्ञात्वैवमग्निनामानि गृह्यकर्म समारभेत् ॥इति॥ शुभकर्मनिर्णये—अविदित्वा तु यो ह्यग्निं होमयेद्विचक्षणः । न हुतं न च सस्कारो न स कर्मफल लभेत् ॥ आहूयैव तु होतव्यं यो यत्र विहितोऽनलः । वचानात् यो यत्राग्निर्विहितस्तं तत्रावाह्य पूजयित्वा होतव्यमिति ।

(१) अग्निपूजा वहिः प्रोक्तेति वचनात् बहिरेवाग्नेः पूजनमिति केचित् । मध्येऽपि गन्धपुष्पादि दद्यादग्नेनं संशयः । वह्निनैवेद्यमात्रं तु

ॐ श्वेतायै नमः—ॐ लोहितायै नमः—ॐ महालोहितायै नमः—ॐ सुवर्णायै नमः—ॐपद्मरागायै नमः । इति सप्त[1] जिह्वा सम्पूज्य दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मणाऽन्वारब्धः समिद्धतमेऽग्नौ मौनी[2] स्रुवेण जुहुयात्—ॐ प्रजापतये स्वाहा इति मनसा ध्यायन् हविर्द्रव्यमग्नौ प्रक्षिप्य इदं प्रजापतये न मम इति त्यागं मनसा कृत्वा हुतशेषं प्रोक्षणीपात्रे क्षिपेत् । एवं सर्वत्र । ततः ॐ इन्द्राय स्वाहा—इदमिन्द्राय न मम । इत्याघारौ । ॐ अग्नये स्वाहा—इदमग्नये न मम । ॐ सोमाय स्वाहा—इदं

दातव्यमितिनिश्चयः इति वचनात् तथा कर्तव्यमिति शान्तिमयूखे । (२) परशुरामकारिकायां गृह्यासंग्रहादौ चान्या अन्या एव सप्तजिह्वा उक्तास्ता ततोऽवगन्तव्याः ।

(१) जान्वाच्य दक्षिण, ह्वोमं स्रुवेण जुहुयाद्धविः । इति परशुरामकारिकायामुक्तेः । अन्वारम्भश्च ब्रह्मणो दक्षिणहस्तधृतकुशेन यजमानस्य दक्षिणहस्ते कार्यः । पाकयज्ञेषु स्वयं होता भवति—इति गोभिलगृह्यसूत्राद्यजमानस्य होमकर्मणि व्यापृतत्वात् । (२) छन्दोगपरिशिष्टे—योऽनर्चिषि जुहोत्यग्नौ व्यङ्गारिणी च मानवः । मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्च प्रजायत ॥ तस्मात्समिद्धे होतव्य नासमिद्धे कदाचन । आरोग्यमिच्छताऽत्यन्तं श्रियमात्यन्तिकी तथा ॥ इति । (३) स्रास्यतो वरुणस्तेषां जुह्वतोऽग्निः श्रियं हरेत् । भुञ्जानस्य यमस्तत्रातुस्तस्मात्र व्याहरेत्त्विग्यु । इति मनुवचनात् होमजाले होमक्रियाबहिर्भूतः शब्दाभिलापो न कार्यः । (४) छन्दोगपरिशिष्टे—होमपात्रमनादेशे द्रवद्रव्ये स्रुवः स्मृतः । पाणिर्नवेतरस्मिंस्तु स्रुचा चात्र न हुयते । स्रुचस्त चतुरङ्गुलं त्यक्त्वा शङ्खमुद्रया धार्यः—मूले हानिकरं प्रोक्तं मध्ये शोककर तथा । अग्रे व्याधिकरं प्रोक्तं स्रुवं धारयते कथम् ॥ (५) आग्नेयनुत्तरपूर्वार्द्धे दक्षिणपूर्वार्द्धे सौम्यं समिद्धतमे वा । (श्रौ० ३।३) इति कात्यायनोक्तेस्तथा कार्यः ।

प्र०

५६

सोमाय न मम-इत्याज्यभागौ च हुत्वा ततः—अष्टोत्तरशतमष्टाविंशति वाऽऽज्याहुतीनां व्यस्तसमस्ताभिर्महाव्याहृतिभिर्होमः। ॐ भूः स्वाहा—इदमग्नये न मम। ॐ भुवः स्वाहा—इदं वायवे न मम। ॐ स्वः स्वाहा—इदं सूर्याय न मम। भूर्भुवः स्वः स्वाहा—इदं प्रजापतये न मम। एवं सप्तवारं कृते अष्टाविंशतिराहुतयः। अथ ब्रह्मकूर्चहोमः—सुवर्णादिपात्रे गायत्र्या गोमूत्रम्। ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ इति गोमयम्। ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्॥ भवा वाजस्य सङ्गथे॥ इति दुग्धम्। ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः॥ सुरभि नो मुखा करत्प्रण आयूꣳषि तारिषत्॥ इति दधि। ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि॥ इति घृतम्॥ ॐ देवस्य त्वा स० हस्ताभ्याम्॥ इति कुशोदकं सङ्गृह्य[3] प्रण-

स०

५६

---

(१) गोमूत्रं त्रिपलम, अर्द्धाङ्गुष्ठपरिमितं गोमयम् सप्तपलमितं पयः, तावदेव दधि, पलमेकं घृतम्, तावत्कुशोदकमिति रुद्रकल्पद्रुम।
(२) अस्मृत्वाऽथ ऋषिं छन्दो दैवतं विनियोजम् होमं करोति मूढात्मा न स होमफलं लभेत्॥ इत्यादिभिर्वचनैर्होमादावेव तत् ज्ञानस्यावश्यकत्वबोधनेन न सर्वत्रान्यत्र ऋष्यादिप्रदर्शनम् न च स्मरेदृषिं छन्दः श्राद्धे वैतानिके मखे॥ इति क्वचिन्निषेधोऽपि। निषिद्धातिरिक्तस्थले तद् ज्ञानं चातिशयसंपादकं भवत्येवेति। (३) यावद्धविरुत्तरार्द्धात्स्विष्टकृत् (का० श्रौ० ३।३) इति। वचनात् स्विष्टकृत् होमः सर्वेषां हविषां कार्यः।

वेनालोड्य यज्ञियकाष्ठेन निर्मथ्य प्रणवेनाभिमन्त्र्य सप्ताधिकहरितदर्भपत्रैः पञ्चगव्यहोमं कुर्यात् । मन्त्राश्च—ॐ इरावती धेनुमती हि भूतꣳ सूयवसिनी मनवे दशस्या ॥ व्यस्कभ्ना रोदसी विष्ण-वेते दाधर्त्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा ॥ इदं पृथिव्यै न मम । ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ॥ इदं विष्णवे न मम ॥ ॐमानस्तोके० ॥ इदं रुद्राय न मम । ॐ शन्नो देवीरभिष्टयऽ आपो भवन्तु पीतये ॥ शं योरभिस्रवन्तु नः स्वाहा ॥ इदमद्भ्यो न मम । ॐ अग्नये स्वाहा—इदमग्नये न मम । ॐ सोमाय स्वाहा—इदं सोमाय न मम । ॐ तत्सवितुर्व० स्वाहा—इदं सवित्रे न मम । ॐ स्वाहा—इदं परमेष्ठिने न मम । ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा—इदं प्रजापतये न मम । इति हुत्वा पञ्चगव्यमिश्राज्येन—ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा—इदमग्नये स्विष्टकृते न मम । इति हुत्वा स्विष्टकृद्धोमः । ततः—भो विप्रा व्रतग्रहणं करिष्ये—

उत्तरार्द्धादवद्यति उत्तरार्द्ध जुहोति—असꣳसृष्टामाहुतिभिः—इति श्रुतेः स्विष्टकृद्धोमः सर्वेभ्यो हविर्भ्यः कार्यः । उत्तरार्धादवदाय इतराहुतिभिर-संलग्नोत्तरतः कार्यः । अयं स्विष्टकृद्धोमः प्रधानहोमान्ते कार्यः । अङ्गहोमास्तु स्विष्टकृद्धोमानन्तरमपि कार्याः । दर्शपूर्णमासादावनुयाजादिवत् । अत एकदिवससाध्ये प्रायश्चित्तकर्मणि अङ्गहोमानुष्ठानं स्विष्टकृद्धोमानन्तरं कार्यम् । संस्रवप्राशनादिकं तु अङ्गहोमान्ते हवेति ।

(१) = = निशामुखे ग्राह्य बहिस्तारकदर्शने । इति वचनाद् ग्रामाद् बहिः सायं पञ्चगव्यपानस्य मुख्यः कालः । (२) यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे

मू० ६१

इति ब्राह्मणान् प्रार्थ्य ॐ कुरुस्व—इति तैरनुज्ञातो हुतशेषं पञ्चगव्यं प्रणवेन शब्दमकुर्वन् पिबेत्। अस्मिन् दिने आहारान्तरं परित्यजेत् अशक्तौ दुग्धाद्याहारी भवेत्। ततो निशामतिवाह्य दिनान्तरे तद्दिने एव वा देशद्रव्यं सम्पूज्य कुशयवतिलान्यादाय देशकालौ स्मृत्वा मम (पित्रादेः) जन्मभृत्यद्य यावत् इत्यादि निरासार्थम् इत्यन्तमुल्लिख्य इमानि अशीत्यधिकनवतिपञ्च चत्वारिंशत् अन्यतमसङ्ख्याककृच्छ्रप्रत्याम्नायभूतानां गवां मूल्यभूतानि पूर्वोक्तान्यतमसङ्ख्याकानि सुवर्ण-निष्काणि, तदर्धानि, तदर्धार्धानि वा चन्द्रदैवतानि पणद्वात्रिंशत्कानि वा सूर्यदैवतानि कार्षापणानि

तिष्ठति देहिनाम्। ब्रह्मकूर्चो दहेत्सर्वं प्रदीप्तोऽग्निरिवेन्धनम् ॥ (११।३७) इति पराशरेण ब्रह्मकूर्चस्य अभोज्यभोजनादिषु आहारपरिणाम दुष्टावयवोपचय रूपस्य दोषस्य निवर्तकत्वाभिधानात् ब्रह्मकूर्चोपवासन योज्यावर्णस्य निष्कृति इत्यनेन उपवासपूर्वकेण ब्रह्मकूर्चस्य पञ्चगव्यस्य पानेन शुद्धिर्योज्या इत्यर्थकेन अपेयमाने ब्रह्मकूर्चं तु पावनम् इत्यनेन अभोज्यभाजन च पञ्चगव्यविधानाच्च अपेयपानादौ पञ्चगव्यपानमावश्यकम्। इरावती इद विष्णुमनिस्तोके च शंवती। एताभिश्चैव होतव्य हुतशेषं पिबेद् द्विजः ॥ इतितत्रैव तत्पानस्य विधानाद्धमाऽनुष्ठेयः। शूद्राणां नोपवासः स्याच्छूद्रो दानेन शुद्ध्यति। ब्रह्मकूर्चंमहारात्र श्वपाकमपि शोधयेत् इति तत्रैव ब्रह्मकूर्चपानार्थं विहित पूर्वदिनोपवासनिषेधपुरःसरं पञ्चगव्यपानस्य सर्वसाधारण्येन विधानात्। स्त्रीशूद्राणामपि प्रायश्चित्तार्थं तत्पानमनुमतम्। पञ्चगव्य पिबेच्छूद्रो ब्राह्मणश्च सुरा पिबेत्। उभौ तौ तुल्यदोषौ हि पूयाख्यं नरकं गतौ ॥ इति अत्रिवचनं तु प्रायश्चित्तातिरिक्तपञ्चगव्यपाननिषेधकम्। अग्निवर्णां सुरां पिबेत्- इति प्रायश्चित्तभूतसुरापानातिरिक्तसुरापाननिषेधवत्। स्त्रीणां शूद्राणां च होमो न कार्यं इत्येके ब्राह्मण द्वारा कार्यं इत्यन्ये। (३) पञ्चगव्यपाने कालमाह—जाबालिः—चतुर्दश्यामुपोष्याथ पौर्णमास्यां विशेषतः। पञ्चगव्य पिबेत्प्रातर्ब्रह्मकूर्चमिति स्मृतम्। इति। पञ्चगव्यपाने देशमाह—शातातपः—नदीतीरेषु गोष्ठेषु पुराणेष्वायतनेषु च। गत्वा शुचौदेशे ब्रह्मकूर्चं समाचरेदिति॥

मू० ६१

वा ब्राह्मणेभ्यो यथाकालं दास्ये। ॐ तत्सत् न मम—इति सङ्कल्प्य दद्यात्। ततः—
ॐ भूः स्वाहा-इदमग्नये न मम। ॐ भुवः स्वाहा-इदं वायवे न मम। ॐ स्वः स्वाहा-इदं सूर्याय न
मम। ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा-इदं प्रजापतये न मम। इति सप्तकृत्वः सप्तविंशति कृत्वा वा हुत्वा,
ततो ब्रह्मणान्वारब्धः—ॐ भूः स्वाहा-इदमग्नये न मम। ॐ भुवः स्वाहा-इदं वायवे न मम।
ॐ स्वः स्वाहा—इदं सूर्याय न मम। ॐ त्वन्नोऽ अग्ने व्वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडोऽ अव यासि-
सीष्ठाः॥ यजिष्ठो व्वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांꣳसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां
न मम। ॐ स त्वन्नोऽअग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्याऽ उषसो व्युष्टौ॥ अव यक्ष्व नो व्वरुणꣳ
रराणो व्वीहि मृडीकꣳ सुहवो नऽएधि स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्यां न मम॥ ॐ अयाश्चाग्नेऽस्यनभिश-
स्तिपाश्च सत्यमित्वमयाऽ असि। अया नो यज्ञं वहास्यया नो धेहि भेषजꣳ स्वाहा॥ इदमग्नये अयसे
न मम। ॐ ये ते शतं व्वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः। ते भिर्नोऽ अद्य सवितोत व्विष्णु-

(१) भवन्ति चास्मिन् भूतानि स्थावराणि चराणि च। तस्माद् भूरिति विज्ञेया प्रथमा व्याहृतिः स्मृता॥ भवन्ति भूयो भूतानि उपभोगक्षये पुनः। कल्पान्ते उपभोगाय भुवस्तस्मात्प्रकीर्तिता॥ शीतोष्णवृष्टितेजांसि जायन्ते तानि वै सदा। आलयः सुकृतीनां च स्वर्लोकः स उदाहृतः॥ इति योगियाज्ञवल्क्यः॥

विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा । इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च न मम । ॐ उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यमꣳ श्रथाय ॥ अथा वयमादित्य व्रते तवानागसोऽअदितये स्याम स्वाहा ॥ इदं प्रजापतये न मम । ततः—बर्हिर्होमं स्वाहा—इति मन्त्रेण कुर्यात् । इदं प्रजापतये न मम । ततः संस्रवप्राशनमवघ्राणं वा कृत्वा द्विराचम्य अग्नौ पवित्र-प्रतिपत्तिं स्वाहा इति कुर्यात् । ततः प्रणीताविमोकमग्नेः पश्चिमतः कुर्यात् । ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्—प्रायश्चित्तहोमकर्मणः साङ्गफलप्राप्तये साद्गुण्यार्थमपूर्णपूरणार्थं च इदं पूर्णपात्रं सद्रव्यं ब्रह्मण तुभ्यं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम ।तत अग्निं प्रार्थयेत्—ॐसदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ॥ सनिं मेधामयासिषꣳ स्वाहा ॥ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ॥ तया म मद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥ मेधाम्मे वरुणो ददातु मेधाग्निः प्रजापतिः ॥ मेधामिन्द्रश्च

(१) अत्र देवेभ्य इति न वाच्यमिति गदाधरः (२) मन्त्रानादेशे स्वाहा कारविधानात स्वाहा इति मन्त्रे होमः । बर्हिह मे देवागातु विद इति मन्त्रस्तु न प्रयोज्यो निर्मूलत्वात् । (३) भाष्यकारमते–पवित्रेण मार्जनम, अग्नौ परिस्थायः, परिस्तरणार्थबर्हिर्होमः, प्रणीताविमोकः– एते चत्वारः पदार्था न भवन्ति । परन्तु पद्धतिकाराणां सम्मतत्वादनुष्ठीयन्ते । प्रजापतिदेवताश्च–आज्यं द्रव्यमनादेशे जुहोतिषु विधीयते । मन्त्रस्य देवतायाश्च प्रजापतिरितिस्थितिः ॥ इति छान्दोग्यपरिशिष्टात् । अभ्युक्ष्यैतेऽग्नावनुप्रहरेत्—खा० गृ० १।२।१५ ।

स्वायुश्रं मेधान्धाता दंदातु मे स्वाहा ॥ ततः—प्रायश्चित्तोत्तराङ्गविष्णुश्राद्धसंपत्तये ब्राह्मण-चतुष्टयाय पक्वान्नम्—आमान्नं तन्निष्क्रयं वा दास्ये । इति विष्णुश्राद्धानुकल्पभूतमन्नादि दत्त्वा. प्रायश्चित्तस्योत्तराङ्गत्वेन विहितिगोदानप्रत्याम्नायत्वेन यथाशक्तिगोमूल्यं तुभ्यं संप्रददे—इति उत्तरगोदानं कृत्वा वायव्याम् उत्तराङ्गभूतमग्निपूजनम्—ॐ अग्ने नयं सुपथा रायेऽ अस्मान्वि-श्वानि देव वयुनानि विद्वान् ॥ युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठां ते नमऽ उक्तिं विधेम ॥ इति मन्त्रेण ॐ श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं बलं श्रियम् । आयुष्यं द्रव्यमारोग्यं देहि मे हव्यवाहन ॥ इत्यनेन च कुर्यात् । ततस्त्र्यायुषकरणमनामिकया [1]स्रुवलग्नसघृतभस्मना—ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः—इति ललाटे । ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—इति ग्रीवायाम् । ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—इति दक्षिणबाहुमूले । ॐ तन्नोऽ अस्तु त्र्यायुषम्—इति हृदि । ततो होमाङ्गदक्षिणासङ्कल्पः—प्रायश्चित्तहोमकर्मणः साङ्गफलप्राप्तये साद्गुण्यार्थं च इमां दक्षिणामाचार्याय तुभ्यं संप्रददे ।

(१) ततोऽनामिकया कुर्याद्बिन्दुं स घृतभस्मना । हृद्यमपर्लललाटे च त्र्यायुषेति पदैः क्रमादिति वचनं प्रमाणयन्ति तत्र । ऐशान्याम हरेद्भस्म स्रुचा वाऽथ स्रुवेण वा । अङ्कं कारयेत्तेन शिरः कण्ठांसहृत्सुचेति कमलाकरस्य वचनं च ।

प्र० ६५

(ब्रह्मदक्षिणापेक्षयाऽऽचार्यदक्षिणा द्विगुणा)। कृतस्य प्रायश्चित्तकर्मणः साद्गुण्यार्थं पञ्चदश ब्राह्मणान् यथोपपन्नेन भोजयिष्यामि। अस्मिन् प्रायश्चित्तकर्मणि न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं भूयसीं दक्षिणामन्येभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दास्ये। ततोऽग्निं विसृजेत्—गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर। यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन॥ भो भो वन्हे महाशक्ते सर्वकर्म प्रसाधक। कर्मान्तरेऽपि सम्प्राप्ते सान्निध्यं कुरु सादरम्॥ यन्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम्। इष्टकामसमृध्यर्थं पुनरागमनाय च। ॐ यज्ञं यज्ञं गच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा॥ एष ते यज्ञपते सहसूक्त वाकः सर्ववीरस्तं जुषस्व स्वाहा॥ धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः॥ सचेतसा विश्वे देवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे॥ ततस्तिलकं रक्षाबन्धनं घृतच्छायादर्शनमाशीर्वादमन्त्रपदिकं[1] च कारयेदिति। इति प्रायश्चित्तप्रयोगः।

अथ दशदानानि

स्वर्णभृङ्गरौप्यखुरताम्रपृष्ठमुक्तापुच्छकांस्यदोहनवस्त्रादिभिरभ्यर्च्य गन्धादिना संपूज्य—सव-

(१) सर्वत्र कर्ममान्त मन्त्राशिषमनुत्तमाम्। दद्युर्विप्राः स्वशाखोक्तामादौ तत्कर्म शाखिन॥ आदौवित्यनेन पूर्वं ऋग्वेदस्यंव पाठ इत्युक्तिर्निरस्तेति।

प्र० ६५

त्सायै गवे नमः—इति नाममन्त्रेण गां संपूज्य—इरावती धेनुमतीति मन्त्रेण संप्रार्थ्य ब्राह्मणवर-
णम्। करिष्यमाणगोदानकर्मणि एभि: वरणद्रव्यै: अमुकगोत्रममुकशर्माणं ब्राह्मण गोदानप्रति-
गृहीतृत्वेन त्वामहं वृणे। ततः—ॐ व्रतेन दीक्षा। यदाबध्नन्०—इति मन्त्रद्वयं पठित्वा स्वस्तीति
प्रतिवचनम्। अत्र गोपुच्छोदकतर्पणं केचित्कुर्वन्ति। हस्ते त्रिकुशजलाक्षतद्रव्यं गोपुच्छं च गृहीत्वा—
देशकालौ० गोत्रः शर्मा कृतानेकपापक्षयपूर्वकं मम गृहे उत्तरोत्तरशुभफलप्राप्त्यर्थं च इमां सवत्सां
गां रुद्रदेवत्यां स्वर्णशृङ्गीं रौप्यखुरां ताम्रपृष्ठां मुक्तालाङ्गूलयुतां कांस्यदोहनवस्त्रयुगच्छन्नां गोरोमसङ्ख्य-
सहस्राऽच्छिन्नगोलोकवासकामः गोत्राय शर्मणे तुभ्यमहं संप्रददे। तत प्रार्थना—यज्ञसाधनभूताया
विश्वस्याघौघनाशिनी। विश्वरूपधरा देवः प्रीयतामनया गवा॥ गावो ममाग्रतः सन्तुगावो मे सन्तु
पृष्ठत। मे हृदये सन्तु गवांमध्ये वसाम्यहम्॥ ततः—ॐकोदात्कस्माऽअदात्कामोदात्कामायादात्॥
कामो दाता कामः प्रतिग्रहीताकामैतत्ते॥ इति कामस्तुति पठेत्। ॐ स्वस्ति। ततो दानप्रतिष्ठां
कुर्यात्—कृतैतत् गोदानकर्मणः साङ्गतासम्पत्तये गोत्राय शर्मणे दक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे। ततः
प्रदक्षिणां कृत्वा इमं मन्त्रं पठेत्—या लक्ष्मीः सर्वभूतानां या च देवेष्ववस्थिता। धेनुरूपेण सा देवी

प्र०
६६

५० ६७

मम पापं व्यपोहतु ॥ अथ भूदानम्—पूर्ववद्वरणादिकं कृत्वा—अद्येत्यादि गोत्रः शर्मा गोत्राय शर्मणे सालङ्कृताय षष्टिसहस्रवर्षमितं वैकुण्ठे विष्णुलोकावाप्तिकामः इमां भूमिं सस्योद्भवां सवृक्ष-फलपुष्पाद्युपेतां विष्णुदेवतां तुभ्यमहं संप्रददे—द्विजहस्ते दद्यात् । ब्राह्मणस्तु भूमिदक्षिणां कुर्वन्प्रति-गृह्णीयात् । देवस्यत्वेति पठित्वास्वस्तीनि पठेत् । ततः प्रार्थना—सर्वेषामाश्रयाभूमिर्वराहेण समुद्धृता । अनन्तसस्यफलदा अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ यस्यां रोहन्ति बीजानि वर्षाकाले महीतले । भूमेः प्रदाना-त्सकला मम सन्तु मनोरथाः ॥ ततो दक्षिणां दद्यात् । तिलदानम्—आचमनादिभूतोत्सादनान्तं कृत्वा द्रोणत्रयपरिमितान् वा (पलाधिकपादानत्रयोदशसेटकमितान्) यथाशक्ति वा तिलान् पुरतः कस्मिंश्चित् पात्रे वस्त्रे वा संस्थाप्य कुशयवादिकमादाय मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वारा श्रीविष्णुप्रीतये तिलदानं करिष्ये—इति प्रतिज्ञाय ब्राह्मणं सम्पूज्य तिलान् संप्रोक्ष्य—विष्णोर्देहसमुद्भूताः कुशाः कृष्णतिला-स्तथा । धर्मस्य रक्षणायार्थमेतमाहुर्दिवौकसः ॥ इति सम्पूज्य विष्णुपूज्य इत्यन्तं पूर्वोक्तमुल्लिख्य इमान् द्रोणत्रय-द्रोणद्वय-एकद्रोणान्यतम परिमितान् तिलान् प्रजापतिदैवताकान् सुपूजिताय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम—इति जलादिकं ब्राह्मणहस्ते प्रक्षिप्य—महर्षेर्गोत्रसंभूताः

५० ६७

काश्यपस्य तिलाः स्मृताः तस्मादेषां प्रदानेन न मम पापं व्यपोहतु ॥ इति पठित्वा तिलद्रोणं स्पर्शयेत् । तिलपात्रदानं तु षोडसपलनिर्मिते यथाशक्ति परिमाणनिर्मिते वा ताम्रपात्रे तिलान् निधाय हिरण्यं च यथाशक्ति तत्र धृत्वा पूर्वोक्तविधिना ॐ यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च । तिलपात्रप्रदानेन तानि नश्यन्तु मे सदा ॥ इति मन्त्रविशेषं पठन् कुर्यात् यथाशक्ति सुवर्ण तन्मूल्यं वा दक्षिणादानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं दद्यात् । तिलमूल्यं तिलपरिमाणानुसारेण कल्प्यम् । हिरण्यदानम्—दाता आचमनादिभूतोत्सादनान्तं गोदानवत् कृत्वा कुशयवतिलजलपाणिः देशकालौ सङ्कीर्त्य- 'अक्षयस्वर्गकामः, पापक्षयकामः, पितृतारणकामः, ईश्वरप्रीतिकामो वा सुवर्णदानं करिष्ये—इति प्रतिज्ञाय तदङ्गत्वेन ब्राह्मणस्य पूजनपूर्वकं वरणं सुवर्णस्य पूजनं च करिष्ये—इति सङ्कल्प्य गन्धादिना ब्राह्मणं सम्पूज्य पूर्ववत् वृत्वा सुवर्णं संप्रोक्ष्य—ॐ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो । अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ इति सम्पूज्य पूर्ववद्देशकालौ फलं च सङ्कीर्त्य ब्राह्मणस्य गोत्रनामनी उल्लिख्य इदं कर्षमात्रं सुवर्णमग्निदैवतं तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न

(१) सुवर्णदाने रजतदक्षिणेति केचिन् तन्निर्मूलमिति हेमाद्रिः ।

प्र०
६८

मम । इत्युक्त्वा ॐ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसो । अनन्तपुण्यफलदमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥ इति दानवाक्यं पठित्वा ब्राह्मणहस्ते सकुशोदकं सुवर्णं दद्यात् । ततः—सुवर्णदानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थमिदं सुवर्णमग्निदैवतं दक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे—इति दक्षिणां दद्यात ।

ब्राह्मणश्च—ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥ इति यजुः पठित्वा ॐ स्वस्ति । अग्निदैवतायै सुवर्णं प्रतिगृह्णामि, इत्युच्चार्य प्रतिगृह्य—ॐ कोऽदात्कस्मा ऽअदात्कामोऽदात्कामायादात् ॥ कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते ॥ इति मन्त्रेण कामस्तुतिं पठेत् । अथ आज्यदानम्—सेटकचतुष्टयमितं, तदर्द्धमितं, सेटकमात्रं वा आज्यं पुरतो निधाय पूर्ववद्दानप्रतिज्ञां कृत्वा ब्राह्मणं सम्पूज्य कृत्वा आज्यं संप्रोक्ष्य संपूज्य मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वाराविष्णुप्रीतये इदमाज्यं विष्णुदैवतं (मृत्युञ्जयदैवतं) तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम इति सङ्कल्प्य—ॐ कामधेनोः समुद्भूतं देवानामुत्तमं हविः । आयुर्वृद्धिकरं दातुराज्यं पातु सदैव माम् ॥ इति पठित्वा दद्यात् । सुवर्णं दक्षिणां [1]तन्मूल्यं वा

(१) नवपणाधिकः कार्षापणो हिरण्यस्य मूल्यम् ।

दानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं दद्यात् ।

अथ वस्त्रदानम्—सूक्ष्मतन्तुनिर्मितं वस्त्रद्वयमष्टहस्तायतं हस्तद्वयान्यूनविशालं पन्त-योरच्छिन्नं नूतनं पुरतो निधाय पूर्ववत् दान प्रतिज्ञा-ब्राह्मणपूजन-वरण-वस्त्रप्रोक्षणपूजनानि विधाय मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वाराप्रीतये इदं वासोयुग्मं बृहस्पतिदैवत तुभ्यमहं संप्रददे ॥ ॐ तत्सत् न मम इति सङ्कल्प्य—ॐ शीतवातोष्णसंत्राणं लज्जाया रक्षणं परम् । देहालङ्करणं वस्त्रमतःशान्ति प्रयच्छ मे ॥ इति पठित्वा दद्यात् । सुवर्णं तन्मूल्यं वा दक्षिणां दानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं दद्यात् ।

अथ धान्यदानम्—१६ पलधिक ७७ सप्तसप्ततिसेटकमितं धान्यम् । व्रीह्यादिरूपं पुरतो निधाय दानप्रतिज्ञादिकं पूर्ववत कृत्वा धान्यं संप्रोक्ष्य-संपूज्य-मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वारा-विष्णुप्रीतये इदं धान्यं प्रजापतिदैवतं तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम—इति सङ्कल्प्य—सर्वदेवमयं धान्यं सर्वोत्पत्तिकरं महत् । प्राणिनो जीवनो पायमतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥ इति पठित्वा दद्यात् ।

(२) वस्त्रमूल्य—कार्षापणः ।

दानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं सुवर्णं तन्मूल्यं वा दक्षिणां दद्यात् । धान्यमूल्यं परिमाणानुसारेण कल्प्यम् ।

अथ [1]गुडदानम्—सेटकत्रयमितं यथाशक्ति वा गुडं पुरतो निधाय दानप्रतिज्ञादि विधाय गुडं संप्रोक्ष्य संपूज्य मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वाराविष्णुप्रीतये इमं गुडं सोमदैवतं तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम—इति सङ्कल्प्य—पठित्वा दद्यात् । ॐ यथा देवेषु विश्वात्मा प्रवरश्च जनार्दनः । सामवेदस्तु वेदानां महादेवस्तु योगिनाम् ॥ प्रणवः सर्वमन्त्राणां नारीणां पार्वती यथा । तथा रसानां प्रवरः सदैवेक्षु रसो मतः । मम तस्मात्परालक्ष्मीं ददस्व गुडसर्वदा ॥ इति पठित्वा दद्यात् । दानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं सुवर्णं तन्मूल्यं वा दक्षिणां दद्यात् ।

अथ रजतदानम्—पलत्रयमितं पलमितं यथाशक्ति वा रजतं पुरतो निधाय दानप्रतिज्ञादि विधाय रजतं सम्प्रोक्ष्य सम्पूज्य—मम (पित्रादेः) सकलपापक्षयद्वारा विष्णुप्रीतये इदं रजतं-चन्द्र दैवतं तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ तत्सत् न मम—इति सङ्कल्प्य ॐ प्रीतिर्यतः पितॄणां च विष्णुशङ्करयोः सदा । शिवनेत्रोद्भवं रौप्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ इति पठित्वा दद्यात् । दानप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं सुवर्णं तन्मूल्य वा दक्षिणां दद्यात् ।

(१) गुडमूल्यम् परिमाणनुसारेण कल्प्यम् ।

[1]लवणदानम्—(१६) पलाधिक (७७) सप्तसप्ततिसेटकमितं यथाशक्ति वा लवणं पुरतो निधाय दानप्रतिज्ञादि विधाय लवणं संप्रोक्ष्य संपूज्य–मम (पित्रादेः) सङ्कल्प्य पापक्षयद्वारा विष्णु-प्रीतये इदं लवणं सोमदैवतं तुभ्यमहं सम्प्रददे । ॐ तत्सत् न मम । ॐ यस्मादन्नरसाः सर्वे नोत्कृष्टा लवणं विना । शंभोः प्रीतिकरं यस्मादतः शान्ति प्रयच्छ मे ॥ इति पठित्वा दद्यात् । दानप्रतिष्ठा-सिद्ध्यर्थं सुवर्णं तन्मूल्यं वा दक्षिणां दद्यात् इति दशदानप्रयोगः ।

अथ मंगलस्नानप्रयोगः

महत्सु कर्मसु पूर्वेद्युरल्पेषु तद्दिने कृतनित्यक्रियः कृतोपवासो यजमानो निर्णेजनान्तं वैश्वदेवं विधाय मङ्गलस्नानं कुर्यात् । तद्यथा–देशकालौ सङ्कीर्त्य-करिष्यमाणविष्ण्वादिप्रतिष्ठानिमित्तं सपत्नीकः ससंस्कार्योऽहं मङ्गलस्नानं करिष्ये–इति सङ्कल्प्य यथाचारं सर्वौषध्यादिसुगन्धचूर्णैरामलकादिना सुगन्धतैलेन शरीरमुद्वर्त्य स्नात्वाऽऽचम्य समन्त्रं नूतने अधरोत्तरीये वस्त्रे (आभरणं च) धारयेत् । तत्र मन्त्रः–ॐ परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय जरदष्टिरस्मि । शतं च जीवामि शरदः

(१) लवणमूल्य परिमाणानुसारेण कल्प्यम् । गो-भू-तिल-हिरण्याज्य-वासो-धान्यगुडानि च । रौप्यं लवणमित्याहुर्दश दानानि पण्डिताः ॥

प्र० ७३

पुरूचो रायस्पोषमभिसंव्यर्ययिष्ये ।। इत्यधोवस्त्रं परिधाय द्विराचामेत् । ततः—ॐयशसा मा द्यावा पृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती । यशो भगश्च माऽविदद्यशो मा प्रति पद्यताम् ।। इत्युत्तरीयं धृत्वा द्विराचामेत् । नूतनवस्त्राधारणे न मन्त्रः । पत्न्या अपि वस्त्रपरिधानं कंचुक्यादिधारणं च तूष्णीम् । [एवं संस्कार्यस्यापि यथासम्भवं वस्त्रधारणम् ।] प्रतिवस्त्रं सर्वेषां द्विराचमनम् । सौभाग्यकुङ्कुमादिना तिलककरणम् । ततो गोमयोपलिप्ते रङ्गवल्लिस्वस्तिकाद्यलङ्कृते शुचौ देशे शुभवस्त्राच्छादिते श्रीपर्ण्यादिप्रशस्तकाष्ठपीठे कम्बलकुशाद्यासने वा स्वयं प्राङ्मुख उपविश्य तादृशपीठयोः स्वदक्षिणतः पत्नीं, (तद्दक्षिणतः संस्कार्यं) चोपवेशयेत् । ततः सर्वेणां कर्मणां प्रारम्भे करिष्यमाण-कर्मणो निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थं यथाकुलाचारं गणेशं गणेशाम्बिके वा पूजयेत् । तद्यथा—बद्धशिखो बद्धकच्छो दर्भपाणिः—ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थाङ्गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ।। इत्युपकरणानि आत्मानं च संप्रोक्ष्य—ॐपवित्रेस्थो व्वैष्णव्यौ सवितुर्व्वः प्रसवऽउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्य्यस्य रश्मिभिः ।। तस्य ते पवित्रपते पवित्रं पूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ।। इति यजुर्द्वयेन दक्षिणवामहस्तनामिकयर्मूले मध्यपर्वणि वा क्रमेण पवित्रं

प्र० ७३

धृत्वा स्मार्तविधिनाऽऽचामेत्। तद्यथा—आचमनार्थं विहितपात्रे जलमादाय मुक्ताङ्गुष्ठकनिष्ठेन संहतत्र्यङ्गुलिना करेण माषमज्जनपरिमितं जलं त्रिः पिबेत्। ततो हस्तं प्रक्षाल्य खान्युपस्पृशेत्। तद्यथा—अङ्गुष्ठमूलेन वारद्वयं मुखं संस्पृश्य संसहताभिस्त्रिभिरङ्गुलीभिरास्यम्, अङ्गुष्ठेन प्रदेशिन्या च घ्राणद्वयम्, अङ्गुष्ठानामिकाभ्यां चक्षुर्द्वयम्, ताभ्यामेव श्रोत्रद्वयम्, कनिष्ठाङ्गुष्ठाभ्यां नाभिम्, करतले हृदयम्, सर्वाङ्गुलीभिः, शिरः, कराग्रेण अंसौ च स्पृशेत्। एकमेकवारमाचम्य पुनर्द्वितीयवारं त्रिराचम्य तथैव खान्युपस्पृशेत्—इति स्मार्ताचनम्। पौराणिकाचमने तु—केशवादि चतुर्विंशतिनामोच्चारम्। ॐ केशवाय नमः। ॐ नारायणाय नमः। ॐ माधवाय ॐ गोविन्दाय नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ मधुसूदनाय नमः। ॐ त्रिविक्रमाय नमः। ॐ वामनाय नमः। ॐ श्रीधराय नमः। ॐ हृषीकेशाय नमः। ॐ पद्मनाभाय नमः। ॐ दामोदराय नमः। सङ्कर्षणाय नमः। ॐ वासुदेवाय नमः। ॐ प्रद्युम्नाय नमः। ॐ अधोक्षजाय नमः। ॐ नारसिंहाय नमः। अच्युताय नमः। ॐ जनार्दनाय नमः। ॐ उपेन्द्राय नमः। ॐ हरये नमः। ॐ कृष्णाय नमः। ततः प्राणायमः—ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम् ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य

प्र०
७४

धीमहि॥ धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपो ज्योतीरसोऽमृतं भूर्भुवः स्वरो३म्–इति मन्त्रं नव कृत्वः पठेत्। तत्र प्रथमङ्गुष्ठेन दक्षिणनासां स्पृष्ट्वा मौनी नेत्रे निमील्य नाभौ स्थितं चतुर्भुजं विष्णु ध्यायन् वामनासिकया शनैः श्वासं कर्षन् वारत्रयं मन्त्रं पठन् पूरकाख्यं प्राणायामं कुर्यात्। ततोऽङ्गुष्ठेन दक्षिणनासाम्, अनामीकानिष्ठाभ्यां वामनासां स्पृष्ट्वा श्वासं नियम्य ब्राह्मणं ध्यायन् त्रिवारं मन्त्रं पठन् कुम्भकं कुर्यात्। ततोऽङ्गुष्ठमपसार्य अनामीकनिष्ठाभ्यां वामनासां स्पृशन् श्वासं शनैर्विमुञ्चन् ललाटे शङ्करं ध्यायन् मन्त्रं त्रिवारं पठन् रेचकं कुर्यात्। ततो रक्षादीपं प्रज्वाल्य यजमान-आचार्यादयश्चाचारात् आ नो भद्रा इत्यादीन्मङ्गलन्त्रान् पठेयुः। मन्त्रां पठताऽऽचार्यादिना तिलकं कारयेद्यजमानः। इति मङ्गलस्नानप्रयोगः।

अथ जलयात्राप्रयोगः

विप्रानुज्ञातो सपत्नीको यजमानः अष्टौ नव वा कलशांश्च आचार्येण ऋत्विग्भिश्च सहितः सुवासिनीपुरःसरः शान्तिपाठं पठन् मङ्गलगीतवाद्यसमन्वितो जलाशयं गच्छेत्। हस्तौ पादौ

प्र०
७५

प्रक्षाल्य स्वासने उपविश्य प्राणायामादिकं च कृत्वा सङ्कल्पं कुर्यात् । देशकालौ सङ्कीर्त्य—करिष्य-माणविष्ण्वादिप्रतिष्ठाङ्गभूतत्वेन जलयात्रां करिष्ये । तदङ्गत्वेन गणेशवरुणादीन् षोडशोपचारैः पूजयेत् । ततो मण्डलादक्षिणस्यां प्रतीच्यामुदीच्यां च पूर्ववत् काण्डानुसमयेन त्रयाणां कलशानां स्थापनं पूजनम् । एवमीशानादिवायव्यान्तेषु चतुर्षु कोणेषु चतुर्णां कलशानां च तन्मध्ये वरुणं च पूजयेत् । ततः प्रार्थना—एह्येहि यादोगणवारिधिनां गणेन पर्जन्यसहाप्सरोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमानः पाहि त्वमस्मान् भगवन्नमस्ते ॥ तीक्ष्णायुधं तीक्ष्णगतिं दिगीशं चराचरेशं वरुणं महान्तम् । प्रचण्डपाशाङ्कुशवज्रहस्तं भजामि देवं कुलवृद्धिहेतोः ॥ आवाहयाम्यहं देवं वरुणं यादसां पतिम् । प्रतीचीशं जगत्प्राणसेवितं पाशहस्तकम् ॥ इति मन्त्रैः कलशे वरुणमावाह्य पूजयेत् । ततः जलमातृः पूजयेत्—तद्यथा आग्नेयकोणे वस्त्रास्तृते कृतसप्ताक्षतपुञ्जेषु उदक्संस्थेषु ॐ समुद्रायशिशुमारा-नालंभतेपर्ज्जन्न्यायमण्डूकानद्भ्योमत्स्यान्मित्रायकुलीपयान्वरुणायनाक्कान् ॥ मत्स्यै नमः मत्सीमा० । ॐ सुपर्ण्णः पार्ज्जन्यऽ आतिर्व्वाहसो दर्विदाते व्वायवे बृहस्पतये व्वाचस्पतये पैङ्गराजोऽलज ऽआन्तरिक्षः प्लवो मद्गुर्म्मत्स्यस्ते नदीपतये द्यावापृथिवीयः कूर्म्मः ॥ कूर्म्यै नमः कूर्मीमा० ।

प्र० ७७

ॐ देवीद्यावा पृथिवी मखस्यं वा मद्य शिरोराद्ध्यासन्देवयजने पृथिव्याः ॥ मखायंत्वा मखस्यं त्वा शीर्ष्णे ॥ वाराह्यै नमः । वाराहीमा० । ॐ इन्द्रुर्दक्षःश्येनऽऋतावाहिरंण्यपक्षःशकुनोभुरण्युः ॥ महान्त्सधस्थे ध्रुवऽआनिषत्तो नमस्तेऽ अस्तुमामाहिᳪसीः ॥ वाराह्यै नमः । वाराहीमा० । ॐ पुरुषमृगश्चन्द्रमंसोगोधाकालकादार्व्वाघाटस्ते व्वनस्पतीनाङ्कृकवाकुः सावित्रोहᳪसो व्वातस्य नाक्रोमकरः कुलीपयस्ते कूपारस्य ह्रियै शल्यंकः ॥ दर्दुर्यै नमः । दर्दुरीमा० । ॐ व्वातं प्राणेनापानेननासिके उपयाममधरेणौष्ठेन सदुत्तरेण प्रकाशेनान्तरमनूकाशेन वाह्यन्निवेष्पं मूर्ध्नास्तनयित्नुंर्बाधेनाशनिं मस्तिष्केण व्विद्युतङ्कनीनकाभ्याङ्कर्णाभ्यᳪश्रोत्रᳪश्रोत्राभ्याङ्कर्णौ तेदुनीमधरकण्ठेनापः शुष्ककण्ठेन चित्तं मन्याभिरदितिᳪशीर्ष्णानिर्ऋतिन्निर्ज्जर्ल्येन शीर्ष्णा सङ्क्रोशैः प्राणान्रेष्माणᳪस्तुपेन ॥ मकर्यै नमः । मकरीमा० ॐ समंख्ये देव्या धिया सन्दक्षिणयोरुचंक्षसा ॥ मामऽ आयुः प्रमोषीम्मोऽअहन्तव व्वीरं व्विंदेय तवं देवि सन्दृशि ॥ जलूक्यै० जलूकीमा० । ॐ व्वृषण्णोऽऊर्मिरंसि राष्ट्रदाराष्ट्रम्मे देहि स्वाहा व्वृषण्णोऽऊर्मिरंसि राष्ट्रदाराष्ट्रममुष्मै देहि व्वृषसेनोऽसि राष्ट्रदाराष्ट्रम्मे देहि स्वाहा

प्र० ७७

व्वृषसे नो ऽसि राष्ट्रदाराष्ट्रमुमुष्मैदेहि ।। तन्तूक्यै० तन्तुकीमा० । ततः जीवमातृकापूजनम् ।
तत्रैव पुरतः ससाक्षतपुञ्जान् कृत्वा ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि
रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।। इष्णन्निषाणामुम्मं ऽइषाण सर्व्वलोकं म ऽइषाण ।। ऊर्म्यै० ऊर्मिमा० ।
ॐ सोमाय कुलुङ्ग ऽआरण्यो जोनकुलः शकाते पौष्ण्णाः क्रोष्टामायोरिन्द्रस्य गौरमृगः पिद्धोन्न्यङ्कु
कक्कटस्तेनुमत्यै प्रतिश्श्रुत्कायै चक्रवाकः ।। लक्ष्म्य० लक्ष्मीमा० । ॐ प्राणश्च मे पानश्च मे
व्यानश्च मे सु रश्च मे चित्तं चमऽ आधीतञ्च मे वाक् च मे मनश्च मे चक्षुश्च मे श्रोत्रं च मे
दक्षश्च मे बलं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।। महामायायै० महामायामा० । ॐ स नऽ इन्द्राय
यज्ज्यवे व्वरुणाय मरुद्भ्यः । व्वरिवो वित्परिस्रव ।। पानदेव्यै० पानदेवीमा० । ॐ इदमापः
प्रवहतावद्यञ्चमलं च यत् ।। यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्च शेपे ऽअभीरुणम् ।। वारुण्यै० वारुणीमा० ।
ॐ निघुल्वान्वाय वाग्यः शुक्रो ऽअयामिते । गन्तासिसुव्व्रतो गृहम् ।। निर्मलायै० निर्मलामा० ।
ॐ पुरुष मृगश्चन्द्रमसो गोधा कालकादार्व्वा घाटस्ते व्वनस्पतीनाङ्कृकवाकुः
सावित्रोहर्ठ० सोव्वातस्य नाक्को मकरः कुलीपयस्ते कूपारस्य ह्रियै शल्यकः ।। गोधायै नमः

गोधाम० इत्यावाह्य पूजयेत् । अत्रावसरे केचित् सप्तसागरस्य पूजनमिच्छति—तद्यथा—अक्षतपुञ्जेषु—ॐ समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् ॥ घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥ इति मन्त्रेण षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैर्वा पूजयेत् । ततः इन्द्रादिदशदिक्पालान् आवाह्य पूजयेत् । अत्रावसरे केचित् दिक्पालेभ्यो बलिमिच्छन्ति । ततः जलाशयस्थितवरुणपूजनम्—ॐ उरुꣳहि राजा वरुणश्चकार सूर्याय पन्थामन्वेतवा उ ॥ अपदे पादा प्रतिधातवेऽकरुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् ॥ नमो वरुणायाभिष्ठितो वरुणस्य पाशः ॥ इति मन्त्रेण वरुणाय नमः इति नाममन्त्रेण वा षोडशोपचारैः पूजनं कृत्वा ततः वैदिकमन्त्रेण नाममन्त्रेण वा स्रुवेण द्वादशाहुतीर्जुहुयात् । तद्यथा—ॐ अद्भ्यः स्वाहा वार्भ्यः स्वाहोदकाय स्वाहा तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा स्रवन्तीभ्यः स्वाहा स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा कूप्याभ्यः स्वाहा सूद्याभ्यः स्वाहा धार्याभ्यः स्वाहार्णवाय स्वाहा समुद्राय स्वाहा सरिराय स्वाहा ॥ इति मन्त्रेण । नाममन्त्रपक्षे तु—ॐ अद्भ्यः स्वाहा । ॐ वार्भ्यः स्वाहा । ॐ उदकाय स्वाहा । ॐ तिष्ठन्तीभ्यः स्वाहा । ॐ स्रवन्तीभ्यः स्वाहा । ॐ स्यन्दमानाभ्यः स्वाहा । ॐ कूप्याभ्यः स्वाहा । ॐ सूद्याभ्यः स्वाहा । ॐ धार्याभ्यः स्वाहा ।

ॐ अर्णवाय स्वाहा । ॐ समुद्राय स्वाहा । ॐ सरिराय स्वाहा । इति वा जुहुयात् । ततः—
ॐ नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय । सुपाशहस्ता झषासनाय जलाधि-
नाथाय नमो नमस्ते ॥ इति मन्त्रेण वरुणं नमस्कृत्य प्रार्थयेत्—ॐ प्रतीचीश नमस्तुभ्यं
सर्वाघौघनिषूदन । पवित्रं कुरु मां देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि
यावान्विधिरनुष्ठितः । ससर्वस्त्वत्प्रसादेन पूर्णो भवत्वपांपते ॥ इति संप्रार्थ्य—ततः—सुवासिनीभ्यो
हरिद्रासौभाग्यद्रव्यं ताम्बूलानि चणकांश्च दद्यात् । ब्राह्मणेभ्यो यथाशक्तिदक्षिणां दद्यात् ।
ततः—ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वे महे । उप प्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवा
सचा ॥ इति पठित्वा कलशान् उत्थाप्य सुवासिनीनां हस्ते दद्युः । ब्राह्मणाः—ॐ यथेमां वाचं
कल्याणीमावदानि जनेभ्यः ॥ ब्रह्मराजन्याभ्याᳫं शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च ॥
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु ॥ आ नो
भद्रा०—इति सूक्तं पठन् गीतवाद्यादियुक्तः सुवासिनीपुरःसरो यज्ञमण्डपं प्रत्यागच्छेत् ।
अर्धमार्गे आगते सति तदा किञ्चिद्भूमिमुपालिप्य क्षेत्रपालपूजनं कृत्वा बलिं संपूज्य दद्यात्—तत्र

मन्त्रः—ॐनमो भगवते क्षेत्रपालाय भासुराय त्रिनेत्रज्वालामुख अवतर २ कपिल पिङ्गल ऊर्ध्व केश–जिह्वा लालन छिन्दि २ भिन्धि २ कुरु २ चल २ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रैं बलिं गृहाण स्वाहा–इति पठेत् । ततः सपत्नीको यजमानः बन्धुज्ञातिसमन्वितेन प्रतिगमनं मण्डपद्वारसमीपे शिष्टाचारात् । पूर्ववत् सर्वदोषप्रशमनार्थं क्षेत्रपालाय बलि दद्यात् । ततः स्वागतं मण्डपस्य पश्चिद्वारस्थितं यजमानं सुवासिन्यो नीराज्य पश्चिमेनैव द्वारेण मण्डपमध्ये नयेयुः । इति शिष्टाचारप्राप्तजलयात्राप्रयोगः ।

---

(१) शान्तिक पौष्टिकं वापि लजयात्रां विना बुधः । कुरुते यदि वा मोहात्कर्म तस्य च निष्फलम् ।। तडागादिप्रतिष्ठासु देवतायतनादिषु । लक्षहोमे कोटिहोमेयुतहोमे तथैव च ।। व्रतोत्सर्गे महादाने यज्ञे वा वितते शुभे । व्रतोत्सर्गे–व्रतोद्यापने इत्यर्थः ।। जलयात्रां पुरा कृत्वा श्रेष्ठं कर्म समाचरेत । अर्थात संप्रवक्ष्यामि जलयात्राविधिं शुभम् ।। यज्ञशालामतिक्रम्य ऋत्विग्भिर्ब्राह्मणैः सह ।। यजमानः सपत्नीकः सुहृद्बन्धुजनैर्युतः ।। अश्वारूढो गजारूढो वस्त्रालङ्कारभूषितः । गृहीत्वोपस्करं सर्वं गन्धपुष्पाक्षतादिकम् ।। जलाशय ततो गच्छेद् गीतवादित्रनिःस्वनैः । अनिन्द्यं च हृदि गच्छेन्नदीं वाथ समुद्रगाम् ।। सुवासिन्योग्रतः वृत्वा सर्वालङ्कारभूषिता। । हैमराजतताम्रान्वा मृन्मया कलशान् शुभान् ।। गृहीत्वा गन्धपुष्पाद्यैरर्चितान् सूदढान्नवान् । जलाशयं समासाद्य तीरे गोमयलेपिते ।। चतुरस्त्रे कृते क्षेत्रे तत्र स्वस्तिकमालिखेत् । यवैर्वा तण्डुलैर्वापि पद्ममष्टदलं लिखेत् ।। चत्वारः कलशा स्थाप्याः कोणेषु च समाहितैः । तत्र सपूजयेद्देवं वरुण यादसां पतिम् ।। जलमातृस्तु संपूज्य जीमातृस्तथैव च । कलशाग्नेयकोणेतु स्वस्तिकादिकमण्डले ।। मत्सी कूर्मी च वाराही वर्दुरी मकरी तथा । जलूकी तन्तुकी चैव सप्तैता जलमातरः ।। कुमारी धनदा नन्दा विमला मङ्गला चला । पद्मा-चेति सुविख्याताः सप्तैना जीवमातृकाः । ऊर्मी लक्ष्मीर्महामाया पानदेवी तथैव च । वारुणी नर्मदा गोवा सप्तैताः स्थलमातृकाः ।। एता अपि सम्पूज्यार्थं दिक्पालान्दिक्षु चार्चयेत । दीपानसमन्तात्प्रज्वाल्हु देवेताना विसर्जनम् ।। घृतेन वाथ वा जले दद्यात्तो बलिम् । अदभ्यः संभृतेत्यादि मन्त्रैर्द्वादशश्च स्रुवेण तु ।। गृहीत्वा तु ततः कुम्भान्पञ्चपल्लवसंयुतान् । कृत्वा सुवासिनीशपाग्रे गीत्वादित्रनिःस्वनैः ।। यागभूमिं समागच्छन्स्वप्रमार्गे बलिं हरेत् । उपलिप्य तथा भूमिं भुतेनामेन वाऽथवा । यज्ञमंडपद्वारे च कुर्यान्नारीनिरञ्जनम् । यज्ञमण्डपमध्येऽत्र स्थापयेद्वेदिकोपरि ।। कुम्भानिति शेषः ।। पश्चिमेनैव प्रवेशोनेतरेण तु ।

❀ अथ भूमि पूजनम् ❀

यजमानः सपत्नीकः प्रासादाग्रे उत्तरे ईशान्यां वा ज्योतिर्विदादिष्टे सुमुहूर्ते भूमौ गत्वा कुशहस्तः कुशेपुनर्विश्य देशकालौ स्मृत्वा-करिष्यमाण-विष्णवादिप्रतिष्ठोपयोगिमण्डपायतनादिनिर्मातुं भूमिकूर्मानन्तवराहाणां विश्वकर्मणि पूजनं करिष्ये तदङ्गत्वेन स्वस्तिपुण्याहवाचनादिकं च करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतासिध्यर्थं गणेशाम्बिकयोः पूजनं च करिष्ये। गणपतिपूजनस्वस्तिवाचनादिकं विधाय भूम्यादिपूजनम्-चतुर्भुजां शुक्लवर्णां कूर्मपृष्ठोपरिस्थिताम्। शङ्खचापरां चक्रशूलयुक्तां धरां भजे। आगच्छ सर्वकल्याणि वसुधे लोकधारिणि। पृथ्वी ब्रह्मदत्तासि कश्यपेनाभि नन्दिता॥ इत्यावाहनम्। स्योना पृथिवीतिजनम्। भूरसीति भूम्यैं सफलपुष्पाञ्जलदानम्। उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। दंष्ट्राग्रे लीलया देवि यज्ञार्थं प्रणमाम्यहम्॥ इतिदण्डवत्प्रणम्य ताम्राविपात्रे क्षीरतोयकुशाग्रयवतिलतण्डुलसर्षपपुष्पसुवर्णादिगृहीत्वा जानुभ्यां धरणीं गत्वा ब्रह्मणा निर्मिते देव विष्णुना शंकरेण च। पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्दे वै श्रवणेन च॥ यमेन पूजिते देवि धर्मस्य विजिगीषया। सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च मतं रूपं च पूजिते॥ उद्धृतासि वराहेण सशैलवनकानेन। मण्डपं कारयामद्य त्वदूर्ध्वं शुभलक्षणम्। गृहाणार्घ्यमिमं देव प्रसन्ना वरदा भव॥ इत्यनेनार्घं दत्वा बद्धाञ्जलिः प्रार्थयेत्-उपचाराणि मां स्तुभ्यं ददामि परमेश्वरि। भक्त्या गृहाण देवेशि त्वामहं शरणं गतः॥ इति पूजानिवेदनम्। ॐ सपरिवारायै भूम्यै नमः-इम महाबलिं समयामितिगन्धपुष्पपायसत्सक्तुलाजै सघृतैः सदीपैर्महाबलिं दत्वा प्रार्थयेत्-नन्दे नन्दय वासिष्ठे वसुभिः प्रजया सह। जय भार्गवदायदे प्रजानां जयमावह॥ पूर्णे गिरिशदायपादे पूर्णकामं कुरुष्व मे भद्रे काश्यप दायादे कुरु भद्रां मतिं मम सर्वबीजसमायुक्ते सर्वरत्नौषधावृते। रुचिरे नन्दने नन्दे वासिष्ठे रम्यतामिह॥ प्रजापतिसुते देवि चतुरस्रमहीयसि। सुभगे सुव्रते देवि गृहे काश्यपि रम्यताम्॥ पूजिते परमाचार्यैर्गन्धमाल्यैरलङ्कृते। भवभूतिकरी देवि गृहे भार्गवि रम्यताम्॥ अव्यक्ते चाहते पूर्णे शुभे चाङ्गिरः सुते। इष्टदेवत्व प्रयच्छेष्टं त्व प्रतिष्ठापयाम्यहम्॥ देवस्वामि पुरस्वामी गृहस्वामि परिग्रहे। मनुष्यधनहस्त्यश्वपशुवृद्धिकरी भव॥ इति॥ इतिमन्त्रेण गन्धादिभि पञ्चोपचारैः कूर्मपूजा। ॐस्योना पृथिवीतिमन्त्रेणानन्तपूजा। ॐयस्य कूर्मो गृहे हविस्तमग्नेवर्द्धयात्वम्। तस्मैदेदाऽधिब्रवन्नयञ्चब्रह्मणस्पतिः॥ कूर्माय नमः। ॐविश्वकर्मन्हविष वर्द्धतेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम्॥ तस्मै विशः समनमन्तपूर्वीरयमुग्रा विहव्यो यथासत॥ विश्वकर्माणं च पूजयेत्। ॐखडगो वैश्वदेवः श्व कृष्णाः कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्तेरक्षसामिन्द्राय सूकरः सिंहो मारुत कृकलासः पिप्पकाशकुनिस्ते शरव्यायैविश्वेपानन्देवानाम्पृषतः॥ इतिमन्त्रेण वाराहं पूजयेत्। समुद्रवसने देवि पर्वतस्तनमण्डले। विष्णुपत्नि नमस्तुभ्यं भूमिदेवे नमोस्तु ते॥ इति प्रार्थयेत्। पृथिवीकूर्मानन्तादिपूजाविधौ यन्न्यूनातिरिक्तं तत्सर्वं परिपूर्णमस्तु। आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम्। पूजा चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वरि। यस्य स्मृत्या०। प्रमादादितिपठेत्। एवं प्रासादभवनादौ च तत्तद् मन्त्रेणार्घदानं कार्यमितिविशेषः। वापीकूपतडागादौ तु-वापी च कारयाम्यद्य अन्तरे तव शोभने-इति विशेषः। अथान्यदपि च कर्मणि तत्तदूहेनार्घ्यदानम्॥ इति। चिकीर्षिते कुण्डमण्डपादौ—आदि स्वस्तिवाचनपूर्वकं भूमिकूर्मान्तवराहाणां पूजनं कार्यमिति।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

स्वस्तिपुण्याहवाचन और ब्राह्मणों द्वारा सकुटुम्ब सपत्नीक यजमान का अभिषेक कथन

—श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य
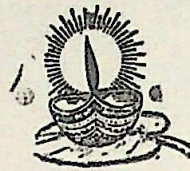
सपत्नीको यजमानः प्राङ्मुख उपविश्य स्वदक्षिणतः पत्नीं चोपवेश्य दक्षिणत उदङ्मुखान् शुभ्मान् ब्राह्मणानुपवेशयेत् । ततः कुशयवकुसुमसहितं जलं गृहीत्वा—देशकालौ सङ्कीर्त्य—करिष्यमाणामुककर्माङ्गत्वेन स्वस्तिवाचनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य कलशं स्थापयेत्—

'मही द्यौः' इस मन्त्र से जहाँ कलश रखना हो वहाँ की भूमि का स्पर्श कर वहाँ पर रंगवल्ली पद्म बना दे। 'ओषधयः सम्' इस मन्त्र से जहाँ स्पर्श किया है वहाँ एक सेर सप्तधान्य गिरा दे। 'आ जिघ्रकलशम्' इस मन्त्र से सुसज्जित

प्र० ॐ महीद्यौः पृथिवी च न ऽइमं यज्ञं मिमिक्षताम् ॥ पिपृतान्नो भरीमभिः ॥ इति कलशाधारस्थलं संस्पृश्य तत्र रङ्गवल्लीपद्मं विधाय भूमिं स्पृशेत्। ॐ ओषधयः सम्वदन्ते सोमेन सहराज्ञा ॥ यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तꣳ राजन्पारयामसि ॥ इतिपूर्वदेशे प्रस्थपरिमितं सप्तधान्यपुञ्जं विकिरेत्। ॐ

८५ आजिघ्र कलशं मह्या त्वा विशन्त्विन्दवः ॥ पुनरूर्ज्जा निवर्त्तस्व सा नः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्म्माविशताद्रयिः ॥ इति तत्र सुसज्जितं कलशं संस्थापयेत्। ॐ व्वरुणस्योत्तम्भनमसि व्वरुणस्य स्कम्भसर्ज्जनीस्थो व्वरुणस्य ऽऋतसदन्यसि व्वरुणस्य ऽऋतसदनमसि व्वरुणस्य ऽऋतसदनमासीद ॥ इति तस्मिन् जलं पूरयेत्। ॐ त्वां गन्धर्व्वा ऽअखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वाम्बृहस्पतिः ॥ त्वामोषधे सोमो राजा व्विद्वान्न्यक्ष्मादमुच्च्यत ॥ इति कलशे गन्धं प्रक्षिपेत्। ॐ या ऽ ओषधीः पूर्व्वा जाता देवेभ्यस्त्रि-

८ युगं पुरा ॥ मनै नु बभ्रूणामहꣳ शतं धामानि सप्त च ॥ इति सर्वौषधीः निक्षिपेत्। ॐ काण्डात्काण्डा-

(स्वस्तिक रंगीन आदि पर) कलश का स्थापन करे।

'वरुणस्योत्तम्भनम्' इस मन्त्र से स्थापित कलश में जल भरे। 'त्वां गन्धर्वा' इस मन्त्रसे गन्धका कलश में प्रक्षेप करे।

'याऽ ओषधीः' इस मन्त्र से सर्वौषधी तथा 'काण्डात्काण्डात्' इस मन्त्र से कलश में दूर्वा गिरा दे।

'अश्वत्थे वः' इस मन्त्र से 'पञ्चपल्लव' 'स्योना पृथिवी' मन्त्र से सात जगह की मिट्टी गिरावे 'याः फलिनी' इस मन्त्र से सुपारी, 'परिवाजपतिः' इस मन्त्र से पञ्चरत्न और 'हिरण्यगर्भः' इस मन्त्र से सुवर्ण को स्थापित कलश में गिरावे।

त्प्ररोहन्तीपरुषः परुषस्परि एवानो दूर्वे प्रतनुसहस्रेणशतेनच ॥ इति तत्र दूर्वाः प्रक्षिपेत्। ॐ अश्वत्थेवोनिषदनम्पर्णेवोव्वसतिष्कृता ॥ गोभाजऽ इत्किलासथयत्सनवथपूरुषम् ॥ इति पञ्च पल्लवान् प्रक्षिपेत् ॥ स्योनापृथिवीनोभवानृक्षरानिवेशनी ॥ यच्छानःशर्म्मसप्रथाः ॥ इति मन्त्रेण सप्तमृदः प्रक्षिपेत्। ॐ याःफलिनीर्याऽअफलाऽअपुष्पायाश्चपुष्पिणीः ॥ बृहस्पतिप्रसूतास्तानोमुञ्च-न्त्वंᳬहसः ॥ इति पूगीफलं प्रक्षिपेत्। ॐ परिवाजपतिःकविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् ॥ दधद्रत्नानिदाशुषे ॥ इति पञ्चरत्नानि प्रक्षिपेत्। ॐ हिरण्यगर्भःसमवर्त्ततांग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽ आसीत् ॥ सदा-धारपृथिवीन्द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ इति हिरण्यं प्रक्षिपेत्। ॐ सुजातोज्योतिषा सह शर्म्मव्वरूथमासदत्स्वः ॥ व्वासोऽ अग्ने विश्वरूपᳬ संव्ययस्व विभावसो ॥ इति

तदनन्तर 'सुजातो ज्योतिषा' इस मन्त्र से दो वस्त्रों द्वारा कलश को चारों तरफ से वेष्टन करे। 'पूर्णादर्वि' इस मन्त्र से तांबे आदि पात्र में चावल भर कलश के ऊपर रख दे। 'याः फलिनीर्या' इस मन्त्र से कलश के ऊपर अपने अभिमुख

लाल वस्त्र आदि से वेष्टित नारिकेल फल का स्थापन करे।

'तत्त्वा यामि' इस मन्त्र से उस कलश में अंग के सहित सपरिवार सायुध-सशक्तिक वरुण का आवाहन और स्थापन करे।

वस्त्रयुग्मेन कलशं संवेष्टयेत् । ॐ पूर्णादर्व्विपरापतसुपूर्णापुनरापत ।। व्वस्नेवव्विक्क्रीणावहाऽइष-मूर्ज्जं शतक्रतो ।। इति नारिकेलसहितं धान्यपूर्णपात्रं कलशोपरि संस्थाप्य—ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ।। अहेडमानो व्वरुणेहबोध्युरुशंस मानऽआयुः प्रमोषीः ।। इति वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि स्थापयामि । ॐ अप्पतये वरुणाय नमः—इत्यावाह्य तत्रैव देवता आवाहयेत्—कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः । मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ।। कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा च मेदिनी । अर्जुनी गोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती ।। कावेरी कृष्णवेणा च गङ्गा चैव महानदी । तापी गोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा ।। नदाश्च विविधा जाता नद्यः सर्वास्तथा पराः । पृथिव्यां

'अप्पतये वरुणाय नमः' इससे आवाहन कर उस कलश पर ही देवताओं का आवाहन करे। कलश के मुख में भगवान् विष्णु का, कण्ठ में रुद्र का, कलश के मूल में ब्रह्मा का, कलश के मध्य में मातृगणों का, कुक्षि में सात समुद्रों, सातद्वीपों और मेदिनी का, अर्जुनी, गोमती, चन्द्रप्रभा, सरस्वती, कावेरी, गंगा, महानदी, तापी, गोदावरी,

प्र० ८७

माहेन्द्री, नर्मदा, अनेक प्रकारके नद, सब प्रकार की नदियाँ, भूमण्डल में जो तीर्थ हैं वे कलश में रहें, सब समुद्र, तालाब, तीर्थ, जलके नद, वे सब दुरित क्षय को नष्ट करने के लिये तथा मेरी शान्ति कामना के लिये कलश में आवें। सब अङ्गों सहित ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद इस कलशमें रहें। यहाँ पर गायत्री, सावित्री, शान्ति, पुष्टि तथा अधिष्ठातृदेवी दुरितक्षयों का नाश कर शान्तिकामना के लिए आवें।

यानि तीर्थानि कलशस्थानि तानि वै ॥ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥ ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः। अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशन्तु समाश्रिताः ॥ अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारकाः ॥ 'कलशाधिष्ठात्र्यो विष्ण्वादिदेवताः सुप्रतिष्ठिताः भवन्तु' इत्यावाह्य मनोजूतिरिति प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्। तद्यथा—

कलश के अधिष्ठातृ विष्णु आदि देवता यहां सुप्रतिष्ठित हों। इसप्रकार आवाहन कर 'मनो जूतिः' इस मन्त्र से प्राणस्थापन कर सोलह उपचारों से वरुण का अर्चन करें।

प्र०

८८

(श्लोकों द्वारा वरुण का पूजन)

इससे ध्यान करे—

आश्रित्य यं भवति धन्यतरा प्रतीची रत्नाकरत्वमुपयाति पयःसमूहः ।
पाशश्च यस्य भवपाशविनाशकारी तं पाशधारिणमहं हृदि चिन्तयामि ॥

इससे आवाहन करे—

यद् दृष्टिकोणरहिता वसुधा सदैव वन्ध्येव भाति विफलीकृतबीजशक्तिः ।
तं वारिधारिणमहं वरुणं सदैव धाराधरं सुखकरं प्रियमाह्वयामि ॥

इससे आसन दे—

अयि विभो शरणागतवत्सल यदपि हीनमिदं भवतां कृते ।
तदपि भक्तजनं खलु वीक्ष्य मां समुचितं प्रियमासनमास्यताम् ॥

इससे पाद्य जल दे—

अहो मदीयं खलु पुण्यसञ्चितं श्रीमद्भिरद्याधि रक्षतोऽस्मि यत् ।
अकिञ्चनोऽहं भवतां कृते यदि तथापि पाद्यार्घ्यमिदं प्रगृह्यताम् ॥

प्र० ८९

इससे अर्घ्य दे—

विमलचम्पकपुष्पसमन्वितं त्रिविधतापविनाशननायकम् ।
प्रियकर प्रियमर्घ्यमिदं विभो परिगृहाण जलाधिप पाशभृत् ॥

इससे अर्घ्याङ्ग आचमनीय जल दे—

कस्तूरिकाघुसृणचन्दनवासवारि स्वेलालवङ्गलवलीपरिपूरितं च ॥
मध्याह्नसूर्यप्रतिबिम्बमिवप्रकाशं दत्तं गृहाण वरुणाचमनं मयेदम् ।

इससे पञ्चामृत दे—

सौवर्णपात्रधृतप्रीतिविवर्धकेन पञ्चामृतेन मधुना पयसा घृतेन ।
मिश्रीकृतेन सितया शुभया च दध्ना देवो दधातु हृदये करुणामयेऽस्मिन् ॥

इससे शुद्धोदकस्नान कराये—

कङ्कोलपत्रहरिचन्दनवासितेन काश्मीरजेन घनसारसमन्वितेन ।
एलालवङ्गललनीविमलोदकेन स्नानं कुरुष्व भगवन् मुनिवेदितेन ॥

इससे वस्त्र दे—

ब्रह्माण्डमेतद्यया ऽप्यखण्डं संपन्नमेभिर्वसनैस्तनोपि ।
तस्मै प्रदेयः किमु वस्त्रखण्डस्तथापि [illegible] मम [illegible]रक्षणीयः ॥

प्र०

६१

इससे यज्ञोपवीत दे—

आलिङ्ग्यते यस्य शताग्रभागं पूता विमुक्ता वपुषोऽधमास्ते ।
यज्ञोपवीतं किमु तस्य पूत्यै दीयते भक्तेषु समर्थनाय ॥

इससे गन्ध चन्दन दे—

श्रद्धातुरो यत्र मनस्तु सूत्रं भक्तिं च वेमानमवातनान ।
हृत्कौलिकः मे सुविमलोत्तरीयं तनोमि तत्ते तनुकल्पवल्ल्याम् ॥

इससे गन्ध चन्दन दे—

अमन्दगन्धं विकिरन्ति यत्र वृन्दारकाः पृच्छति तत्र को माम् ।
मयाऽपि हे नाथ हृदोपनीतं द्रव्यं सुगन्धं विमलं गृहाण ॥

इससे अक्षत दे—

पुण्याक्षतानक्षतपुण्यराशिदाय तुभ्यं समुपस्थितोऽस्मि ।
एतर्हि लज्जानतमस्तकोऽस्मि द्रुतं गृहीत्वा कुरु मां कृतार्थम् ॥

इससे पुष्पादि दे—

आलोचनं ते लवपादयुग्मं कृते कठोरः कुसुमोपहारः ।
धाट्योंद्भवं मे पराधमेनं क्षमस्व दीनस्य हि दीनबन्धो ॥

इससे नानापरिमलद्रव्य दे—

निखिलभुवनमध्ये विस्तृता यस्य कीर्तिः सुरनरमुनिवन्द्यो वन्दनीयप्रभावः ।
स खलु वरुणदेवो भक्तिपूर्वं प्रदत्तं भुविभयहारी अङ्गरागं दधातु ॥

इससे धूप दे—

कर्पूरकुङ्कुमसुगन्धिसुगन्धितं हि कस्तूरिचन्दनरसैः परिवर्धितं तम् ।
विप्रैर्बुधैश्च विबुधैः समुपासितं त्वं धूपं गृहाण सुरभिं परिपावनं च ॥

इससे दीप दे—

तमोनाशकं दीप्तिदीप्तं प्रदीपं प्रभाभासुरं भासयन्तं गृहान्तः ।
स्फुरज्ज्योतिषं वर्तियुक्तं सुदीपं जगद्देवदेव त्वमङ्गीकुरुष्व ॥

इससे नैवेद्य दे—

सौवर्णपात्रे समलङ्कृतेऽस्मिन् यथायथं तद्विनिवेशितं च ।
सुस्वादुशीतं मधुरं नवं च नैवेद्यमङ्गीकुरु देवदेव ॥

इससे ताम्बूल दे—

एलालवङ्गलवलीक्रमुकादियुक्तं सुस्वादुगन्धिसुरभिं सुमनोहरं च ।
भूपः प्रयाणसमये प्रियमादृतं तत् ताम्बूलरागमुररी कुरु देवदेव ॥

इससे दक्षिणा दे—

भूसुरैः सुरसमैरखिलैर्या वन्दितामृतभुजैः समुपास्या ।
तां गृहाण निजभक्तनिवेद्यां दक्षिणां सुमनसापि च मुद्राम् ॥

इससे नीराजन करे—

कस्तूरिकुङ्कुमसुगन्धिसुगन्धितेन एलालवङ्गघनसारसमन्वितेन ।
सौवर्णपात्रधृतगोमयवर्धकेन नीराजनामपि करोमि तवातिथेयीम् ॥

इससे प्रदक्षिणा करे—

समागतानां भवपाशनाशिनां भवादृशानां त्रयतापहारिणाम् ।
विधीयते या विदुषां गृहे सदा प्रदक्षिणां दक्षिण ते करोमि ॥

इससे पुष्पाञ्जलि करे—

हे पाशभृद्वरुण नाथ जलेश देव दीने दयां मयि विधेहि सदा सुदेव ।
नातः परं किमपि याचयितव्यमस्ति पुष्पाञ्जलिं ननु गृहाण सदा मदीयम् ॥

अनया पूजया वरुणाद्यावाहितदेवताः प्रीयन्तां न मम ।

हे वरुणदेव, आप देवोंका मेरे द्वारा अर्चन-पूजन हुआ है, उससे प्रसन्न हों ।

अथ कलशप्रार्थना

तदनन्तर देवता और असुरों द्वारा समुद्रमन्थन में भगवान् विष्णु–स्वयं कुम्भ (घड़ा) को लेकर–निकले। उस जल में सब तीर्थ और सब देवता स्थित हैं। तुम्हारे सब प्राणी, सब प्राण, शिव, स्वयं ही विष्णु, प्रजापति, आदित्य, वसुगण, रुद्रगण, विश्वेदेव ये सब कार्य के फल को देने वाले स्थित हैं। आपके प्रसाद से इस यज्ञ को उस जल द्वारा करते हैं। अतः हे देव, इसमें आप निवास करो तथा सर्वदा प्रसन्न रहो।

देवदानवसंवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदः। त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव ॥ सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा। नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराय सुमङ्गलाय। सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥ पाशपाणे नमस्तुभ्यं पद्मिनीजीवनायक।

स्फटिक की तरह कान्ति, सफेद मालाधारी रूप, तथा पाश को हाथ में धारण करने वाले सभी जल के स्वामी आपको बारंबार नमस्कार है। पाशपाणे, हे पद्मिनीजीवनायक, आपको नमस्कार है। जब तक पुण्याहवाचन कार्य हो, तब तब आप इस कलश में रहें।

भूमि में जानुमण्डल को झुकाकर कमल के सदृश अञ्जलिको शिर पर कर दाहिने हाथ से सुवर्ण आदि का जल से भरे कलश को धारण करा के अपने सिरपर रख आशीर्वाद की प्रार्थना करे। नाग, नदी, पर्वत और भगवान् विष्णु के पैर की तरह मेरी लम्बी आयु हो। ऐसी प्रार्थना ब्राह्मणों से करे। ब्राह्मण भी आप बहुत बड़ी आयुवाले हों-यों कहें।

प्र०

पुण्याहवाचनं यावत्तावत्त्वं सन्निधो भव ॥ अवनिकृतजानुमण्डलः कमलमुकुलसदृशमञ्जलिं शिरस्याधाय दक्षिणेन पाणिना सुवर्णपूर्णकलशं धारयित्वा स्वमूर्ध्ना संयोज्य आशिषः प्रार्थयेत्– दोर्घा नागा नद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णुपदानि च ॥ तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु 'अस्तु' दीर्घमायुः–इति विप्राः प्रति ब्रूयुः। ततः–ॐ त्रीणिपदाव्विचक्रमेव्विष्णुर्गोपाऽअदाभ्यः॥ अतो धर्माणि धारयन् ॥ तेनायुः प्रमाणेन पुण्यं पुण्याहं दीर्घमायुरस्तु–इति यजमानो ब्रूयात्। अस्तु दीर्घमायुः–इतिः विप्राः प्रतिब्रूयुः। इतिवारत्रयं पठेत्। ॐ अपां मध्ये स्थिता देवाः

९५

संसार के रक्षक अविनाशी विष्णु (यज्ञ) ने अग्नि, वायु और, आदित्य नामवाले पदों को चलाया और इसी पदत्रय से धर्म कार्य को धारण किया।

आयुके प्रमाण से पुण्यको देनेवाला पुण्यदिन भी लम्बी आयुवाला हो। ब्राह्मण कहते हैं कि—उसकी आयु लम्बी हो। जल के मध्य में जो देव हैं, वे सब जल में रहते हैं। वह जल ब्राह्मणों के हाथ में देने से तुम्हारा कल्याण होगा। शिवा

प्र०

९५

प्र० ९६

आपः सन्तु' इस वाक्य को कहो कहकर ब्राह्मणों के हाथ में जल दे। ब्राह्मण कहते हैं—हे यज्ञ करनेवाले, यह जल आपका कल्याण करने वाला हो। जो लक्ष्मी पुष्पों में और पुष्कर में निवास करती हैं। वही लक्ष्मी हमारे यहाँ सदा रहे। तथा हमारे में प्रेम मात्र को रखे। 'सौमनस्यमस्तु' इससे ब्राह्मणों के हाथ में पुष्प दे। ब्राह्मण भी कहें—'अस्तु सौमनस्यम्' आपका मन पुष्पवत् प्रसन्न रहे।

सर्वमस्तु प्रतिष्ठितम्। ब्राह्मणानां करे न्यस्ता शिवा आपो भवन्तु ते॥ शिवा आपः सन्तु–इति विप्रहस्तेषु जलं दद्यात्। सन्तु शिवा आपः–इति ब्राह्मणाः प्रतिवचनं दद्युः। ॐ लक्ष्मीर्वसति पुष्पेषु लक्ष्मीर्वसति पुष्करे। सा मे वसतु वै नित्यं सौमनस्यं तथास्तु नः॥ सौमनस्यमस्तु–इति पुष्पं दद्यात् 'अस्तु सौमनस्यम्' इति विप्राः। अक्षतं चास्तु मे पुण्यं दीर्घमायुर्यशोबलम्। यद्यच्छ्रेयस्करं लोके तत्तदस्तु सदा मम॥ अक्षतञ्चारिष्टञ्चास्तु–इत्यक्षतान् दद्यात्। अस्त्वक्षतमरिष्टञ्च–इति द्विजाः। गन्धाः पान्तु–इति गन्धं दद्यात्। सुमङ्गल्यञ्चास्तु–इति विप्राः प्रतिब्रूयुः। पुनरक्षताः

यजमान कहता है—अक्षत पुण्य को देनेवाले, लम्बी आयु, यश, बल तथा संसार में जो-जो कल्याण कारण बात हों वे सब हमारे यहाँ हों। अक्षत हिंसा करनेवाले न हों। ब्राह्मण कहते हैं—यह अक्षत हिंसा जन्य कष्ट देनेवाले नहीं हैं।

(१) विप्रस्तु हस्तदत्तानामुदकपुष्पाक्षतानां शुचौ देशे प्रक्षेपः कार्य इति रुद्रकल्पद्रुमकारः।

प्र०

कर्ता—गन्ध पवित्र करे। ब्राह्मण—यह गन्ध (चन्दन) मंगल को देनेवाला हो। कर्ता—फिर चावल पवित्र करें। ब्राह्मण ये चावल आप को खण्डित न करें।

कर्ता—पुष्प पवित्र करें। ये पुष्प लक्ष्मी के वर्धक हों। कर्ता—सुपारी, फल आदि पान प्रीति वाले हों। ब्राह्मण कहें—आप ऐश्वर्यशाली रहें। कर्ता—दक्षिणा प्रीतिवाला हों। ब्राह्मण-आपने बहुत कुछ दिया। कर्ता—फिर जल प्रीतिवर्धक हों।

प्र०

९७

पान्तु—इत्यक्षतान् दद्यात्। विप्रोक्तिः—आयुष्यमस्तु। पुनः—पुष्पाणि पान्तु—इति पुष्पाणि दद्यात्। सौश्रियमस्तु—विप्राः। सकलताम्बूलानि पान्तु इति ताम्बूलानि दद्यात्॥ ऐश्वर्यमस्तु द्विजाः। दक्षिणाः पान्तु—इति दक्षिणां दद्यात्। बहुदेयं [बहुलेयं] चास्तु विप्राः। पुनरत्रापः पान्तु—इति जलं दद्यात्। द्विजोक्तिः—स्वर्चितमस्तु। दीर्घमायुः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयो वित्तं बहुपुत्रं बहुधनं चायुष्यं चास्तु इति विप्रान् प्रार्थयेत्। 'अस्तु' इति द्विजाः प्रतिब्रूयुः। ततः—यत्कृत्वा सर्ववेदयज्ञक्रियाकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्तन्ते तमहमोङ्कारमादिङ्कृत्वा

९

द्विज—आपके द्वारा हम पूजित हो गये। कर्ता—लम्बी आयु, शान्ति, पुष्टि, तुष्टि, श्री, यश, विद्या, विनय, वित्त, बहुत पुत्रों और बहुत धन आदिवाला मैं हो जाऊँ यों प्रार्थना ब्राह्मणों से करे। ब्राह्मण कहें—आपने जो माँगा है वे सब निश्चित होंगे।

९७

तदनन्तर कर्ता—जिसके करने से सब वेदों द्वारा यज्ञ की क्रियाकारणरूपी कर्म का आरम्भ शुभ-प्रवृत्त होते हैं। उसमें ओंकार को आदि में कर ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद के आशिर्वादात्मक वचनों को जो बहुत ऋषियों के मतानुसार जाने गये हैं तथा आप लोगों द्वारा भी स्वीकृत हैं ऐसे-ऐसे पुण्य देनेवाले मन्त्रों को पुण्य जनक दिन में कहिये।

ऋग्यजुः सामाथर्वाशीर्वचनं बहुऋषिमतं संविज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये—इति वदेत् ॐ वाच्यताम् इति विप्राः प्रति ब्रूयुः ॥ ॐ द्रविणोदाः पिपीषतिजुहोतप्रचतिष्ठत ॥ नेष्ट्रादृतुभिरिष्यत ॥ १ ॥ सवितात्वासवानाᳬसुवतामग्निर्गृहपतीनाᳬसोमोव्वनस्पतीनाम् ॥ बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रोज्यैष्ठ्यायरुद्रःपशुभ्योमित्रःसत्योव्वरुणोधर्म्मपतीनाम्॥२॥नतद्रक्षाᳬसिनपिशाचास्तरन्तिदेवानामोजःप्रथमजᳬह्येतत् ॥ योबिभर्त्तिदाक्षायणᳬहिरण्यᳬसदेवेषुकृणुतेदीर्घमायुःसमनुष्येषुकृणुतेदीर्घमायुः ॥३॥ उच्चातेजातमन्धसोदिविसद्भूम्याददे ॥ उग्रᳬशर्म्म महिश्रवः ॥४॥ उपास्मैगायतानरःपवमानायेन्दवे । अभिदेवाँ ॥२॥ ऽइयक्षते ॥५॥ इति मन्त्रान् पठेयुः । ततः—व्रतजपब्राह्मण कहते हैं—

'द्रविणोदाः पिपीषति, सविता त्वा, न तद्रक्षा, उच्चा ते और उपास्मै गायता नरः' इन चारों मंत्रों को क्रम से फिर कहें।

व्रत, जप, नियम, तप, स्वाध्याय, क्रतु, शम, दम, दया और दान आदि विशिष्टों से सम्पन्न सब ब्राह्मणों के मन को एकाग्र करें। यों प्रार्थना करे। ब्राह्मण—हमारा मन एकाग्र है। कर्ता—आप लोग प्रसन्न हों। ब्राह्मण कहें प्रसन्न हैं।

शान्ति (शान्तमय जीवन) हो, पुष्टि (खोखलापन न हो), तुष्टि—प्रसन्न हो, वृद्धि (अच्छे कार्य) हों।

नियमतपःस्वाध्यायक्रतुशमदमदयादानविशिष्टानां सर्वेषां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम् इति विप्राद् प्रार्थयेत्। समाहितमनसः स्मः—इति द्विजाः। यजमानः—प्रसीदन्तु भवन्तः—इति वदेत्। प्रसन्नाः स्मः—इति विप्राः प्रति ब्रूयुः। ॐ शान्तिरस्तु। पुष्टिरस्तु। तुष्टिरस्तु। वृद्धिरस्तु। अविघ्नमस्तु। आयुष्यमस्तु। आरोग्यमस्तु। शिवमस्तु। शिवङ्कर्मास्तु। कर्मसमृद्धिरस्तु। धर्मसमृद्धिरस्तु। वेदसमृद्धिरस्तु। शास्त्रसमृद्धिरस्तु। धनधान्यसमृद्धिरस्तु। पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु। इष्टसम्पदस्तु। बहिः—अरिष्टनिरसनमस्तु। यत्पापं रोगोऽशुभमकल्याणं

विघ्न न हो। दीर्घ जीवन बना रहे। आरोग्यता रहे। कल्याण हो। मंगलमय कर्म हों। कार्यों की वृद्धि हो। धर्म के माननेवाले अधिक हों। वेदों की रक्षा करने वाले हों। शास्त्रों की मर्यादा की वृद्धि हो।

धर्म और धान्य की अधिकता हो। सुयोग्यतम पुत्र और पौत्रों की वृद्धि हो। अभिलषित सम्पत्ति हो। तदनन्तर हिंसाजन्य अभद्र वस्तुका दूरीकरण हो। जो पाप, रोग अशुभ अकल्याण कारक हैं वे नष्ट हों। कलशपर-जो कल्याण

प्र०

६६

कारक है वह हो। उत्तर कर्म में कोई विघ्न न हो। उत्तरोत्तर प्रतिदिन वृद्धि हो। उत्तरोत्तर सुन्दर शुभ कल्याण कारिणी क्रियायें होती रहें। तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, ग्रह लग्न सब संपत्ति को देनेवाले हों।

९० तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, ग्रहलग्न और अधिदेवता प्रसन्न हों। तिथि, करण, मुहूर्त, नक्षत्र, सग्रह—सलग्न,

तत् दूरे प्रतिहतमस्तु। अन्तः (अन्तः) यच्छ्रेयस्तदस्तु। उत्तरे कर्मणि निर्विघ्नमस्तु।

१०० उत्तरोत्तरमहरहरभिवृद्धिरस्तु। उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम्।

तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नसम्पदस्तु। तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम्।

तिथिकरणे समुहूर्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदैवते प्रीयेताम्। दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम्।

अग्निपुरोगा, विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। इन्द्रपुरोगाः मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ब्रह्मपुरोगाः सर्वे वेदाः प्रीयन्ताम्। माहेश्वरीपुरोगा, उमामातरः प्रीयन्ताम्। वसिष्ठपुरोगा ऋषिगणाः प्रीयन्ताम्।

अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीयन्ताम्। ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम्। श्रीसरस्वत्यौ प्रीयन्ताम्।

अधिदेवताओं की स्त्रियाँ प्रसन्न हों। दुर्गा और पांचाली प्रसन्न हों। अग्नि, विश्वेदेवे, इन्द्र के साथ मरुद्गण, ब्रह्मा, के साथ सब वेद विष्णु के साथ सब देवता गण, माहेश्वरी के साथ उमा माता गण, वसिष्ठ के साथ ऋषिगण, अरुन्धती के साथ एक पत्नी प्रसन्न हों। १००

ब्रह्मा और ब्राह्मणगण प्रसन्न हों। श्री, सरस्वती, श्रद्धा, मेधा, भगवती कात्यायनी, भगवती माहेश्वरी भगवती पुष्टिकरी, भगवती पुष्टिकरी, भगवती ऋद्धिकरी, भगवती वृद्धिकरी, भगवान् विष्णु और विनायक, सब कुलदेव, सब ग्राम देवता और सब इष्टदेव प्रसन्न हों।

प्र०

ब्राह्मणों से द्वेष (शत्रुता) करने वाले हिंसित हो। मार्ग के उपद्रवकारी नष्ट हों। विघ्न करने वाले नष्ट हों। शत्रुगणों

श्रद्धामेधे प्रीयेताम्। भगवती कात्यायनी प्रीयताम्। भगवती माहेश्वरी प्रीयताम्। भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम्। भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम्। भगवती ऋद्धिकरी प्रीयताम्। भगवती वृद्धिकरी प्रीयताम्। भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम्। सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम्। सर्वाः ग्रामदेवताः प्रीयन्ताम्। सर्वाः इष्टदेवताः प्रीयन्ताम्। बहिः—हताश्च ब्रह्मद्विषः। हताश्च परिपन्थिनः। हताश्च विघ्नकर्तारः शत्रवः पराभवं यान्तु। शाम्यन्तु घोराणि। शाम्यन्तु पापानि। शाम्यन्त्वीतयः। शाम्यन्तूपद्रवाः। [अन्तः] शुभानि वर्द्धन्ताम्। शिवा आपः

१०१

का पराभव हो। घोर कर्मों का शमन हो। पापों का शमन हो। अनावृष्टि आदि का शमन हो। सब प्रकार के उपद्रव शमन हों। शुभ कार्यों की वृद्धि हो। जल कल्याण कारक हो। वसन्त आदि छः ऋतु कल्याण प्रद हो। गार्हपत्याग्नित्रय कल्याण को देनेवाले हों। आहुतियाँ भी कल्याणप्रद हो। वनस्पतियाँ कल्याण को देनेवाली हों। ओषधियाँ कल्याण प्रद हो। अभ्यागत मंगलमय हों। दिन रात शुभ प्रद हों।

तदनन्तर 'निकामे निकामेनः' इस मन्त्र को पढ़कर-शुक्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शनिश्चर, राहु, केतु, सोम सहित सूर्य के साथ ग्रह प्रसन्न हों।

भगवान् नारायण, पर्जन्य और स्वामी महासेन सपत्नीक आदि से युक्त प्रसन्न हों। 'पुरोनुवाक्या' द्वारा जो पुण्य, 'याज्या' द्वारा जो पुण्य, 'वषट्कार' द्वारा जो पुण्य और प्रातःकालीन सूर्योदय में जो पुण्य होता है वह सब

सन्तु। शिवा ऋतवः सन्तु। शिवा अग्नयः सन्तु। शिवा ओषधयः सन्तु। शिवा अतिथयः सन्तु। अहोरात्रे शिवे स्याताम्। ॐ निकामेनिकामेनः पर्जन्योव्वर्षतुफलवत्योन ऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमोनंःकल्पताम्। शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता आदित्य-पुरोगाः सर्वे ग्रहाः प्रीयन्ताम्। भगवान्नारायणः प्रीयताम्। भगवान् पर्जन्यः प्रीयताम्। भगवान् स्वामीमहासेनः सपत्नीकः ससुतः सपार्षदः सर्वस्थानगतः प्रीयताम्। पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु। याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु। वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु। प्रातःसूर्योदये यत्पुण्यं

मिले। फिर 'एतत् कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' इस कल्याणयुक्त पुण्य का आज पुण्य दिन कहो। ऐसी प्रार्थना कर्ता करता है। इस वाक्य को कहे। यों प्रार्थना करे। ब्राह्मण—तीन बार 'वाच्यताम्' इस वाक्य को कहें। हे ब्राह्मणगण, परिवार सहित मेरे घर में होनेवाले प्रतिष्ठा कर्म में (या विष्णुयाग, महाविष्णुयाग, अतिविष्णुयाग, लघुरुद्र, महारुद्र, अतिरुद्र आदि अनेक यज्ञ और मूलशान्ति आदि अनेक) आप लोग 'पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु, इस

प्र० १०२

वाक्यको तीनवार करें। तद्वत्—'कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु' ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु' 'स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु, मन्त्र पूर्वक अलग २ कहने की कृपा करें।

ब्राह्मणगण—क्रम से कहते हैं—'पुण्याहम्' पुण्य को देनेवाला दिन हो 'कल्याणम्' आपका कल्याण हो। कर्म ऋध्यताम्—कर्मों की वृद्धि हो। 'आयुष्मते स्वस्ति' अविनाशी आयु हो। संसार को आनन्द करानेवाली लक्ष्मी हो।

तदस्तु। ततः—'एतत्कल्याणयुक्तं पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये' इति प्रार्थयेत्। वाच्यताम् इति विप्राः ब्रूयुः। ब्राह्मं पुण्यमहर्यच्च सृष्टयुत्पादनकारकम्। वेदवृक्षोद्भवं नित्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः॥ भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे विष्णवादि प्रतिष्ठाकर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु इति त्रिर्ब्रूयात्। पुण्याहम् इति तथैव त्रिर्विप्राः ब्रूयुः। ॐ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः॥ पुनन्तुव्विश्वाभूतानिजातवेदःपुनीहिमा॥ इति पठेयुः। पृथिव्यामुद्धृतायान्तु

सौवर्ष की आयु हो। अटूटसंपत्तिवाले हो। भगवान् प्रजापति प्रसन्न हों। अविनाशी–आयुवाले हों। जों यहाँ अविनाशी वेदों का पाठ आदि कर्म हुआ है उसकी वृद्धि हो। सौवर्ष आयु तक जीवित रहें। जो धन कुबेर आदि के भण्डार में है उतना ही धन आपके खजाने में हरदम रहे।

श्लोकों का अर्थ यों है–(१) सृष्टिको उत्पन्न करने वाले 'ब्रह्मा' का जो पवित्र दिन (अर्थात्) सृष्टि में जो दान

प्र०

१०३

प्र० पुण्य—यज्ञ आदि होते हैं। प्रलय में नहीं हो सकते उस पवित्र दिन का जो पुण्य)। तथा वेदवृक्ष से उत्पन्न यागादि जन्य पुण्य को आप लोग मेरे लिए कहिये। (अर्थात्—वह पुण्य मुझे मिले) (२) हे ब्राह्मणगण, पृथिवी के उद्धरण में जो कल्याण पहले ऋषि-गन्धर्वों द्वारा हुआ था उसी कल्याण को आप कहें। (३) हे ब्राह्मणगण, सागर की जो ऋद्धि महालक्ष्मी आदि द्वारा हुई उस ऋद्धिके संपूर्णसुन्दर प्रभाव को आपलोग हमलोगों से कहे। (४) ब्राह्मणगण, जिसका

१०४ यत्कल्याणं पुरा कृतम्। ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः॥ भो ब्राह्मणाः! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे विष्णवादि प्रतिष्ठाकर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु—इति त्रिब्रूयात्। कल्याणम् इति तथैव त्रिर्विप्राः ब्रूयुः। ॐ यथेमां व्वाचङ्कल्याणीमावदानि जनेभ्यः॥ ब्रह्मराजन्याभ्याᳬं शूद्रायचार्याय च स्वायचारणाय च॥ प्रियोदेवानान्दक्षिणायै दातुरिहभूया समृध्यतामयम्मेकामः समृद्ध्यतामुपमादोनमतु॥ इति पठेयुः। सागरस्य तु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः

विनाश नहीं हो सकता और पुण्य-कल्याण की वृद्धि करनेवाले का तथा विनायक प्रिय ऐसे स्वस्तिको आप हमलोगों से कहें। सायणाचार्य ने 'स्वस्ति' शब्दका अविनाश अर्थ लिखा है। (५) हे ब्राह्मणगण, संसार को आनन्दित करनेवाली समुद्रमन्थन से उत्पन्न हरि की प्रिय मांगल्य स्वरूप उस श्री को हमारे लिए कहिये।

हे देवगण, मृकण्डसूनुकी जो आयु है, ध्रुव तथा लोमश की जो आयु है उस आयु से सौवर्ष संयुक्त करिये।

प्र० १०४

ब्राह्मण कहते हैं—सौवर्ष तक आप लोग जीवित रहें। शिव और पार्वती के विवाह में, राजा दशरथ के पुत्र श्रीरामचन्द्रजी के घर में और धनद (कुबेर) के घरमें जो लक्ष्मी है वह लक्ष्मी हमारे घर में हो। हे विप्रगण, प्रजापति, लोकपाल, धाता, ब्रह्मा, देवराट् शाश्वत भगवान् नित्य चारों तरफ से हमारी रक्षा करें। ब्राह्मण कहते हैं—आप पर सृष्टिकर्ता प्रजापति प्रसन्न हो। 'भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्' यों कह एक आचमनीय जल किसी पात्र में छोड़ दे। कलश पर न छोड़े।

शिक्षित (अनुशासन माननेवाले) अविनाशी अखण्डित लंबी आयुवाले एवं लक्ष्मी से सम्पन्न यजमान के लिए

कृता। सम्पूर्णा सुप्रभावा च तां च ऋद्धिं ब्रुवन्तु नः॥ भो ब्राह्मणाः! मम सुकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे विष्ण्वादि प्रतिष्ठा कर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु—इति त्रिर्ब्रूयात्। कर्म ऋध्यताम्—इति त्रिर्विप्राः ब्रूयुः। ॐ सत्रस्यऽऋद्धिरस्यगन्म ज्योतिरमृताऽअभूम॥ दिवंपृथिव्याऽअध्यारुहामाविदामदेवान्स्वर्ज्योतिः॥ इति पठेयुः। स्वस्तिस्तु याऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा।

वेद—वेदार्थ ज्ञाता ऋषियों द्वारा रमणीय (सुन्दर) आशीर्वाद प्राप्त हो और—देवेन्द्र के साम्राज्य की स्थिरता के लिए उनकी माता अदिति ने अविनाशी स्वस्तिवाचन कराया तज्जन्य जो पुण्य, गुरुदेव के घर में या गुरु के समक्ष दीक्षा, संस्कार आदि में अविनाशी जो स्वस्तिवाचन हुआ उससे शिष्य को अपार लौकिक पुण्य मिलेगा वह पुण्य और सृष्टि के पूर्व ब्रह्मा तथा विष्णु विवाद में निर्णायक रूप जो एक ज्योतिर्लिंग हुआ (उसके प्रतीक रूप द्वादश लिंग हुए) उस एकलिंग में जो अविनाशित्व है वह सदा हमारे घर में हो।

प्र० १०५

देवानुगामी मनुष्य मुझे पवित्र करें। मन के साथ बुद्धि या कर्म मुझे पवित्र करें। विश्व के सब प्राणी मुझे पवित्र करें। हे जातवेदः, आप भी मुझे पवित्र करें मैं अनुद्वेगकरी इस वाणी को (सबसे) ब्राह्मण, क्षत्रिय शूद्र, वैश्य (अर्य), आत्मीयजन, जिनके शत्रु न हों, ऐसे प्राणियों से कहूँ। जिससे देवताओं का प्रिय हो जाऊँ। इस संसार में

विनायकांप्रया नित्यं तां च स्वस्ति ब्रुवन्तु नः ॥ भो ब्राह्मणा ! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे विष्ण्वादि प्रतिष्ठा कर्मणे स्वस्ति भवन्ति ब्रुवन्तु–आयुष्मते स्वस्ति–इति त्रिर्विप्रास्तथैव ब्रूयुः। ॐ स्वस्तिन ऽइन्द्रोव्वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा व्विश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥ इति पठेयुः। समुद्रमथनाज्जाताजगदानन्दकारिका। हरिप्रिया च माङ्गल्या तां श्रियं च ब्रुवन्तु नः ॥ भो ब्राह्मणाः ! मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे विष्ण्वादि प्रतिष्ठा कर्मणः

देवता गण दक्षिणा और दाताओं की मेरे में प्रीति करें। मेरे धन, पुत्र आदि इच्छायें परिपूर्ण हों। हे साम, तुम यज्ञ की समृद्धि हो। इसलिए हमलोग यजमान आदित्यरूपी ज्योतिप्रकाश प्रासकर मृत्युधर्म से रहित हों। पृथ्वी से

---

(१) गणेशजी के जन्म के समय सब देवोंने आशीर्वाद स्वरूप कहा था कि आपका सर्वप्रथम पूजन किये बिना कोई भी मांगलिक शुभ कार्य सफल नहीं होगा। इनकी पूजा से शुभ स्थिर होता है। अतः विघ्ननाश करनेवाले श्रीगणेशजी अविनाशार्थ स्वस्ति प्रिय है। यह कथा 'ब्रह्मवैवर्तपुराण' में है।

प्र०

१०६

द्यू (दिव) लोक तक आरूढ़ हुए इन्द्रादि देवगण देखें। ज्योतिरूप स्वर्ग को देखें। (घ) बड़ी कीर्तिवाले इन्द्र हम लोगों को अविनाश रूप शुभ दें। विश्व को जानने वाले पूषा स्वस्ति दें। अनुपहिंसित रथ चक्र धारा या गरुड स्वस्ति दें। बृहस्पति (देवताओंके श्रीगुरुदेव) हमारा कल्याण करें। हे आदित्य, श्री और लक्ष्मी तुम्हारी पत्नी हैं। दिन रात पार्श्व में स्थापित हैं। आकाश के तारे आपके रूप हैं। द्यावापृथिवी मुख स्थानीय है। कर्मफल की इच्छा करनेवाले हों

श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु-इति त्रिर्ब्रूयात्। अस्तु श्रीः-इति त्रिर्विप्रास्तथैव ब्रूयुः। ॐश्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्यात्तम्॥ इष्णन्निषाणामुम्मंऽइषाणसर्व्वंलोक-म्मंऽइषाण॥ इति पठेयुः। मृकण्डसूनोरायुर्यद् ध्रुवलोमशयोस्तथा। आयुषा तेन संयुक्ता जीवेम शरदः शतम्॥ शतञ्जीवन्तु भवन्तः—इति ब्राह्मणाः ब्रूयुः। ॐ शतमिन्नुशरदोऽअन्ति देवायत्रानश्चक्राजरसन्तनूनाम्॥ पुत्रासोयत्रपितरोभवंतिमानोमध्यारीरिषतायुर्गन्तोः॥ इति पठेयुः। शिवगौरीविवाहे या या श्रीरामे नृपात्मजे। धनदस्य गृहे या श्रीरस्माकं सास्तु सद्मनि॥ अस्तु

(अर्थात्—मेरा परलोक सुन्दरतम हो) और सर्वलोकात्मकत्व हो जाने की इच्छा करूँ (अर्थात्—मुक्त हो जाऊँ)।

(च) हे देवताओं, आपलोग सौवर्ष तक हमारे पास रहो। जिससे आपकी देख रेखमें हम शरीरधारियों की वृद्धावस्था होगी। हमारी वृद्धावस्था में हमारे पुत्र पुत्रवान् होंगे। (अर्थात्—हम जब तक पौत्र वाले न हों) तब तक हमारी

आयु को खण्डित मत करो। (छ) मैं मन से इच्छा तथा प्रयत्न को प्राप्त करूँ। मेरी वाणी सत्य करें। पशुसंबंधिनी शोभा अन्न का स्वाद, यश, कीर्ति और लक्ष्मी मेरे पास रहें। (ज) हे प्रजापते, आपसे अन्य कोई देवता विशेष इस संसार के नाना प्रकार के जाति विशिष्ट तथा वर्तमान, भूत, भविष्य समय को बनाने में समर्थ नहीं है। अतः जिस कार्यके लिए आप का

श्रीः—इति विप्राः। ॐ मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय ॥ पशूनाᳬं रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ॥ इति पठेयुः। प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट्। भगवाञ्छाश्वतो नित्यं स नो रक्षतु सर्वतः ॥ भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम्। इति ब्राह्मणाः। अत्र अन्यपात्रे एकमाचमनार्थं जलं क्षिपेत्। ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा रूपाणि परिता बभूव ॥ यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो ऽअस्तु अयममुष्य पितासावस्य पिता वयᳬं स्याम पतयो रयीणाᳬं स्वाहा ॥ इति पठेयुः। आयुष्मते स्वस्तिमते यजमानाय दाशुषे। श्रिये रत्नाशिषः सन्तु ऋत्विग्भिर्वेदपारगैः ॥ देवेन्द्रस्य यथा स्वस्ति यथा स्वस्ति गुरोर्गृहे। एकलिङ्गे यथा स्वस्ति तथा

हवन करते हैं। उस इच्छारूप फल को हमें दो। अर्थात्—यह सपुत्रवाला पिता जो मेरा पुत्र है उसे ऐश्वर्यशाली बनाओ। (झ) हम कल्याणद्वारा जाने योग्य पापरूप चोर बाधा से रहित या चलने पर अपराधी न बनें ऐसे मार्ग पर हमें प्राप्त करो। जिस रास्ते पर गमन करने पर शत्रुता करनेवाले प्राणिमात्र को सब तरफ से हटाता हुआ धन का लाभ करता है।

प्र०
१०८

कर्ता—इस पुण्याहवाचन कार्य में जो कम-या अधिक विधि होगयी हो उसे उपस्थित ब्राह्मणों के वचन से और श्री महागणपति के प्रसाद से परिपूर्ण हो। ब्राह्मण कहते हैं—आपका कार्य परिपूर्ण हो। कर्ता—दानखण्डोक्त पुण्याहवाचन कर्म की सांगतासिद्धि के लिए उस कार्य के संपूर्ण फल की प्राप्ति के लिए स्वस्तिवाचन करनेवाले

प्र०

स्वस्ति सदा मम ॥ आयुष्मते स्वस्ति—इति विप्राः ब्रूयुः । ॐ प्रतिपन्थामपद्महि स्वति गामने-हसम् ॥ येन विश्वाः परिद्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥ स्वस्तिवाचनसमृद्धिरस्तु—इति च ब्रूयुः । कर्ता—अस्मिन्पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिरुपविष्टब्राह्मणानां वचनात् श्रीमहागण-पतिप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु । 'अस्तु परिपूर्णः' इति द्विजाः । स्वस्तिवाचनकर्मणः समृद्धिरस्तु' इति यजमानः । 'अस्तु' इति द्विजाः प्रति ब्रूयुः । दक्षिणादानम्—स्वस्तिवाचनकर्मणः समृध्यर्थं दक्षिणां स्वस्तिवाचकेभ्यो विप्रेभ्यो विभज्य दातुमहमुत्सृज्ये—इति दद्यात् ।

१०९

ब्राह्मणों के लिए मन से विचार की हुई दक्षिणा का विभाग कर दे रहा हूँ। ब्राह्मण कहते हैं—ठीक है। किसी के मत से शुभ कार्यों में स्वस्तिवाचन को आदि, मध्य और अन्त में करे। अन्य मत से आदि और अन्त में करना लिखा है। दूसरों ने वैदिक और तान्त्रिक कर्म में आदि में ही कहा है! रुद्रकल्पद्रुम ने तीनों मतों को पूर्वापर विचारते हुए जिस कुल में जैसी प्रथा हो वैसी परम्परा से करे—यों लिखा है।

तदनन्तर यजमान पत्नी बायें भाग में बैठ जाय। अविधुर (जिनके विवाहित पत्नी जीवित हों) ब्राह्मण हाथ में कुशा आदि लेकर कलश के जलको किसी अन्यपात्र में गिराकर दूर्वा-पल्लव सहित उस जल से उत्तरमुख बैठे हुए या खड़े हुए यजमान और परिवार को 'आपो हि' इन तीनों मन्त्रों से, 'पुनन्तु मा' इस मन्त्र से, अग्न आयू ँ षि' इस मन्त्र से 'पुनन्तु मा देव' इस मन्त्र से, 'पवित्रेण पुनी हि' इस मन्त्र से 'यत्ते' इस मन्त्र से 'पवमानः सोऽ अद्य' इस मन्त्र

* अथाभिषेकः *

ततो यजमानस्य वामभागे पत्न्या उपवेशनम्। ततोऽविधुरा ब्राह्मणाः एकस्मिन् पात्रे कलशोदकं पात्रान्तरे प्रक्षिप्तं च जलं गृहीत्वा दूर्वापल्लवसहितेन तेनोदकेन उदङ्मुखास्तिष्ठन्त उपविष्ठा वा सकुटुम्बं यजमानमभिषिञ्चेयुर्वक्ष्यमाणमन्त्रैः—ॐ देवस्यंत्वासवितुःप्रसवे ऽश्विनो-

से 'उभाभ्यां देव' इस मन्त्र से 'वैश्वदेवी पुनती' इस मन्त्र से 'बाहू मे' इस मन्त्र से 'पृष्टीर्मे' इस मन्त्र से 'नाभिर्मे' इस मन्त्र से 'त्रया देवा' इस मन्त्र से 'प्रथमा द्वितीयैः' इस मन्त्र से तथा 'सुरास्त्वाम्' इत्यादि पौराणिक श्लोकों से भी सति सम्भव में अभिषेक करे। यजमान कहे—'अमृताभिषेकोऽस्तु' यह अभिषेकजल अमृतरूप हो। ब्राह्मण कहें—ऐसा ही हो। तदनन्तर—किये हुए अभिषेक कर्म की समृद्धि के लिए अभिषेक करने वालों को दक्षिणा देने के बाद यजमान द्विराचमन करे। पत्नी एक बार आचमन कर-अपने पति के दाहिने फिर बैठ जाय।

प्र०
११०

बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ सरस्वत्यैव्वाचोयन्तुर्यन्त्रियेदधामिबृहस्पतेष्ट्वासाम्म्राज्येनाभिषि-
ञ्चाम्यसौ ॥ १ ॥ देवस्यत्वासवितुःप्रसवे ऽश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम् ॥ सरस्वत्यैव्वाचो
यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेःसाम्म्राज्ज्येनाभिषिञ्चामि ॥२॥ देवस्यत्वासवितुःप्रसवेऽश्विनोर्ब्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ता-
भ्याम् ॥ अश्विनोर्भैषज्ज्येनतेजसेब्रह्मवर्च्चसायाभिषिञ्चामिसरस्वत्यै भैषज्ज्येनव्वीर्य्यायान्नाद्यायाभिषि
ञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेणबलायश्रियैयशसे ऽभिषिञ्चामि ॥३॥ आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऽऊर्ज्जेदधातन ॥ महेर-
णायचक्षसे ॥४॥ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः ॥ उशतीरिवमातरः ॥५॥ तस्मा ऽअरङ्गमाम-
वोयस्यक्षयायजिन्न्वथ ॥ आपोजनयथाचनः ॥६॥ पुनन्तुमापितरःसोम्म्यासःपुनन्तुमापितामहाःपुनन्तु
प्रपितामहाःपवित्त्रेणशतायुषा ॥ पुनन्तुमापितामहाःपुनन्तुप्रपितामहाः ॥ पवित्त्रेणशतायुषाव्वि-
श्वमायुर्व्यश्नवै ॥७॥ अग्ग्न ऽआयूँषिपवस ऽआसुवोर्ज्जमिषञ्चनः ॥ आरेबाधस्वदुच्छुनाम् ॥८॥
पुनन्तुमादेवजनाःपुनन्तुमनसाधियः ॥ पुनन्तुव्विश्वाभूतानिजातवेदःपुनीहिमा ॥ ९ ॥ पवित्त्रेण
पुनीहिमाशुक्क्रेणदेवदीद्यत् ॥ अग्ग्नेक्क्रत्त्वाक्क्रतूँ१ ॥रनु ॥१०॥ यत्तेपवित्त्रमर्च्चिष्यग्ग्नेव्विततमन्तरा ॥
ब्रह्मतेनपुनातुमा ॥११॥ पवमानःसो ऽअद्यनःपवित्त्रेणव्विचर्षणिः ॥ यःपोतासपुनातुमा ॥१२॥

प्र० १११

प्र० ११२

उभाभ्यान्देवसवितःपवित्त्रेणसवेनच ॥ माम्पुनीहिव्विश्वतः ॥१३॥ व्वैश्वदेवीपुनतीदेव्व्यागाद्यस्यामिमाबव्ह्यस्तन्न्वोव्वीतपृष्ठाः ॥ तयामदन्तःसधमादेषुव्वयᳬस्यामपतयोरयीणाम् ॥ १४ ॥ कोऽसिकतमोऽसिकस्मैत्वाकायत्वा ॥ सुश्लोकसुमङ्गलसत्यराजन् ॥१५॥ शिरोमेश्रीर्य्यशोमुखन्त्विषिःकेशाश्चश्मश्रूणि ॥ राजामेप्राणोऽअमृतᳬसम्म्राट्चक्षुर्व्विराट्श्रोत्त्रम् ॥१६॥ जिह्वामेभद्रंव्वाङ्महामनोमन्न्युःस्वराड्भामः ॥ मोदाःप्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानिमित्रम्मेसहः ॥१७॥ बाहूमेबलमिन्द्रियᳬहस्तौमेकर्म्मव्वीर्य्यम् ॥ आत्माक्षत्रमुरोमम ॥१८॥ पृष्ठीर्म्मेराष्ट्रमुदरमᳬसौग्ग्रीवाश्चश्रोणी ॥ ऊरूऽअरत्त्नीजानुनीव्विशोमेङ्गानिसर्व्वतः ॥१९॥ नाभिर्म्मेचित्तंव्विज्ञानम्पायुर्म्मेपचितिर्भसत् ॥ आनन्दनन्दावाण्डौमेभगःसौभाग्यम्पसः ॥ जङ्घाभ्याम्पद्भ्यान्धर्मोऽस्मिव्विशिराजाप्रतिष्ठितः ॥ ॥ २० ॥ प्प्रतिक्षत्रेप्प्रतितिष्ठामिराष्ट्रेप्प्रत्यश्वेषुप्रतितिष्ठामिपुष्टेप्प्रतिद्यावापृथिव्व्योःप्प्रतितिष्ठामियज्ञे ॥२१॥ त्र्यादेवाऽएकादशत्रयस्त्रिᳬशाः सुराधसः ॥ बृहस्पतिपुरोहितादेवस्यसवितुःसवे ॥ देवादेवैरवन्तुमा ॥२२॥ प्रथमाद्द्वितीयैर्द्वितीयास्तृतीयैस्तृतीयाःसत्येनसत्त्यंयज्ञेनयज्ञोयजुर्भिर्य्यजूᳬषिसामभिः सामान्न्यृग्भिर्ऋचः पुरोनुवाक्याभिःपुरोनुवाक्यायाज्याभिर्याज्यावषट्कारैर्वषट्काराऽआहुतिभीरा-

प्र० ११३

हुंतयोमेकामान्तसमर्द्धयन्तुभूःस्वाहा ॥ २३ ॥ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः । वासुदेवो जगन्नाथस्तथा सङ्कर्षणो विभुः ॥१॥ प्रद्युम्नोऽथानिरुद्धश्च भवन्तु विभवाय ते । आखण्डलोऽग्निर्भगवान् यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥२॥ वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः । ब्रह्मणा सहिता ह्येते दिक्पालाः पान्तु वः सदा ॥३॥ कीर्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः । बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिर्माया निद्रा च भावना ॥ ४ ॥ एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु पुष्टिः क्षान्तिः क्षमा तथा । आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधो जीवः सितोऽर्कजः ॥५॥ ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च पूजिताः । देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ॥६॥ ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च । देवपत्न्यो ध्रुवा नागा दैत्याश्चाप्सरसां गणाः ॥७॥ अस्त्राणि सर्वशास्त्राणि राजानो वाहनानि च । औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥ ८ ॥ सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः । एते त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मकामार्थसिद्धये ॥ ९ ॥ इत्यभिषिच्य—'अमृताभिषेकोऽस्तु' इति वदेयुः ॥ दक्षिणादानम्—कृतस्याभिषेककर्मणः समृद्ध्यर्थं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये इति दद्यात् । ततो द्विराचामेत् । पत्नी च सकृदाचम्य दक्षिणत उपविशेत् ।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(गणेशपूर्वक षोडशमातृका पूजन, सप्तघृतमातृका पूजन और
आयुकी वृद्धिके लिये आयुष्यमन्त्रपाठ कथन)

—श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०
११४

मातृकाचक्र बनाने का प्रकार

पूर्व

आ १७	लो १३	दे ९	मे ५
तु १६	मा १२	ज ८	श ४
पु १५	स्वा ११	वि ७	प ३
धृ १४	स्व १०	सा ६	गौ २ / १ गणेश

उत्तर — दक्षिण

पश्चिम

२	३	४	५	६
गौरी	पद्मा	शची	मेधा	सावित्री
७	८	९	१०	११
विजया	जया।	देवसेना	स्वधा	स्वाहा
१२	१३	१४	१५	१६

मातरो लोकमातरः ॥ धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता ।

१

गणेशेनाधिका [illegible]ता वृद्धौ पूज्यास्तु षोडश ॥

पश्चिमदिशा से पूर्वदिशा या दक्षिणदिशा से उत्तरदिशा गणेशदेव से प्रारम्भ कर गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, माता, लोकमाता, धृति, पुष्टि, तुष्टि और कुलदेवियों का वृद्धि जन्य कार्यों में पूजा करे।

आदि में चौबीस अंगुल विस्तार में और अठाइस अंगुल लंबाई में—छ अंगुल ऊँचे लाल वस्त्र बिछे काष्ठ के पीठे पर उत्तर से दक्षिण तथा पूर्व से पश्चिम की तरफ पांच पांच रेखा करने से सोलह कोष्ठ बनाकर उसमें पहले कोष्ठ का दो भाग करे। इस प्रकार सत्रह कोष्ठ में सुवर्ण, रजत आदि प्रतिमाओं में या पट्टादिलिखित मूर्तियों में,

तत्रादौ चतुर्विंशाङ्गुलविस्तृते अष्टाविंशत्यङ्गुलदीर्घे षडङ्गुलोन्नते रक्तवस्त्रास्तृते काष्ठपीठे उदग्दक्षिणं पूर्वापरं च पञ्च-पञ्च रेखाकरणेन षोडशकोष्ठानि संपाद्य प्रथमकोष्ठं तिर्यग् द्वेधा विभजेत्। एवं सप्तदशसु कोष्ठेषु सुवर्णरजतादिप्रतिमासु पट्टादिलिखितमूर्तिषु पूगफलेषु वा अक्षतपुञ्जेषु वा गणेशपूर्वगौर्याद्याः षोडशमातृदक्षिणोपक्रमा उदगपवर्गाः, प्रत्यगुपक्रमाः प्रागपवर्गा वा संस्थाप्य प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्—एह्येहि विघ्नेश्वर विघ्नशान्त्यै पाशाङ्कुशाब्जान् वरदं दधान। शूर्पाक्षसूत्रावरमन्दमूर्ते रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते॥ ॐ गणानान्त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳ हवामहे निधीनान्त्वा निधिपतिꣳ हवामहे व्वसो मम। आहमजानि

पूगफलों में या अक्षतपुंजों में गणेश पूर्वक सोलह मताओं का क्रम से पूजन करे। 'गणानां त्वा' इस मंत्रसे गणेश, 'आयंगौः' इससे गौरी 'हिरण्यरूपा' से पद्मा, निवेशनः' से शची, 'मेधां मे' से मेधा, 'सविता त्वा' से सावित्री 'विज्यं धनुः' से विजया, 'बह्वीनां पिता' से जया, 'इन्द्रऽ आसाम्' सेवसेना, पितृभ्यः स्वधायिभ्यः' से स्वधा,

स्वाहा प्राणेभ्यः' से स्वाहा, 'आपो अस्मान' से माता और रयिश्च' से लोकमाता का।

गर्भं धमात्वम्जासि गर्भं धम् ॥ गणपतये नमः गणपतिमावाहयामि स्थापयामि ॥१॥ द्वितीयकोष्ठादा क्रमेण—एह्येहि नीलोत्पलतुल्यनेत्रे श्वेताम्बरे प्रोज्ज्वलशूलहस्ते। नागेन्द्रकन्ये भुवनेश्वरि त्वं पूजां ग्रहीतुं मम देवि गौरि ॥ ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसंदन्मातरम्पुरः ॥ पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥ गौर्यै० गौरीम् ॥२॥ एह्येहि पद्म शशितुल्यनेत्रे पङ्के रुहाभे शुभचक्रहस्ते। सुरासुरेन्द्रैरभिवन्दिते त्वं पूजां ग्रहीतुं मम यज्ञभूमौ ॥ ॐ हिरण्यरूपाऽउषसो व्विरोक ऽउभाविन्द्राऽ उदिथः सूर्य्यश्च ॥ आरोहतंव्वरुणमित्रगर्तन्ततश्चक्षाथामदितिन्दितिञ्चमित्रोसिव्वरुणोसि ॥ पद्मायै० पद्माम् ॥ ३ ॥ एह्येहि कार्यस्वरतुल्यवर्णे गजाधिरूढे जलजाभिनेत्रे। शक्रप्रिये प्रोज्ज्वलवज्रहस्ते पूजां ग्रहीतुं शचि देवि शीघ्रम् ॥ ॐ निवेशनःसङ्गमनो व्वसूनांव्विश्वारूपाभिचष्टेशनीभिः ॥ देवऽइवसविता-

'यत्प्रज्ञानम्' से धृति, त्र्यम्बकं यजामहे' से पुष्टि, अङ्गान्यात्मन्' से तुष्टि और प्राणाय स्वाहा—से कुलदेवियों को स्थापन पूजन प्राणप्रतिष्ठा पूर्वक करे। या श्लोकों से या मन्त्र और तत्-तत् श्लोकों से आवाहनादि करे। तदनन्तर

(१) 'आवाहयामि स्थापयामि' इस वाक्य को प्रति देवी में जोड़ दे।

हे मातृगण, आप लोग आयु, आरोग्यया और ऐश्वर्यवान् बनावें तथा मेरे सब शुभ कार्य गणों के साथ निर्विघ्न करें।

'मातृकापूजनविधि वाजसनेयशाखा वालों के लिये है—ऐसा विशिष्ट वचन नहीं मिलता। किसीके मतसे मातृका

सत्यधर्म्मेन्द्रोनतंस्थौसमरेपंथीनाम् ॥ शच्यै० शचीम् ॥ ४ ॥ एह्येहि मेधे शुभभूरिवस्त्रे पीताम्बरे पुस्तकपात्रहस्ते। बुद्धिप्रदे हंस समाधिरूढे पूजां ग्रहीतुं मखमस्मदीयम् ॥ ॐमेधाम्मेव्वरुणोददातुमेधामग्निः प्रजापतिः ॥ मेधामिन्द्रश्चव्वायुश्चमेधान्धातादददातुमेस्वाहा ॥ मेधायै० मेधाम् ॥ ५ ॥ एह्येहि सावित्रि जगद्विधात्रि ब्रह्मप्रिये स्रुक्स्रुवपात्रहस्ते। प्रतप्तजाम्बूनदतुल्यवर्णे पूजां ग्रहीतुं निजयागभूमौ ॥ ॐसविताच्वासवानाᳬंसुवतामग्निर्गृहपतीनाᳬंसोमोव्वनस्पतीनाम् ॥ बृहस्पतिर्व्वाचऽइन्द्रोज्यैष्ठ्याय रुद्रःपशुभ्योमित्रःसत्योव्वरुणोधर्म्मपतीनाम् ॥ सावित्र्यै० सावित्रिम् ॥६॥ एह्येहि शस्त्रास्त्रधरे कुमारि सुरासुराणां विजयप्रदात्रि। त्रैलोक्यवन्दे शुभरत्नभूषे गृहाण पूजां विजये नमस्ते ॥ ॐव्विज्ज्यन्धनुःकपर्दिनोव्विशल्योबाणवाँ२उत ॥ अनेशन्नस्ययाऽइषवऽआभुरस्यनिषङ्गधिः ॥ विजयायै० विजयाम् ॥ ७ ॥ एह्येहि पद्मे रुहलोलनेत्रे जयप्रदे प्रोज्ज्वलशक्ति हस्ते।

पूजन श्राद्ध का अंग है। अन्य मत से सब कार्यों में 'कर्मादिषु च सर्वेषु मातरः सगणाधिपाः' इत्यादि वचनों से मातृपूजा से श्राद्ध का कोई भी सम्बन्ध नहीं है। गणेश का जो सम्बन्ध षोडशमातृका के साथ है। वह निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थ'

प्र०

११८

गणेश से फल भेद होने से पृथक् है । इसका पूर्ण विवेचन 'रुद्रकल्पद्रुम' आदि निबन्ध में है ।

ब्रह्मादिदेवैरभिन्द्यमाने जये सुसिद्धिं कुरु सर्वदा मे ॥ ॐ बह्वीनाम्पिताबहुरस्यपुत्रश्चिश्चाकृणोति समनागत्य ॥ इषुधिः सङ्काः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठेनिनद्धोजयतिप्रसूतः ॥ जयायै० जयाम् ॥८॥ एह्येहि चापासिधरे कुमारि मयूरवाहे कमलायताक्षि । इन्द्रादिदेवैरपिपूज्यमाने प्रयच्छसि त्वं मम देवसेने ॥ ॐ इन्द्रऽआसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणायज्ञः पुरऽ एतु सोमः ॥ देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनाम्मरुतोयन्त्वग्ग्रम् ॥ देवसेनायै० देवसेनाम् ॥ ९ ॥ एह्येहि वैश्वानरवल्लभे त्वं कव्यं पितृभ्यः सततं वहन्ती । स्वर्गाधिवासे शुभशक्तिहस्ते स्वधे तु नः पाहि मखं नमस्ते ॥ ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः ॥ अक्षन्पितरो मीमदन्त पितरोतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥ स्वधायै० स्वधाम् ॥ १० ॥ एह्येहि वैश्वानरतुल्यदेहे तडित्प्रभे शक्तिधरे कुमारि । हविर्गृहीत्वा सुरतृप्तिहेतोः स्वाहे च शीघ्रं मखमस्मदीयम् ॥ ॐ स्वाहाप्राणेभ्यःसाधिपतिकेभ्यःपृथिव्यैस्वाहा-ग्नयेस्वाहान्तरिक्षायस्वाहाव्वायवे स्वाहा ॥ स्वाहायै० स्वाहाम् ॥११॥ उपैत हे मातर आदिकर्त्र्यः

सर्वस्य भूतस्य चराचरस्य । देव्यस्त्रिलोक्यर्चितदिव्यरूपा मखं मदीयं सकलं विधत्त ॥ ॐ आपोऽ अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ॥ विश्वꣳहि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरापूतऽएमि ॥ दीक्षातपसोस्तनूरसि तान्त्वाशिवाꣳशग्मां परिदधे भद्रं वर्णं पुष्यन् ॥ मातृभ्यो० मातृः । १२ ॥ समाह्वयेसत्कृतलोकमातरः समस्तलोकैककार्यविधानदक्षिणाः । सुरेन्द्रवन्द्याम्बुरुहाङ्घ्रिमञ्जुलाः कुरुध्वमेतन्मम कर्ममङ्गलम् ॥ ॐ रयिश्चमे रायश्चमे पुष्टञ्चमे पुष्टिश्च मे विभुचमेप्रभुचमे पूर्णञ्चमे पूर्णतरञ्च मेकुयवञ्चमेक्षितञ्चमेन्नञ्चमेक्षुच्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ लोकमातृभ्यो० लोकमातृः ॥१३॥ एह्येहि भक्ताभयदे कुमारि समस्तलोकप्रियहेतुमूर्ते । प्रोत्फुल्लपङ्केरुहलोचनेत्रे धृते मखं पाहि शिवस्वरूपे ॥ ॐ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्चयज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु ॥ यस्मान्नऽऋतेकिञ्चनकर्म्म क्रियतेतन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥ धृत्यै० धृतिम् ॥१४॥ एह्येहि पुष्टे शुभरत्नभूषे रक्ताम्बरे रक्तविशालनेत्रे । भक्तप्रिये पुष्टिकरि त्रिलोके गृहाण पूजां सुभदे नमस्ते ॥ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॥ उर्व्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ पुष्ट्यै० पुष्टिम् ॥ १५ ॥ एह्येहि तुष्टेऽखिललोकवन्द्ये त्रैलोक्यसन्तोषविधानदक्षे । पीताम्बरे शक्तिगदाब्जहस्ते वरप्रदे

प्र० १२०

प्र० पाहि मखं नमस्ते ॥ ॐ अङ्गान्न्यात्मन्भिषजातदश्विनात्मानमङ्गैः समधात्सरस्वती ॥ इन्द्रस्यरूपर्ट० शतमानमायुश्चन्द्रेणज्ज्योतिरमृतन्दधानाः ॥ तुष्ट्यै० तुष्टिम् ॥१६॥ उपैतमान्याः कुलदेवता मम लोकैकमङ्गल्यविधानदीक्षिताः । पापाचलध्वंसपरिष्ठशक्तिमृद्दम्भोलिदम्भाः करुणारुणेक्षणाः ॥ ॐ प्राणाय स्वाहापानाय स्वाहा व्यानाय स्वाहा चक्षुषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहा व्वाचे स्वाहा मनसे स्वाहा ॥ आत्मनः कुलकुलदेवतायै नमः आत्मनःकुलदेवताम् ॥१७॥ इति पीठे गणेशपूर्वक संस्थाप्य पूजन कुर्यात् ।

१२१

११

ध्यान—न चार्चनं पुण्यतमं शुभप्रदं जानाम्यहं धन्यतमाः ! सुमातरः ! ।
सुरप्रियाः ! षोडशमातृकाः ! मम भूयासुरज्ञानविनाशकारिकाः ॥

आवाहन—दारिद्रयदावानलनाशिकाः सदा भजाम्यहं दुःखनिधोनिमग्नः ।
कृपाकटाक्षं मयि मन्दबुद्धौ मदर्थमायान्तु निपात्यमातरः ॥

आसन—सिंहासनं सुन्दरशोभमद्य सुसज्जितं तन्मणिभिः सुशोभ्यम् ।
शिवप्रदाः षोडशसङ्ख्यकाश्च गृह्णन्तु देवासुरपूज्यमानाः ! ॥

प्र०

१२१

पाद्य—अनेकतीर्थोपहृतानि नीराण्यादाय गन्धान्वितमद्य पाद्यम् ।
सम्पादितं सारयुतं सुरम्यं गृह्णन्तु चोत्फुल्लसरोजनेत्राः ! ॥

अर्घ्य—जलजचम्पकपुष्पगणान्वितं रुचिरमर्घ्यमथान्यकरस्थितम् ।
सकलसारमयं हि यदुत्तमं कुरुत स्वीकरणं मम मातरः ! ॥

आचमनीय—सकलगन्धयुतं सुमनोहरं निखिलरोगविनाशकरं शुभम् ।
ललितमाचमनं सुखपूर्वकं कुरुत स्वीकृतिमत्र सुमातरः ! ॥

पञ्चामृत—पञ्चामृतं पञ्चविकारनाशनं दुग्धादिभिर्निर्मितमद्य सुन्दरम् ।
निःशेषपापान्तकमच्छदर्शनं गृह्णन्तु दासस्य सदा सुमातरः ! ॥

शुद्धोदक—स्नानीय चूर्णसकलेन विराजितेन गन्धान्वितेन कुसुमैश्च सुवासितेन ।
स्नानं विधेयमधुना रुचिरेण नीरेणत्यान्तमुग्धहृदयेऽपि कृपा विधेया ॥

वस्त्र—कौशेयमच्छं हि सुवस्त्रमेतत्त्वाः स्थितं वै पुरतः सुमञ्चे ।
ददामि गन्धेन युतं ममापि प्रियञ्च कुर्वन्तु सदा पुराणाः ! ॥

उपवस्त्र—उपवस्त्रमिदं सुवासितं सुगन्धाः ! सितमस्ति सम्पादितम् ।
इहलोकविधौ सुनायिकाः ! पतितस्यापि जनस्य गृह्णतः ॥

प्र०

गन्ध—गन्धं प्रकामं रुचिरं सुवन्द्याः वन्द्यं ददाम्यद्य भवत्प्रियार्थम् ।
लोकैककूपे पतितं क्वणन्तं रक्षन्तु चाज्ञानविनाशिकाः ! माम ॥

अक्षत—तण्डुलास्तु भवदर्थमिहाद्य चार्चिताः कुरुत वै स्वीकरणम् ।
पूजिताः सकललोकसहायाः सौख्यदाः सकलपापहराश्च ॥

पुष्प—पुष्पाणि सन्तीह सुगन्धिवन्ति चाघ्राय सानन्दतरा भवन्तु ।
सन्तापयुक्तन्निजमद्यभक्तं नक्तं दिवं धन्यतमाः ! पुनन्तु ॥

अबीर—प्रभातकालस्य रवेः समानं श्रीरक्तचूर्णं मनसा ददामि ।
धूपादिकेनातिसुगन्धितं तद् गृह्णन्तु प्रीत्याऽखिललोकवन्द्याः ! ॥

धूप—मनुष्यदेवासुरसान्द्रसौख्यदं लाङ्गपाटीरजचूर्णसंयुतम् ।
सद्यः सुगन्धीकृतहर्म्यकोष्ठकं धूपं प्रियार्थं प्रददामि मातरः ! ॥

दीप—लोकान्धकारस्य विनाशदक्षं सद्वर्तिकर्पूरयुतं प्रदीपम् ।
प्रज्वाल्य सानन्दममुं ददामि गृह्णन्तुचाज्ञाननविनाशिकाः ! मे ॥

नैवेद्य—सुवर्णपात्रे विधिवत्प्रसारितं सुगन्धद्रव्यैश्च सुगन्धितं मुदा ।
सुधाशनाः ! स्वीकुरुत प्रियं तथा नैवेद्यमेतन्मनसा सुमातरः ! ॥

ताम्बूलादि—एलालवङ्गनिचयैरतिगन्धयुक्तं ताम्बूलमद्य हृदयेन ददामि रम्याम् ।
गृह्णन्तु भद्रमधिकं वितरन्तु मह्यं सह्यं न लोक इह वै ज्वलनं कदापि ॥

दक्षिणा—देवासुरैर्नित्यमशेषकाले सुगीयमाना मम मातरश्च ।
गृह्णन्तु सद्यः प्रियदक्षिणां वै ध्यानेन तथ्येमयि वर्तितव्यम् ॥

नीराजन—नीराजनां षोडशसंख्यका ! मुदा करोमि दुःखस्य विनाशिकामहम् ।
अनेकपापार्दितमानवश्च या पवित्रमत्रातनुते जगद्युगे ॥

पुष्पाञ्जलि—ज्ञात्वा सुखं सुरुचिरं भुवने मया नो भ्रान्तं सदापि नवयोनिसमुद्भवेन ।
शान्तिर्न चात्र विलसाद्भि घनान्धकारे युक्त्या कयापि कलयन्तु ममापि भद्रम् ॥

ततः—ॐ आयुरारोग्यमैश्वर्यं ददध्वं मातरो मम । निर्विघ्नं सर्वकार्येषु कुरुध्वं सगणाधिपाः ॥ इति मन्त्रेण नारिकेलादि फलं समर्प्य कृताञ्जलिः गणेशपूर्वकगौर्यादिषोडशमातृणामर्चनविधौ यन्न्यूनमतिरिक्तं वा तत् सर्वं मातृणां प्रसादात्परिपूर्णमस्तु । ततः—अनया पूजया गणेशपूर्वकगौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम् ।

प्र०

१२५

सप्तघृतमातृकाचक्रम्

पूर्व

श्रीः

०

० ०

० ० ०

० ० ० ०

० ० ० ० ०

० ० ० ० ० ०

० ० ० ० ० ० ०

पश्चिम

उत्तर | दक्षिण

इस चक्र के बनाने का स्थान का निर्देश स्मार्तग्रन्थ में श्री पूज्यतम पिताजी (महामहोपाध्याय पण्डित विद्याधरजी गौड़) ने लिखा है। आज कल जो पीठ पर बनाते हैं। उसका कोइ मूल नहीं मिलता है।

१	२	३	४	५	६	७
श्री	लक्ष्मी	धृति	मेधा	स्वाहा	प्रज्ञा	सरस्वती।

माङ्गल्येषु प्रपूज्यन्ते सप्तैता घृतमातरः ॥

श्री, लक्ष्मी, घृति, मेधा, स्वाहा, प्रज्ञा और सरस्वती इन सात घृतमाताओं का प्रादेशमात्र स्थान में मांगल्यकार्यों में दक्षिण दिशा से अर्चनारंभ कर उत्तर दिशा में समाप्त करना चाहिये।

प्र०

१२५

देशकालादि कहकर करिष्यमाण' ऐसा संकल्प कर्मांग कर कुड्य या वस्त्राच्छन्न पीठादि में उपर 'श्री' यह अक्षर लिखकर उसके नीचे रोली आदि से एक बिन्दु उसके नीचे दक्षिणोत्तर दो बिन्दु, उसके नीचे दक्षिणोत्तर तीन, उसके नीचे चार, उसके नीचे पांच, उसके नीचे छः और उसके नीचे सात बिन्दु क्रम से निर्माण कर नीचे वाले सात बिन्दुओं में घृत या दुग्धादि से सात धारा उदक्संस्थ प्रादेशमात्र करे।

देशकालौ सङ्कीर्त्य—करिष्यमाणामुककर्माङ्गत्वेन वसोर्धारापूजनं करिष्ये। इति सङ्कल्प्य कुड्ये वस्त्राच्छन्ने पीठादौ वा उपरि 'श्री' इत्यक्षरं लिखित्वा तदधः कुङ्कुमेन एकं बिन्दुं तदधो दक्षिणोत्तरं द्वौ बिन्दू तदधो तद्दक्षिणोत्तरं त्रीन् तदधश्चतुरः तदधः पञ्च तदधः षट् तदधः सप्त बिन्दून् क्रमेण प्रादेशमात्रस्थले निर्माय अधस्तनेषु सप्तसु बिन्दुषु तप्तेन घृतेन दुग्धेन वा सप्तधारा उदक्संस्थाः प्रादेशमात्रीः कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—

ॐ व्वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्॥ देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः॥ इति सकृन्मन्त्रपाठः। ततस्तेनैव मन्त्रेण पुनः पठितेन ताः

तदनन्तर—'वसोः पवित्रम्' इस मन्त्र से गुड़ आदि से अलग-अलग उन रेखाओं को मिला दे। फिर उन सात बिन्दुओं में क्रम से देवताओं का आवाहन करे—'मनसः कामम्' इस मन्त्र से श्री, 'श्रीश्च ते' से लक्ष्मी, भद्रं कर्णेभिः'

प्र०

१२६

से घृति, मेधां मे' से मेधा, 'प्राणाय स्वाहा' से स्वाहा, 'आर्य गौः' से प्रज्ञा और 'पावकानः सरस्वती' से सरस्वती का स्थापन—पूजन प्राणप्रतिष्ठापूर्वक करे।

प्र० धारा सप्तबिन्दून् ऊर्ध्वभागे गुडादिना मिथः कुर्यात्। तत्र क्रमेणोदकसंस्थदेवता आवाहयेत्—आगच्छ मातर्भुवनैकभूषे श्रीमोदमाङ्गल्यमनोरथाढ्ये। कल्याणकोषं वितरन्त्यमन्दं मखेऽत्र चञ्चत्सु-षमासुवृध्यै ॥ ॐमनसःकाममाकूतिंवाचःसत्यमशीय ॥ पशूनाᳬरूपमन्नस्यरसोयशःश्रीःश्रयताम्म यिस्वाहा ॥ श्रियै० श्रियमावाहयामि स्था० ॥ १ ॥ इन्द्रादिदेवगणमौलिकिरीटकोटिरत्नाङ्कुरैः सत-तराञ्जतपादपीठम्। दुःखाभिभूतजनदुर्गतिनाशिनीं त्वामावाहयामि कृपया भव संमुखीना ॥ ॐश्री-श्चतेलक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रेपार्श्वेनक्षत्राणिरूपमश्विनौव्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाणसर्व्वलो कम्मऽइषाण ॥ लक्ष्म्यै० लक्ष्मीम् ॥ २ ॥ एह्येहि भक्ताभयदे कुमारि समस्तलोकप्रियहेतुमूर्ते। प्रोत्फुल्लपङ्केरुहलोलनेत्रे धृते मखं पाहि शिवस्वरूपे ॥ ॐ भद्रङ्कर्णेभिःशृणुयामदेवाभद्रम्पश्ये-

फिर हे देवियों, जो [1]अङ्गत्व मानकर विधि द्वारा पूजन किया है। अतः यज्ञ के द्वारा प्रादुर्भूत निर्विघ्न सम्पूर्ण

१—आवाहयामि स्थापयामि—को सर्वत्र देवी स्थापन में योजना करनी चाहिये।

कार्यों को करो। यह वसोर्धारा पूजन केवल माध्यन्दिनशाखावालों को विहित है। पांचालदेशीय तथा काशी के कर्मठ

मा क्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाᳬसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ धृत्यै० धृतिम्॥३॥

प्र०

एह्येहि मेधे शुभभूरिवस्त्रे पीताम्बरे पुस्तकपात्रहस्ते। बुद्धिप्रदे हंससमाधिरूपे पूजां ग्रहीतुं मख-

मस्मदीयम्॥ ॐ मेधाम्मे व्वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः। मेधामिन्द्रश्च व्वायुश्च मेधान्धाता

१२८

ददातु मे स्वाहा॥ मेधायै० मेधाम्॥४॥ एह्येहि वैश्वानरतुल्यदेहे तडित्प्रभे शक्तिधरे कुमारि।

हविर्गृहीत्वा सुरतृप्तिहेतोः स्वाहे च शीघ्रं मखमस्मदीयम्॥ ॐ प्राणायस्वाहापानायस्वाहाव्याना-

यस्वाहाचक्षुषेस्वाहाश्रोत्रायस्वाहाव्वाचेस्वाहामनसेस्वाहा॥ स्वाहायै० स्वाहाम्॥५॥ पवित्रचित्ते

प्रतिमाप्रमार्द्रे लब्धुं मनोज्ञाममितः सपर्याम्। यज्ञेऽत्र यज्ञेऽखिलविघ्नहर्त्रि एह्येहि देवाधिपवन्दनीये॥

ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः॥ प्रज्ञायै० प्रज्ञाम्॥६॥

मुनीन्द्रवृन्दारकवृन्दवन्द्ये विद्वज्जनाराधितपादयुग्मे। श्रीशारदे शारदकान्तियुक्ते आवाहये त्वां

विद्वान् मातृकापूजन पीठमें ही स्थापित देवियों के ऊपर ही वसोर्धारा पूजन करते हैं। इसका कोई मूल नहीं मिलता है।
तद्वत् गणेशजी पर ही ग्रहपूजन, मातृकापूजन आदि करते देखे गये हैं। इसका भी वचन अभी देखने में नहीं आया है।

प्र०

१२८

१—आयु, तेज और धन (वृद्धि) के लिए या स्वर्णप्रकाश के लिए, अन्न से संयुक्त इस सुवर्ण (कनक) को

भव संमुखीना ॥ ॐ पावकानः सरस्वती व्वाजेभिर्व्वाजिनीवती ॥ यज्ञं व्वष्टुधियावसुः ॥ सरस्वत्यै० सरस्वतीम् ॥ ७ ॥ इत्यावाह्य प्राणस्थापनपूर्वकमर्चनं समाप्य–ॐ यदङ्गत्वेन भो देव्यः पूजिता विधिमार्गतः । कुर्वन्तु कार्यमखिलं निर्विघ्नेन क्रतूद्भवम् ॥ इति प्रार्थ्य अनया पूजया श्रियादि-सप्तघृतमातरः प्रीयन्ताम् ।

* आयुष्यमन्त्रपाठः *

ॐ आयुष्यंव्वर्चस्यꣳरायस्पोषमौद्भिदम् ॥ इदꣳहिरण्यंव्वर्चस्वज्जैत्रायाविशतादुमाम् ॥१॥ नतद्रक्षाꣳसिनपिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमजꣳह्येतत् ॥ यो बिभर्तिदाक्षायणꣳ हिरण्यꣳ सदेवेषुकृणुतेदीर्घमायुꣳसमनुष्येषुकृणुतेदीर्घमायुः ॥ २ ॥ यदाबध्नन्दाक्षायणाहिरण्यꣳशतानीकाय-

जीतने के लिए मेरे में रखा । २—उस सुवर्ण को राक्षस और पिशाच नहीं ले सकते । क्योंकि यह देवताओं का प्रथम तेज है । जो इसको अलंकार रूप से ग्रहण (धारण) करता है, वह देवलोक में लंबी आयु प्राप्त कर लेता है । अर्थात् देवोंमें

प्र० १३०

बहुत समय तक निवास करता है। वही मर्त्यलोक में अपनी अवस्था को दीर्घ कालीन कर मनुष्यों की आयु से अधिक जीवित रहता है। (३) दक्षवंशसे उत्पन्न शोभन मन वाले ब्राह्मण जिस सोने को बहुत सेनायुक्त राजाके लिए

सुमनस्यमानाः। तन्मऽआबध्नामिशतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥३॥ अश्वत्थामादि ऋषयो वसिष्ठप्रमुखास्तथा। मार्कण्डेयप्रभृतयः सर्वे सन्तु शिवावार्चकाः ॥ १ ॥ जमदग्निः कश्यपश्च दीर्घमायुः करोतु मे अन्ये ऋषीगणा देवा इन्द्राद्याश्च सशक्तिकाः ॥ २ ॥ भूसुराः सुतपोनिष्ठाः सत्यव्रतपरायणाः। दीर्घमायुः प्रयच्छन्तु सर्वकामस्य सिद्धये ॥ ३ ॥ यदायुष्यं चिरं देवाः सप्तकल्पान्तजीविषु। ददुस्तेनायुषा युक्ता जीवेम शरदः शतम् ॥ ४ ॥ दीर्घा नागा तथा नद्यः समुद्रा गिरयो दिशः। अनन्तेननायुषा तेन जीवेम शरदः शतम् ॥ ५ ॥ सत्यानि पञ्चभूतानि विनाशरहितानि च। अविनाश्यायुषा तद्वज्जीवेम शरदः शतम् ॥ ६ ॥ ततः कर्ता—कृतैतत् आयुष्यमन्त्रपाठकर्मणः साङ्गतासिध्यर्थं विप्रेभ्यो दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। इति।

बाँधते हैं। उसी सोने को सौ वर्ष की आयु के निमित्त अपने देह में स्वीकार करता हूँ। क्योंकि इस सुवर्ण के बन्धन से मैं दीर्घजीवी वृद्धावस्था प्राप्त करूँगा या जरावस्थारूपी शरीर प्राप्त होगा।

प्र० १३०

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(सांकल्पिक-आभ्युदयिक श्राद्ध)

— श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०
१३१

(१) यज्ञ में-इकीस दिन, विवाह में दस दिन, चूडाकरण (मुण्डन) में तीन दिन और उपनयन में छः दिन पूर्व नान्दीश्राद्ध करनेका विधान है।

(२) भूकंप आदि का दोष नान्दीश्राद्ध करने पर नहीं है।

(३) नान्दीश्राद्धमें पिता, माता, दादा, दादी-आदि जीवित हों तो उसके आगे वाली पिढ़ियों की योजना करे। 'जीवेत्तु यदि वर्गाद्यस्तं वर्गं तु परित्यजेत्' यह वचनतीर्थ, गया और महालयादिपरक है, नान्दीश्राद्ध परक नहीं है।

(४) पिता के अभाव में पुत्रादिके संस्कार में जो व्यक्ति नान्दीश्राद्ध करेगा। वह उसके पिता आदिका नान्दीश्राद्ध करेगा। अपने पिता आदिकी योजना नहींकर सकता।

प्र०
१३३
१२

काशी के कर्मकाण्डी पूर्व दिशा की तरफ उत्तराग्र कुशाको आसन स्थान पर विश्वदेव के लिए रखते हैं और तीन आसन दक्षिण दिशा से पूर्वाग्र क्रमसे प्रथम आसन मातृ, पितामही और प्रपितामही के लिए, पितृ, पितामह और प्रपितामह के लिए दूसरा आसन तथा सपत्नीक मातामह, प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह के लिए तीसरा आसन रखते

कर्ता–सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं (पादावनेजनं पाद प्रक्षालनंवृद्धिः)। मातृपितामहीप्रपितामह्यो नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं (पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः)। पितृपितामहप्रपितामहाः नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं (पादावनेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः)। मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीका नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इदं वः पाद्यं (पादानेजनं पादप्रक्षालनं वृद्धिः)। इत्युक्त्वा सर्वत्र पात्रे सकुशयवाक्षतजलं क्षिपेत्। ततः आसनदानम्–सत्यवसुसंज्ञका विश्वदेवा नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमः। मातृपितामहीप्रपितामह्यो नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमः। मातामह

है। ये आसन एक में सटे न हो। उन आसनों पर विश्वेदेव पूर्वक अपने पूर्वजों की पूजा करते हैं। पूजन का क्रम यों है–उत्तराग्र कुशापर 'सत्यवसु' इस से विश्वदेवों के लिए पाद्यजल पाद्यप्रक्षालन के लिए दे। वैसे ही दक्षिण क्रम से मातृ पितामही और प्रपितामही को, पितृ, पितामह तथा प्रपितामह को, सपत्नीक मातामह, प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह

प्र०
१३३

को दे । इसीप्रकार आसनदान करे । तदनन्तर 'अत्राप: पान्तु' इस वाक्य से जल, 'इमे वाससी' से वस्त्र, इमानि यज्ञोपवीतानि, से यज्ञोपवीत, अयं वो गन्धः' से चन्दन (रोली), 'इमे अक्षताः' से चावल, इमानि पुष्पाणि से पुष्प 'अयं वो धूपः' से धूप, 'अयं वो दीपः' से घीके दीपक, 'इदं नैवेद्यम्' से पेड़ा, बतासा आदि, 'इमानि ऋतुफलानि' से

प्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीकाः नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इमे आसने वो नमः ।

गन्धादिदानम्—अत्रापः पान्तु । इमे वाससी, इमानि यज्ञोपवीतानि, एष वो गन्धः, इमे अक्षताः, इमानि पुष्पाणि, अयं धूपः, अयं दीपः, इदं नैवेद्यम्, इमानि ऋतुफलानि, इदं ताम्बूलम्, इदं पूगीफलम्, सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । मातृपितामहीप्रपितामह्यो नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । पितृपितामहप्रपितामहा नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इदं गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा सपत्नीका नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इदं

ऋतुओं में होनेवाले फल, इदं 'तांबूलम्' से बिना लगी पान और 'इदं पूगीफलम्' से बिना सड़ी सुपारी अर्पण करे । फिर विश्वेदेवपूर्वक मातृ-पितामही, प्रपितामही पितृ-पितामह-प्रपितामह और सपत्नीक मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामहका क्रमसे 'सत्यवसुसंज्ञकाः' इत्यादि वाक्यों के अन्त में 'गन्धाद्यर्चनं स्वाहा संपद्यतां वृद्धिः' को जोड़ कर पढ़े ।

प्र० १३४

तदनन्तर विश्वेदेव पूर्वक मातृ-पितामही, प्रपितामही, पितृ-पितामह-प्रपितामह और सपत्नीक मातामह-प्रमातामह-वृद्धप्रमातामह को 'सत्यवसुसंज्ञकाः' इन वाक्योंके अन्तमें 'इदं' युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यमृतरूपेण

प्र०

गन्धाद्यर्चनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। भोजननिष्क्रयं दानम्—सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दी-मुखा भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातृपितामहीप्रपितामह्यो नान्दीमुख्यः भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तान्न-निष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। पितृपितामहप्रपितामहा नान्दी-मुखा भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मणभोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः सपत्नीका नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः इदं युग्मब्राह्मण भोजनपर्याप्तामान्ननिष्क्रयभूतं द्रव्यममृतरूपेण स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। ततः सक्षीरयवकुश-जलानि दद्यात्—सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातृपितामहीप्रपितामह्यो

१३५

स्वाहा संपद्यतां वृद्धिः' को कहे। फिर—दूध, यव, कुश, जल और जलको एकमें कर—क्रमसे विश्वेदेवपूर्वक 'सत्यवसु-संज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्' कहकर छोड़ दे। इसीप्रकार-मातृ-पितामही-प्रपितामही, पितृ-पितामह-प्रपि-

प्र०

१३५

तामह और सपत्नीक—मातामह—प्रमातामह—वृद्धप्रमातामहको दे। विनम्रतापूर्वक—यजमान अपने पूर्वजों से प्रार्थना करता है—हमारे गोत्र की परंपरा अक्षुण्ण बनी रहे। हमारे परिवार में देने वालों की वृद्धि बनी रहे और वेदों पर श्रद्धा या

प्र०

नान्दीमुख्यः प्रीयन्ताम्। पितृपितामहप्रपितामहा नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। मातामहप्रमातामह-वृद्धप्रमातामहाः सपत्नीका नान्दीमुखाः प्रीयन्ताम्। प्रार्थना—गोत्रन्नो वर्धतां दातारो नोऽभिवर्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च। श्रद्धा च नो माव्यगमद् बहुदेयं च नोऽस्तु अन्नं च नो बहु भवेदतिथींश्च लभेमहि। याचितारश्च नः सन्तु मा च याचिष्म कञ्चन। एताः सत्या आशिषः सन्तु। द्विजाः—सन्त्वेताः सत्या आशिषः। ततः सकुशयवं जलं दक्षिणां चादाय—सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा नान्दीमुखाः भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य फल-प्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। मातृपितामहप्रपिता-मह्यो नान्दीमुख्यः भूर्भुवःस्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूल-

सनातनधर्मीय ज्ञान का भण्डार हो और शिक्षित सुयोग्यतम सन्तानों की वृद्धि हो। हमारे खानदानमें सनातनधर्मानुकूल श्रद्धा बनी रहे। हमारे परिवार में बहुत देने वाले हों। बहुत अन्न का भंडार हो। अतिथियोंका संमान हो। माँगनेवाले

आते रहें। हमारा परिवार किसी के यहाँ मांगने की याचना न करे। इसप्रकार का आशीर्वाद हो। ब्राह्मण कहते हैं— यही आशीर्वाद है। विश्वेदेवपूर्वक मातृ—पितामही—प्रपितामही, पितृ—पितामह—प्रपितामह और सपत्नीक मातामह—

निष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। पितृपितामहप्रपितामहाः नान्दीमुखा भूर्भुवःस्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य फलप्रतिष्ठासिद्ध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहः सपत्नीका नान्दीमुखा भूर्भुवः स्वः कृतस्याभ्युदयिकस्य फलप्रतिष्ठासिध्यर्थं द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। ततः—माता पितामही चैव तथैव प्रपितामही। पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः॥ मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकस्तथा। एते भवन्तु मे प्रीताः प्रयच्छन्तु च मङ्गलम्॥ इति पठेत्। ॐइडामग्नेपुरुदꣳसꣳसनिङ्गोः शश्वत्तमꣳ हवमानायसाध॥ स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥१॥ उपास्मैगायतानरः पवमानायेन्दवे॥ अभिदेवाँ२इयक्षते॥ २॥ इत्यनेन नान्दीश्राद्धं संपन्नम्। सुसंपन्नमिति

प्रमातामह-वृद्धप्रमातामह को क्रमसे 'सत्यवसुसंज्ञकाः' इन वाक्योंके अन्त में 'कृतस्याभ्युदयिकस्य फलप्रतिष्ठासिध्यर्थं 'द्राक्षामलकयवमूलनिष्क्रयिणीं दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये' यों कहकर मुनका, आंवला और यव दक्षिणारूपसे दे।

फिर--'इडामग्ने और 'उपास्मै गायता नरः' इस मंत्रों को पढ़कर कहे 'अनेन नान्दीश्राद्धं संपन्नम्' इस कार्यद्वारा मैंने नान्दीश्राद्धको संपन्न किया। ब्राह्मण कहें--'सुसंपन्नम्' आप के द्वारा जो कार्य हुआ--यह ठीक है। तदनन्तर--'वाजे वाजे और 'ओमावाजस्य' इन दोनों मन्त्रों को पढ़ कर--'मयाचरिते आभ्युदयिके' इस वाक्य को कहे। अर्थात्--मेरे द्वारा

द्विजाः। ॐ व्वाजेंवाजेवतव्वाजिनोनोधनेषुव्विप्राऽअमृताऽऋतज्ञाः॥ अस्यमद्ध्वंः पिबतमादयं-ध्वंतृप्तायातपथिभिर्देवयानैः॥१॥ आमाव्वाजस्यप्रसवोजगम्यादेमेद्यावापृथिवीविश्वरूपे॥ आमा-गन्तांपितरामातराचामासोमोऽअमृतत्वेनगम्यात्॥ मयाऽऽचरिते आभ्युदयिके श्राद्धे न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनाच्छ्रीगणपतिप्रसादाच्च परिपूर्णोऽस्तु-इति वदेत्। अस्तु परिपूर्णः--इति ब्राह्मणाः।

आभ्युदयिक में जो कमी-बेशी हो गयी है वह समीपमें बैठे हुए ब्राह्मणों के वचन से और गणेश जी के प्रसाद से परिपूर्ण हो, ऐसा कहे। ब्राह्मण कहते हैं--आप का यह कार्य परिपूर्ण हो। यजुर्वेदीयशाखाओंके लिए मातृपूर्वक या स्वतन्त्र आभ्युदहिक श्राद्ध का विधान है।

श्री ॥ विधवाकर्तृक नान्दीश्राद्धे प्रश्नसाध्ये प्रश्नेन मातृद्दिश्य श्राद्ध
क्रियते तान्नेवोद्दिश्य विधवाऽपि श्राद्धं कुर्यात्। अर्थात् स्वश्वश्रू
प्रभृतीनां त्रिस्त्रयाणां स्वभर्तृ प्रभृतीनां त्रयाणां स्वपितृ प्रभृतीनां त्रया
णां च इति नवानां श्राद्धं कुर्यात्। उद्देश्यवाचक शब्दो आरभ्य पदं वि
शेष.। एतत्कवेत स्वमातापितामहीति स्वपितृपितामहेति स्वमातामह
हेति च ब्रूयात्। विधवा तु श्वश्र्वादिशब्देन पत्यादिशब्देन पिता

प्र०

१४०

दिशब्देन च उद्देश्यं कथयेत्। "अपुत्रा पुत्रवत्पत्नी पुत्रकर्म समा
चरेत्" इति श्राद्धमयूखोदाहृतवचनात्। अतश्च पुत्रकर्तृकता स्त्री
श्राद्धवत् विधवाश्राद्धमपि तद्देवत्यम्। अत एव श्राद्धमयूखे "वि
धवायास्तु पुत्राभावे तद्देवाधिकारः। तस्याः "अपुत्रा पुत्रवत्पत्नी पुत्र
कर्म समाचरेत्" इति वचनात् पुत्रवदिति वतिना प्रकरणानुरोधात्
श्राद्धक्रियातुल्यतोक्ता। पुत्रकर्तृक श्राद्धवदेव देवताः। उद्देश्यत्वं तु वि

प्र०

१४०

प्र०

न्नादीनां भर्तृत्वादिना। तन्मातामहानां च पितृत्वादिना। यं प्रति येन रूपेण संबन्धिता तं प्रति तेनैव रूपेणोद्देश्यत्वात्। 'स्वभर्तृप्रभृति त्रिभ्य' इति वचनं षड्दैवत्यदर्शश्राद्धादिविषयम्। एवं 'चत्वारः पार्वणाः प्रोक्ताः'[1] इति वचनं मुख्यमुक्तं महालयपार्वणपरं वा" इत्युक्तम्। एवं च विधुवाकर्तृकं नान्दीश्राद्धं नवदैवत्यमिति सिद्धान्तः॥

श्रीविद्याधरशर्मा

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(आचार्य आदि का वरण, मधुपर्क, यजमान और ब्राह्मणों के नियम)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र० १४२

प्र० १४३

❀ अथ ब्राह्मणानां वरणम् ❀

कर्ता—अपना गोत्र, नाम आदिका उच्चारणकर आचार्यके गोत्र आदि को कहकर देयद्रव्य द्वारा आचार्यका वरण करे। आचार्य कहे मुझे स्वीकृत है। तदनन्तर जैसे-स्वर्गलोक में इन्द्र आदि देवों के बृहस्पति आचार्य हैं। तद्वत आप मेरे

"अस्मिन् कर्मणि त्वमाचार्यो भव–"भवामि' इति प्रत्युक्ते कृताञ्जलिः—स्वागतं भो द्विज-श्रेष्ठाः मदनुग्रहकारकाः। इतमर्घ्यमिदं पाद्यं भवद्भिः प्रतिगृह्यताम्॥ इत्युक्त्वा 'अस्मिन् कर्मणि एतत्ते ऽर्घ्यम्। 'अस्मिन् कर्मणि एतत्ते पाद्यम्। इति पादप्रक्षालनं कृत्वा तज्जलमभिनन्द्य द्विराचामेत्। विप्राश्च पादप्रक्षालनोत्तरं द्विर्द्विराचामेयुः। ततो विप्रस्य दक्षिणं जान्वालभ्य ऋत्विग्वरणनिमित्तम-र्चयिष्ये–इत्युक्त्वा चन्दनाक्षतपुष्पमालादिभिरभ्यर्च्य साक्षतहस्तः कराभ्यां वरणसामग्रीमादाय–अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरोऽमुकशाखाध्यायो अमुकशर्मा (वर्मा, गुप्तः) यजमानोऽहं (सपत्नीकोऽहम्) अमुकगोत्रममुकप्रवरं यजुर्वेदाध्यायिनममुकशर्माणं अस्मिन् विष्ण्वादिप्रतिष्ठाख्ये कर्मणि आचार्यं त्वा-

इस कर्म में आचार्य हों। उनके स्वीकार करने पर कृताजलि हो 'स्वागतं भो द्विजश्रेष्ठाः' इस मन्त्र को कहकर पाद्य, अर्घ्य आदि से पादप्रक्षालन कर उस जलकी वन्दना कर दो आचमन करे। ब्राह्मण भी पादप्रक्षालन आदि के बाद दो

प्र० १४३

दो आचमन करें। तदनन्तर पूजन पूर्वक वरण सामग्री लेकर उन उन मन्त्रों और श्लोको से सब का वरण करे। फिर रक्षाबन्धन तिलक आदि करे। मण्डपपक्षमें ऋग्वेदी आदि ब्राह्मणों का युग्मवरण करे।

महं वृणे। आचार्योऽपि-वृतोस्मि-इत्युक्त्वा ॐव्रतेनदीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोतिदक्षिणाम्॥ दक्षिणा-श्रद्धामाप्नोतिश्रद्धयासत्यमाप्यते॥ इति पठेत्। ततः—ॐयदाबध्नन्दाक्षायणाहिरण्यर्ठ०शतानीकाय-सुमनस्यमानाः॥ तन्मऽआबध्नामिशतशारदायायुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम्॥ इति रक्षासूत्रबन्धनं कुर्यात्। ततः—आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादनीनां बृहस्पति। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत॥ १॥ मन्त्रमूर्तिर्भवान्नाथ संसाराघौघनाशन। प्रतिष्ठादिविधावस्मिन् कुरु कर्म यथोदितम्॥२॥ त्वत्प्रसादाच्च पूर्तस्य समग्रं फलमाप्नुयात्। संसारभयभीतेन अयं यज्ञः सुभक्तितः॥३॥ प्रारब्धस्त्वत्प्रसादेन निर्विघ्नं मे भवत्विति। यथा शक्रस्य वागीश आचार्यः सर्वकर्मसु। तथा मया त्वमाचार्यो वृतोऽस्मिन् यज्ञकर्मणि॥ ४॥ ॐ बृहस्पतेऽ अतियदर्य्योऽ अर्हाद्द्युमद्विभा-

फिर— हे सुव्रत, 'व्रतेन दीक्षाम्, इस मन्त्रको पढ़े। फिर 'यदाबध्नन्, इस मन्त्रसे रक्षाबन्धन करे और बृहस्पते अति, इन मन्त्रों को पढ़े।

जैसे—सारे संसार के पितामह चतुर्मुख ब्रह्मा हैं। द्विजात्तम, वैसेही आप मेरे इस यज्ञ के ब्रह्मा हों। आप हम लोगोंके गुरु, पिता, माता, प्रभु तथा कार्य कुशल हैं। आपत्ति के दूरीकरण के लिए आपका 'सदस्यत्व' कार्य के लिए वरण

तिक्कतुंमुज्जनैषु ॥ यद्दीदयुच्छवंस ऽऋतप्रजाततदुस्मासुद्द्रविणन्धेहिचित्रम् ॥ इति पृथक्-पृथक् वरणं कुर्यात्। अथवा—'सर्वेषां गोत्रादीन्' पृथक् पृथगुच्चार्य ऋत्विजो युष्मान् अहं वृणे-इति युगपत् सर्वाद् वृणुयात्। ततो ब्रह्मवरणे—यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्वलोकपितामहः। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन् ब्रह्मा भव द्विजोत्तम ॥ ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विशीमत सुरुचो व्वेनऽआवः ॥ सबुध्न्याऽउपमाऽ अस्य व्विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्चव्विवः ॥ सदस्यवरणे—त्वन्नो गुरुः पिता माता त्वं प्रभुस्त्वं परायणम्। त्वत्प्रसादाच्च विप्रर्षे सर्वं मे स्यान्मनोगतम्। आपद्विमोक्षणार्थाय सदस्यो भव सुव्रत ॥ ॐ सदसस्पतिमद्भुतम्प्रियमिन्द्रस्य काम्म्यम् ॥ सनिम्मेधा मयासिषः स्वाहा ॥ गाणपत्यवरणे—प्रारीप्सितस्य यज्ञस्य जपस्य हवनस्य च। निर्विघ्नेन समाप्त्यर्थं गणपं त्वामहं

करते हैं। प्रारीप्सित यज्ञ, जप तथा हवन का निर्विघ्न समाप्ति के लिए गाणपत्यका वरण करते हैं। हे भगवन्, संपूर्ण कर्म को जाननेवाले, संपूर्ण धर्म का पोषण करने वाले, हे द्विज, मेरे द्वारा इस विस्तारित यज्ञ में आप 'उपद्रष्टा' हों। फिर 'ऋतयेस्तेन हृदयम्' मन्त्रको पढ़े। ऋत्विग्वरण में 'भगवन्सर्वधर्मज्ञ और ब्राह्मणासः पितरः' इस श्लोक तथा मन्त्रको

करें। अथवा एक तन्त्र से सकल्प यों कहे—'नानानान् गोत्रान् अमुकामुकशर्मणान् आचार्यादीन् ब्राह्मणान् युष्मान् अहं वृणे। ब्राह्मण कहें—वृतास्मः। अनेक गोत्रवाले, अनेक नामों वाले आचार्य आदि ब्राह्मणोंका मैं इस यज्ञमें सामग्री द्वारा वरण

प्र०

वृणे ॥ ॐ गणानां त्वा ॥ उपद्रष्टृवरणे—सम्प्रदायागतसर्वोपद्रष्टृवरणे च भगवन् सर्वकर्मज्ञ सर्वधर्मभृतांवर। वितते मम यज्ञेऽस्मिन्नुपद्रष्टा भव द्विज ॥ ॐ ऋतयेस्तेन हृदयं वैरहत्याय पिशुनं

१४५

विविक्त्यैक्षत्तारमौपद्रष्टयायानुक्षत्तारम्बलायानुचरम्भूम्नेपरिष्कन्दम्प्रियायप्रियवादिनमरिष्टया - ऽअश्वसादंᳬस्वर्ग्गायलोकायभागदुघंव्वर्षिष्ठायनाकायपरिवेष्टारम् ॥ भगवन् सर्वकर्मज्ञ सर्वधर्मभृतां वर। वितते मम यज्ञेऽस्मिन्नुपद्रष्टा भव द्विज ॥ इति। ऋत्विग्वरणे—भगवन्सर्वकर्मज्ञ सर्वधर्मभृताम्बर। वितते मम यज्ञेऽस्मिन् ऋत्विक्त्वं मे मखे भव ॥ ॐ ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवेनोद्यावापृथिवीऽअनेहसा ॥ पूषानः पातुदुरितादृतावृधोरक्षामाकिर्नोऽअघशंᳬसऽईशत ॥ मण्डपपक्षे— 'ऋग्वेदः पद्मपत्राक्षो गायत्रः सोमदेवतः। अत्रिगोत्रस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ॥ कात-

१४६

राक्षो यजुर्वेदस्त्रैष्टुभो विष्णुदेवतः। काश्यपेयस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ॥ 'सामवेदस्तु

करता हूँ। ब्राह्मण कहते हैं। हम आपके इस यज्ञ में कार्य करने के लिए सहमत हैं।

पिङ्गाक्षो जाग्रतः शक्रदैवतः । भारद्वाजस्तु विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ।। 'बृहन्नेत्रोऽथर्ववेदोऽनुष्टुभो रुद्रदेवतः । वैशम्पायन विप्रेन्द्र ऋत्विक् त्वं मे मखे भव ।। इति क्रमेण वेदपारायणे द्वार[2]पालवरणे वा मन्त्राः ।

❋ अथ मधुपर्कः ❋

करिष्यमाण—अमुकदेवप्रतिष्ठाकर्मणि वृतान् ऋत्विजो मधुपर्केणार्चयिष्ये । इति सङ्कल्प्य यजमानशाखयाऽर्हणम् । तद्यथा—सर्वेषां ब्राह्मणानां पङ्क्त्याकारेणोपवेशनम् । "साधु भवन्तः आसताम-

तदनन्तर यजमान अपनी शाखा से ही मधुपर्क करे । उसका यों क्रम है—पहले संकल्प करे । फिर ब्राह्मणों को पङ्क्त्याकार बैठा दे । फिर पारस्करगृह्यसूत्रानुसार मधुपर्क द्वारा पूजन कर प्रार्थना करे ।

१—अथवा—एकतन्त्रेण संकल्पं कुर्यात्—'नानानान् गोत्रान् अमुकामुकशर्मणान् आचार्यादीन् ब्राह्मणान् एभिर्वरणद्रव्यैः, अहं वृणे । 'वृतास्मः' इति ।

२—अमुकामुकशर्माणौ युग्मऋग्वेदिनौ सूक्तपाठार्थं युवां वृणे ।

३—विश्वामित्रः—सम्पूज्य मधुपर्केण ऋत्विजः कर्म कारयेत् । अपूज्य कारयन्कर्म किल्बिषेणैव युज्यते ।।

४—आचार्यस्य स्वशाखया ऽन्येषां यच्छास्त्रीयं (अचार्यशाखीयम्) कर्म तच्छाखया वरणक्रमेण शक्तौ सत्यां पक्षे मधुपर्कं इति कमलाकरः । यजमानशाखया वा सर्वेषां मधुपर्कः । यजमानशाखावशेनैव मधुपर्कं दानप्रतिग्रहाविति जयन्तोक्तेः । इदमेव युक्तं भातीति प्रतिष्ठेन्दौ ।

प्र०

र्चयिष्यामो भवतः—इत्यर्घ्यान्प्रत्याह। 'ॐ अर्चय' इति सर्वे प्रतिब्रूयुः। वेण्याकारं पञ्चविंशतिदर्भमय-मुष्टिं विष्टरापरपर्यायं गृहीत्वा "विष्टरा विष्टरा विष्टराः—इति दातुरन्येनोक्ते—प्रतिगृह्यन्ताम्—इति पात्रोक्ते ॐ प्रतिगृह्णीमः—इति। ऋत्विग्भिः सम्यक्तया तं प्रतिगृह्य उत्तराग्रं निधाय—ॐ वर्ष्मोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः। इमं तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति॥ इति मन्त्रेण तदुपरि-उपविशेयुः। ततो दाता पाद्यपात्रं गृहीत्वा 'पाद्यानि पाद्यानि पाद्यानि—प्रतिगृह्यन्ताम्—इति प्रतिगृह्णीम इत्युक्त्वा ऋत्विजः प्रतिगृह्य ॐ विराजो दोहोऽसि विराजोदोहमसीय मयि पाद्यायै विराजो दोहः॥ इति मन्त्रेण दक्षिणवामपादयोर्युगपन्निनयेयुः। दाता च क्रमेण दक्षिणवामपादौ प्रक्षालयेत्। ततोऽर्घपात्रमादाय "अर्घा अर्घा अर्घाः" इत्यनेनोक्ते "प्रतिगृह्यन्ताम्" इति दात्रा-ऽऽवेदिते "प्रतिगृह्णीमः" इत्युक्त्वा "ॐ आपः स्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि" इति तत्प्रति-गृह्य ॐ समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत। अरिष्टास्माकं वीरामापराचेति मत्पयः॥ इति

१—मधुपर्के पाद्याचमनीयशुद्धाचमनीयार्थं जलपात्रचतुष्टयं सम्पादयेदिति भट्टाः। अनेकेषु ऋत्विक्षु विष्टरादिहदार्थार्पणे काण्डानुसमयः पदार्थानुसमयो वा (तत्र काण्डानुसमयो नाम एकस्यैव विष्टरादिगो-विवेदनान्तं समाप्य ततोऽन्यस्य सर्वं ततोऽन्यस्य। पदार्थानुसमयो नाम सर्वेषां वरणक्रमेण विष्टरं दत्वा ततः पाद्यं ततोऽर्घं इति। अत्र पदार्थानुसमय एव मीमांसकमतः। अर्चशाखया मधुपर्के तु काण्डानुसमय एवेति बोध्यम्।

निनयन्नभिमन्त्रयेत् । ततो दात्रा आचमनीयपात्रे गृहीते "आचमनीयान्याचमनीयान्याचमनीयानि इत्यनेनोदीरिते–प्रतिगृह्यन्ताम्–इति दात्रोक्ते तत्पात्रं प्रतिगृह्य "ॐ आमागन्यसा सꣳ सृजवर्चसा । तं मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनारिष्टिं तनूनाम् ॥ इतिसकृन्मन्त्रेण द्विस्तूष्णीमाचामेयुः । ततो दात्रा मधुपर्कं समादाय 'मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः । इत्यनेनोदीरिते "प्रतिगृह्यन्ताम्" इति प्रतीच्य "ॐ देवस्यत्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् ॥ इति प्रतिगृह्य तत्पात्रं सव्यहस्ते कृत्वा अपिधानमपनीय दक्षिणहस्तस्यानामिकया सकृन्मिश्रीकृत्य अङ्गुष्ठोपकनिष्ठिकाभ्यां किञ्चिन्मधुपर्कं गृहीत्वा ॐ नमः श्यावास्यायान्नशने यत्तऽआविद्धं तत्ते निष्कृन्तामीति मन्त्रेण बहिः प्रक्षिपेत् । एवमेव पुनरपि वारद्वयं मिश्रणं निरसनं च कार्यम् । ततः पात्रं भूमौ निधाय अनामिकाङ्गुष्ठेन ॐ यन्मधुनो मधव्यं परमꣳ रूपमन्नाद्यम् । तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोसानि ॥ इति मन्त्रावृत्त्या त्रिः प्रश्नाति । मन्त्रवत्प्राशनमनुच्छिष्टत्वात् । शेषं शिष्यादिभ्यो दद्यादनुच्छिष्टत्वात् । अथवा स्वयमेव सर्वं पात्रेणैव पिबेत् । जले प्रक्षिपेद्वा । ततः शुद्ध्यर्थमाचमनम् । ततः–"ॐ वाङ्मऽ आस्ये अस्तु–इति तर्जनीयमध्यमाऽनामि

प्र० प्र०
१४६ १४६

प्र०

१५०

काभिमुखं स्पृशेत् । जलं स्पृष्ट्वा "ॐ नसोर्मे प्राणः अस्तु-इति नासिके युगपत् तर्जन्यङ्गुष्ठेन स्पृशेत् । "ॐअक्ष्णोर्मे चक्षुः अस्तु" इति अनामिकाङ्गुष्ठेन युगपच्चक्षुषी । "कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु" इति मन्त्रावृत्त्या तथैव दक्षिणोत्तरौ कर्णौ । "ॐबाह्वोर्मे बलमस्तु" इति अङ्गुल्यग्रैर्मन्त्रावृत्त्या बाहू । "ॐऊर्वोर्मे ओजः अस्तु" इति पाणिभ्यां युगपदूरू । "ॐअरिष्टाऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु" इति शिरः प्रभृत्यङ्गानि पाणिभ्यामालभेत् । ततो द्विराचामेत् । ततः "गावो गावो गावः" इति दाता वदेत् । ऋत्विजश्च—"ॐ माता रुद्राणां दुहिता वसूनाᳩ स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः । प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मागामनागामदितिं वधिष्ट । मम चाऽमुष्य च पाप्माहतः । ॐ उत्सृजत तृणान्यत्तु । इति पठेयुः । ततः आचारात्—"इमानि माधुपर्किकाणि पात्राणि नाना-देवतानि इमानि मधुपर्किकीर्गाश्च ऋत्विग्भ्योऽहं संप्रददे इति दद्यात् । अस्य मधुपर्ककर्मणो यन्न्यूनमतिरिक्तं च तत्सर्वं परिपूर्णमस्तु । अस्तु परिपूर्णम् । इति मधुपर्कः ।

प्र०

१५०

प्र० १५१

श्रीः॥ यद्यप्यादौ भिन्नशाखीयानां ब्राह्मणानां च स्वस्वशाखयैव समुच्चय इति पक्षस्य
सर्वदेशेषु भूयान् प्रचारः। युक्तं चैतत्। अत्र यजमानस्य कर्तृत्वात् कर्तृशाखयैव कर्म
अनुष्ठानस्योचितत्वात्। "यः स्वशाखां परित्यज्य पारशाख्यं समाश्रयेत्। अप्रमाणमृषिं कृ
त्वा सोऽन्धे तमसि मज्जति" इति परशाखया कर्मानुष्ठाने दोषश्रवणात्। शाखान्तरीये
णानुष्ठाने तच्छाखीयमन्त्राणां यजमानादिनाऽनध्येतृत्वदशायामेतदर्थं यजमानस्य
ना गौरवापत्तेः। "अध्वर्योर्या भवेच्छाखे"ति वचनं सोमयागपरम्। अध्वर्योस्तु यच्छा,

प्र० १५१

※ अथ प्रार्थना ※

ब्राह्मणाः सन्तु शास्तारः पापात्पान्तु समाहिताः । वेदानां चैव दातारः पातारः सर्वदेहिनाम् ॥ १ ॥

जपयज्ञैस्तथा होमैर्दानैश्च विविधैः पुनः । देवानां च ऋषीणां च तृप्त्यर्थं याजकाः स्मृताः॥ २॥

येषां देहे स्थिता वेदाः पावयन्ति जगत्त्रयम् । रक्षन्तु सततं ते मां जपयज्ञे व्यवस्थिताः ॥ ३ ॥

ब्राह्मणा जङ्गमं तीर्थं त्रिषु लोकेषु विश्रुतम् । तेषां वाक्योदकेनैव शुद्ध्यन्ति मलिना जना ॥ ४ ॥

पावनाः सर्ववर्णानां ब्राह्मणा ब्रह्मरूपिणः । सर्वकर्मरता नित्यं वेदशास्त्रार्थकोविदाः ॥ ५ ॥

श्रोत्रियाः सत्यवाचश्च देवध्यानरताः सदा । यद्वाक्यामृतसंसिक्ता ऋद्धिं यान्ति नरद्रुमाः ॥ ६ ॥

अङ्गीकुर्वन्तु कर्मैतत्कल्पद्रुमसमाशिषः । यथोक्तनियमैर्युक्ता मन्त्रार्थे स्थिरबुद्धयः ॥ ७ ॥

यत्कृपालोचनात्सर्वा ऋद्धयो वृद्धिमाप्नुयुः । प्रतिष्ठायां च मे पूज्याः सन्तु ते नियमान्विताः ॥ ८ ॥

उपवीती बद्धशिखो धीरो मौनी दृढव्रतः । धौतवासाः पञ्चकच्छो द्विराचामः कृताह्निकः ॥ ९ ॥

नैकवस्त्रो नान्तराले न द्वीपे नार्द्रवाससा । न कुर्यात्कस्यचित्पीडां कण्डून्मीलनवर्जितः ॥१०॥
अवैधं नाभ्यधः स्पर्शं कर्मकाले न कारयेत् । न पदा पादमाक्रम्य न चैव हि तथा करौ ॥११॥
जपकाले न भाषेत नान्यानि प्रेक्षयेद्बुधः । न कम्पयेच्छिरो ग्रीवंदन्तान्नैव प्रकाशयेत् ॥१२॥
निरर्थकं न संलापो नाङ्गानां चालनं मुधा । आचार्यकथने स्थेयान्न प्रतिग्रहमाचरेत् ॥१३॥
हविष्याशी मिताहारी लोभदम्भविवर्जितः । अत्वरः सकलान् मन्त्रान् जपे होमे प्रयोजयेत् ॥१४॥
दूरतः सन्त्यजेत्सर्वं मादकद्रव्यसेवनम् । न यज्ञमण्डपे हस्तपादप्रक्षालनं क्वचित् ॥१५॥
नान्यं प्रतिनिधिं कुर्यान्न पर्युषितभुग्भवेत् । वर्तमाने जपादौ च लघुशङ्कादिकं त्यजेत् ॥१६॥
पवित्रपाणिस्तिलको ताम्बूलपरिवर्जनम् । मञ्चखट्वादिशयनमातराहारवर्जनम् ॥१७॥
परस्परमनिन्दां च न क्षौरं नातिभोजनम् । मृगीमुद्रामुपाश्रित्य यथार्थं हुतमाचरेत् ॥१८॥
अक्रोधनाः शौचपराः सततं ब्रह्मचारिण । देवध्यानरता नित्यं प्रसन्नमनसः सदा ॥१९॥
(यूयं वै ब्राह्मणा सृष्ट्वा मित्रत्वे नानुगृह्णता । सौख्ये नैवेह भवता भवत्सुतो नरः स्वयम् ॥

प्र०
१५४

भवतां प्रीतियोगेन स्वयं प्रीतः पितामहः ।)

प्र०

अदुष्टभाषणाः सन्तु मा सन्तु परनिन्दकाः । ममापि नियमा ह्येते भवन्तु भवतामपि ॥२०॥
ऋत्विजश्च यथा पूर्वं शक्रादीनां मखेऽभवन् । यूयं तथा मे भवत ऋत्विजोऽर्हणसत्तमा ॥२१॥
अस्य यागस्य निष्पत्तौ भवन्तोभ्यर्थिता मया । सुप्रसन्नैः प्रकर्तव्यं कर्मेदं विधिपूर्वकम् ॥२२॥

१५५

ब्राह्मणा ब्रूयुः—वयं नियमसंयुक्तास्तव कर्तव्यतत्पराः । कार्यं तव करिष्यामो विधिपूर्वं संशयः ॥
कर्तव्या नो क्रियाशंका वेदाज्ञा हि गरीयसी । वेदिका नहि वेदाज्ञां लंघयन्ति कदाचन ॥
त्वदधीनं त्वया कार्यं निःशंकं श्रद्धान्वितम् । वयं सर्वं करिष्यामस्तवकार्यं न संशयः । यजमानो ब्रूयात्—धन्योऽहं कृतकृत्योऽहं सौभाग्योऽहं धरातले । प्रसादाद्भवतां विप्राः पवित्रोऽहं कृतोऽधुना ॥
शक्त्या सर्वं करिष्यामि वचनाद्भवतां ततः । आशीर्वादस्य सिद्धानां पूर्णं सर्वं भविष्यति ॥
यथाविहितं कर्म कुरुत । यथाज्ञानं कारवामः ।

प्र०

१५५

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(सपत्नीक यजमान सहित आचार्य आदि मण्डपप्रवेश,
दिग्रक्षण और पञ्चगव्यादिनिर्माणप्रकार)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

१५६

* अथ मण्डपप्रवेशः *

ततः सपत्नीकः पुत्रपौत्रादियुतो यजमानः साचार्यः सर्त्विग्यजमानो मङ्गल[2]घोषेण दुन्दुभ्यादि वादित्रघोषेण आ नो भद्रेत्यादि मन्त्रघोषेण च युक्तः कलशहस्तः सुवासिनीरग्रतः कृत्वा गणेशं (अम्बिकां) वरुणकलशं मातृकापीठद्वयं च ब्राह्मणहस्तेषु दत्वा महामण्डपं[3] [4]प्रासादं च प्रदक्षिणीकृत्य पश्चिमे द्वारे प्राङ्मुखः स्थित्वा भूमिं ध्यायेत्—"ॐ चतुर्भुजां शुक्लवर्णां कूर्मपृष्ठो-

तदनन्तर सपत्नीक पुत्र-पौत्रादियुक्त यजमान, आचार्य और ऋत्विजों के साथ मंगलघोष बाजे आदि द्वारा तथा 'आ नो भद्रा' इत्यादि मन्त्रघोष से युक्त हो कलश हाथ में लेकर सुवासिनी स्त्रियों को आगे कर गणेश, अम्बिका, वरुणकलश, मातृपीठादियों से युक्त हो महामण्डप और प्रासादादि की प्रदक्षिणा कर पश्चिमद्वार पर प्राङ्मुख खड़ा होकर चतुर्भुजाम्, आगच्छ देवि, इन श्लोकों से ध्यान कर 'ॐ भूम्यै नमः' यों कहकर उद्धृतासि वरा-

१—प्रवेशसमये मण्डपालङ्करणमुक्तमिति सिद्धान्तशेखरे । पताकाध्वजसंयुक्तं पुष्पमालाविराजितम् । चूतपल्लवशोभाढ्यं वितानैरुपशोभितम् । विचित्रवस्त्रसंच्छन्नं तुल्यसाङ्गविभूषितम् । सफलं कदलीस्तम्भैः क्रमुकैर्नारिकेलकैः । फलैर्नानाविधैर्भक्ष्यैर्दर्पणैश्चामरैरपि । भूषितं मण्डपं कुर्याद्रत्नपुष्पस्रगुज्ज्वलम् । सर्वासामेव पताकानामादौ बन्धनमात्रं कृत्वा पूजासमये निवेदनं कुर्यादित्याहुः । २—मात्स्ये—मङ्गलशब्देन-भेरीणां निःस्नेवन च । शुक्लमाल्यांबरधरः शुक्लगन्धानुलेपनः । यजमानः सत्नीकः पुत्रपौत्रसमन्वितः । पश्चिमद्वारमण्डपम् । ३—"पश्चिमं द्वारमाश्रित्य प्रविशेद्यागमण्डपम् इत्यादिना मात्स्योक्तेः । प्रतिष्ठातिलकेऽपि । ४—"प्रासादस्य तु पूर्वेण ह्युत्तरेणऽथवा पुनः । दश द्वादश हस्तं वा मण्डपं कारयेच्छुभमिति मात्स्ये ।

हेण, इस मन्त्र से प्रणाम कर 'ब्रह्मणा निर्मिते' इससे तथा यमेन पूजिते, इसे अर्घ दे। तदनन्तर—गन्ध, पुष्प, धूप, दीप तथा नैवेद्यों से भूमिका पूजन कर 'उपचारानिमाम्' इससे पूजा को निवेदन कर प्रार्थना करे—नन्दे नन्दय॰

परिस्थिताम्। शङ्खपद्मधरां चक्रशूलहस्तां धरां भजे॥ पृथिवि:ब्रह्मदत्तासि काश्यपेनाभिवन्दिता॥ इति ध्यात्वा ॐ भूम्यै नमः—इत्युक्त्वा ॐ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। दंष्ट्राग्रैर्लीलया देवि यज्ञार्थं प्रणमाम्यहम्॥ इति प्रणम्य अर्घं दद्यात्—ॐ ब्रह्मणा निर्मिते देवि विष्णुना शङ्करेण च। पार्वत्या चैव गायत्र्या स्कन्दवैश्रवणेन च॥ यमेन पूजिते देवि धर्मस्य विजिगीषया। सौभाग्यं देहि पुत्रांश्च धनं रूपं च पूजिता॥ गृहाणार्घमिमं देवि सौभाग्यं च प्रयच्छ मे॥ ॐ भूम्यै नमः अर्घं समर्पयामि। ततो गन्धपुष्पधूपदीपनैवेद्यैर्भूमिं सम्पूज्य—ॐ उपचारानिमां तुभ्यं ददामि परमेश्वरि। भक्त्या गृहाण देवेशि त्वामहं शरणं गतः॥ इति जां निवेद्य प्रार्थयेत्—

ॐ नन्दे नन्दस्य वासिष्ठे वसुभिः प्रजया सह। जय भार्गवदायादे प्रजानां जयमावह॥ पूर्णे गिरिश दायादे पूर्णं कामं कुरुष्व मे। भद्रे काश्यपदायादे कुरु भद्रां मति मम॥ सर्वबीजसमायुक्ते सर्वा-

वासिष्ठे, पूर्णे गिरिशदायादे, सर्वबीजसमायुक्ते, पूजिते परमाचार्यैः अव्यक्ते चाहते तथा देशस्वामी इनसे प्रार्थना करे।

प्र०

१५६

रत्नौषधीवृते । रुचिरे नन्दने नन्दे वासिष्ठे रम्यतामिह ॥ प्रजापतिसुते देवि चतुरस्रे महीयसि । सुभगे सुव्रते देवि यज्ञे भार्गवि रम्यताम् । देशस्वामि पुरस्वामि गृहस्वामि परिग्रहे । मनुष्यधन-हस्त्यश्वपशुवृद्धिकरो भव ॥ पूजिते परमाचार्यैर्गन्धमाल्यैरलङ्कृते । भवभूतिकरी देवि यज्ञे काश्यपि रम्यताम् ॥ अव्यक्ते चाहते पूर्णे शुभे चाङ्गिरसः सुरे । इष्टदे त्वं प्रयच्छेष्टं त्वामहं शरणं गतः ॥ आगच्छ देवि कल्याणि वसुधे लोकधारिणि । इति । ततो यजमानः सर्त्विक् पश्चिमद्वारेण पत्नीं च दक्षिणद्वारेण मण्डपं प्रविशेत् । तत्राग्न्यायतनं प्रदक्षिणीकृत्य आग्नेय्यां गोधूमराशौ कुम्भं स्थापयेत् । अत्र होमद्रव्यानयनं पूर्वद्वारेण, दानद्रव्यानयनं दक्षिणद्वारेण, पूजार्थद्रव्यानयनमुत्तरद्वारेण कर्तव्यम् । (अत्र प्रतिष्ठादर्शे प्रतिष्ठाभास्करे च विशेषः—तद्यथा ईशान्यां विधना कलशं संस्थाप्य तत्र पूर्णपात्रे अष्टदले मध्ये सूर्यं पूर्वाद्यष्टदलेषु सोमादीन् संपूज्य पूजिताकलशेन मण्डपप्रासादयोः परितः धारां दद्यादिति । ततः कृताञ्जलिः स्वस्ति न—इति मन्त्रं पठित्वा—ॐ देवा आयान्तु यातुधाना अपयान्तु विष्णो देवयजनं रक्षस्व इति वदेत् । ततः साचार्यो यजमानोऽग्न्यायतनान्

प्र०

१५७

तदनन्तर ऋत्विजों के साथ पश्चिमद्वार से और पत्नी दक्षिणद्वार से मण्डप का प्रवेश करे । तदनन्तर अग्न्यायतन की

प्रदक्षिणा कर अग्निकोण में गोधूम गेहूँ की राशि पर कुम्भ का स्थापन करे ।

इन पौराणिक श्लोकों द्वारा क्रम से पूर्व-दिशा, दक्षिण-दिशा, पश्चिम-दिशा और उत्तर-दिशा में बायें हाथ में

महावेदेर्वा पश्चिमत उपविश्य—ॐ इयंव्वेदिः परोऽअन्तः पृथिव्या ऽअयं यज्ञो भुवनस्य नाभिः ॥ अयर्ठ० सोमो व्वृष्णोऽ अश्वस्य रेतो ब्ब्रह्मायं व्वाचः परमं व्व्योम ॥ १ ॥ ॐ सुभूः स्वयंभूः प्रथमोन्तर्म्महत्यर्णवे । दधेह गर्भमृत्वियं यतो जातः प्रजापतिः ॥ २ ॥ इति पठेत् ।

ततो वामहस्ते गौरसर्षपान् लाजांश्च गृहीत्वा—ॐ रक्षोहणंव्वलगहनंव्वैष्णवीमिदमहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मेनिष्ट्यो यममात्यो निचखानेदमहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मेसमानो यमसमानो निचखानेदमहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मेसबन्धुर्य्यमसबन्धुर्न्निचखानेदमहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मेसजातो यमसजातो निचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥ १ ॥ रक्षोहणो वोव्वलगहनः प्प्रोक्षामिव्वैष्णवान्रक्षोहणोव्वोव्वलगहनोवनयामिव्वैष्णवान् रक्षोहणौ वोव्वलगहनोऽवस्तृणामिव्वैष्णवान्न क्षोहणौ वांव्वलगहना ऽउपदधामिव्वैष्णवी रक्षोहणौ वांव्वलगहनौ पर्य्यूहामिव्वैष्णवीव्वैष्णवमसिव्वैष्णवास्स्थ ॥ २ ॥ रक्षसां

स्थित पीलीसरसों का प्रक्षेप करे । इस प्रतिष्ठाकर्म में यजमान द्वारा वृत (जो आचार्य हूँ) आचार्य कर्म करता हूँ ।

ऐसा कहकर अपने बाये हाथ से सफेद सरसों तथा लावा को लेकर—'रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीम्, (यजु. अ. ५।२३)

‘रक्षोहणो वा वलगहनः प्रोक्षामि’ (य. अ. ५-२५) रक्षसां भागः, (य. अ. ६।१६) और ‘रक्षोहा विश्वचर्षणिः’ (य. अ. २६।२६) इन वैदिक तथा लौकिक मन्त्रों से जो भूत यज्ञीय भूमि में स्थित हैं, वे हट जायँ। जो भूत विघ्न करने

प्र०

भागोऽसिनिरस्तꣳ रक्षꣳऽ इदमहꣳ रक्षोभितिष्ठामीदमहꣳ रक्षोऽवबाधऽइदमहꣳरक्षोऽधमन्तमोन्यामि ॥ घृतेनं द्यावापृथिवीप्रोर्णुवाथांव्वायोव्वेस्तोकानामग्निराज्ज्यस्य व्वेतु स्वाहास्वाहाकृतेऽऊर्द्ध्वं नभसम्मारुतङ्गच्छतम् ॥ ३ ॥ रक्षोहा व्विश्वचर्षणिरभियोंहते ॥ द्रुद्रोणंसधस्थमासंदत् ॥ ४ ॥

१६१

कृणुष्ष्वपाजः प्रसितिन्न पृथ्वीं ग्याहि राजेवामवाँऽ२॥इभेन ॥ तृष्ष्वीमनु प्रसितिन्न्द्रूणानोस्तासि व्विद्ध्यंरक्षसस्तपिष्ठैः॥ ५॥तवंभ्रमासंऽआशुया पतन्त्यनु स्पृशधृषता शोशुचानः॥ तपूंꣳष्यग्नेजुह्वा पतङ्गानसंन्दितो व्विसृज व्विष्वंगुल्काः ॥६॥ प्रतिस्पशो व्विसृज तूर्णितमो भवा पायुर्विशोऽअस्याऽअदब्धः॥ यो नो दूरेऽअघशꣳसो योऽअन्त्यग्ने मा किंष्टे व्यथिरादधर्षीत्॥७॥उदग्नेतिष्ठ प्रत्यातनुष्ष्व न्न्यमित्रों २॥ऽओषतातिग्ग्महेते॥यो नोऽअरातिꣳसमिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कम्॥८॥ ऊर्ध्वोभव प्रतिविध्या ध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्न्यग्ने॥ अवं स्थिरातनुहि यातुजूनां जामिमजामि

१६१

वाले हैं वे शिवजी की आज्ञा से नष्ट हों। सम्पूर्ण दिशाओं में जो पिशाच आदि भूत हैं वे भाग जांय। सबों के अविरोध-

से प्रतिष्ठा यज्ञ का आरम्भ करता हूँ। जो यहाँ पर भूत आदि स्थान बनाकर स्थित हैं वे इस स्थान (जगह) को छोड़कर जहाँ रुचिकर हो जायँ।

प्रमृणोहि शत्रून् ॥ अग्नेष्ट्वा तेजसा सादयामि ॥६॥ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ १ ॥ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाः सर्वतोदिशम्। सर्वेषामविरोधेन प्रतिष्ठा च समारभे ॥ २ ॥ यदत्र संस्थितं भूतं स्थानमाश्रित्य सर्वदा। स्थानं त्यक्त्वा तु तत्सर्वं यत्रस्थं तत्र गच्छतु ॥ ३ ॥ भूतानि राक्षसा वापि येऽत्र तिष्ठन्ति केचन। ते सर्वेऽप्यपगच्छन्तु शान्तिकं तु करोम्यहम् ॥४॥ इति मन्त्रैः सर्षपान् विकिरेत्। तत एकस्मिन्पात्रे पञ्चगव्यं सम्पादयेत्—

* अथ पञ्चगव्यादिकरणम् *

तत्सवितुः—इति गोमूत्रम्। गन्धद्वाराम्—इति गोमयम्, ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे ॥ इति पयः। दधिक्राव्ण इति दधि। ॐ तेजोऽसि शुक्रमस्यमृ

तदनन्तर—एक पात्र में पञ्चगव्य का सम्पादन करें। उसका क्रम यों है—

'गायत्री मन्त्र को पढ़कर गोमूत्र, 'गन्धद्वाराम्' से गोबर, 'आप्यायस्व' से दूध, 'दधिक्राव्णः' से दही, तेजोऽसि' से घृत

और 'देवस्य त्वा' से कुशोदक को एक पात्र में प्रमाण के द्वारा रख 'ॐ' इस प्रणव द्वारा किसी भी यज्ञिय प्रादेशमात्र लकड़ी से सबको मिलाकर 'आपो हिष्ठा' इन तीन मन्त्रों से कुशाओं द्वारा कर्म भूमि (जिस स्थान पर यज्ञादि करना हो) उसका प्रोक्षण करे।

तंमसिधामनामासिप्रियन्देवानामनाधृष्टन्देवयजंमसि ॥ इत्याज्यम्। 'ॐ देवस्यं त्वा सवितुःप्रंसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यांपूष्णोहस्ताभ्याम्। इति कुशोदकमादाय 'ॐ' इति प्रणवेन यज्ञकाष्ठेनालोड्य ॐ आपो हिष्ठा मंयोभुवस्तानंऽऊर्जे दंधातन ॥ महे रणाय चक्षसे ॥ योवंः शिवतंमोरसस्तस्यं भाजयतेह नंः ॥ उशतीरिव मातरंः ॥ तस्माऽ अरंङ्गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ ॥ आ पो जनयंथा च नः ॥ त्रिभिर्मन्त्रैः कुशैः कर्मभूमिं प्रोक्षेत्।

प्र० १६४

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(अथ नैर्ऋत्यकोणे मण्डपाङ्गवास्तुपूजनम्)

प्र० २३६

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

१६२

वास्तुचक्र—

पूर्व

आतारगिन्द्रम्- इन्द्राय नमः

यदक्रन्द- स्कन्दाय नमः

(लाल)

अग्ने रुद्रा- अग्नये नमः

अदित्यै नमः (पीत)

नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये- सर्पेभ्यो नमः

सोमर्ई राजानम्- सोमाय नमः

भल्लाटाय नमः

अवतत्य धनुष्ट्वम्- मुख्याय नमः (लाल)

अदितिर्द्यौ- अदितये नमः

यदद्यसूर- अर्यम्णे नमः

४५

ब्रह्म जज्ञानम्

ब्रह्मणे नमः

(पीत)

मित्रस्य चर्षणी- मित्राय नमः (सफेद)

पश्चिम

स्योना पृथि-

(लाल)

प्र०

(१) ६४, ८१, ४९, १००, १९६, १४४, १६९, १०००; आदि पदके वास्तुभेद कामनापरक हैं। (३) जो वास्तु पूजा नहीं करता वह सात जन्म कुण्ठी होकर नरक में जाता है। जो सभक्ति वास्तु पूजन करता है वह सौ वर्ष तक जीता है तथा अन्त में एक साल तक स्वर्गमें निवास करता है। प्रासाद, घर, तलाब, कूप के खोदने पर वन के निर्माण में, जीर्णोद्धार में, नगर निर्माण में, यज्ञ-महायज्ञों में, कार्यों की समाप्ति में, राजघर में, धर्मशाला आदि के प्रारंभ में वास्तु पूजन करे। (४) राजा जनक ने याज्ञवल्क्य से पूछा था यज्ञ में कुछ भी पय आदि की व्यवस्था न हो सके तो-'सत्यवदनरूप जो धर्म है उसे ही श्रद्धारूप अग्नि में हवन करने से यज्ञका फल मिलता है। (२) क्षत्रियों को यज्ञ में वरण द्वारा सम्मिलित की जो प्रथा कहीं कहीं चल पड़ी है। वह शास्त्र मूलक नहीं है। उससे यज्ञकी समृद्धिनहीं होती है। शतपथ। (३) सर्वौषधि, सप्तमृत्तिका और पञ्चगव्य, पञ्चपल्लव समभाग ग्रहण करना लिखा मिलता हैं या चतुर्थांश। (शारदातिलक)

१६३

१०

अथ सपत्नीको यजमानः—गुरुर्मण्डपनैर्ऋत्ये हस्तमात्रे वेदीसमीपे आगत्य स्वासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य—"अस्मिन् कर्मणि कुण्डमण्डपादिषु हीनाधिकाङ्गादिवास्तुदोषसूचितसर्वारिष्टनिवर्हणार्थं सप्रसादविष्णुप्रतिअङ्गभूतं मण्डपाङ्गवास्तुपूजनं करिष्ये । इति सङ्कल्प्य[१]—"ॐ विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वतः । मण्डपेऽत्रावतिष्ठन्तु आयुर्बलकराः सदा ॥ इति मन्त्रावृत्त्या आग्नेयादितश्चतुरः शङ्कून् संरोप्य ततः—ॐ अग्निभ्याप्यथ-सर्पेभ्यो ये चान्ये तान् समाश्रिताः । बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् १ ॐ नैर्ऋत्याधिपतिश्चैव नैर्ऋत्यां तान् समाश्रिताः । बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् २ ॐ वायव्याधिपतिश्चैव वायव्यां ये च राक्षसाः । बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् ३ ॐ रुद्रेभ्यश्चैव सर्पेभ्यो ये चान्ये तान् समाश्रिताः । बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् ४ ॐ इतिमन्त्रैस्तत्क्रमेण तत्पार्श्वे माषभक्तबलिं[२] दद्यात् । ततो वेद्युपरिवस्त्रे सुवर्णशलाकया प्रागग्रा उदक्संस्था द्व्यङ्गुलान्तरा नव रेखाः कुर्यादेभिर्मन्त्रैः—तद्यथा—ॐ लक्ष्म्यै नमः १ ॐ यशोवत्यै नमः २ ॐ कान्तायै

१६६

प्र०

१६७

१—अयं सङ्कल्प आदर्शरत्नमालाभास्करहेमाद्रिषूक्तः । २—पुरश्चर्यार्णवे—माषभक्तं तथा लाजा धानाः सक्तव एव च । पृथुकास्तण्डुलावापि खिन्ना व्रीहय एव वा । आमिक्षा वा यवागूर्वा कृसरं पायसं तथा । आज्याभिषिक्तं दधि वा पक्वान्नानि वा ॥ अधिकारिविशेषेण दातुं शक्यो बलिस्त्वयम् ।

नमः २ ॐ सुप्रियायै नमः ४ ॐ विमलायै नमः ५ ॐ शिवायै नमः ६ ॐ सुभगायै नमः ७ ॐ सुमत्यै नमः ८ ॐ इडायै ९ तत उदगग्राः प्राक्संस्था नवरेखाकार्याः—ॐ धान्यायै नमः १ ॐ प्राणाय नमः २ ॐ विशालायै नमः ३ ॐ स्थिरायै नमः ४ ॐ भद्रायै नमः ५ ॐ जयायै नमः ६ ॐ निशायै नमः ७ ॐ विरजायै नमः ८ ॐ विभवायै नमः ९ (अत्र–ॐ रेखादिभ्यो नमः–इति पञ्चोपचारैः पूजयेदिति प्रतिष्ठासरणौ विशेषः।) ततो मध्यपदचतुष्टयमेकीकृत्य कोणेषु रेखा दत्वा वक्ष्यमाणवर्णैः पदानि वर्णयित्वा [1]देवानावाहयेत्[2]।

३—वास्तुपूजनं वेदमन्त्रैर्नाममन्त्रैः समुच्चितैर्वा प्रणवव्याहृतियुतैः कार्यम्। शिख्यादिपञ्चचत्वारिंशद्देवांस्तत्र पूजयेत्। "वेदमन्त्रैर्नाममन्त्रैः प्रणवव्याहृतिभिस्तथा" वि० क० प्र० प्र० ५।१०।६। इति वचनात्। ४—अर्चनं च पदार्थानुसमयेनैवेति रुद्रपद्धतौ नारायणभट्टाः, ग्रहपूजायां शान्तिरत्ने च। पदार्थानुसमयो नाम—सर्वेषामेकैकपदार्थसमर्पणानन्तरं पदार्थान्तरार्पणम्। न तु सर्वपदार्थार्पणमेकस्य "सर्वेषामेकतन्त्रेण शिख्यादीनां विशेषतः। पूजनं प्रकर्तव्यं पदार्थोऽनुप्रकीर्तितः। एकैकस्यावाहनादि पुष्पाञ्जल्यन्तपूजनम् समाप्य च ततोऽन्यस्य इति काण्डोऽनुप्रकीर्तितः॥

१—शिखी चैवाथ पर्जन्यो जयन्तः कुशिलायुधः। सूर्यः सत्यो भृशश्चैव आकाशो वायुरेव च॥ पूषा च वितथश्चैव गृहक्षतयमावुभौ। गन्धर्वो भृङ्गराजश्च मृगः पितृगणस्तथा॥ दौवारिकोऽथ सुग्रीवः पुष्पदन्तो जलाधिपः। असुरः शोषपापौ च रोगोऽहिर्मुख्य एव च॥ सोमसर्पौ च अदितिश्चादितिस्तथा। बहिर्द्वात्रिंशदेते तु तदन्तस्तु ततः शृणु॥ आपश्चैवाथ सावित्रो जयो रुद्रस्तथैव च। मध्ये नवपदो ब्रह्मा तस्याष्टौ च समीपगाः॥ अर्यमा सविता चैव विवस्वान्विबुधाधिपः। मित्रोऽथ राजयक्ष्मा च तथा पृथ्वीधरः क्रमात्॥ अष्टमश्चापवत्सश्च परितो ब्रह्मणः स्मृता॥ इति। तत्रैव—ब्रह्माचतुष्पदस्तत्र कोणेष्वष्टपदास्तथा। बहिःकोणे तु चाष्टौ तु सार्द्धश्चोभयसंस्थिता॥ विंशतिर्द्विपदाश्चैव चतुःषष्टिपदे स्मृता॥ इति। अत्राश्वलायनपरिशिष्टे आदौ वास्तुपुरुषमावाह्य तच्छरीरे शिख्याद्यावाहनमुक्तं तदाश्वलायनैरनुष्ठेयमस्माभिस्तु मात्स्याग्नेयशारदातिलकोक्तः क्रम आश्रीयते।

बाह्यपंक्तौ ईशानपदस्य दक्षिणेऽर्द्धपदे प्रथमकोष्ठे रक्तवर्णे वास्तोः शिरसि—समाह्वयन्तं शिखिनं महोज्वलं मेषाधिरूढं सुरराज वन्दितम् । त्रिशूलहस्तं वरदे महेशं भजामि देवं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमसे हूमहे व्वयम् ॥ पूषा नो यथा व्वेदसामसंद्वृधेरक्षिता पायुरब्धः स्वस्तये ॥ शिखिने नमः शिखिनमावाहयामि स्थापयामि । तद्दक्षिणे सार्धपदे पीतवर्णे द्वितीयकोष्ठके दक्षिणनेत्रे—एह्येहि जीमूतसुधाप्रमृष्टे चराचरैः सेवितधर्ममूर्ते ।

२—अथो गुरुः प्रासादान्तरीशान्यां नैर्ऋत्यां वा हस्तमितवेद्यां हस्तोच्छ्रितायां त्रिवप्रायामवप्रायां वा चतुःषष्टिपद वास्तुपीठं कृत्वा—"अस्य वास्तोः शुभतासिद्ध्यर्थममुकदेवप्रतिष्ठाङ्गभूतं वास्तुदेवतास्थापन—पूजनं करिष्ये ।' 'विशन्तु भूतले नागा" इत्यारम्य पायसबलिदानान्तं मण्डपवास्तुवत्कुर्यात् । सर्वेभ्यः काञ्चनं दद्याद् ब्रह्मणे गां पयस्विनीम्—इति विश्वकर्मप्रकाश-प्रतिष्ठाकौमुद्युक्तेः । ॐ शिखिने इदं सुवर्णं नमः—इत्यादिप्रकारेण सुवर्णबलिं आपवत्सान्तेभ्यो दत्वा "ॐ ब्रह्मणे एषा पयस्विनी गौर्नमः" इति ब्रह्मणे गां दत्वा चरक्यादिभ्योऽपि सुवर्णं दद्यादिति । इदं कृताकृतं मयूखादावनुक्तत्वात् । ततः स्वस्वकुण्डे वायव्ये उत्तरे ईशान्यां वा सम्पातकलशस्थापन विधिना कुर्यात् । (मूर्ति-मूर्तिपाद्यावाहनसमये वा इदं कलशस्थापनं कार्यम्) अथ जापका आकर्मसमाप्तिस्वस्वशाखीयपूर्वोक्तशान्तिकाध्यायजप कुर्युः । द्वारपालाश्च स्वशाखीयश्रीसूक्तादिपाठं कुर्युः । ततो ब्रह्मोपवेशनाद्याज्यभागान्तं कृत्व यजमानो दक्षिणद्वारपश्चिमे उदङ्मुख उपविश्य द्रव्यत्यागं कुर्यात् । अस्मिन् कर्मणि इमानि उपकल्पितानि हवनीय द्रव्याणि या या यक्ष्यमाणदेवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तानि न मम । यथा दैवैतानि सन्तु । ततो गणपत्याहुतिः । ततः "ॐ पठध्वम्" इति द्वारपान, "ॐ यजध्वम्" इति होतॄन्, "ॐ उत्कृष्टमन्त्रजाप्येन निष्टध्वम्"इति जापकान्, प्रेषयेत् । जापकैर्द्वारपैश्च स्वस्वजपे क्रियमाणे होमः कार्यः। आदौ गणपत्याहुतिः । ततो वास्तुदेवता होमः । ततो ग्रहस्थापनं ततो ग्रहहोम इति मयूखक्रमः । आधुनिकास्तु ग्रहहोमं कृत्वा वास्तुहोममिच्छन्ति तदा तेषां स्थापनमपि अग्निस्थापनोत्तरं वास्तोः प्रागेव कर्तव्यम् ।

प्र०

पवित्रदेवेश गृहाण पूजां ममाध्वरं पाहि भगन्नमस्ते ॥ ॐ शन्नो व्वातः पवताᳪ शन्नस्तपतु सूर्य्यः ॥ शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्ज्जन्यो ऽअभिवर्षतु ॥ पर्जन्याय० पर्जन्यमावा० स्था० । तद्दक्षिणे द्विपदे पीतवर्णे तृतीयकोष्ठके दक्षिणश्रोत्रे—एह्येहि देवेश जयन्तसूनो शच्याः सदा सर्वसुरैकसेव्य । पीठेऽत्र यज्ञेश गृहाण पूजां शिवाय नः पाहि भगवन्नमस्ते ॥ ॐ मर्म्माणि ते व्वर्मणा च्छादयामि सोमस्त्वाराजामृतेनानुवस्ताम् ॥ उरोर्व्वरीयो व्वरुणस्ते कृणोतु जयन्तन्त्वानु देवा मदन्तु ॥ जयन्ताय० जयन्तमा० । तद्दक्षिणे द्विपदे पीतवर्णे चतुर्थे दक्षिणांसे—एह्येहि वृत्रघ्न गजाधिरूढ सहस्रनेत्र त्रिदशैकराज । शचीपते शक्र सुरेश नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ आयात्विन्द्रो वस ऽउपन ऽइह स्तुतः सधमादस्तु शूरः ॥ व्वावृधानस्तविषीर्य्यस्य पूर्व्वीर्द्यौर्न्न क्षत्रमभि भूति पुष्यात् ॥ कुलिशायुधाय० कुलिशायुधमा० । तद्दक्षिणे द्विपदे रक्तवर्णे पञ्चमे दक्षिणबाहौ—समाह्वयन्तं द्विभुजं दिनेशं सप्ताश्ववाहं द्युमणिं ग्रहेशम् । सिन्दूरवर्णं प्रतिभावसंभवं भजामि सूर्यं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥ ॐ बण्महाँ ऽअसि सूर्य्य बडादित्य महाँ ऽअसि ॥ महस्ते सतो महिमा पनस्य तेऽद्धा देव महाँ ऽअसि ॥ सूर्याय० सूर्यमा० । तद्दक्षिणे द्विपदे शुक्लवर्णे षष्ठे दक्षिणबाहावेव—एह्येहि

१६६

१५

प्र

१६९

प्र०

सत्येश महामहेश दुष्टान्तकृत्स्वच्छसुधर्ममूर्ते । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां ममाध्वं पाहि भवन्नमस्ते ॥ ॐ व्रतेनं दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ॥ दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ॥ सत्याय० सत्यमा० । तद्दक्षिणे सार्द्धपदे कृष्णवर्णे सप्तमे दक्षिकूर्परे—समाह्वयन्तं द्विभुजं भृशं हि नीलोत्पलाभासविशालनेत्रम् । नीलाद्रिवर्णं प्रतिभावभासं भजामि देवं कुलवृद्धहेतोः ॥ ॐ आत्वाहार्षमन्तरंभूदध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः ॥ विशस्त्वा सर्व्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत् ॥ भृशाय० भृशमा० । तद्दक्षिणे अर्द्धपदे कृष्णवर्णे अष्टमे दक्षिणबाहौ—समाह्वयन्तं गगनं दिवौकसां निवासभूतं सुविनिर्मलं च । आरक्तहीनं रुचिरं पुराणं भजामि नाकं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥ ॐ यावाङ्कशा मधुमत्यश्विना सूनृतावती ॥ तया यज्ञं मिमिक्षतम् ॥ आकाशाय० आकाशमा० । तत्पश्चिमे अर्द्धपदे धूम्रवर्णे नवमे दक्षिणबाहावेव—धूम्राह्वयं गन्धवहं सुरम्यं मृगाधिरूढं त्रिदशैकवन्द्यम् । सुपूजकानन्दकरं पुराणं भजामि वायुं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥ ॐ वायो ये ते सहस्रिणोरथासस्तेभिरागहि ॥ नियुत्वान्सोमपीतये ॥ वायवे० वायुमा० । तत्पश्चिमे सार्द्धपदे रक्तवर्णे दशमे दक्षिणमणिबन्धे—एह्येहि पूषन् सुविचारदक्ष हयाधिरूढाखिलधर्ममूर्ते । पीठेऽत्र देवेश गृहाण

प्र०

१७०

१७०

पूजां शिवाय नः पाहि भवन्नमस्ते । ॐपूषन्तवव्रतेव्वयन्नरिष्येम कदाचन । स्तोतारस्त ऽइह स्मसि ॥ पूष्णे० पूषणमा० । तत्पश्चिमे द्विपदे शुक्लवर्णे एकादशे दक्षिणपार्श्वे—समाह्वयन्तं वितथं विशालं सुपूजकानन्दकरं वरेण्यम् । त्रिशूलहस्तं मकराधिरूढं भजामि देवं कमलायताक्षम् ॥ ॐतत्सूर्य्यस्य देवत्वन्तन्महित्वं मद्ध्या कर्त्तोर्विततठं० सञ्जभार ॥ यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्रीर्वासस्तनुते सिमस्मै ॥ वितथाय० वितथमा० । तत्पश्चिमे द्विपदे पीतवर्णे द्वादशे दक्षिणपार्श्वे एव—एह्येहि लोकेश्वरदिमूर्ते गृहक्षत त्वं कनकाद्रिरूपम् । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐअक्षन्नमीमदन्त ह्यव प्रिया ऽअधूषत ॥ अस्तोषत स्वभानवो व्विप्रा नविष्ठया मती योजान्न्विन्द्र ते हरी ॥ गृहक्षताय० गृहक्षतमा० । तत्पश्चिमे द्विपदे कृष्णवर्णे त्रयोदशे दक्षिणोरौ—एह्येहि दण्डायुध धर्मराज कालाञ्जनाभासविशालनेत्र । विशालवक्षःस्थलरौद्ररूपं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐयमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा ॥ स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे ॥ यमाय० ? यममा० । तत्पश्चिमे द्विपदे रक्तवर्णे चतुर्दशे दक्षिणजानौ—एह्येहि गन्धर्वसुरप्रियेश रक्तोत्पलाभाससुधात्ममूर्ते । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां ममाध्वरं पाहि भगन्नमस्ते ॥ ॐ गन्धर्व्वस्त्वा

प्र०
१७२

विश्वावसुः परिदधातु विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ऽईडितः ॥ इन्द्रस्य बाहुरसि दक्षिणो विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड ईडितः ॥ मित्रावरुणौ त्वोत्तरतः परिधत्तान्ध्रुवेण धर्म्मणा विश्वस्यारिष्ट्यै यजमानस्य परिधिरस्यग्निरिड इडितः॥ गन्धर्वाय० गन्धर्वमा०। तत्पश्चिमे सार्द्धपदे कृष्णवर्णे पञ्चदशे दक्षिणजङ्घायाम्—समाह्वयन्तं शिखिपृष्ठसंस्थं श्रीभृङ्गराजं जगतः शरण्यम् । खट्वाङ्गहस्तं वरदं जनेशं यजामि देवं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥ ॐसौरी बलाका शार्गः सृजयः शयाण्डकस्ते मैत्राः सरस्वत्यै शारिः पुरुषवाक्श्वाविद्भौमीशार्दूलोवृकः पृदाकुस्ते मन्न्यवे सरस्वते शुकः पुरुषवाक् ॥ भृङ्गराजाय० भृङ्गराजमा० । तत्पश्चिमे अर्द्धपदे पीते षोडशे दक्षिणस्फिचि—एह्येहि गोरोचनदिव्यमूर्ते मृगप्रकृष्टातिहरासुरारे । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां ममाध्वरं पाहि भवन्नमस्ते ॥ ॐ मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावतऽआजगन्था परस्याः ॥ सृकꣳ सꣳशाय पविमिन्द्र तिग्मं विशत्रून्ताढि विमृधो नुदस्व ॥ मृगाय० मृगमा० । तदुत्तरे अर्द्धपदे रक्ते सप्तदशे पादयोः—समाह्वयान् दिव्यपतून् कुलेशान् रक्तोत्पलाभानिह रक्तनेत्रान् । सुरक्तमाल्याम्बरभूषितांश्च नमामि पीठे कुलवृद्धिहेतोः ॥ ॐउशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः

प्र०
१७२

सर्मिधीमहि॥ उशन्नुशत ऽआवहपितृन्हविषे ऽअत्तवे ॥ पितृगणेभ्यो० पितृगणान् आवा०। तदुत्तरे सार्द्धपदे रक्ते अष्टादशे वामस्फिचि—एह्येहि दौवारिदण्डपाणे विशालपङ्केरुहलोचनेत्र। पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां शिवाय नः पाहि भवन्नमस्ते ॥ ॐ द्वेविरूपे चरतः स्वर्थे ऽअन्यान्या व्वत्समुपधापयेते ॥ हरिरन्यस्यां भवति स्वधावाञ्छुक्रो ऽअन्यस्यां ददृशे सुवर्चाः ॥ दौवारिकाय० दौवारिकमा०। तदुत्तरे द्विपदे शुक्ले एकोनविंशे वामजङ्घायाम्—एह्येहि सुग्रीव सुरेशपूज्य दशाश्ववाहविगुणात्ममूर्ते। पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां मनोरमां त्वं भगवन्नमस्ते ॥ ॐ नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवं० रुद्रा ऽउपश्रिताः ॥ तेषां सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्नमसि ॥ सुग्रीवाय० सुग्रीवमा०। तदुत्तरे द्विपदे रक्ते विंशे वामजानौ—एह्येहि विघ्नाधिपते सुरेन्द्र ब्रह्मादिदेवैरभिवन्द्यपाद। देवेश विद्यालय पुष्पदन्त गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ नमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्व्रातेभ्यो व्व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमः ॥ पुष्पदन्ताय० पुष्पदन्तमा०। तदुत्तरे द्विपदे शुक्ले एकविंशे वामोरौ—एह्येहि लोकेश्वर पाशपाणे यादोगणैर्वन्दितपादपद्म ॥ पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां पाहि

प्र०

१७४

त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ॥ ॐइमम्मे व्वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय ॥ त्वामवस्युराचके ॥ वरुणाय० वरुणमा० । तदुत्तरे द्विपदे पीते द्वाविंशे वामपार्श्वे—एह्येहि देवेश जगत्प्रताप महोग्ररूपासुरविश्वमूर्ते । महाबलः खड्गगदास्त्रपाणे पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ॥ ॐबमश्विना नमुचेरासुरादधि सरस्वत्यसुनो दिन्द्रियाय ॥ इमन्तरठं० शुक्रम्मधुमन्तमिन्दुठं० सोमठं० राजानमिह भक्षयामि ॥ असुराय० असुरमा० । तदुत्तरे सार्द्धपदे कृष्णे त्रयोविंशे वामपार्श्वे एव—एह्येहि कीला बलिलीढ विश्वयज्ञेऽत्र देवर्षभसंघसेव्य । गृहाण पूजां विधिना प्रदत्तां शोषे सुदक्षाय नमोऽस्तु शोष ॥ ॐशन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये ॥ शं य्योरभिस्रवन्तु नः ॥ शोषाय०शोषमा० । तदुत्तरे अर्द्धपदे पीते चतुर्विंशे वाममणिबन्धे—एहेति पापेन सदा विजेन देवासुराणां सचराचराणाम् । मां पाहि नित्यं सकलत्र पुत्रं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐएतत्ते रुद्राऽवसन्तेन परो मूजवतोऽतीहि ॥ अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासा ऽअहिंठं० सन्नः शिवोतीहि ॥ पापाय० पापमा० तत्पूर्वे अर्द्धपदे रक्ते पञ्चविंशे वामबाहौ—एह्येहि रोगाधिपतेऽमरेश नानाविधैश्वर्यहयादिमुक्त । ब्रह्मादिदेवैरभिवन्दनीय गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐद्रापेऽअन्धसस्पते दरिन्द्र नीललोहित ॥

प्र०

१७४

५० आसां प्रजानां मेषां पशूनाम्माभेर्म्मा रोड्मो च नः किञ्चनाममत् ।। रोगाय० रोगमा० । तत्पूर्वे सार्द्धपदे रक्ते षड्विंशे बामबाहावेव—समाह्वयन्तं फणिराजमग्र्यं नानाफणामण्डलराजमानम् । भक्तैकगम्यं जनताशरण्यं यजाम्यहं नः स्वकुलाभिवृद्ध्यै ।। ॐअहिंरिव भोगैःपर्य्यैतिबाहुञ्ज्याया हेतिम्पंरिबाधमानः ।। हस्तघ्नो व्विश्वा व्वयुनानि व्विद्वान्पुमान्पुमांᳬ सम्परि पातु व्विश्वतः ।। अहये० अहिमावा० । तत्पूर्वे द्विपदे रक्ते सप्तविंशे—आवाहयेऽहं सुरदेवसेवितं जीमूतसंकाशमुमाधिनाथम् । मुख्याभिधं देवमिहार्थताद्यैः पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ।। ॐअवतत्य धनुष्ट्वᳬ सहस्राक्ष शतेषुधे ।। निशीर्य्यशल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव ।। मुख्याय० मुख्यमावा० । तत्पूर्वे द्विपदे कृष्णे अष्टाविंशे वामप्रवाहौ—एह्येहि भल्लाटशशाङ्कमूर्त्ते सुरासुरैरचितपादपद्म । देदीप्यमानोप्सरसां गणेन गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ।। ॐइमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतीः ।। यथा शमसद्द्विपदे चतुष्पदे व्विश्वं पुष्टङ्ग्रामे ऽअस्मिन्ननातुरम् ।। भल्लाटाय० भल्लाटमावा० । तत्पूर्वे द्विपदे शुक्ले ऊनत्रिंशे वामप्रबाहावेव—एह्येहि ताराधिपते सुरेश श्वेतोत्पलाभाससुधाकरेश । पीठेऽत्र देवश गृहाण पूजां पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ।। ॐसोमᳬ राजानम-

प० १७५ १७५

वसे ग्निमन्न्वारंभामहे ॥ आदित्यान्विष्णुर्ँ० सूर्य्यम्ब्रह्माणञ्च बृहस्पतिर्ँ स्वाहा ॥ सोमाय० सोममा० । तत्पूर्वे द्विपदे कृष्णे त्रिंशे वामांसे—आगच्छतागच्छत सर्पदेवाः संसारभीतिप्रमुखा वरेण्याः । धराधरा रत्नविभूषिताश्च गृहीत पूजां वरदा नमो वः ॥ ॐनमोऽस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु ॥ ये ऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः ॥ सर्पेभ्यो० सर्पान्० आ० । तत्पूर्वे सार्द्धपदे पीते एकत्रिंशे वामश्रोत्रे—एह्येहि मातरदिते शुभप्रदे यज्ञाधिपे सर्वजगत्प्रिये शुभे । सुरप्रिये नो भव विश्वधात्रि यजामि देवीं प्रकृतिं पुराणीम् ॥ ॐइड ऽएह्यदित ऽएहि काम्म्या ऽएत ॥ मयि वः कामधरणम्भूयात् ॥ अदित्यै० । अदितिमा० । तत्पूर्वे अर्द्धपदे पीते द्वात्रिंशे वामनेत्रे—एह्येहि देवि त्वमिहात्रयज्ञे प्रसीद मातर्दमनुजान्वयस्थे । दिते ! महामोहकरी त्वमस्मान्पाहीन्द्रवन्दे प्रणता वयं ते ॥ ॐ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्म्माता स पिता स पुत्रः ॥ विश्श्वे देवा ऽअदितिः पञ्चजना अदितिर्ज्जातमदितिर्ज्जनित्वम् ॥ दित्यै० दितिमा० । मध्यमपदेषु ईशानपदोत्तरार्द्धे पदे शुक्ले—त्रयस्त्रिंशे मुखे तृतीयपङ्क्तिस्थे—समाह्वयाः श्वेतसुपावनेशीरापस्वरूपाः प्रबलप्रपन्नाः ॥ सुपाशहस्ता वरदा अपोऽत्र यजामि देवीः कुलवृद्धिः हेतोः ॥

ॐ अ॒प्स्वग्ग्ने॒ सधि॒ष्टव सौष॑धी॒रनु रुध्यसे ॥ गर्ब्भे॑ सञ्जा॑यसे॒ पुनः॑ ॥ अद्भ्यो० अप आवा० ।
आग्नेयपदोत्तरार्द्धे शुक्ले चतुस्त्रिंशे दक्षिणहस्ते तृतीयपङ्क्तिस्थे—समाह्वयं दिव्यमुदारकीर्ति
कलाकलाभिस्तु महाग्ररूपम् । सावित्रमग्र्यं सुविशालमूर्तिं यजामि देवं स्वकुलाभिवृद्ध्यै ॥
ॐ हस्त॑ऽ आधा॑यं सवि॒ताब्भ्र॒दब्भ्रि॑ठं० हि॒रण्य॑यीम् ॥ अग्ग्नेर्ज्ज्योति॑र्न्नि॒चाय्य॑ पृथि॒व्या ऽअद्ध्या
भ॑र॒दानु॑ष्टुभेन॒ च्छन्द॑सा ङ्गिर॒स्वत् ॥ सावित्राय० सावित्रमा० । नैर्ऋत्यपदोत्तरार्द्धे शुक्ले पञ्चत्रिंशे
मेढ्रे तृतीयपङ्क्तिस्थे—एह्येहि सर्वायुधशोभमानसुरासुराणां जयकृन्महोग्र । जयाभिदत्वं भव
नो जयाय नानाविधालङ्कृतिमन्नमस्ते ॥ अषा॑ढं यु॒त्सु पृत॑नासु॒ पप्रि॑ᳬं स्व॒र्षाम॒प्स्वां वृ॒जन॑स्य
गो॒पाम् ॥ भ॒रे॒षु॒जाᳬं सु॑क्षि॒तिᳬं सु॒श्रव॑सं॒ जय॑न्तं॒ त्वामनु॑मदेम सोम ॥ जयाय० जयमा० । वायव्य-
पदोत्तरार्द्धे रक्ते षट्त्रिंशे वामहस्ते तृतीयपङ्क्तिस्थे—एह्येहि सर्वज्ञ पिनाकपाणे सुरासुरैर्वन्दित-
पादपद्म । पीठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ नम॑स्ते रुद्र म॒न्यव॑ऽ उ॒तोत॒
ऽइष॑वे॒ नमः॑ ॥ बा॒हुभ्या॑मु॒त ते॒ नमः॑ ॥ रुद्राय० रुद्रमा० । पूर्वपदद्वये कृष्णे सप्तत्रिंशे दक्षिणस्तने
तृतीयपङ्क्तिस्थे—आवाहये अर्यमणं महेशं सुरासुरैरर्चितपादपद्मम् । नोवाम्बुजाभासमयेश गुण्यं

प्र० १७७

प्र० १७८

गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ यदद्य सूरऽ उदिते नागा मित्रो ऽग्रंर्य्यमा ॥ सुवाति सविता भर्गः ॥ अर्यम्णे० अर्यमणमा० । आग्नेयपदर्दाक्षणार्द्धे रक्ते अष्टत्रिंशे दक्षिणहस्ते तृतीय-पङ्क्तिस्थे—एह्येहि पीठे सवितर्दिनेश सप्ताश्वसंयुक्तरथाधिरूढ । रक्तोत्पलाभासविशालनेत्र गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ व्विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव ॥ यद्भद्रं तन्नऽ आसुव ॥ सवित्रे० सवितारमा० । तत् पश्चिमे पदद्वये शुक्ले ऊनचत्वारिंशे जठरे दक्षिणे तृतीयपङ्क्तिस्थे—एह्येहि रक्ताम्बर रक्तदेह सवैर्नसोनाशनरं गहर्तः । अरोग्यदातः सकलार्थनेत्रे विवस्वस्ते तुभ्यमहं नमामि ॥ ॐ व्विवस्वन्नादित्यैष तेसोमपीथस्तस्मिन्न्मत्स्व ॥ श्रदस्म्मै नरो व्वचसे दधातन यदाशीर्द्दा दम्पती व्वाममश्नुतः ॥ पुमान्पुत्त्रो जायते व्विन्दते व्वस्वधा व्विश्वाहारप एधते गृहे ॥ विवस्वते० विवस्वतमा० । नैर्ऋत्यपदपूर्वार्द्धे रक्ते चत्वारिंशे वृषणयोः तृतीयपङ्क्तिस्थे—आवाहयेऽहं विबुधाधिपं त्वां चतुर्दतं पर्वतसन्निभं प्रभुम् । गजाधिरूढं सकलाप्तिदोहं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ सबोधि सूरिर्म्मघवा व्वसुपते व्वसुदावन् ॥ युयोध्यस्म्मद्द्वेषाᳬंसि व्विश्वकर्म्मणे स्वाहा ॥ विबुधाधिपाय० विबुधाधिपमा० । उत्तरे पदद्वये शुक्ले एकचत्वारिंशे जठरे वामे तृतीयपङ्क्तिस्थे—

प्र०

१०६

एह्येहि रक्ताम्बरधारिमित्र सप्ताश्ववाहस्त्रिदशैकनाथ । श्वेतोत्पलाभास विशालनेत्र गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ मित्रस्य चर्षणीधृतोवो देवस्य सानसि । द्युम्नञ्चित्रश्रवस्तमम् मित्राय० मित्रमा० । वायव्यपददक्षिणार्द्धे रक्ते द्विचत्वारिंशे वामहस्ते तृतीयपङ्क्तिस्थे—एह्येहि सर्वायुध-शोभमान श्रीराजयक्ष्मन् त्रिगुणात्ममूर्ते । पाठेऽत्र देवेश गृहाण पूजां देवाधिदेवेश भगवन्नमस्ते ॥ ॐनाशयित्री बलासस्यार्शस ऽ उपचितामसि ॥ अथो शतस्य यक्ष्माणाम्पाकारोरसि नाशनी ॥ राजयक्ष्मणे० राजयक्ष्माणमा० । तत्प्राक्पदद्वये रक्ते—एह्येहि पृथ्वीधरशार्ङ्गपाणे उदारकीर्ते सुविशालमूर्ते । चतुर्भुजत्वामिह पूजयामि वरिष्ठदेवं स्वकुलाभिवृध्द्यै ॥ ॐ स्योना पृथिवी नो भवानृक्षरा निवेशनी ॥ यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥ पृथ्वीधराय० पृथ्वीधरमा० । तत्प्राग् ईशान-कोणदक्षिणार्धपदे एकपदे वा उरसि—एह्येहि यज्ञेश्वर आपत्सं महाबलस्त्वं प्रथितः सुरेश । मयूरवाट् त्रिदशैकवन्द्य गृहाण पूजां भगवन्नस्ते ॥ ॐआतें व्वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् ॥ अग्ग्ने त्वाङ्कामयागिरा ॥ आपवत्साय० आपवत्समा० । ततो मध्यपदचतुष्टये वास्तोः हृदये पीते—एह्येहि विप्रेन्द्र पितामहेश हंसाधिरूढ त्रिदिशैकवन्द्य । श्वेतोत्पलाभास कुशाब्जहस्त गृहाण पूजां

प्र०

१०७

भगवन्नमस्ते ॥ ॐ ब्रह्म यज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्वि सीमतः सुरुचोवेनऽ आवः ॥ स बुध्न्याऽउपमाऽ अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ब्रह्मणे० ब्रह्माणमा० ब्रह्मोत्तरे एह्येति पातालतलाधि-वासन् वास्तोष्पते स्वच्छ सुधर्ममूर्ते । गृहाधि देवेश परेश नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् स्वादेशोऽ अनमीवो भवानः । यस्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ वास्तोष्पतमे० वास्तोष्पतिमा० । ततो मण्डलाद्बहिः ईशान्यां धूम्रे-आवाहयेऽहं चरकीमिह त्वां सुरारताक्षी गुरुशङ्खधारिणीम् । ईशानकोणस्थितिमत्र कृत्य गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ॥ ॐ यन्ते देवी निर्ऋतिराबबन्ध पाशं ग्रीवास्वविचृत्यम् ॥ तन्ते विष्याम्यायुषोनमद्ध्यादथैतम्पितुमद्धि प्रसूतः ॥ नमोभूत्यैयेदंचकार ॥ चरक्यै० चरकीमा० । आग्नेय्यां रक्ते-एह्येहि दैत्ये मम वास्तुयज्ञे मार्जारतुल्याननहस्तजे त्वम् । चापासि खट्वाङ्गधरे विदारि गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ अक्षराजाय कितवं कृतायादिनवदर्शन्त्रेतायै कल्पिनंद्वापरायाधिकल्पिनं-मास्कन्दाय सभास्थाणुम्मृत्यवे गोव्यच्छमन्तकाय गोघातङ्क्षुधे यो गाविकृन्तन्तं भिक्षमाणऽ उपतिष्ठति दुष्कृताय चरकाचार्यं पाप्मने शैलगम् ॥ विदार्यै० विदारीमा० । नैर्ऋत्यां पीते—

प्र०

१८०

कर्ता आचमन, प्राणायाम आदि कर संकल्प करे। तदनन्तर 'विशन्तु भूतले' । इस मन्त्र से वेदी के नीचे अग्निकोण से शंकुका रोपण करे। फिर नैर्ऋत्यकोण, वायव्यकोण और ईशानकोण में क्रम से करे। फिर अग्निस्याप्यथ, नैर्ऋत्याधिपतिः,

एह्येहि दैत्येऽसुरसङ्घमुक्ते सुपूतने मे मखकर्मणि त्वम्। पाहि त्वमस्मान् सततं शिवाय गृहाण मेऽर्चां वरदे नमस्ते ॥ ॐ इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै पाजस्यन्दिशांजत्रवोऽदित्यै भसज्जीमूतान्हृदयौपशेनान्तरिक्षम्पुरीततानभंऽ उदर्येण चक्रवाकौ मतं स्नाभ्यान्दिवं व्वृक्काभ्याङ्गिरीन्न्प्लाशिभिरुपलान्प्लन्न्हाव्वल्मीकान्क्लोमभिर्ग्लौभिर्गुल्मान्न्हिराभिः स्रवन्ती ह्रदान्न्कुक्षिभ्यांऽसमुद्रमुदरेण व्वैश्वानरं भस्मना ॥ पूतनायै० पूतनामा० । वायव्यां कृष्णे—आवाहये त्वामध्वरचारुसिद्ध्यै पापे तथा राक्षसि धूम्रवर्णे । रक्तानने शस्त्रधरे महेशि गृहाण पूजां शुभदे नमस्ते ॥ ॐ यस्यास्ते घोरऽ आसञ्जुहोम्येषाम्बन्धानामवसर्ज्जनाय ॥ यान्त्वा जनो भूमिरिति प्रमन्दते निर्ऋतिन्त्वाहम्परिवेद व्विश्वतः ॥ पापराक्षस्यै० पापराक्षसीमा० । ततः पूर्वादिदिक्षु स्कन्दा-

वायव्याधिपतिः तथा ईशान्याधिपतिः—इन मन्त्रों से बलि दे। तदनन्तर वेदी पर सोने की शलाकासे प्रागग्र से दो अंगुल के मान में रेखा दे। लक्ष्मी, यशोवती कान्ता, सुप्रिया, विमला, शिवा, सुभगा, सुमति, इडा उदगग्र प्राक्संस्थ धान्या, प्राणा, विशाला, भद्रा, जया, निशा, विरजा और विभवा इन नौ का स्थापन करे।

वास्तु के शिरपर—तमीशानम्—इस मन्त्र से, शिखी का, शन्नो वातः—से पर्जन्य का मर्माणि ते-से जयन्तका, आयात्विन्द्रः—से कुलिशायुधका, वण्महाँऽ असि-से सूर्यका, व्रतेन दीक्षाम्—से सत्य का, आत्वाहार्षम्—से भृश का,

प्र०

दीन्स्थापयेत्। पूर्वे रक्ते—एह्येहि देवेशि षडानन त्वं कपर्दितेजोंऽशसमुद्भवो हि। मयूरवाहो जितकामदेवो गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ यदक्रन्दः प्रथमञ्जायमानऽ उद्यन्तन्त्समुद्राद्दुतवा पुरीषात् ॥ श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽ उपस्तुत्यम्महिजातन्तेऽ अर्व्वन् ॥ स्कन्दाय० स्कन्द०। दक्षिणे कृष्णे—आवाहयेऽन्नार्यमणं महेशं सुरासुरैरर्चितपादपद्मं। नीलाम्बुजाभास महेशकीर्ति गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ यदद्य सूरऽ उदिते नागा मित्रोऽ ऽअर्यमा ॥ सुवाति सविता भर्गः ॥ अर्यम्णे० अर्यमण०। पश्चिमे रक्ते—आवाहये त्वां प्रहरं च मुख्यं जृम्भायमाणं वरखड्ग-हस्तम्। प्रत्यग्दिशायां च सुरक्षणीयमत्राधिवासं कुरु जृम्भक त्वम् ॥ ॐ हिंकाराय स्वाहा हिंकृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहाऽवक्रन्दाय स्वाहा प्रोथते स्वाहा प्रप्रोथाय स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा वल्गते स्वाहा-

१८२

याताङ्कशा-से आकाशका, वायो ये ते-से वायुका, पूषन्तवव्रते—से पूषा का, तत्सूर्यस्य—से वितथ का, अक्षन्नमीमदन्त—से गृहक्षतका, यमाय त्वा से यमका, गन्धर्वस्त्वा—से गन्धर्वका, सौरीबलाका—से भृङ्गराज का, मृगो न भीमः—से

मृगका, उशन्तस्त्वा—से पितरों का, द्वे विरूपे—से दौवारिकका, वीलग्रीवा: शितिकण्ठादि—से सुग्रीव का, नमो गणेभ्य:—से पुष्पदन्तका, इमं मे—से वरुणका, यमश्विना—से असुर का, शन्नो देवी:—से शोषका एतत्ते—

प्र०

सीनाय स्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्रबुद्धाय स्वाहा विजृम्भमाणाय स्वाहा विचृत्ताय स्वाहा सठं० हानाय स्वाहोपस्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा प्रायणाय स्वाहा ॥ जृम्भकाय० जृम्भकमा० । उत्तरे पीते—आवाहये तं पिलिपिच्छिकं च मयूर-पिच्छानि विधारयन्तम् । वामे तु हस्ते धनुरादधानं बाणं दधानं त्वितरे तु हस्ते ॥ ॐ का स्विदासीत्पूर्वचित्तिः किᳬस्विदासीद् बृहद्वयः ॥ का स्विदासीत्पिलिप्पिला का स्विदा-सीत्पिशङ्गिला ॥ पिलिपिच्छाय० पिलिपिच्छ० । ततः पूर्वादिदिक्षु इन्द्रादीन् दशदिक्पालानावाह-येत् । पूर्वे पीते—एह्येहि सर्वामरसिद्धसाध्यैरभिष्टुतो वज्रधरामरेश । संवीज्यमानोऽप्सरसां गणेश रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रठं० हवे हवे सुहवठं० शूरमिन्द्रम् ॥ ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्रᳬस्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥ इन्द्राय० इन्द्र० । आग्नेये रक्ते—एह्येहि

१८३

से पापका, द्रापेऽ अन्धसस्पते—से रोगका, अहिरिव भोगैः—से अहिका, अवतत्य धनुष्ट्वम्—से मुख्यका, इमा

प्र० १८३

रुद्राय-से भल्लाट का, सोमर्ठ०, राजानम्—से सोमका, नमोऽस्तु सर्पेभ्यः—से सर्पों का, इडऽ एहि—से अदितिका, अदितिर्द्यौः—से दितिका, अप्स्वग्ने—से जल का, हस्तऽआधाय—से सावित्रका, अषाढं युत्सु—से जयका, नमस्ते—से

प्र० सर्वामर हव्यवाह मुनिप्रवीरैरभितोऽभिजुष्टम् । तेजोवतालोकगणेन साधं ममाध्वरं पाहि कवे नमस्ते ॥ ॐ त्वन्नोऽ अग्ने व्वरुणस्य व्विद्वान्देवस्य हेडोऽ अवयासिसीष्ठाः ॥ यजिष्ठो व्वह्नितमः शोशुचानो व्विश्वा द्वेषा‌ंसि प्रमुमुग्ध्यस्मत् ॥ अग्नये० अग्निं० । याम्ये कृष्णे—एह्येहि वैवस्वत धर्मराज सर्वामरैरर्चितधर्ममूर्ते । शुभाशुभानन्द शुचामधीश शिवाय नः पाहि भगवन्नमस्ते ॥ ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहा ॥ स्वाहा घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे ॥ यमाय० यममावा० । नैर्ऋत्ये नीले—एह्येहि रक्षोगणनायक त्वं विशालवेतालपिशाचसङ्घैः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते । ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ॥ अन्यमस्मदिच्छ सातऽ इत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ निर्ऋतये० निर्ऋतिं० । पश्चिमे श्वेते—एह्येहि यादोगणवारिधीनां गणेन पर्जन्य सहाप्सरोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मा-

रुद्रका, यदद्य—अर्यमाका, विश्वानि देव—से सविताका, विवस्वन्नादित्यै—से विवस्वान् का, सबोधि—से विबुधा-

धिपका, मित्रस्य चर्षणी—से मित्रका, नाशयित्री—से राजयक्ष्माका, स्योनापृथिवी—से पृथिवी का, आते—से

न्भगवन्नमस्ते ॥ ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा व्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ॥ अहेडमानो व्वरुणहबोध्युरुशꣳस मानऽ आयः प्रमोषीः ॥ वरुणाय० वरुणमा० । वायव्ये धूम्रे—एह्येहि यज्ञेश समीरण त्वं मृगाधिरूढः सह सिद्धसङ्घैः । प्राणस्वरूपिन्सुखतासहायः गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् । व्वायोऽ अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ वायवे० वायुमा० । उत्तरे श्वेते—एह्येहि यज्ञेश्वर यज्ञरक्षां विधत्स्व नक्षत्रगणेन सार्धम् । सर्वौषधीभिः पितृभिः सहैव गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ व्वयꣳ सोम व्व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः ॥ प्रजावन्तः सचेमहि ॥ सोमा० सोम० । ऐशान्यां श्वेते—एह्येहि यज्ञेश्वर नस्त्रिशूल कपालखट्वाङ्गधरेण साकम् । लोकेन यज्ञेश्वर यज्ञसिद्ध्यै गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ तमीशानं जगतस्तस्तुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहे व्वयम् ॥ पूषा नो यथा व्वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ईशानाय० ईशानमा० । ईशानेन्द्रयो-

आपत्रसका, ब्रह्मयज्ञानम्—से ब्रह्माका, वास्तोष्पते प्रति—से वास्तुपुरुषका, यन्ते देवी—से चरकोका, अक्षराजाय—से

विदारीका, इन्द्रस्य क्रोड—से पूतनाका, यस्यास्ते—से पापराकासीका आवाहन और स्थापन करे। तदनन्तर केवल

मध्ये ब्रह्मणि श्वेते—एह्येहि सर्वाधिपते सुरेन्द्र लोकेन सार्धं पितृदेवताभिः। सर्वस्य धातास्यमितप्रभावो विशाध्वरं नः सततं शिवाय ॥ ॐ अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ॥ यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ२॥ अवन्तु देवाः ॥ ब्रह्मणे० ब्रह्माण०। निर्ऋतिवरुणयोर्मध्ये अनन्तं कृष्णम्—एह्येहि पातालधरामरेन्द्र नागाङ्गनाकिन्नरगीयमानः। यक्षोरगेन्द्रामरलोकसार्धमनन्तरक्षाध्वरमस्मदीयम् ॥ ॐ स्योना पृथिवि नो भवान्नृक्षरानिवेशनि ॥ यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ॥ अनन्ताय० अनन्त०। इत्यावाह्य ॐ मनो जूतिरितिप्रतिष्ठाप्य आवाहनम्—समस्तप्रत्यूहसमुच्चयस्य विनाशकाः श्रीमदवास्तुदेवाः। आवाहनं वो वितनोमि भक्त्या शिख्यादिका भव्यकरा भवन्तु ॥ आसन-चित्रप्रभाभासुरमच्छशोभं मयार्पितं शोभितमासनं च। शिख्यादिका भव्यकरा भजन्तु भवन्तु मेऽभीष्टकराः सहाङ्गैः ॥ पाद्य-कस्तूरिकासुरभिचन्दनयुक्तमेलाचम्पालवङ्गघनसारसुवासितं च। पाद्यं ददामि जगदेकनिवास्तु-

पूर्वादिदिशा में—स्कन्द आदिदेवताओं का आवाहन तथा स्थापन करे—यदक्रन्दः—से स्कन्दका, यद्यस्सूर—से

प्र० १८६

अयमाका, हिङ्काराय—से जृंभकका, कास्विदासीत् से—पिलिपिच्छ का, । फिर पूर्वादिदिशाओं में दशदिक्पालों का

देवाः सदा सुखकराः प्रतिमानयन्तु ॥ अर्घ्य-सौजन्यसौख्य-जननीजननीजनानां येषां कृपैव वसुधावसुधारिणी मे । ते सर्वदेवगुणपूरितवास्तुदेवा अर्घं सुखेन विमलं मम धारयन्तु ॥ आचमनीय-जल-कङ्कोलपत्रहरिचन्दनपुष्पयुक्तमेलालवङ्गलवलीघनसारसारम् । दत्तं सदैव हृदये करुणाशयेऽस्मिन् देवा भजन्तुशुभमाचमनीयमम्भः ॥ पञ्चामृत-विमलगाङ्गजलेन युतं पयो घृतसितादधिसर्पिरुपान्वितम् । प्रियतरं भजतां परिगृह्णत यदि कृपा भवतां मयि सेवके ॥ शुद्धोदकस्नान-जले समादाय विचित्रपुष्पगुच्छानि नव्यानि निपातितानि । स्नानं विधेयं विबुधाः समन्तादागत्य युष्माभिरिहाङ्गणे मे ॥ वस्त्र-अनर्घ्यरत्नैरतिभासितानि चेतोहराण्यद्भुतप्रतिचिन्तितानि ॥ शुभानि वस्त्राणि निवेदितानि गृह्णन्तु हार्देन च वास्तुदेवाः ॥ यज्ञोपवीत—कौशेयसूत्रविहितं विमलं सुचारुवेदोक्तरीतिविहितं परिपावनं च । साङ्गा निवेदितमिदं लघुवास्तुदेवा यज्ञोपवीतमुररीक्रियतां प्रसन्नाः ॥ उपवस्त्र—त्रिविधातापविनाशविचक्षणाः परमभक्तियुतेन निवेदितम् । सुरनुता उपवस्त्रमिदं नवं सुरभितं

आवाहन और स्थापन करे—त्वन्नोऽ अग्ने से—अग्निका, यमाय त्वा—से यमका, असुन्वन्तमयज—से निर्ऋतिका,

तत्त्वा यामि—से वरुणका, आ नो नियुद्भिः—से वायुका, वयर्ठ० सोम—से सोमका, तमीशानम्—से ईशानका,

परिगृह्णत मेऽधुना ।। गन्ध–शिख्यादयो मलयजातसुगन्धराशि सप्रेम गृह्णत सुशीतलसच्छशोभम् । सन्तापविस्तृतिहरं परमं पवित्रं प्रागर्पितं मम मनोरथपूरकाः स्युः ।। अक्षत—शिख्यादयः केसर-कुङ्कुमाक्तान् भक्त्या मया स्नेह समर्पितांश्च । गृह्णन्तु देवा द्रुतमक्षतान्मे सर्वान्तरायान् विनिवर्तयध्वम् ।। पुष्प—बहुविधं परितो हि समाहृतं समुचितं मकरन्दसमन्वितम् । विकसितं कुसुमं विनिवेदितं कुरुत मे सफलं नयनाञ्चलैः ।। रक्तचूर्ण–सौभाग्यसौन्दर्यविवर्द्धनानि शोणश्रियाऽऽनन्दविवर्धनानि । श्रीरक्तचूर्णानि मयाऽर्पितानि शिख्यादयो गृह्णत वास्तुदेवाः ।। धूप–लवङ्गपाटीरसुगन्धपूर्णं नरासुराणामपि सौख्यदं च । लोकत्रये गन्धमयं मनोज्ञं गृह्णन्तु धूपं मम वास्तुदेवाः ।। दीपक—सद्वर्तिको घोरतमोपहन्ता दीपो मया सत्वरमर्पितो वः । प्रज्वालितो वह्निशिखासमेतः शिख्यादयो वेदविधानयुक्तः ।। नैवेद्य–सिद्धान्नकर्पूरविराजमानं सौरभ्यसान्द्रेण सुशोभमानम् । नैवेद्यमेतत्सरसं पवित्रं स्वीकृत्य मामत्र कृतार्थयन्तु ।। तांबूल—शिख्यादिकाः खलु समेत्य गृहं मदीयं भक्त्यार्पितं

अस्मे रुद्रा—से ब्रह्मा का और स्योना पृथिवी से—अनन्त का स्थापन करे ।

५० १८८ ४० १८८

प्र० परमगन्धयुतं सुरम्यम्। एलालवङ्गबहुलं क्रमुकादियुक्तं ताम्बूलकं भजत मण्डपवास्तुदेवाः॥ दक्षिणा——देवासुरैर्नित्यमशेषकाले प्रगीयमानाः प्रभवः पुराणाः। गृह्णन्तु सद्यः खलु दक्षिणां मे ध्यानेन भक्ते मयि वर्तितव्यम्॥ नीराजन——नीराजना सौख्यमयी सदैव गाढान्धकारानपि दूरकर्त्री। अशेषपापैः परिपूरितस्य शुद्धिं करोति प्रियमानवस्य॥ प्रदक्षिणा——प्रदक्षिणाः सन्ति प्रदक्षिणास्तथा पदे पदे दुःखविनाशिका अपि। जन्मान्तरस्यापि विनाशकारिकाः पापस्य याश्चित्तविवर्द्धितस्य॥ पुष्पाञ्जलि——शिख्यादिका मे खलु वास्तुदेवा गृह्णन्तु पुष्पाञ्जलिमत्र शीघ्रम्। पीडाहरा भव्यकरा विशाला भवन्तु भूपालनतत्पराश्च॥ स्तुति——जानामि नोऽर्चनविधि परमं क्षमध्वं लोकार्तिपुञ्जमतुलं क्षपयन्तु नित्यम्। शिख्यादिकाः सुविमलाः सुखमाकिरन्तु कुर्वन्तु दूरमनिशं दुरितान् समन्तात्॥ इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य तदुत्तरे ताम्रकलशं पूर्वोक्तस्थापनविधिना संस्थाप्य सम्पूज्य च तस्योपरि स्वर्णमयीं वास्तुप्रतिमा-मग्न्युत्तारणपूर्वकं कुर्यात् तद्यथा——अमुकगोत्रोऽमुकशर्माहं (सपत्नीकोहम्) अस्यां वास्तुमूर्त्तौ

षोडशोपचार से पूजनकर उसके ऊपर ताम्रकलशको पूर्वोक्त स्थापनविधि से स्थापन और पूजन कर उस कलश

के ऊपर सोने की धातुप्रतिमा का अग्न्युत्तारणपूर्वक स्थापन करे। उसका प्रकार यों है——संकल्प कर मूर्त्ति को

अवघातादिदोषपरिहारार्थमग्न्युत्तारणं देवतासान्निध्यार्थं च प्राणप्रतिष्ठां करिष्ये—इति संकल्प्य मूर्त्तिं पात्रे निधाय घृतेनाभ्यज्य तदुपरि पञ्चामृतैः सन्ततधारां पातयेत्। तद्यथा——ॐ समुद्रस्यत्वावकयाग्नेपरिव्ययामसि।। पावकोऽअस्मभ्यर्ठ० शिवो भव।। हिमस्यत्वाजरायुणाग्ने परिव्ययामसि।। पावकोऽअस्मभ्यर्ठ०शिवोभव।। उपज्ज्मन्नुपवेतसेवतरनदीष्वा।।अग्नेपित्तमपामसिमण्डूकिताभिरागहिसेमन्नोयज्ञम्पावकवर्णर्ठ शिवङ्कृधि।। अपामिदन्न्ययनर्ठसमुद्रस्यनिवेशनम्।। अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यर्ठ शिवोभव।। अग्नेपावकरोचिषामन्द्रयादेवजिह्वया।। आदेवान्न्वक्षियक्षिच।। सनः पावकदीदिवोग्नेदेवाँ२।। ऽइहावह।। उपयज्ञर्ठ हविश्चनः।।पावकयायश्चितयन्न्त्याकृपाक्षामन्न्रुरुचऽउषसोनभानुना।। तूर्वन्नयामन्नेतशस्यनूरणऽआयोघृणेनततृषाणोऽअजरः।। नमस्तेहरसेशोचिषेनमस्तेऽअस्त्वर्चिषे।। अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यर्ठशिवोभव।। नृषदेव्वेडप्सुषदेव्वेड्वर्हिषदेव्वेड्वनसदेव्वेट्स्वर्विदेव्वेट्।। येदेवादेवानाय्यज्ञियायज्ञियानार्ठसंवत्स-

पात्र में रखकर घृत से अञ्जन कर उसके ऊपर पञ्चामृत की निरन्तर धारा दे। उसमें समुद्रस्य त्वा, हिमस्य त्वा,

उपजमन्नुप, अपामिदम्, अग्ने पावक, स नः, पावकया यः, नमस्ते हरसे, नृषदे व्वेट्, ये देवा देवानाम्, ये देवा देवेष्वधि और प्राणदाऽ अपानदा इन मन्त्रों से अग्न्युत्तारण कर मूर्तिको वायें हाथ में रखकर दाहिने हाथ से

रीणमुपभागमासंते ॥ अहुतादो हविषो यज्ञे ऽअस्मिन्त्स्वयम्पिवन्तु मधुनो घृतस्य ॥ येदेवादेवेष्वधि-
देवत्त्वमायन्न्ये ब्रह्मणः पुरऽएतारोऽअस्य ॥ येभ्योनऽऋतेपवंतेधामकिञ्चननतेदिवोनपृथिव्याऽअधि-
स्नुषु ॥ प्राणदाऽअपानदाव्व्यानदाव्वर्च्चोदाव्वरिवोदाः ॥ अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽ-
अस्मभ्यं शिवोभव ॥ एवमग्न्युत्तारणं कृत्वा ततो मूर्तिं वामहस्ते निधाय दक्षिणहस्तेन आच्छाद्य
प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्––ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्याः वास्तुमूर्तेः
प्राणा इह प्राणाः । ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्याः वास्तुमूर्तेः
जीव इह स्थितः । ॐ आँ ह्रीं क्रों यँ रँ लँ वँ शँ षँ सँ हँ क्षँ हँ सः सोऽहं अस्याः वास्तुमूर्तेः
वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । ततो
ॐ मनो जूति० । ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा क्षरन्तु च । अस्यै देवत्वमर्चायै मां

आच्छादन कर प्राणप्रतिष्ठा करे––ॐ आँ ह्रीम् इत्यादि को पढ़कर तथा मनो जूतिः, तथा अस्यै प्राणाः, इनको

पढ़कर वस्तुपुरुषकी प्रतिष्ठा का कलश के ऊपर स्थापन करे। फिर वास्तुपुरुष प्रतिमाको इस मन्त्र से आवाहन और पूजनकर पूज्योऽसि---इस मन्त्र से अर्घ दे कर पायस से शिखी, पर्जन्य, जयन्त, कुलिशायुध, सूर्य, सत्य,

प्र०

हेतिति कश्चन ॥ इति वास्तुपुरुषः प्रतिष्ठितो वरदो भव ॥ इति कलशोपरि स्थापयेत् । ततः—

ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो ऽअनमीवो भवानः । यत्वे महे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ वास्तुपुरुषाय नमः वास्तुपुरुषमावाहयामि । इति सम्पूज्य अर्घ्यं दद्यात्-

ॐ पूज्योऽसि त्रिषु लोकेषु यज्ञरक्षार्थहेतवे । तद्विनार्चनं सिध्यन्ति यज्ञदानान्यनेकशः ॥ अयोने भगवन् भर्ग ललाटस्वेदसम्भव । गृहाणार्घ्यं मया दत्तं वास्तोः स्वामिन्नमोऽस्तु ते ॥ इत्यर्घ्यं दत्त्वा पायसबलिदानं कुर्यात्---ॐ शिखिने एषं पायसबलिर्न मम १ ॐपर्ज्जन्याय० २ ॐजयन्ताय० ३ ॐ कुलिशायुधाय० ४ ॐ सूर्याय० ५ ॐ सत्याय० ६ ॐ भृशाय० ७ ॐ आकाशाय०

भृश, आकाश, वायु, पूषा, वितथ, गृहक्षत, यम, गन्धर्व, मृंगराज, मृग, पितर, दौवारिक, सुग्रीव, पुष्पदन्त,

१—गृहवास्तु प्रवक्ष्यामि येन देवमयो भवेत् । "ईशानादिनिर्ऋत्यन्तं वास्तुः सर्पः प्रकीर्तितः" इति शक्तिसङ्गमतन्त्रे वास्तोः सर्पोक्त्या सर्पाकारां वास्तुप्रतिमां साम्प्रदायिकाः कुर्वन्तीत्यतस्तादशप्रतिमायां वास्तोष्पतिमावाह्येति प्रतिष्ठासरण्याम् । २—प्रतिष्ठाकौमुद्यां तु 'शिखिने नमः' पायसबलिं समर्पयामीतिवाक्यमुक्तम् ।

ग्र० १९३

वरुण, असुर, शोष, पाप, रोग, अहि, मुख्य, भल्लाट, सोम, सर्प, अदिति, दिति, आप, सावित्र, जप, रुद्र, अर्यमा,

८ ॐ वायवे० ९ ॐ पूष्णे० १० ॐ वितथाय० ११ ॐ गृहक्षताय० १२ ॐ यमाय० १३ ॐ गन्धर्वाय० १४ ॐ भृङ्गराजाय० १५ ॐ मृगाय० १६ ॐ पितृभ्यो० १७ ॐ दौवारिका० १८ ॐ सुग्रीवाय० १९ ॐ पुष्पदन्ताय० २० ॐ वरुणाय० २१ ॐ असुराय० २२ ॐ शोषाय० २३ ॐ पापाय० २४ ॐ रोगाय० २५ ॐ अहये० २६ ॐ मुख्याय० २७ ॐ भल्लाटाय० २८ ॐ सोमाय० २९ ॐ सर्पेभ्यो० ३० ॐ अदित्यै० ३१ ॐ दित्यै० ३२ ॐ अद्भ्यो० ३३ ॐ सावित्रा० ३४ ॐ जयाय० ३५ ॐ रुद्राय० ३६ ॐ अर्यम्णे० ३७ ॐ सवित्रे० ३८ ॐ विवस्वते० ३९ ॐ विबुधाधिपाय० ४० ॐ मित्राय० ४१ ॐ राजयक्ष्मणे० ४२ ॐ पृथ्वीधराय० ४३ ॐ आपवत्साय० ४४ ॐ ब्रह्मणे० ४५ ॐ वास्तोष्पतये० ४६ ॐ चरक्यै नमः—एष दधिमाषबलिर्न मम ४७ ॐ विदार्यै० ४८ ॐ पूतनायै० ४९ ॐ पापराक्षस्यै० ५० ॐ स्कन्दाय० ५१ ॐ अर्यम्णे ५२

सविता, विवस्वान्, विबुधाधिप, मित्र, राजयक्ष्मा, पृथ्वीधर, ब्रह्मा, चरकी, विदारी, पूतना, पापराक्षसी, स्कन्द,

---

१—पायसं वापि दातव्य स्वनानाम्ना सर्वतः क्रमात्। नमस्कारानुयुक्तेन प्रणवाद्येन सर्वतः। इति देवता भेदेन बलिविशेषमभिधाय मात्स्योक्तेः। शारदातिलके तु पायसान्नैर्बलिं हरेदिति पायसबलिरेव मुख्यत्वेनोक्तः। २—कुक्कुटाण्डप्रमाणं तु बलिरित्यभिधीयते॥ इति स्मृत्यर्थसारारोक्तेः।

ग्र० १९३

अर्यमा, जुंभक, पिलिपिच्छ, इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, ईशान, ब्रह्मा और अनन्तको बलि दे।

ॐ जृम्भकाय० ५३ ॐ पिलिपिच्छाय० ५४ ॐ इन्द्राय० ५५ ॐ अग्नये० ५६ ॐ यमाय० ५७ ॐ निर्ऋतये० ५८ ॐ वरुणाय० ५९ ॐ वायवे० ६० ॐ सोमाय० ६१ ॐ ईशानाय० ६२ ॐ ब्रह्मणे० ६३ ॐ अनन्ताय० ६४ ततः प्रधानवास्तुपुरुषाय बलिं दद्यात्। नानापक्वान्न संयुक्तं नानागन्धसमन्वितम्॥ बलिं गृहाण देवेश वास्तुदोषप्रणाशक॥ ॐ वास्तुपुरुषाय एष बलिर्न मम। अथ प्रार्थना—ॐ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिश्रद्धाविवर्जितम्। यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे॥ नमस्ते वास्तु देवेश सर्वदोषहरो भव। शान्तिं कुरु सुखं देहि सर्वान्कामान्प्रयच्छ मे॥ इत्युक्त्वा वास्तुपुरुषाय नारिकेलं ससुवर्णं च समर्प्य प्रणमेत्।

ततः सपत्नीको यजमानः रक्षोघ्नपवमानसूक्ताभ्यां जलदुग्धयोः पृथगविच्छिन्न जलधीरे ददत्

उसके बाद प्रधानपुरुष को—नानापक्वान्नसंयुक्तम्—इस मन्त्र से बलि देकर मन्त्रहीनम् तथा नमस्ते वास्तुदेवेश इन दो श्लोकों से वास्तुपुरुष के लिए नारिकेल और सुवर्ण को समर्पण कर—प्रणाम करे। फिर सपत्नीक यजमान

१—यत्र वास्तुयजने पक्षत्रयं वास्तुदेवतापूजनबलिदानहोमप्रतिमानिखनांन्तः परिशिष्टाद्युक्तो मुख्यः। प्रतिमा नखनरहिते। मात्स्योक्तो मध्यमः। पूजाबलिदानमात्रः शारदोक्तः कनिष्ठस्तत्र मण्डपे बलिरेव न होमादीनि जीर्णसंप्रदायानुगतशारदोक्त एव गृह्यते।

२० १६४

रक्षोघ्न और पवमानसूक्त से जल तथा दूधकी धारा अलग अलग लगातार कमण्डलु (ताँबे और पीतल) पात्र से दे—

त्रिसूत्र्या (वस्त्रेण वा) अग्निकोणमारभ्य मण्डपं वेष्टयेत्। तद्यथा—ॐ कृणुष्व पाजः प्रसितिन्न पृथ्वीं याहि राजेवामवाँ२ऽइभेन ॥ तृष्वीमनु प्रसितिन्द्रूणानोस्तासि विद्ध्य रक्षसस्तपिष्ठैः ॥ तव भ्रमास ऽआशुया पतन्त्यनु स्पृश धृषता शोशुचानः ॥ तपूंष्यग्ग्ने जुह्वा पतङ्गानसन्दितो व्विसृज व्विष्वगुल्काः ॥ प्रतिस्पशो व्विसृज तूर्णितमो भवा पायुर्व्विशो ऽअस्या ऽ अदब्धः ॥ यो नो दूरे ऽअघशंसो यो ऽअन्त्यग्ग्ने माकिष्टे व्यथिरादधर्षीत् ॥ उदग्ने तिष्ठ प्रत्यातनुष्व न्यमित्राँ२ ओषतातिग्ग्महेते ॥ यो नो ऽअरातिंसमिधानचक्रे नीचातन्धक्ष्यतसन्नशुष्कम् ॥ ऊर्ध्वो भव प्रतिविध्याध्यस्म दाविष्कृणुष्व दैव्यान्न्यग्ने ॥ अव स्थिरा तनुहि यातुजूनाञ्जामिमजामिम्प्रमृणीहि शत्रून् ॥ अग्नेष्ट्वा तेजसा सादयामि ॥ ॐ पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः

त्रिसूत्री या वस्त्र से अग्निकोण से मण्डपको चारोतरफ से वेष्टन करें।

२—वास्तुसहितो विप्रैर्मण्डपं वेष्टयेत् शुभम्—इति हेमाद्रौ भविष्योत्तरे च। प्रयोगचिन्तामणौ मण्डपप्रवेशानन्तरं मण्डपवेष्टनमुक्तम्।

पाजः, तव भ्रमासः, प्रतिस्पशः, उदग्ने, ऊर्ध्वो भव, पुनन्तु मा पितरः, अग्नऽ आयूंᳪसि, पुनन्तु मा, पवित्रेण पुनीहि

पुनन्तु प्पितामहाः । पवित्रेण शतायुषा ॥ पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्पितामहाः पवित्रेण शतायुषा व्विश्वमायुर्व्यश्नवै ॥ अग्नऽ आयूᳪषि पवस ऽआसुवोर्ज्जमिषञ्चनः ॥ आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ पुनन्तु मा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः ॥ पुनन्तु व्विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहिमा ॥ पवित्रेण पुनीहि मा शुक्रेण देवदीद्यत् ॥ अग्ग्ने क्रत्वा क्रतूँरनु ॥ यत्ते पवित्रमर्च्चिष्यग्ने व्विततमन्तरा ॥ ब्रह्मतेन पुनातु मा मा ॥ पवमानः सो ऽअद्यनः पवित्रेणव्विचर्षणिः ॥ यः पोता सपुनातु मा ॥ उभाभ्यान्देवसवितः पवित्रेण सवेन च ॥ माम्पुनीहि व्विश्वतः ॥ व्वैश्वदेवी पुनती देव्व्यागाद्यस्यामिमा बह्व्यस्तन्न्वो व्वीतपृष्ठाः ॥ तया मदन्तः सधमादेषुव्वयᳪस्याम पतयोरयीणाम् ॥ इति मण्डपाङ्गवास्तुपूजनम् ।

१. प्रत्येकं बलिदानाशक्तौ महान्तमेकं पायसबलिं "ॐ शिख्यादिवास्तुपीठदेवताभ्यो नमः" पायसबलिं समर्पयामीति दद्यात् इति प्रतिष्ठाकौमुदी ।

प्र०

१९७

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(अथ मण्डप-तोरण-द्वारपूजनम्)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

१९७

सपत्नीक यजमान 'सप्रासादविष्ण्वादिप्रतिष्ठाङ्गभूतं मण्डपदेवानां स्थापनं पूजनं करिष्ये'---इस प्रकार संकल्प कर

प्र०

देशकालौ सङ्कीर्त्य—अमुकगोत्रः अमुकशर्माहं (सपत्नीकोऽहं) सप्रासादविष्ण्वादिप्रतिष्ठाङ्ग-भूतं मण्डपदेवानां स्थापनं पूजनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य रक्तवर्णं मध्यवेदीशानस्तम्भे (नन्दायै) एह्येहि विप्रेन्द्र पितामहेश हंसादिरूढत्रिदशैकवन्द्य। श्वेतोत्पलाभासकुशाम्बुहस्त गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते १ हंसपृष्ठसमारूढ देवतागणपूजित। ईशानकोणसंस्थितं स्तम्भमलङ्कुरु जगत्पते २ ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः ॥ स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्था०। ॐ सावित्र्यै० सावित्रीमा०। वास्तुदेवतायै०वास्तुदे०। ब्राह्म्यै० ब्राह्मीमा०। गंगायै० गंगामा०। ततो गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रार्थना—कृष्णाजिनाम्बरधर पद्मासनचतुर्भुज। जटाधार जगद्धातः प्रसीद कमलोद्भव ॥ नमस्कारः—वेदाधाराय वेदाय यज्ञगम्याय सूरये। कमण्डल्वक्षमालास्रुक्स्रुवहस्ताय ते नमः ॥ स्तम्भमालभेत—ॐ ऊर्ध्व ऊ षु ण ऊतये तिष्ठा देवो न सविता। ऊर्ध्वो वाजस्य सनिता यदञ्जिभिर्वाघद्भि

१९८

मण्डप के मध्य का ईशानकोणवाले स्तंभ में 'एह्येहि विप्रेन्द्र' और ब्रह्मयज्ञानम्—इस मन्त्र से ब्रह्मा का आवाहन

तथा स्थापन कर सावित्री, वास्तुदेवता, ब्राह्मी, गंगा आदिका स्थापनकर गन्धादिद्वारा अर्चन कर 'वेदाधाराय वेदाय'

व्विद्द्यामहे ॥ स्तम्भशिरसि—ॐ नागमात्रे नमः । शाखाबन्धनम्-ॐआयङ्गौःपृश्निरक्रमीदसं दन्मातरम्पुरः ॥ पितरञ्चप्रयन्त्स्वः ॥ अनुमन्त्रणम्—ॐयतोयतः समीहसे ततो नोऽअभयं कुरु ॥ शन्नः कुरु प्रजाभ्यो ऽभयन्नः पशुभ्यः ॥ अनेन कृतार्चनेन मध्यवेदीईशकोणस्थितस्तम्भाधिष्ठातृ देवताः प्रीयन्ताम् । एवं सर्वत्र । आग्नेयस्तम्भे (वसुदायै) कृष्णवर्णं विष्णुं पूजयेत्—आवाहये तं गरुडोपरि स्थितं रमार्धदेहं सुरराजवन्दितम् । कंशान्तकं चक्रगदाब्जहस्तं भजामि देवं वसुदेव-सूनुम् ॥ पद्मनाभं हृषीकेशं कंसचाणूरमर्दनं । आगच्छ भगवन्विष्णो स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ इदं व्विष्णुर्व्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्य पाᳬसुरे स्वाहा ॥ विष्णवे नमः विष्णुमा० । लक्ष्म्यै० । नन्दायै० । अदित्यायै० । वैष्णव्यै० । इति संपूज्य नमस्कारः—नमस्ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते पुरुषोत्तम । नमस्ते सर्वलोकात्मन् विष्णवे ते नमो नमः ॥ देवदेव जगन्नाथ विष्णो यज्ञपते विभो । पाहि दुःखाम्बुधेरस्मान्भक्तानुग्रहकारक ॥ स्यम्भमालभेत—ॐ उर्द्ध

से नमस्कार तथा 'कृष्णाजिनाम्बरधर से प्रार्थना करे फिर ऊर्ध्वऊषुण' इस मन्त्र से स्तंभ का आलंभनकर स्तंभके शिर

में नागमात्रे नमः—कहे। तदनन्तर यतोयतः सभी इसे—इस मन्त्र से शाखाबन्धन करे। अग्निकोणस्तंभ में—आब्राह्मये

ऽऊ॒षुणं०। स्तम्भशिरसि—ॐनागमात्रे०। ॐ आयङ्गौरितिशाखाबन्धनम्। ॐ यतोयतः—इति अनुमन्त्रणम्। नैर्ऋत्यस्तम्भे—(भद्रायै) श्वेतं शंकरं पूजयेत्—एह्येहि गौरीश पिनाकपाणे शशांकमौले वृषभाधिरूढ। देवादिदेवेश महेश नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥ गंगाधर महादेव पार्वतीप्राणवल्लभ। आगच्छ भगवन्नीश स्तम्भेस्मिन्सन्निधो भव। ॐ नमः॑ शंभ॒वाय॑ च मयो॒भवाय॑ च॒ नमः॑ शंक॒राय॑ च मय॒स्क॒राय॑ च॒ नमः॑ शि॒वाय॑ च शि॒वत॑राय च॥ गौर्यै नमः। माहेश्वर्यै०। शोभनायै०। भद्रायै०। शंकराय० शंकरमा०। नमस्कारः—वृषवाहनाय देवाय पार्वतीपतये नमः। वरदायार्द्धकायाय नमश्चन्द्रार्द्धमौलिने॥ पञ्चवक्त्र वृषारूढ त्रिलोचन सदाशिव। चन्द्रमौले महादेव मम स्वस्तिकरो भव॥ स्तम्भमालभेत्—ॐऊ॒र्द्ध्व ऽऊ॒षुण०॥ स्तम्भशिरसि—ॐ नागमात्रे०। ॐ आयं गौः। ॐ यतो यतः। वायव्यस्तम्भे—(अदित्यै) पीतस्तम्भ इन्द्रं पूजयेत्—ॐ एह्येहि वृत्रघ्न गजाधिरूढ सहस्रनेत्र त्रिदशैकराज। शचीपते शक्र सुरेश नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥ शचीपते महाबाहो सर्वाभरणभूषित। आगच्छ

तंभ—और इदं विष्णुः—इस मन्त्र से विष्णु का स्थापना दिकरे। फिर लक्ष्मी, नन्दा, अदिति, वैष्णवी का स्थापनकर

नमस्ते पुण्डरीकाक्ष आदि से नमस्कार कर शेषकार्य पूर्ववत् करे। नैर्ऋत्यस्तंभ में एह्येहि गौरीश और नमः शंभवाय,
भगवन्निन्द्र स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ त्रातार॒मिन्द्र॑मवि॒तार॒मिन्द्र॒ꣳ हवे॑ हवे सु॒हव॒ꣳ
शूर॒मिन्द्र॑म् ॥ ह्वया॑मि श॒क्रम्पु॑रुहू॒तमिन्द्र॑ꣳ स्व॒स्ति नो॑ म॒घवा॑ धा॒त्विन्द्रः॑ ॥ इन्द्राय० इन्द्रमा० ।
इन्द्राण्यै० । आनन्दायै० । विभूत्यै० । सम्पूज्य नमस्कारः—पुरन्दर नमस्तेऽस्तु वज्रहस्त
नमोऽस्तु ते। शचीपते नमस्तुभ्यं नमस्ते मेघवाहन ॥ देवराज गजारूढ पुरन्दर शतक्रतो।
वज्रहस्त महाबाहो वाञ्छितार्थप्रदो भव। स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊ॒र्ध्व ऊ॒ षुणं० । स्तम्भशिरसि—
ॐ नागमात्रे नमः। ॐ आयङ्गौः। ॐ यतो यतः। ततो बाह्ये मण्डपे ईशानकोणे (भूत्यै)
रक्तस्तम्भे सूर्यम्—आवाहयेत्तं द्विभुजं दिनेशं सप्ताश्ववाहं द्युमणिं ग्रहेशम्। सिन्दूरवर्णं प्रतिभा-
वभासं भजामि सूर्यं कुलवृद्धिहेतोः ॥ पद्मनाभ महाबाहो सप्तश्वेताश्ववाहन। आगच्छ भग-
वन्भानो स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ आकृ॒ष्णेन॒ रज॑सा॒ वर्त॑मानो निवे॒शय॑न्न॒मृतं॒ मर्त्यं॑ च ॥
हि॒र॒ण्यये॑न स॒वि॒ता रथे॒ना दे॒वो या॑ति॒ भुव॑नानि॒ पश्य॑न् ॥ सूर्याय० सूर्यमा० सूर्यै० । सावित्र्यै० ।
मंगलायै० । सम्पूज्य नमस्कारः—ॐ नमः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थितिनाशहेतवे।
गौर्यै नमः। मा॒ध्व्यै० । शोभनायै० भद्रायै० । से स्थापनादि करे। फिर पञ्चवक्त्र ... से नमस्कार करे। शेष पूर्व

की तरह से करे। वायव्यस्तंभ में—एह्येहि तथा त्रातारमिन्द्रम्—इन्द्राणी, आनन्दा, विभूति आदिका स्थापन करे। अवशिष्ट

त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे विरिञ्चिनारायणशङ्करात्मने ॥ पद्महस्त रथारूढ पद्मासन सुमङ्गल। क्षयां कुरु दयालो त्वं ग्रहराज नमोऽस्तु ते ॥ स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुण०। ईशानपूर्वयोरन्तराले (सरस्वत्यै०) श्वेतस्तम्भे गणेशम्—आवाहयेत्तं गणराजदेवं रक्तोत्पलाभासमशेषवन्द्यम्। विघ्नान्तकं विघ्नहरं गणेशं भजामि रौद्रं सहितं च सिद्धया ॥ लम्बोदर महाकाय गजवक्त्र चतुर्भुज। आगच्छ गणनाथस्त्वं स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणान्त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधिनान्त्वा निधिपतिꣳहवामहे व्वसो मम ॥ आहमजानि गर्भधमात्वमजासिगर्भधम् ॥ गणपतये० गणपतिमा० विघ्नहारिण्यै०। जयायै०। नागमात्रे०। ॐआयं गौः। ॐयतो यतः। सम्पूज्य च नमस्कारः—नमस्ते ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः। नमस्ते रुद्ररूपाय करिरूपाय ते नमः। लम्बोदर महाकाय सततं मोदकप्रिय। गौरीसुत गणेश त्वं विघ्नराज प्रसीद मे ॥ स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऊषुण०। नागमात्रे न०। ॐआयं गौः०। ॐयतोयतः। पूर्वाग्नेययोरन्तरालस्तंभे—(पूर्वसन्ध्यायै०) कृष्णवर्णस्तंभे—यमम्। एह्येहि दण्डायुध

पूर्ववत् की तरह करे। बाहर के ईशानकोणवाले रक्तस्तंभ में सूर्य स्थापनकरे। तदनन्तर से—स्तंभों में गणेश, यम,

प्र० २०२

धर्मराज कालाञ्जनाभास विशालनेत्र। विशालवक्षस्थलरुद्ररूप गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ चित्रगुप्तादिसंयुक्तदण्डमुद्गरधारक। आगच्छ भगवन्धर्म सप्तमस्तम्भमाविश ॥ ॐ यमाय त्वा मखाय त्वा सूर्य्यस्य त्वा तपसे। देवस्त्वा सविता मध्वा नक्तु पृथिव्याः सᳬ स्पृशस्पाहि। अर्चिरसि शोचिरसि तपोऽसि ॥ यमाय० यममा०। अञ्जन्यै०। क्रूरायै० नियन्त्र्यै०। सम्पूज्य नमस्कारः—ईषत्पीन नमस्तेऽस्तु दण्डहस्त नमोऽस्तु ते। महिषस्थ नमस्तेऽस्तु धर्मराज नमोस्तु ते ॥ धर्मराज महाकाय दक्षिणाधिपते मम। रक्तेक्षण महाबाहो मम पीडां निवारय ॥ स्तम्भमालभेत्–ॐ ऊर्द्ध्व ऊषुणं०। बाह्याग्नेयकोणस्तंभे—(मध्यसंध्यायै०) कृष्णवर्णस्तम्भे–एह्येहि नागेन्द्र धराधरेश सर्वामरैर्वन्दितपादपद्म। नानाफणामण्डलराजमान गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ आशीविषसमोपेत नागकन्याविराजित। आगच्छ नागराजेन्द्र स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥ नागराजाय० नागराजमा०। धरायै०। पद्मायै०। महापद्मायै०। सम्पूज्य नमस्कार--नमः पूजन करे।

प्र० २०३ प्र० २०१

खेटकहस्तेभ्यस्त्रिभोगेभ्यो नमो नमः । नमो भीषणदेवेभ्यः खड्गधृग्भ्यो नमो नमः ॥ खड्गखेट-धराः सर्पाः फणामण्डलमण्डिता । एकभोगाः साक्षसूत्रा वरदाः सन्तु मे सदा । स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुण० । अग्निदक्षिणयोरन्तरालस्तंभे---(पश्चिमसन्ध्यायै०) श्वेतस्तम्भे स्कन्दम्—आवाहयामि देवेशं षण्मुखं कृत्तिकासुतम् । रुद्रतेजसमुत्पन्नं देवसेनासमन्वितम् ॥ मयूरवाहनं शक्ति पाणि वै ब्रह्मचारिणम् । आगच्छ भगवन् स्कन्द स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ यदक्रन्दः प्रथमञ्जायमानऽउद्यन्त्समुद्रादुत वा पुरीषात् ॥ श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यम्महि जातन्तेऽअर्व्वन् ॥ स्कन्दाय स्कन्दमा० । जयायै० । शक्त्यै० । सम्पूज्य नमस्कार--नमः स्कन्दाय देवाय घण्टाकुक्कुटधारिणे । पिनाकशक्तिहस्ताय षण्मुखाय च ते नमः ॥ मयूरवाहनस्कन्द गौरीसुत षडानन । कार्तिकेय महाबाहो दयां कुरु दयानिधे ॥ ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुणं० ६ । दक्षिण-नैर्ऋत्ययोर्मध्ये—धूम्रस्तम्भे वायुम्—आवाहयामि देवेशं भूतादां देहधारिणम् । सर्वाधारं महावेगं मृगवाहनमीश्वरम् ॥ ध्वजहस्तं गन्धवहं त्रैलोक्यान्तरचारिणाम् ॥ आगच्छ भगवन् वायु स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ तवं व्वायवृतस्पते त्वष्टुर्ज्जामातरद्भुत ॥ अवांऽ स्यावृणीमहे ॥

वायवे वायुमा० । वायव्यै० । गायत्र्यै० । मध्यमसन्ध्यायै० । सम्पूज्य नमस्कारः—नमो धरणिपृष्ठस्थ समीरण नमोऽस्तु ते । धूम्रवर्ण नमस्तेऽस्तु शीघ्रगामिन्नमोस्तु ते ॥ धावन्धरणि पृष्ठस्थ ध्वजहस्त समीरण । दण्डहस्त मृगारूढ वरं देहि वरप्रद ॥ ॐउद्‌ऽऊषुणं इति १० नैर्ऋत्य बाह्यस्तम्भे पीतस्तम्भे सोमम्—आवाहयामि देवेशं शशांकं रजनीपतिम् । क्षीरोदधिसमुद्भूतं हरमौलिविभूषणम् ॥ सुधाकरं द्विजाधीशं त्रैलोक्यप्रीतकारकम् । औषध्याप्यायनकरं सोमं कन्दर्पवर्धनम् ॥ आगच्छ भगवन्सोम स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ आप्यायस्व समेतुते व्विश्वतः सोम व्वृष्ण्यम् ॥ भवावाजस्य सङ्गथे ॥ सोममाय० सोममा० । सावित्र्यै० । अमृतकलायै० । विजयायै० । सम्पूज्य नमस्कारः—अत्रिपुत्र नमस्तेऽस्तु नमस्ते शशिलाञ्छन । श्वेताम्बर नमस्तेऽस्तु ताराधिप नमोऽस्तु ते ॥ अत्रिपुत्र निशानाथ द्विजराज सुधाकर । सोमत्वं सौम्यभावेन ग्रहपीडां निराकुरु ॥ ॐउद्‌ऽऊषुण० । आयं० । यतोयतः । ११ नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये-श्वेतस्तम्भे वरुणम्—आवाहयामि देवेशं सलिलस्याधिपं प्रभुम् । शंखपाशधरं सौम्यं वरुणं यादसां पतिम् ॥ कुम्भीरथसमारूढं मणिरत्नसमन्वितम् । आगच्छ देव वरुण स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥

५० ५०
२०६ २०६

ॐ इमम्मे वरुण श्रुधीवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ॥ वरुणाय० वरुणामा० । वारुण्यै० । पाशधारिण्यै० । बृहत्यै० इतिसम्पूज्य नमस्कारः—वरुणाय नमस्तेऽस्तु नमः स्फटिकदीप्तये । नमस्ते श्वेतहाराय जलेशाय नमो नमः ॥ शङ्खस्फटिकवर्णाभ श्वेतहाराम्बरावृत । पाशहस्त महाबाहो दयां कुरु दयानिधे ॥ स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऊषुर्ण १२ पश्चिमवायव्यान्तराले श्वेतस्तम्भे-अष्टवसून्—आवाहयामि देवेसान्वसूनष्टौ महाबलान् । सौम्यमूर्तिधरान्देवान्दिव्यायुधकरान्तितान् ॥ शुद्धस्फटिककंकाशान्नानावस्त्रविराजितान् । अश्वारूढान्दिव्यवस्त्रान् सर्वालङ्कारभूषितान् ॥ आवाहयामि स्तम्भेऽस्मिन्वसूनष्टौ सुखावहान् । ॐ व्वसुभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यस्त्वादित्येभ्यस्त्वासञ्जाना-थान्द्यावपृथिवी मित्रावरुणौत्त्वावृष्ट्यावताम् ॥ व्व्यन्तु व्वयोक्तक्तरिहाणामरुताम्पृषतीर्गच्छ व्वशापृश्निर्भूत्वा दिवङ्गच्छ ततो नो व्वृष्टिमावह ॥ चक्षुष्पाऽअग्नेऽसि चक्षुर्म्मे पाहि ॥ अष्ट वसुभ्यो० अष्टवसूनावा० । (अदितये०) अणिमायै० । भूत्यै० । गरिमायै० इति सम्पूज्य नमस्कारः—नमस्करोमि देवेशान्नानावस्त्रविराजितान् । शुद्धस्फटिकसंकाशान्दिव्यायुधधरान्वसून् ॥ दिव्यवस्त्रा दिव्यदेहाः पुष्पमालाविभूषिताः । वसवोऽष्टौ महाभागा वरदाः सन्तु मे सदा ॥ स्तम्भमालभेत्—

ॐ ऊद्‌र्ध्वऽऊषुणं० १३ वाव्यकोणे पीतस्तम्भे धनदम्--आवाहयामि देवेशं धनदं यक्षपूजितम्। महाबलं दिव्यदेहं नरयानगतं विभुम् ॥ दिव्यमालाम्बरधरं गदाहस्तं महाभुजम्। आगच्छ यक्षराज त्वं यज्ञेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ॐ सोमो धेनुर्ठ० सोमो ऽअर्व्वन्तमाशुर्ठ० सोमो व्वीरङ्कर्म्मण्यन्ददाति ॥ सादन्यं व्विदत्थ्यर्ठ० सभेयम्पितृश्रवणं ग्योददाशदस्मै ॥ धनदाय न० धनद०। अदित्यायै०। लघिमायै०। इति सम्पूज्य नमस्कारः--यक्षराज नमस्तेऽस्तु नमस्ते नरयानग। पीताम्बर नमस्तेऽस्तु गदापाणेनमोऽस्तु ते। दिव्यदेह धनाध्यक्ष पीताम्बर गदाधर। उत्तरेश महाबाहो वाञ्छितार्थफलप्रद ॥ स्तम्भमालभेत्--ॐ ऊद्‌र्ध्वऽ ऊषुण० १४ उत्तरवायव्ययोर० पीतस्तम्भे० गुरुम्--आवाहयामि देवेशं गुरुं त्रिदशपूजितम्। हेमगोरोचनावर्णं पीनस्कन्धं सुवक्षसम्। शङ्खं च कलशं चैव पाणिभ्यामिहबिभ्रतम् ॥ ॐ बृहस्पतेऽ अतियदर्य्योऽअर्हो द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयुच्छवसऽ ऋतप्रजाततदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥ बृहस्पतये नमः बृहस्पतिमा०। पौर्णमास्यै०। सावित्र्यै० इति सम्पूज्य नमस्कारः--ब्रह्मपुत्र नमस्तेऽस्तु पीतध्वज नमोऽस्तु ते। त्रिदशार्चित देवेश

प्र०

२०८

सिन्धूद्भव नमोऽस्तु ते ।। पूजितोऽसि मया शक्त्या दण्डहस्बृहस्पते ।। क्रूरग्रहाभिभूतस्य शान्ति देवगुरो कुरु ।। स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुण० १५ उत्तरेशानयोरन्तरे रक्तस्तम्भे विश्वकर्माणम्—आवाहयामि देवेशं विश्वकर्मेश्वरम् । मूर्तामूर्तकरं देवं सर्वकर्तारमीश्वरम् ।। त्रैलोक्यसूत्रकर्तारं द्विभुजं विश्वदर्शितम् । आगच्छ विश्वकर्मस्त्वं स्तम्भेऽस्मिन्सन्निधो भव ।। ॐ विश्वकर्म्मन्न्हविषा व्वर्द्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवद्ध्यम् ।। तस्म्मै व्विशः समनमन्तपूर्वीरयमुग्ग्रो व्विहव्यो यथासत् ।। विश्वकर्मणे० विश्वकर्माणमा० । सिनीवाल्यै० । सावित्र्यै० । वास्तुदेवता० । सम्पूज्य नमस्कारः—नमामि विश्वकर्माणं द्विभुजं सर्वदर्शिनम् । त्रैलोक्यसूत्रकर्तारं महाबलपराक्रमम् ।। प्रसीद विश्वकर्मस्त्वं शिल्पशास्त्रविशारद । सदण्डपाणे द्विभुजस्तेजोमूर्ति प्रतापवान् ।। स्तम्भमालभेत्—ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुण० १६ एतावत्कर्म मण्डपान्तःस्थित्वा कर्तव्यमिति प्रतिष्ठासारिणी इति मण्डपे षोडशस्तम्भपूजा रुद्रकल्पद्रुमप्रतिष्ठाभास्करायुक्ता । स्तम्भशिरसि बलिमाह—ॐनागमात्रे नमः १ सर्वेषां नागराजानां पातालतलवासिनाम् ।

प्र०

२०८

नागमातर आयान्तु भवन्तु सगणाः स्थिराः ॐ आयङ्गौः० इति सम्पूज्य नमस्कारः । नमोऽस्तु वलिकाबन्ध सुदृढत्वं शुभास्पिदम् ॥ एनं महामण्डपन्तु रक्ष रक्ष निरन्तरम् ॥ ॐ यतो यतः समीहसे ततो नोऽ अभयङ्कुरु ॥ शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः ॥ प्रार्थना—शेषादि-नागराजनाः समस्ता मम मण्डपे ॥ पूजाङ्गृह्णन्तु सततं प्रसीदन्तु ममोपरि । ततो भूमिस्पर्शः—ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ॥ पृथिवीं यच्छ पृथिवीन्दृंह पृथिवीं माहिंसीः ॥ भूमिर्भूमिवगान्माता यथा मातरमप्यगात् । भूयास्म पुत्रैः पशुभिर्यो नो द्वेष्टि स भिद्यताम् ॥ ततः पुष्पाञ्जलिं गृहीत्वा--नमस्ते पुण्डरीकाक्षा नमस्ते विश्वभावना । नमस्तेऽस्तु हृषीकेश महापुरुषपूर्वज ॥ ॐ नृसिंह उग्ररूप ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा । ॐ नमः शिवाय—इति पुष्पाञ्जलिं मण्डपभूमौ विकिरेत् ।

प्र० ॥ प्र०

* अथ तोरणपूजा *

तोरणपूजा कहते हैं। पश्चिमद्वार से बाहर निकलकर अग्निमीडे—से तोरण का स्थापनकरे। सुदृढतोरणाय नमः—

ततो द्वारपूजेति मात्स्योक्तजलाशयोक्तः क्रमो रुद्रकल्पद्रुमादौ प्रतिष्ठाभास्करे प्रतिष्ठेन्दुरत्नमालादौ च। मयूखोद्योतपूर्तकमलाकरादौ प्रतिष्ठाविधौ आग्नेयोक्ता तोरणपूजैव। आस्माभिस्तु संप्रदायानुरोधेन लिख्यते। तत्रादौ तोरणपूजा। अग्निपुराणोक्ता कलशद्वयस्थापनं वर्ज्यम्। यत्र पश्चिमद्वारेण बहिर्निर्गत्येति प्रतिष्ठारत्नमालायाम्। आयाहि वज्रसंघातपूर्वद्वार कृताधिप। ऋग्वेदाधिपते तुभ्यं सुशोभन नमोऽस्तु ते॥ प्राचीं तु दिशमाश्रित्य सुदृढो नाम तोरणः। महावीर्यो महाकाय इन्द्रायुध समप्रभः। एह्येहि ऋग्वेदाधिष्ठित इन्द्रदेवत्य शान्त अश्वत्थ सुदृढतोरण एनं यज्ञं रक्ष सर्वविघ्नान्निवारय। ॐ [1]अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्। ॐ. स्योना पृथिवीति वा। सुदृढतोरणाय नमः सुदृढतोरणामा०। त्रिशूलशृङ्गेषु शंखादिषु वा ॐ

२१० ॥ २१०

से पूजनकर दक्षिण में—राहु तथा बाये में बृहस्पतिका स्थापनकर कलश पर ध्रुवका स्थापन कर पूजन करे। इषे त्वा—

१— मण्डपे त्वग्निमीडेति विन्यसत्पूर्वतोरणम्। इषेत्वेति मन्त्रेण दक्षिणस्य निवेशनम्। अग्न आयाहि मन्त्रेण पश्चिमस्य निवेदनम्। शन्नो देवाति मन्त्रेण दद्यादुत्तरतोरणमिति मूलागमे प्रतिष्ठेन्दौ। पञ्चहस्तं तु संस्थाप्य स्योनापृथिवीति पूजयेदिति तोरणं प्रकृत्यान्नेयात्।

इस से तोरण रखकर समुद्रतोरणाय नमः—से पूजन कर सूर्यादि नामों से आवाहन कर पूजन करे। अग्न आयाहि—

इन्द्राय० इन्द्रमा। ॐ धात्रे न० धातारमा०। भगाय भगमा० इत्यादिनावाह्य तोरणशाखयोः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—यथा मेरुगिरेः शृङ्गे देवानामालयः सदा तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्देवाधिष्ठानको भव॥ तत्र कलशविधिना कलशं प्रतिष्ठाप्य कलशोपरि—ॐ ध्रुवाय नमः १ ॐ अध्वराय नमः २ इति वसुद्वयमावाह्य तत्रैव नन्दिने०। महाकालाय०। पुनस्तत्रैव—धात्रे०। विधात्रे नमः। द्वारश्रियै०। गणेशाय०। इत्यूर्ध्वम्। वास्तुपुरुषाय नमः—वास्तुमीत्तथ आवाह्य पुनर्द्वारशाखयोः—भूर्लोकाय० भूर्लोकम० भुवर्लोकाय०। तत्रैव-आदित्याय नमः। ॐ मध्ये—मेधापतये नमः ३ इति सम्पूज्य ततो दक्षिणे गत्वा आचम्य-मौलीबन्धनम्—औदुम्बरं च विकटं याम्ये तोरणमुत्तमम्। रक्षार्थं त्वां बध्नामि कर्मण्यस्मिन्सुखाय नः॥ ॐ इ॒षे त्वो॒र्ज्जे त्वा॑ वा॒यव॑स्थ दे॒वो वः॑ सवि॒ता प्रार्प॑यतु॒ श्रेष्ठ॑तमाय॒ कर्म॑ण॒ऽआप्या॑यद्ध्वमाघ्न्या॒ऽइन्द्रा॑य भा॒गम्प्र॒जाव॑तीरनमी॒वाऽअ॑य॒क्ष्मा मा व॑स्ते॒न ईशत॒ माघश॑ꣳसो ध्रु॒वाऽअ॒स्मिन् गोप॑तौ स्यात ब॒ह्वीर्यज॑मानस्य प॒शून्पा॑हि॥ ॐ सुभद्र-तोरणाय नमः सुभद्रतोरणमा०॥ विकटतोरणाय० विकटतोरमा० इति सम्पूज्य तत्र त्रिशूलशृङ्गेषु

से तोरण रखे। फिर सुभद्रतोरण आदि देवों का और कलश स्थापन करें। शन्नो देवी—से सुहोत्र तोरण आदि

स्थापना करे ।

प्रादक्षिण्येन—ॐ सूर्यपूषाभ्यां० सूर्यपूषाणौ० १ मध्ये—ॐ मित्राय० २ ॐ वरुणाङ्गारकाभ्यां० । सम्पूज्य प्रार्थयेत्—यथा मेरुगिरेः शृंगं देवानामालयः सदा । तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्देवाधिष्ठानको भव ।। तत्र पूर्वविधिना कलश संस्थाप्य कलशोपरि—ॐ पर्जन्याय नमः । ॐ अशोकाय० । मध्ये—ॐधरायै० । इति सम्पूज्य पश्चिमे गत्वा आचम्य मौलीबन्धनम्—प्लाक्षं च पश्चिमे भीमं तोरणं स्वर्णसन्निभम् । रक्षार्थञ्चैव बध्नामि कर्मण्यस्मिन्सुखाय नः ।। ॐ अग्नऽ आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये ।। निहोता सत्सि बर्हिषि ।। ॐ सुभीमतोरणाय नमः । सुकर्मतोरणाय नमः । इतिसम्पूज्य तत्र त्रिशूलशृङ्गेषु प्रादक्षिण्येन ॐअर्यमशुक्राभ्यां नमः । अर्यमशुक्रौ० । मध्ये—ॐ अंशवे नमः । अंशुम्० । ॐ विवस्वद्बुधाभ्यां० । विवस्वद्बुधौ० इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—यथा मेरुगिरेः शृङ्गं देवानामालयः सदा । तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्देवाधिष्ठान को भव ।। तत्रैकं कलशं संस्थाप्य कलशोपरि—ॐ अनिलाय० । ॐ अनलाय० । मध्ये—ॐ वाकपतते नमः । वाकपतिमा० । इति सम्पूज्य तत उत्तरे गत्वा आचम्य मौलीबन्धनम्—न्यग्रोधतोरणमिव उत्तरे च शशिप्रभम् । रक्षार्थं चैव बध्नामि कर्मण्यस्मिन्सुशोभितम् ।। ॐ शन्नो देवीरभिष्टय्ऽ आपो भवन्तु

मण्डपद्वारपूजा कहते हैं। पूर्वदिशा में जाकर आचमन, प्राणायाम कर देश काल का उच्चारण कर—

प्रीतये।। शंघोरभिस्रवन्तु नः।। ॐसुहोत्रतोरणाय० इति सम्पूज्य—तत्र त्रिशूलभृङ्गेषु प्रादक्षिण्येन—ॐ त्वष्टृसोमाभ्यां०। ॐसवितृकेतुभ्यां०। ॐ विष्णुशनिभ्यां नमः इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—यथा मेरुगिरेः शृङ्गं देवानामालयः सदा।। तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्देवाधिष्ठानको भव।। तत्र—एकं कलशं संस्थाप्य कलशोपरि—ॐ प्रत्यूषाय०। ॐ प्रभासाय०। मध्ये—विघ्नेशाय० इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—तोरणाधिष्ठिता देवाः पूजिता भक्तिमार्गतः। ते सर्वे मम यज्ञेऽस्मिन् रक्षां कुर्वन्तु वः सदा। इति तोरणपूजा। अथ मण्डपद्वारपूजा—पूर्वे गत्वा आचम्य प्राणानायम्य ततो देशकालौ सङ्कीर्त्य—अस्मिन्प्रतिष्ठाकर्मणि पूर्वादिद्वारपूजाङ्करिष्ये इति सङ्कल्प्य—अयाहि वज्रसङ्घातपूर्वद्वारकृपाधिप। ऋग्वेदाधिपते तुभ्यं सुशोभन नमोऽस्तु ते।। द्वौ कलशौ पार्श्वयोः स्थापपेत्। प्रथमदक्षिणकलशोपरि—ॐप्रशान्ताय०। द्वितीयोत्तरवामकलशोपरिॐशिशिराय०। ततो मध्ये तृतीयप्रथमस्थापितकलशोपरि—ॐऐरावताय० इति गन्धादिना सम्पूज्य प्रार्थयेत्—सवस्त्रं सजलं गन्धं पुष्पपल्लवसंयुतम्। सरत्नं स्थापयाम्येव द्वारेऽस्मिन्कलशद्वयम्।। ॐद्वारश्रियै

अस्मिनन् प्रतिष्ठाकमणि पूर्वादिद्वारपूजां करिष्ये—इसप्रकार से संकल्प कर आयाहि वज्रसंघात—से दो कलशों का

प्र० २१३

दरवाजे के दोनों तरफ स्थापन करे। उसमें प्रथम दक्षिण कलश के ऊपर—प्रशान्ताय नमः और दूसरा उत्तर वाये

नमः। इति ऊर्ध्वम्। अधः—देहल्यै नमः। दक्षिणशाखायाम्—ॐ गणेशाय नमः। वामशाखाम्—स्कन्दाय नमः। द्वारकलयोः—ॐ गङ्गायै नमः। ॐ यमुनायै नमः। इति सम्पूज्य ऋग्वेदिनो पूजयामि—ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्॥ कर्मनिष्ठातपोयुक्ता ब्राह्मण वेदपारगाः। जपार्थं चैव सूक्तानां यज्ञे भवत ऋत्विजौ॥ मध्ये—कलशोपरि—एह्येहि सर्वामरसिद्धिसोद्धयैरभिष्टुतो वज्रधराशरेश। संवीज्यमानोऽप्सरसां गणेन रक्षाध्वरन्नो भगवन्नमस्ते॥ॐत्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रँहवे हवे सुहवँ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामिशक्रं पुरुहूतमिन्द्रँस्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः॥ इन्द्राय नमः इन्द्रमा०। इति सम्पूज्य पोतध्वजपताकामालभ्य जपेत्—ॐ आशुः शिशानो वृषभो नभीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्॥ सङ्क्रन्दनो निमिषऽएकवीरः

कलश के ऊपर शिशिर का तदनन्तर मध्य में तृतीय प्रथम स्थापित कलश के ऊपर ऐरावात का स्थापन पूजन कर सवस्त्रं

१—तोरणध्वजमूलेषु सरलान्वस्त्रवेष्टितान्। अकालमूलकलशान्विन्यसेस्सुसमावितः। ध्रुवं घरां वाक्यर्ति च विघ्नेश तत्र पूजयेदिति हेमाद्राद्युक्तः। एवं तोरणपूजां कृत्वा द्वारपूजा कुर्यात्। तत्र द्वारेषु कुम्भद्वयं कोणेषु चैकैकः कुम्भः स्थाप्यः। तदुक्तं मात्स्ये—द्वारेषु कुम्भद्वयमत्र कार्यं स्रगन्धधूपां वररत्नयुक्तम्। तथा मण्डपस्य तु कोणे तेन षोडशकलशाः। प्रतिष्ठामयूखादौ इदं न दृश्यते। आग्नेये तु तोरणमूलेषु कलशद्वयस्थापनमुक्तं मयूखोद्योतपूर्तंकमलाकरादावप्येवम्। अस्माभिस्तु सम्प्रदायानुरोधेन प्रतितोरणमेकस्यैव कलशस्य स्थापनं लिखितमिति बोध्यम्।

से प्रार्थना करे। द्वारश्रियै नमः—से ऊपर अधः—देहल्यै नमः—से नीचे, दक्षिण शाखा में गणेश वामशाखा से स्कन्द, दरवाजे के कलशों में गङ्गा और यमुना का अर्चन कर दोऋग्वेदियों का अग्निमीडे—इत्यादि से पूजन

प्र० शतꣳ सेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः ॥ इमां पताकां पीतां च ध्वजं पीतं सुशोभम्। आलभामि सुरेशाय शचीप्रीत्यै नमो नमः ॥ ध्वजपताकयोर्मध्ये—ॐ हेतुकाराय नमः। ॐ क्षेत्रपालाय नमः। इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—इन्द्रः सुरपतिः श्रेष्ठो वज्रहस्तो महाबलः। शतयज्ञाधिपो देवस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ ततो बलिदानम्--माषभक्तबलिं देव गृहाणेन्द्र शचीपते। यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ॥ ॐ नमो भगवते इन्द्राय सकलसुराणामधिपतये सवाहनाय सपरिवाराय सशक्तिकाय तत्पार्षदेभ्यः सर्वेभ्यः भूतेभ्यः इमं सदीपदधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो इन्द्र स्वां दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सुकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव। अनेन बलिदानेन इन्द्रः प्रीयतां न मम। अग्निकोणमागत्य पूर्वप्रकारेण संस्थाप्य आचम्य कलशोपरि—ॐ पुण्डरीकाय नम। ॐ अमृताय

२१५

करे। मध्य कलश के ऊपर इन्द्र का पूजन करें। फिर पीतध्वजा का स्पर्श कर आशुः शिशानः—इससे पीली पताका और पीलीध्वजा का पूजन कर प्रार्थना तथा बलि दे। अग्निकोण में आकर पूर्ववत् स्थापनादि कर—कलश के ऊपर

पुण्डरीक और अमृत का पूजन के स्मंत्र से नमस्कार करे। त्वन्नोऽ अग्ने—अग्निका स्थापन कर ध्वजा पताका का आलंभन, नमस्कार और बलि दे। दक्षिणदिशा में जाकर पूर्ववत् कलश स्थापनादि कर तीनों कलशों में पर्जन्यादि देवों का

नमः—इति सम्पूज्य नमस्कारः। एह्येहि सर्वामरहव्यवाह मुनिप्रवर्यैरभितोऽभिजुष्ट। तेजोवता लोकगणेन सार्द्धं ममाध्वरं पाहि कवे नमस्ते॥ प्रार्थना—सप्तार्चिषं च बिभ्राणमक्षमालां कमण्डलुम्। ज्वालमालाकुलं रक्तं शक्तिहस्तमजासनम्॥ ॐ त्वन्नोऽअग्ने तव देवपायुभिर्मघोनो रक्ष तन्वश्च वन्द्य॥ त्राता तोकस्य तनये गवामस्य निमेषठं॰ रक्षमाणस्तव व्रते॥ अग्नये नमः अग्निमा॰। इति सम्पूज्य ध्वजपताकामलभ्य—"पताकामग्नये रक्तां गन्धमाल्यादिभूषिताम्। स्वाहायुक्त देवाय ह्यालभामि हविर्भुजे॥ ॐ अग्निदूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे॥ देवाँ २ऽआसादयादिह॥ ध्वजपताकयोः--ॐ कुमुदाय नमः १ ॐ क्षेत्रपालाय नमः सम्पूज्य नमस्कारः---आग्नेयपुरुषो रक्तः सर्वदेवमयोऽव्ययः। धूम्रकेतुरजोऽध्यक्षस्तस्मै नित्यं नमो नमः॥ अथ बलिदानम्--"इमं माषबलिं देव गृहाणग्ने हुताशन। यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव। अग्नये साङ्गाय

स्थापना करे। द्वार के ऊपर नीचे, द्वार की शाखाओं देवों का पूजनादि कर इषे त्वोर्जेत्वा—से यजुर्वेदियों का पूजन करे फिर मध्यकलश में यम का स्थापन कर बलि दे। नैर्ऋत्यस्तंभ के पास जाकर कलश स्थापन कर कलशों पर

प्र० ११७

कुमुदादि देवों का पूजन कर मध्यकलश में निऋति देव का पूजन करे। फिर ध्वजा-पताका का अर्चन कर बलि दे।

सपरिवाराय सशक्तिकाय इमं सदीपदधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो अग्ने स्वां दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य गृहे आयुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव। अनेन बलिदानेन अग्निः साङ्गः सपरिवारः सशक्तिकः प्रीयताम्। दक्षिणे गत्वा—आचम्य द्वारकलशौ स्थापयेत्—सम्पूज्य नमस्कारः—नमस्ते धर्मराजाय त्रेतायुगाधिपाय च यजुर्वेदादिदेवाय सुभद्रं द्वारदक्षिणे॥ ततः कलशोपरि—ॐ पर्जन्याय नमः। ॐ अशोकाय नमः। मध्यकलशे—ॐ वामनाख्यदिग्गजाय नमः—इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—सवस्त्रं सजलं गन्धं पुष्पपल्लवसंयुतम्। सरत्नं स्थापयाम्येव द्वारेऽस्मिन्कलशद्वयम्॥ ततो द्वारोर्ध्वे—ॐ द्वारश्रियै नमः। अधः—ॐ देहल्यै नमः। द्वारशाखयोः—ॐ पुष्पदन्ताय नमः। ॐ कपर्दिने नमः। द्वार-

पश्चिमद्वार पर जाकर कलशस्थापन कर कलश के ऊपर पुष्पदन्त आदि देवों का स्थापन करे। द्वारशाखाओं

१—शूलाग्रे पूषणं मित्रं वरुणं शाखयोस्ततः। सोम आपो मूलयोस्तु पर्जन्याशोककुम्भकौ। द्वारे धातृविधातारौ द्वारश्रीगणपौ तथा। पूजयेच्च नमोऽन्तेन पञ्चम वास्तुपूरुषम्। स्वलोकं च महलकं मङ्गल च बुधं तथा। यजुर्वेद च गोदां च कृष्णं गणपतिं श्रियम्। पुण्डरीकं ध्वजेऽन्याख्यं क्षेत्रपालं समर्चयेदित्युद्योते।

पर नन्दिनी आदि का पूजा करे। फिर दो सामवेदियों का पूजन करे। बलि आदि करे। वायव्यकोण में जाकर

कलशयोः--ॐ गोदावर्यै नमः । ॐ कृष्णायै नमः--इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्--वैवस्वतःमहादेव नमस्ते धर्मसाक्षिक । शिवाज्ञयाऽपहितो देव दिशं रक्ष भवानिह ॥ ततो यजुर्वेदिनौ पूजयेत्--- ॐ इषे त्वोर्ज्जेत्वा० । ततो मध्यकलशोपरि---एह्येहि वैवस्वत धर्मराज सर्वामरैरर्चितधर्ममूर्ते । शुभाशुभानन्दशुचामधीश शिवाय नः पाहि मखं नमस्ते ॥ ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्व तेपितृमते स्वाहा॥ स्वाहा॰ घर्म्माय स्वाहा घर्म्मः पित्रे ॥ यमाय नमः यमं साङ्गं सपरिवारमावाहयामि स्था० इति सम्पूज्य ध्वजपताकामालभ्य---कृष्णवर्णां पताकाञ्च कृष्णवर्णध्वजं तथा । अन्तकायालभामीह क्रतुकर्मणि साक्षिणे ॥ ॐ यमाय त्वा---इमां पताकां रम्यां च ध्वजं माल्यादिभूषितम् । यमदेव गृहाण त्वं प्रसीद करुणाकर ॥ ध्वजपताके सम्पूज्य प्रार्थयेत्--यमस्तु महिषारूढो दण्डहस्तो महाबलः । धर्मसाक्षी विशुद्धात्मा तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ ततो बलिदानम्--इमं माषबलिं देव गृहाणान्तक वै यम । यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ॥ ॐ यमाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय

कलशोंका स्थापन पर उन कलशों पर पुष्पदन्तादि का स्थापनादि कर वायुका आ नो नियुद्भिः—से पूजन करे। शेष

प्रक्रिया पूर्ववत् करे। उत्तरदिशा में जाकर कलशों का स्थापन कर उनपर धनदादि देवों का पूजन कर द्वारदेवताओं

सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो यम बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता शान्तिकर्ता तुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव अनेन बलिदानेन यमः साङ्गः सपरिवारः सायुधः सशक्तिः प्रीयतां न मम। नैर्ऋत्ये गत्वा---आचम्य कलशं संस्थाप्य---निर्ऋतिं खड्गहस्तं च सर्वलोकैकपावनम्। आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम्। कलशोपरि–ॐकुमुदाय नमः। ॐ दुर्ज्जयाय नमः--इति सम्पूज्य--कलशे--एह्येहि रक्षोगणनायकस्त्वं विशालवेतालपिशाचसङ्घैः। ममाध्वरं पाहि पिशाचनाथ लोकेश्वर त्वं भगवन्नमस्ते। ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य। अन्यमस्म दिच्छसातऽइत्या नमो देवि निर्ऋते तुभ्यमस्तु॥ निर्ऋतिं सपरिवारं सा० आवाहयामि। इति सम्पूज्य–ध्वजपताकामालभ्य पताकानिर्ऋतिञ्चैव नीलवर्णं ध्वजं तथा। पिशाचगणनाथाय आलभामि ममाध्वरे॥ ॐ असुन्वन्तम० सम्पूज्य ध्वजपताकयोः–ॐ कुमुदाय नमः ॐ क्षेत्रपालाय नमः। सम्पूज्य प्रार्थयेत्--सर्वप्रेताधिपो देवो निर्ऋतिर्नीलविग्रहः। करे खड्गधारो नित्यं

कर अर्चन करे। फिर अथर्ववेदियों का पूजनादि कर बलि दे। ईशानकोण में जाकर कलशस्थापन कर कलश में

सुप्रतीक तथा मंगल का पूजन कर कलश के ऊपर ईशान का पूजन करे। पूर्ववत् बलि आदि कर्म कर ईशानेन्द्र के

प्र०

निर्ऋतये नमो नमः ।। ततो बलिदानम्--इमं माषबलिं यक्षो गृहाण निर्ऋतिप्रभो । यक्षसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ।। निर्ऋतये साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि । भो निर्ऋते बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्यायुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता वरदो भव--अनेन बलिदानेन निर्ऋतिः साङ्गः सपरिवारः सायुधः सशक्तिकः प्रीयतां न मम । पश्चिमे गत्वा आचम्य ततः कलशौ संस्थाप्य सम्पूज्य नमस्कारः--नमोऽस्तु कामरूपाय पश्चिमद्वाराश्रिताय च। सामवेदाधिपस्त्वं हि नाम्ना कल्याणकारक ।। कलशोपरि--ॐ भूतसञ्जीवनाय०। ॐ अमृताम० । मध्यकलशे--ॐ अनन्ताख्यदग्गजाय० । द्वारोर्ध्वं--ॐ द्वारश्रियै०। अधः--ॐ देहल्यै० । द्वारशाखयोः--ॐ नन्दिन्यै० । ॐ चण्डायै०। द्वारकलशयोः--ॐ रेवायै०। ॐ ताप्यै० इति सम्पूज्य--ततः सामवेदिनौ पूजयेत्--ॐ अग्नऽ आयाहि वीतये गृणानो

२२०

मध्य में जाकर कलशस्थापन कर ब्रह्मा यजुर्वेद आदि का स्थापनादि बलि कर्मथ कर्म करे। नैर्ऋत्यपश्चिम के

प्र०

२२०

१—अर्यमाऽशुर्विस्वांम्बानिलानलवसूस्तथा । (शाखायः) जीवसनामृतौ चैव कुम्भौ धान्ये ततोऽर्चयेत् । द्वारे वातृ वि० । जनलोकं तपोलोकं गुरुं शुक्रं च शाखयोः । सामवेदं नर्मदां च तार्पी गणपतिं श्रियम् । वषं स्कदं पूजयित्वा श्वेतवर्णं ध्वजेऽर्चयेत् । कालाख्यक्षेत्रपाल च नवनीतोदनं बलिमिति

मध्य में जाकर कलशस्थापनादि कर 'अस्मे रुद्रा--से ब्रह्मा का स्थापन करे। बलिदानादि करे। नैर्ऋत्य पश्चिम के

हव्यदातये॥ निहोता सत्सि बर्हिषि॥ इति सम्पूज्य मध्यकलशे--एह्येहि यादोगणवारिधीनां गणेन पर्जन्य सहाप्सरोभिः। विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते॥ ॐ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः॥ अहेडमानो वरुणेहबोद्ध्युरुशंस मान आयुः प्रमोषीः॥ वरुणं साङ्गं सपरिवारं आवाहयामि। वरुणाय साङ्गाय सपरिवाय नमः इति सम्पूज्य ध्वजपताकामालभ्य--श्वेतवर्णा पताकां च ध्वजं श्वेतमयं शुभम्। वरुणाय जलेशाय ह्यालभामि सुखाप्तये॥ ॐ उदुत्तमंव्वरुणपाशमस्मदवाधमं व्विमध्यमं श्रथाय॥ अथाव्वयमादित्य व्व्रते तवानागसाऽअदितये स्याम॥ इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्--पाशहस्तस्तु वरुणः साम्भसाम्पतिरीश्वर। यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदे भव॥ वरुणाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलि समर्पयामि। भो वरुण बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव--अनेन बलिदानेन नमो भगवते सकलजलानामधिपतये न मम ५ वायव्ये

मध्य में कर जाकर कलशस्थापन कर कलश के ऊपर स्योना पृथिवि--से अनन्त का पूजनादि कर बलि दे। फिर

महाध्वज का पूजन करे। यह ध्वज विचित्र वर्ण का होता है। तीन हाथ या सात हाथ विस्तार पाँच या दश

गत्वा आचम्य कलशं प्रतिष्ठाप्य--कलशे--ॐ पुष्पदन्ताय नमः। ॐ सिद्धार्थाय नमः--इति गन्धादिभिः सम्पूज्य कलशोपरि--एह्येहि यज्ञे मम रक्षणार्थं मृगाधिरूढः सह सिद्धसङ्घैः। प्राणाधिपः कालकवेः सहाय गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहि यज्ञम् ॥ व्वायो ऽअस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ वायवे नमः वायुं० सम्पूज्य ध्वजपताकामालभ्य--पताकां वायवे धूम्रां धूम्रवर्णध्वजं तथा। आलभाम्यनुरूपाय प्राणदाय हिताय च ॥ ॐ व्वायो ये ते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि ॥ नियुत्वान्सोमपीतये ॥ इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्--अनाकारो महौजाश्च सर्वगन्धवहः प्रभुः। तस्मै पूज्याय जगतो वायवेऽहं नमामि च ॥ ततो बलिदानम्--माषभक्तबलिं वायो मया दत्तं गृहाण भो। यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ॥ वायवे साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो वायो साङ्गः सपरिवारः सायुधः सशक्तिकः मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्य-

हाथ लंबा होता है। इसमें इन्द्रस्य वृष्णः--ब्रह्म यज्ञानम् से पूजन कर सोलह स्तंभों में--सर्वेभ्यो, सर्वेभ्यो नमः

५०
२२३

के वंश में----किन्नर, और पन्नग का पूजनादि करे। तदनन्तर मण्डप के सोलह वलिकाओं में----सर्वेभ्यो नमः।

कर्ता वरदो भव। अनेन बलिदानेन नमो भगवते वायवे सकलप्राणानामधिपतये प्रीयतां न मम। उत्तरे गत्वा---आचम्य द्वारकलशौ संस्थाप्य संपूज्य नमस्कारः---नमस्ते दिव्यरूपत्वमथर्वाधिपते प्रभो। कलावधिपतिर्नाम्ना मङ्गलश्चोत्तरानन॥ कलशोपरि---ॐ धनदाय नमः। ॐ श्रीप्रदाय नमः। मध्यकलशे--सार्वभौमदिग्गजाय नमः--इति सम्पूज्य द्वारोर्द्ध्वं--ॐ द्वारश्रियै नमः। अधः--ॐ देहल्यै नमः। द्वारशाखयोः--महाकालायः नमः। ॐ भृङ्गिणे नमः। द्वारकलशयोः--ॐ नर्मदायै नमः। ॐ ताप्यै नमः--इति सम्पूज्य अथर्वाणो पूजयेत्--ॐ शन्नो देवीरभिष्टय ऽआपो भवन्तु पीतये॥ शँय्योरभिस्रवन्तु नः॥ मध्यकलशे--एह्येहि यज्ञेश्वर यज्ञरक्षां विधत्स्व नक्षत्रगणेन सार्धम्। सर्वौषधीभिः पितृभिः सहैव गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते॥ ॐ व्वयꣳ सोम व्रते तव मनंस्तनूषु

वंशो में---किन्नरेभ्यो नमः, मण्डप के पीछे---पन्नगेभ्यो नमः---कहें। फिर अष्टदलबनाकर उस अष्टदलों में

प्र०
२२३

१--त्वष्टा च सविता विष्णुः शृङ्गेषु द्वारशाखयोः। प्रत्यूषं च प्रभासं च चण्ड चापि प्रचण्डकम् १ धनदश्रीप्रदो कुम्भौ तत्र सोमं समर्चयेत्। द्वारे धातृ वि० २ सत्यलोकं ध्रुवलोकं शनिराहुमथवर्णम्। वेणीं पयोष्णीं गणपं श्रियं चापि ध्वजं ततः। सुमुखं च गदामेकपादं क्षेत्रपमर्चयेत्। प्रैयङ्गवं बलिं दत्वाऽऽथर्वयेत्ततः। इति। अत्र श्लोकेषु प्रशान्तादिकलशद्वयस्थापनं ध्वजादिस्थापनं द्वारपालादिपूजनं बलिदानं च द्वारपूजने ज्ञेयमिति।

नमो गणेभ्यः—से पूजन कर त्रैलोक्ये यानि—इत्यादि से पढ़कर अक्षतपूंजोंमें पूर्वादिक्रम से त्रैलोक्येभ्यः स्थावरेभ्यो

प्र०

२२४

बिभ्रतः ॥ प्रजावन्तः सचेमहि ॥ सोमाय नमः० सोम० इति सम्पूज्य ध्वजापताकामालभ्य—हरितवर्णां पताकां च हरिद्वर्णमयं ध्वजम् । कुबेराय लभाम्येव पूजये च सदार्थिना ॥ ॐ आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् ॥ भवा वाजस्य सङ्गथे ॥ सम्पूज्य प्रार्थना—गौरोपमपुमान् स्थूलः सर्वौषधिरसादयः । नक्षत्राधिपतिः सोमस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ ततो बलिदानम्—इमं माषभक्तबलिं देव गृहाण त्वं धनप्रद । यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ॥ सोमाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि । भो सोम बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव । अनेन बलिदानेन नमो भगवते सोमाय सकलकोशाधिपतये प्रीयतां न मम । ईशाने गत्वा—आचम्य कलशं संस्थाप्य—कलशे ॐ सुप्रतीकाय नमः १ मङ्गलाय नमः २ इति सम्पूज्य पुनः कलशोपरि—एह्येहि विश्वेश्वर नस्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गधरेण सार्धम् ॥ लोकेश भूतेश्वर यज्ञसिध्यै गृहाण पूजां

नमः—इत्यादि मन्त्रों से आवाहन पूजन कर सबों को बलि दे फिर हाथ पैर धोकर मण्डप में प्रवेश दक्षिण की तरफ बैठकर 'यथा विहितं कर्म कुरुध्वम्—यह प्रैष दे ।

प्र०

२२४

भगवन्नमस्ते ॥ ॐ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसे हूमहे व्वयम् ॥ पूषा नो यथा वेद सामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ईशानाय नमः ईशान० इति सम्पूज्य ध्वजपताका-[2]मालभ्य–ईशानाय ध्वजं [3]श्वेतं पताकां गन्धभूषिताम् । आलभामि महेशाय वृषारूढाय शूलिने ॥ ॐ तमीशानम्० ॥ सम्पूज्य प्रार्थना–सर्वाधिपो महादेवः ईशानः शुक्ल ईश्वरः । शूलपाणिर्वि-रूपाक्षः तस्मै नित्यं नमः ॥ ततो बलिदानम्–इमं माषबलिं देव गृहाणेशानशङ्कर ॥ यज्ञ-संरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव ॥ ईशानाय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि । भो ईशानं बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुःकर्ता

१—मयूखात्त्वियं न दृश्यतेऽग्निपुराणेऽनुक्तत्वादित्युक्तम् कृत्वैवं मण्डपं पूर्वं चतुर्द्वारेषु विन्यसेत् । अव्रणान्कलशानष्टौ जलकाञ्चनगर्भितान् । चुतपल्लवसञ्छन्नान् । सर्वौषधिफलोपेतान् चन्दनोदकपूरितान् ॥ इति प्रतिष्ठाविधौ मात्स्योक्तेः । द्वारेषु कुम्भद्वयमत्र कार्यं स्रगान्धमालाम्बर-रत्नमुक्तम् इति तुलाविधौ तत्रैवोक्तेश्च । २—प्रतिष्ठाविधौ मयूखादौ तत्त्वदं नास्ति । जलाशयविधौ तु सर्वत्रास्तीति बोध्यम् । ३—एतच्चाधुनिक-सप्रदायानुरोधेन । युक्तन्तु तोरणशाखयोः कलशौ सस्थाप्य तयोः पूजनम् । आग्नेये तथैवोक्तत्वात् । तथाहि आग्नेये–तच्छाखामूलदेशस्थौ प्रशान्तशिशिरौ घटौ । पर्जन्याशोकनामानौ भूतसंजीवनामृतौ । धनदश्रीप्रदौ तद्वत्पूजयेदनुपूर्वशः स्वनामभिश्चतुर्थ्यन्ते प्रणवादिनमोन्तकैरिति । तेन प्रतिष्ठाप्रकरणोक्ता-नाम्प्रशान्तादीनां प्रतिष्ठातिरिक्तविधौ न स्थापनमित्यायाति । अत एव रुद्रकल्पद्रुमादौ कुत्राप्येषां पूजन नोक्तमिति ध्येयम् । प्रतिष्ठामयूखोद्योतादौ तु तोरणेषु कलशद्वयं संस्थाप्य तत्रैव प्रशान्तादीनां पूजनमुक्तमित्युक्तम् । द्वारश्रियै इति अत आरभ्य द्वारपूजाऽनन्तदेवाद्युक्ता लिखितेति ।

शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव। अनेन बलिदानेन ईशानः साङ्गः सपरिवारः सायुधः सशक्तिकः प्रीयतां न मम। ईशानेन्द्रयोर्मध्येगत्वा—आचम्य कलशं प्रतिष्ठाप्य कलशे—एह्येहि विष्णवाधिपते सुरेन्द्र लोकेन सार्द्धं पितृदेवताभिः। सर्वस्य धातास्यमितप्रभावो विशाध्वरन्नः सततं शिवाय॥ ॐ अस्मे रुद्रा मेहना पर्व्वता सोव्वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः॥ यः शꣳ संते स्तुवते धायिपज्र ऽइन्द्रं ज्येष्ठा ऽअस्माँ२ऽअवन्तु देवाः॥ ब्रह्मण० ब्रह्माणं० इति सम्पूज्य ध्वजपताकामालभ्य-पञ्चवर्णां पताकां च पञ्चवर्णध्वजं तथा। आलभामि सुरेशाय ब्रह्मणेनन्तशक्तये॥ ॐब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्वीसीमतः सुरुचो व्वेन ऽआवः॥ सबुध्न्या ऽउपमा ऽअस्य व्विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च व्विवः॥ इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—पद्मयोनिश्चतुर्मूर्त्ति वेदव्यासपितामहः। यज्ञाध्यक्षश्चतुर्वक्रस्तस्मै नित्यं नमो नमः॥ ततो बलिदानम्—इमं माषबलिं ब्रह्मन् गृहाण कमलासन। यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव॥ ब्रह्मणे साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो ब्रह्मन् मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्यायुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव।

प्र० २२६

अनेन बलिदानेन नमो भगवते ब्रह्मणे सकलवेदशास्त्रतत्वज्ञानाधिपतये प्रीयतां न मम। नैर्ऋत्यपश्चिमयोर्मध्ये गत्वा—आचम्य कलशं प्रतिष्ठाप्य वरुणाय नमः सम्पूज्य पुनः कलशोपरि—एह्येहि पातालधरामरेन्द्र नागाङ्गनाकिन्नरगीयमान। यक्षोरगेन्द्रामरलोकसङ्घैरनन्त रक्षाध्वरमस्मदीयम्॥ ॐस्योना पृथिवि नो भवान्नृक्षरा निवेशनि॥ यच्छानः शर्म्म सप्रथाः॥ अनन्ताय नमः अनन्त० इति सम्पूज्य ध्वजपतामालभ्य—मेघवर्णां पताकां च मेघवर्णं ध्वजन्तथा। आलभामि ह्यनन्ताय धरिणीधारिणे नमः॥ ॐ नमोऽस्तु सर्प्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु॥ येऽअन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः॥ इति सम्पूज्य प्रार्थयेत्—घनवर्णां पताकेमां ध्वजं गन्धविभूषितम्। स्थापयामि प्रसन्नाय अनन्ताय नमो नमः॥ ततो बलिदानम्—इमं माषबलिं शेष गृहाणानन्तपन्नग॥ यज्ञसंरक्षणार्थाय प्रसन्नो वरदो भव॥ अनन्ताय साङ्गाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय इमं दधिमाषभक्तबलिं समर्पयामि। भो अनन्त बलिं गृहाण मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्यायुःकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता क्षेमकर्ता आरोग्यकर्ता वरदो भव—अनेन बलिदानेन अनन्तः प्रीयतां न मम १० अथ महाध्वजपूजनम्—मण्डपमध्ये—ॐ इन्द्रस्य

वृष्णो व्वरुणस्य राज्ञऽआदित्या नां मरुताᳬ शर्द्धऽउग्रम् ॥ महामनसां भुवनच्यवानोंघोषो देवानां जयंतामुदंस्थात् ॥ इति षोडशहस्तवंशे महाध्वजं विचित्रवर्णं प्रान्तः किङ्किण्यादियुतं त्रिहस्तविस्तृतं सप्तहस्तदीर्घं वा पञ्चहस्तविस्तृत दशहस्तदीर्घं संस्थाप्य ॐ ब्रह्म यज्ञानमिति सम्पूज्य मण्डप-षोडशस्तम्भेषु—ॐसर्वेभ्यो देवेभ्यो देवेभ्यो नमः । वंशेषु—ॐकिन्नरेभ्यो नमः । पृष्ठ—ॐ पन्नगेभ्यो नमः । मण्डपाद्बहिः प्राच्यामुपलिप्तभूमावुपविश्य (मण्डपान्त इति शास्त्रार्थप्रकरणे प्रतिष्ठेन्द्रौ) सम्पूज्य आलभेत्—इमं विचित्रवर्णन्तु महाध्वजविनिर्मितम् । महाध्वजञ्चालभामि महेन्द्राय सुप्रीतये ॥ ॐ ब्रह्म यज्ञानं० । अमुं महाध्वजं चित्रं सर्वविघ्नविनाशकं । महामण्डपमध्ये तु स्थापयामि सुरार्चने । ॐ इन्द्रस्य वृष्णो व्वरुणस्य राज्ञऽआदित्यानाम्मरुताᳬशर्द्धऽउग्रम् ॥ महा-म्मनसाम्भुवनच्च्युवाना घोषो देवानाञ्जयंतामुदंस्थात् ॥ अनया पूजया इन्द्रः प्रीयताम् ॥ ततो मण्डपषोडशबलिकासु—ॐसर्वेभ्यो नमः १ मण्डपपृष्ठे—ॐ पन्नगेभ्यो नमः २ तत्राष्टदलं विरच्य तत्राष्टदलेषु—ॐनमो गणेभ्यो गणपतिभ्यश्च०—सम्पूज्य प्रार्थयेत्—त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि । ब्रह्मविष्णुशिवैः सार्द्धं रक्षां कुर्वन्तु तानि वै ॥ देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।

प्र०
२२८

ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च ॥ सर्वे ममाध्वरं रक्षां प्रकुर्वन्तु मुदान्विताः ॥ ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च क्षेत्रपालो गणैः सह । रक्षन्तु मण्डपं सर्वे घ्नन्तु रक्षांसि सर्वतः ॥ इति पठित्वाऽक्षतपुञ्जेषु पूर्वादिक्रमेण–ॐ त्रैलोक्यस्थेभ्यः स्थावरेभ्यो नमः । त्रैलोक्यस्थावरानावाहयामि । ॐ त्रैलोक्यस्थेभ्यश्चरेभ्यो नमः । त्रैलोक्यस्थरेभ्यश्चरानावाहयामि । ॐ ब्रह्मणे नमः । ब्रह्माणमा० । ॐ विष्णवे नमः । विष्णुमा० ॐ शिवाय नमः । शिवामा० । ॐ देवेभ्यो नमः देवानावा० । ॐ दानवेभ्यो नमः । दानवानावा० । ॐ गन्धर्वेभ्यो नमः । गन्धर्वानावा० । ॐ यक्षेभ्यो नमः । यक्षानावा० । ॐ राक्षसेभ्यो नमः । राक्षसानावा० । ॐ पन्नगेभ्यो नमः । पन्नगानावा० । ॐ ऋषिभ्यो नमः । ऋषीनावा० । ॐ मुनिभ्यो नमः । मुनीनावा० । गोभ्यो नमः । गा आवा० । ॐ देवमातृभ्यो नमः । देवमातृः–आ० । इत्यावाह्य सम्पूज्य–सर्वेभ्यो बलिं दत्वा तत्रैव गणपतिमावाह्य संपूज्य बलिं दत्वा । ॐ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषां वर्षमिषवः । तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः ॥ तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु तेनो मृडयन्तु यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दद्ध्मः ॥ इतिमन्त्रेण दिक्षु विदिक्षु अक्षतपुञ्जेषु रुद्रमावाध्य सम्पूज्य

बलिं दत्वा सर्वान् विसृज्य ईशाने सर्वभूतबलिं दद्यात्। तत्र मन्त्राः—ते च पूर्तकमलाकरोद्धोतादावुक्ता उच्यन्ते—अधश्चैव तु ये लोका असुराश्चैव पन्नगाः। सपत्नीपरिवाराश्च प्रतिगृह्णन्त्विमं बलिम् १ नक्षत्राधिपतिश्चैव नक्षत्रैः परिवारितः। स्थानं चैव पितृणां तु सर्वे गृह्णन्त्विमं बलिम् २ ईशानोत्तरयोर्मध्ये क्षेत्रपालो महाबलः। मीननामा महादंष्ट्रः। प्रतिगृह्णात्विमं बलिम् ३ ये केचित्विह लोकेषु आगता बलिकाङ्क्षिणः। तेभ्यो बलिं प्रयच्छामि नमस्कृत्य पुनः पुनः ४ बलिं गृह्णन्त्विमे देवा आदित्या वसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः ५ असुरा यातुधानाश्च पिशाचा मातरो गणाः। शाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवाः ६ जृम्भका सिद्धगन्धर्वा नागा विद्याधरा नगाः। दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः ७ जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः। मा विघ्नं मा च ये पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ८ सौम्य भवन्तु तृप्ताश्च देवा भूतगणास्तथा ते गृह्णन्तु मया दत्तं बलिं वै सार्वभौतिकम् ९ अनेन बलिदानेन अधोलोकादयः प्रीयन्ताम्—इति प्रतिपादर्शे। ततः प्रक्षालितपादपाणिः प्राग्द्वारेण मण्डपं प्रविश्य यजमानो दक्षिणत उपविश्य—यथाविहितं कर्म कुरुध्वमिति प्रेषयेदिति कमलाकरादयः—इति मण्डपतोरण-द्वार-पूजनम्।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(सर्वतोभद्रपूजनम्)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

सर्वतोभद्रचक्रम्

(१) नन्दीश्वर, शूल और महाकाल इन तीन देवताओं का नाम मन्त्र से ही आवाहन आदि रुद्रकल्पद्रुम, मयूख आदि ने कहा है।

(२) 'प्रतिष्ठासरणी' और भद्रमार्तण्ड' में शूल और महाकाल को एक देवता ही माना है। 'रुद्रकल्पद्रुम' तथा मयूख कारने शूल और महाकाल को अलग-अलग देवता शब्द से व्यवहार किया है। यदि दोनों को एक देवता स्वीकार करेंगे तो 'अवरुद्र मदी इस मन्त्र से या नाम मन्त्र से स्थापना करे।

(३) देवप्रतिष्ठा मं सर्वतोभद्रमण्डलमध्य में कलश स्थापन और देवता स्थापन मयूखकार आदि ने नहीं लिखा है। रुद्रयाग आदि में तो रुद्रकल्पद्रूम आदि ने लिखा है।

फिर भी—'स्थापन यस्य देवस्य क्रियते पद्मलोचन। कृत्वा तस्य तनुं हैमीं मण्डले संप्रपूजयेत्। इस ब्रह्मयामल वचन से देवप्रतिष्ठा में देवता का पूजन कलशपर ही करे। संप्रदाय भी ऐसा ही है।

(४) परिधि में रहनेवाले गदा, त्रिशूल आदि का स्थापन 'मयूख तथा रुद्रकल्पद्रुम' आदि ने नाम मन्त्र से ही कहा है। यहाँ जो आधुनिक मन्त्रों को पढ़ते हैं। यह अनौचित्य ही प्रतीत होता है। क्योंकि इसका मूल नहीं मिलता है।

अथ सर्वतोभद्रपूजनम्

एह्येहि सर्वाधिपते सुरेन्द्र लोकेन सार्धं पितृदेवताभिः । सर्वस्य धातास्यमितप्रभावो रक्षाध्वरं न सततं शिवाय ॥ ॐ ब्रह्मयज्ञानंप्रथमंपुरस्ताद्विसीमतःसुरुचोव्वेनऽआवः ॥ सबुध्न्याऽउपमाऽअस्यव्विष्ठाःसतश्चयोनिमसतश्चव्विवः ॥ सर्वतोभद्रमध्ये कर्णिकायाम्—ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणमावाहयामि स्थापयामि ॥ १ ॥ एह्येहि यज्ञेश्वर यक्षरक्षां विधत्स्व नक्षत्रगणेन साकम् । सर्वौषधीभिः पितृभिः सहैव गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ व्वयꣳसोमव्व्रतेतवमनस्तनूषुबिभ्रतः ॥ प्रजावन्तः सचेमहि ॥ उत्तरे वाप्यां लिङ्गे वा-सोमाय०सोमम् ॥२॥ एह्येहि यज्ञेश्वर नस्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गवरेण सार्धम् । लोकेन यज्ञेश्वर यज्ञसिध्यै गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ तमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्न्वमवसेहूमहेव्वयम् ॥ पूषानोयथाव्वेदसामसद्वृधेरक्षिता-

'ब्रह्मयज्ञानम्' इस मन्त्र से भद्र के मध्य कर्णिका पर ब्रह्मा, 'वयꣳ सोम' से उत्तरदिशा की वापी में सोम, 'तमी-

---

आवाहयामि स्थापयामि—इस-वाक्यको प्रतिदेवता में जोड़ना चाहिये ।

शानम्' से ईशानकोणस्थित खण्डेन्दु पर ईशान, 'त्रातारमिन्द्रम्' से पूर्वदिशा में इन्द्र, 'त्वन्नोऽ अग्ने' से अग्निकोणस्थित

पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ईशान्यां खण्डेन्दौ ईशानाय० ईशानम् ॥ ३ ॥ एह्येहि सर्वामरसिद्ध-साध्यैरभिष्टुतो वज्रधरामरेश । संवीज्यमानोऽप्सरसां गणेन रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ त्रातारमिन्द्रमविता मिन्द्रꣳहवेहवे सुहवꣳ शूर मिन्द्रम् ॥ ह्वयामि शक्रम्पुरुहूतमिन्द्रꣳस्वस्तिनो मघवाधात्विन्द्रः ॥ पूर्वे वाप्यां लिङ्गे वा इन्द्राय० इन्द्रम् ॥ ४ ॥ एह्येहि सर्वामर हव्यवाह मुनिप्रगल्भैरमराभिजुष्ट । तेजोवता लोकगणेन सार्धं ममाध्वरं पाहि कवे नमस्ते ॥ ॐ त्वन्नो-ऽअग्नेतवदेवपायुभिर्मघोनोरक्षतन्न्वश्चवन्द्य ॥ त्राताता कस्यतनयेगवामस्यनिमेषꣳ रक्षमाणस्तव-व्रते ॥ आग्नेय्यां खण्डेन्द्रौ-अग्नये० अग्निम् ॥ ५ ॥ एह्येहि वैवस्वत धर्मराज सर्वामरैरर्चितधर्म-मूर्ते । शुभाशुभानन्दशुचामधीश शिवाय नः पाहि भवन्नमस्ते । ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वतेपितृमते स्वाहा ॥ स्वाहाघर्म्मायस्वाहाघर्म्मः पित्रे ॥ दक्षिणे वाप्यां लिङ्गे वा-यमाय० यमम् ॥ ६ ॥ एह्येहि रक्षोगणनायकस्त्वं विशालवेतालपिशाचसंघैः । ममाध्वरं पाहि पिशाचनाथ लोकेश्वरस्त्वं भगवन्नमस्ते ॥ ॐ असुन्न्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्न्विहितस्करस्य ॥ अन्न्यमस्ममदिच्छ-

प्र० २२५

सातंऽइत्यानमोदेविनिर्ऋतेतुभ्यमस्तु ॥ नैर्ऋत्यां खण्डेन्दौ निर्ऋतये० निर्ऋतिम् ॥ ७ ॥ एह्येहि यादोगणवारिधीनां गणेन पर्जन्यसहाप्सरोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमान पाहि त्वमस्मान्भगवन्नमस्ते ॥ ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्तेयजमानोहविर्भिः ॥ अहेडमानोव्वरुणेह बोद्ध्युरुशꣳसमानऽआयुःप्रमोषीः ॥ पश्चिमे वाप्यां लिङ्गे वा वरुणाय० वरुणम् ॥ ८ ॥ एह्येहि यज्ञेश समीरण त्वं मृगाधिरूढ सहसिद्धसंघैः । प्राणस्वरूपिन्सुखता सहाय गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ आनोनियुद्भिःशतिनीभिरध्वरꣳसहस्रिणीभिरुपयाहियज्ञम् ॥ व्वायोऽअस्मिन्त्सवनेमादयस्वयूयम्पातस्वस्तिभिःसदानः ॥ वायव्यां खण्डेन्दौ-वायवे० वायुम् ॥ ९ ॥ एतैन सर्वे वसवो निधीशाः रत्नाकराः सूर्यसहस्रतेजाः । धनस्वरूपा मम पान्तु यज्ञं गृहीत पूजां भगवन्त एताम् । ॐ सुगा वो देवाःसदनाऽअकर्मयऽआजग्मेदꣳ सवनञ्जुषाणाः ॥ भरमाणाव्वहमानाहवीꣳष्यस्मेधत्तव्वसवोव्वसूनिस्वाहा ॥ वायुसोममध्ये रक्तभद्रे-अष्टवसुभ्यो० अष्टवसून् ॥ १० ॥ एतैत रुद्रा गणपास्त्रिशूलकपालखट्वाङ्गधरा महेशाः । यज्ञेश्वराः पूजितयज्ञसिद्ध्यै गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ॥ ॐ रुद्राःसꣳसृज्यपृथिवीम्बृहज्ज्योतिःसमीधिरे ॥ तेषां-

प्र० २२८

भानुरजस्त्र ऽइच्छुक्रोदेवेषुरोचते ।। सोमेशानमध्ये रक्तभद्रे एकादशरुद्रेभ्यो० एकादशरुद्रान् ।।११।।
एतैत सूर्याः कमलासनस्थाः सुरक्तसिन्दूरसमानवर्णाः । रक्ताम्बरा सप्तहयाः परेशा गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ।। ॐ यज्ञोदेवानांप्रत्येतिसुम्नमादित्यासोभवताम्मृडयन्तः ।। आवोर्वाचीसुमतिर्व्ववृत्यादह्होश्चिद्याव्वरिवोवित्तरासदादित्येभ्यस्त्वा ।। ईशानेन्द्रमध्ये भद्रे-द्वादशादित्येभ्यो० द्वादशादित्यान् ।। १२ ।। आयातमायातमुभौ कुमारावश्वी मुनीन्द्रादिकसिद्धसेव्यौ । गृह्णीतमेतां म पूजनीयौ पूजां सुरम्यां कुरुतं नमो वाम् ।। ॐ अश्विनातेजसाचक्षुः प्राणेनसरस्वती-व्वीर्यम् ।। व्वाचेन्द्रोबलेनेन्द्राय दधुरिन्द्रियम् ।। इन्द्राग्निमध्ये रक्तभद्रे-अश्विभ्यां० अश्विनौ ।। १३ ।। एतैत विश्वे त्रिदशा वरेण्याः वरप्रदाः सन्तु ममाप्तिहेतोः । यज्ञेश्वरा मे शुभदाः परेशा गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ।। ॐ व्विश्वेदेवासऽआगतशृणुतामऽइमꣳहवम् ।। एदम्बर्हिन्निषीदत ।। उपयामगृहीतोऽसिव्विश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यऽएषतेयोनिर्व्विश्वेभ्यस्त्वादेवेभ्यः ।। अग्नियममध्ये रक्तभद्रे-सपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यो० सपैतृकविश्वान्देवान् ।। १४ ।। एतैत यक्षो

में--एकादशरुद्र, 'यज्ञो देवानाम्' से ईशान कोण और पूर्वदिशा (इन्द्र) के मध्य रक्त, भद्र में द्वादशादित्य, 'अश्विना तेजसा'

गणनायका भो विशालवेतालपिशाचसङ्घैः । ममाध्वरं पातपिशाचनाथाः गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ॥ ॐ अभित्यन्देवः सवितारमोण्योः कविक्रतुमर्च्चामि सत्यसवं रत्नधामभिप्रियं मतिङ्कविम् ॥ ऊर्द्ध्वायस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनि हिरण्यपाणिरमिमीतसुक्रतुः कृपास्वः ॥ प्रजाभ्यस्त्वाप्रजा-स्त्वानुप्राणन्तुप्रजास्त्वमनुप्राणिहि ॥ यमनिर्ऋतिमध्ये रक्तभद्रे-सप्तयक्षेभ्यो० सप्तयक्षान् ॥१५॥ एतेत सर्पाः शिवकण्ठभूषालोकोपकाराय भुवं वहन्तः । जिह्वाद्वयोपेतमुखामदीयां गृह्णीत पूजां सुखदां नमो वः ॥ सर्पेभ्यो० सर्पानावा० ॥ नमोऽस्तुसर्प्पेभ्योयेकेचपृथिवीमनु ॥ येऽअन्तरि-क्षेयेदिवितेभ्यः सर्प्पेभ्योनमः ॥ निर्ऋतिवरुणमध्ये रक्तभद्रे—अष्टकुलनागेभ्यो० अष्टकुलनागान् ॥१६॥ आवाहयेऽहं सुरदेवसेन्याः स्वरूपतेजोमुखपद्मभासः । सर्वामरेशैः परिपूर्णकामाः गृह्णीत पूजां मम यज्ञभूमौ ॐ ऋताषाडृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोप्सरसोमुदोनाम ॥ सनऽइदं ब्रह्मक्षत्रम्पातुतस्मै स्वाहाव्वाट्ताभ्यः स्वाहा ॥ वरुणवायुमध्ये रक्तभद्रे गन्धर्वाप्सरास्यो०गन्धर्वाप्स-रसः ॥ १७ ॥ एह्येहि यज्ञेश्वर यज्ञसूनो शिखोन्द्रगामिन्द्रसुरसिद्धसङ्घैः । संस्तूयमानात्मशुभाय नित्यं गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ यदक्रन्दः प्रथमञ्जायमानऽउद्यन्त्समुद्रादुत पुरीषात् ॥

प्र० श्येनस्यपक्षाहरिणस्यबाहूऽउपस्तुस्त्यम्महिजातन्तेऽअर्वन् ॥ ब्रह्मसोममध्ये वाप्यां लिङ्गे वा-
स्कन्दाय० स्कन्दम् ॥ १८ ॥ एह्येहि देवेन्द्र पिनाकपाणे खण्डेन्दुमौलिप्रियशुभ्रवर्ण । गौरीश प्र०
यानेश्वर यक्षसिद्ध गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ आशुःशिशानोवृषभोनभीमोघनाघनःक्षोभण-
श्चर्षणीनाम् ॥ सङ्क्रन्दनोनिमिषऽएकवीरःशतःसेनाऽअजयत्साकमिन्द्रः ॥ तत्रैव-नन्दीश्वराय०
२३८ नन्दीश्वरम् ॥ १६ ॥ एह्येहि शूलप्रियनर्शन त्वं यतो मुनीन्द्रादिकसिद्धसेव्य । गृहाण पूजां मम
शूलदेव ममाध्वरं पाहि भवन्नमस्ते ॥ ॐ यत्तेगात्रादग्निनापच्यमानादभिशूलन्निहतस्यावधावति ॥
मातद्भूम्यामाश्रिषन्मातृणेषुदेवेभ्यस्तदुशद्भ्योरातमस्तु ॥ तत्रैव-शूलाय०शूलम् ॥२०॥ एह्येहि
देवेन्द्र गृहीतदण्डं सर्वान्तकृत्सिद्धमुनिप्रपूजित । गृहाण पूजां मम कालदेव रक्षाध्वरं नः सततं
शिवाय ॥ ॐ कार्षिरसिसमुद्रस्यत्वाक्षित्याऽउन्नयामि ॥ समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधीभिरोषधीः ॥
तत्रैव–महाकालाय० महाकालम् ॥२१॥ आगच्छतागच्छत विश्वरूपाश्चतुर्मुखश्रीधरशंभुमान्याः ।
सुपुस्तकास्रक्स्रुवपात्रहस्ता गृहीत पूजां वरदा नमो वः ॥ ॐ शुक्रज्योतिश्चचित्रज्ज्योतिश्चसत्य- २३८

दिशा के मध्यवापी में स्कन्द, 'आशुः शिशानः' से वहीं पर उसके आगे नन्दीश्वर, 'यत्ते गात्रादग्निना' से वहीं पर

उसके आगे शूल, 'कार्षिरसि' से वहीं पर उसके आगे महाकाल, 'शुक्रज्योतिश्च' से ब्रह्मा और ईशानकोण के मध्य कृष्ण

ज्ज्योतिश्चज्ज्योतिष्माँश्च । शुक्रश्चऋतपाश्चात्यंहाः ॥ ब्रह्मेशानमध्ये कृष्णभृङ्खलायाम् दक्षादिभ्यो० दद्यादि ॥२२॥ एह्येहि दुर्गे दुरितौघनाशिनि प्रचण्डदैत्यौघविनाशकारिणी। उमे महेशार्धशरीरधारिणी स्थिराभव त्वं मम यज्ञकर्मणि ॥ ॐ अम्बे अम्बिके म्बालिकेनमानयतिकश्च न ॥ ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पीलवासिनीम् ॥ ब्रह्मेन्द्रमध्ये वाप्यां लिङ्गे वा-दुर्गायै० दुर्गाम् ॥२३॥ एह्येहि नीलाम्बुदमेचकत्वं श्रीवत्सवक्षः कमलाधिनाथ। सर्वामरैः पूजितपादपद्म गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपांसुरे स्वाहा ॥ तत्रैव-विष्णवे० विष्णुम् ॥ २४ ॥ सुखाय पितृन्कुलवृद्धिकर्तॄन् रक्तोत्पलाभानिह रक्तनेत्रान्। सुरक्तमाल्याम्बरभूषितांश्च नमामि पीठे कुलवृद्धिहेतोः ॥ ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः ॥ अक्षन्नपितरोमीमदन्तपितरोऽतीतृपन्तपितरःशुन्धध्वम् ॥ ब्रह्माग्निमध्ये कृष्णशृङ्ख० स्वधायै० स्वधाम् ॥२५॥

शृंखला में—दक्षादि, 'अम्बेऽ अम्बिके' से ब्रह्मा और इन्द्र (पूर्व) के मध्य वापी पर दुर्गा, 'इदं विष्णुः' से वहाँ पर

प्र० २४०

(उसके आगे) विष्णु, पूर्वदिशा में—"पितृभ्यः स्वधायिभ्यः' से ब्रह्मा तथा अग्निकोण के मध्य कृष्ण शृंखला पर

आगच्छतागच्छत मृत्युरोगा आरक्तश्मश्मास्यललाटनेत्राः। रक्ताम्बरारक्तविभूषणाश्च नमामि युष्मान्सुखवृद्धिहेतोः ।। ॐ परम्मृत्यो ऽअनुपरेहिपन्थांयस्ते ऽअन्न्य ऽइतरोदेवयादात् ।। चक्षुष्मते शृण्वतेतेब्रवीमिमानः प्रजाछंरीरिषोमोतवीरान् ।। ब्रह्मयममध्ये वाप्याम्—मृत्युरोगेभ्यो० मृत्युरोगान् ।।२६।। एह्येहि विघ्नाधिपते सुरेन्द्र ब्रह्मादिदेवैरभिवन्द्यपाद। गजास्य विद्यालयविश्वमूर्ते गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ।। ॐ गणानान्त्वा-ब्रह्मनिर्ऋतिमध्ये कृष्णशृङ्खलायाम्-गणपतय० गणपतिम् ।। २७ ।। आगच्छतागच्छत पाशहस्ता पादोगणैर्वन्दितपादद्म। पीठेऽत्र देवा भगवन्त आपो गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ।। ॐअप्स्वग्नेसधिष्टवसौषधीरनुरुध्यसे ।। गर्भे सञ्जायसेपुनः ।। ब्रह्मवरुणमध्ये वाप्यां लिङ्गे वा-अद्भ्यो० अपः ।।२८।। आगच्छतागच्छत वायवो हि मृगाधिरूढाः सह सिद्धसङ्घैः। प्राणस्वरूपा सुखता सहाया गृह्णीत पूजां वरदा नमो वः ।। ॐ मरुतोयस्यहिक्षयेपाथादिवोविमहसः ।। ससुगोपातमोजनः ।। ब्रह्मवायुमध्ये शृङ्खलायाम्-मरुद्भ्यो० मरुतः

स्वधा, 'परं मृत्या अनु परे' से ब्रह्मा और यम (दक्षिण दिशा) के मध्य वापी पर मृत्युरोग, 'गणानां त्वा' से ब्रह्मा और 'समुद्रोऽसि' से सप्तसागर, 'परित्वा गिर्वणः' से उपरोक्त तीन उनके ऊपर मेरु, देवोका चतुर्थ्यन्त नाम द्वारा आवा-

प्र० २४०

प्र०

और निऋ'तिकोण के मध्य कृष्णशृङ्खला में गणपति, 'अप्स्वग्ने' से ब्रह्मा से और वरुण (पश्चिम दिशा) मध्य वापी पर अप, 'मरुतो यस्य' से ब्रह्मा तथा तथा वायु (वायुकोण) मध्य कृष्णशृंखला में मरुत, ब्रह्मा के पैर के मूल में कर्णिका के नीचे

।।२६।। ब्रह्मणःपादमूले कर्णिकाधःउदकूसंस्थं देवत्रयावाहनम्—एह्येहि वाराहवरदासनस्थे नागाङ्गनाकिन्नरगीयमाने ।। यद्योनगेन्द्रामरलोकसंघैः सुखाय रक्षाध्वरमस्मदीयम् ।। ॐ स्योनापृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनि ।। यच्छानःशर्म्मसप्रथाः ।। पृथिव्यै० पृथ्वीम् ।। ३० ।। एह्येहि गङ्गेदुरितोघनाशिनी झषाधिरूढे उदकुम्भहस्ते । श्रीविष्णुपादाम्बुजसंभवे त्वं पूजां ग्रहीतुं शुभदे नमस्ते ।। ॐ पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्तिसस्रोतसः ।। सरस्वतीतु पञ्चधासोदेशेभवत्सरित ।। गङ्गादिनदीभ्यो० गङ्गादिनदीः ।।३१।। एतैत वारांपतयोऽत्र ब्रह्मेन्द्रपर्जन्यसहाप्सरोभिः । विद्याधरेन्द्रामरगीयमानाः सदैव यूयं वरदा नमो वः ।। ॐ समुद्रोऽसिनभस्वानार्द्रदानुःशम्भूर्म्मयोभूरभिमाव्वाहिस्वाहा मारुतोऽसिमरुतांगणःशंभूर्म्मयोभूरभिमाव्वाहिस्वाहावस्यूरसिदुवस्वाञ्छम्भूर्म्मयो भूरभिमाव्वाहि स्वाहा ।। सप्तसागरेभ्यो० सप्तसागरान् ।। ३२ ।। एह्येहि कार्तस्वररूपसर्वभूभृत्पते चन्द्रमुखी

दक्षिणदिशा से उत्तर की तरफ तीन देवताओं को क्रम से स्थापन करे—'स्योना पृथिवि' से पृथ्वी, 'पञ्चनद्यः' से गंगादि नदी और 'समुद्रोऽसि' सप्तसागर ।

प्र०

२४१

२१

२४१

तदनन्तर कर्णिका के ऊपर 'परित्वा गिर्वणः इस मन्त्र से मेरु का स्थापन करे। सर्वतोभद्रमण्डल के बाहर सत्वपरिधि में उत्तरदिशा के क्रम से आयुधों का स्थापन निम्नलिखित प्रकार से करे—'गणानान्त्वा' से उत्तरदिशा में गदा, त्रिशं०

दधान। सर्वौषधिस्थानमहेन्द्रमित्रलोकत्रयावास नमोऽस्तु तुभ्यम्॥ ॐ परित्वागिर्व्वणोगिरऽइमा भवन्तुव्विश्वतः॥ व्वृद्धायुमनुवृद्धयोजुष्टाभवतुजुष्टयः॥ कर्णिकोपरि मेरवे० मेरुम॥ ३३॥ मण्डलाद्बहिः बाह्यसत्वपरिधौ उत्तराद्यष्टदिक्षु क्रमेणायुधस्थापनम्—आपाहयेऽहं सुगदां सुतीक्ष्णां विभीषणां लोहमयीं सुन्तावीम्। शत्रोर्विनाशे कुशलां सुयज्ञे आगत्य कल्याणमिह प्रयच्छ॥ ॐ गणानान्त्वा०गदायै०गदाम्॥ ३४॥ शूलंद्विषां शूलकरोषि सद्यः मखाध्वरेऽस्मिन्समुर्धीह नित्यम्। प्रभो कपर्द्यायुधभीषणत्वं रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते॥ ॐ त्रिशं०शद्धाम्व्विराजतिवाक्पतङ्गायधीयते॥ प्रति वस्तोरहद्युभिः॥ त्रिशूलाय० त्रिशूलम्॥ ३५॥ तेजोमयोऽसि सततं शतकोटि धारवज्रत्वमेवपरिरक्षणशान्तचेताः। आवाहयामि सततं मम यज्ञहेतोस्त्वां पाहि देव! सकला-

श्रद्धाम' से ईशानकोण में त्रिशूल, 'महाँ २॥ इन्द्रः' से पूर्वदिशा में वज्र, 'वसु च मे' से अग्निकोण में शक्ति, 'इडऽ एहि' से दक्षिणदिशा में दण्ड, 'खड्गो वैश्वदेवः' से नैर्ऋत्यकोण में—खड्ग 'उदुत्तमम्' से पश्चिमदिशा में—पाश और 'अशं०शु' से वायव्यकोण में अंकुश स्थापन करे।

पुनः उत्तरदिशा से द्वितीयपरिधि रक्तवर्णवाली में गोतम आदि ऋषियों का स्थापन यों करे—

'आयं गौः' से उत्तरदिशा में गोतम, 'अयं दक्षिणा' से ईशानकोण में—भरद्वाज, 'इदमुत्तरात्' से पूर्वदिशा में

ध्वरभीतितो माम् ॥ ॐ महाँ२॥इन्द्रोवज्रहस्तःषोडशी शर्म्मयच्छतु ॥ हन्तुपाप्मानं योस्मान्द्वेष्टि ॥ उपयामगृहीतोऽसिमहेन्द्रायंत्वैषतेयोनिर्महेन्द्रायंत्वा ॥ वज्राय० वज्रम् ॥३६॥ अनन्तसामर्थ्ययुते परेशे शक्तिः समागत्य मखे परस्मिन् । कल्याणदात्री भवसार्वजन्ये पाहि त्वमस्मान्वरदे नमस्ते ॥ ॐ वसुंचमेव्वसतिश्चमेकर्मंचमे शक्तिश्चमेऽर्थश्चमऽएमश्चमऽइत्याचमेगतिश्चमेयज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥ शक्तये० शक्तिम् ॥३७॥ भो ! कालदण्डा सहदेवदेव नमामि यदास्य शुदासये त्वाम् । चेमं मदीयं कुरु शोभमान आगत्य संपादय मेऽध्वरं च ॥ ॐ इडऽएह्यदितऽएहिकाम्याऽएतं ॥ मयिवः कामधरणं भूयात् ॥ दण्डाय० दण्डम् ॥३८॥ एह्येहि खड्ग ! त्वमनन्तशक्ते शक्तोऽसि शक्त्या-परिमानितोऽसि । विघ्नान् समस्तानवधूयशक्त्या शुभं च संपादय मे ऽध्वरस्य । ॐ खड्गोव्वैश्व-देवःश्वाकृष्णःकर्णोगर्दभस्तरक्षुस्तेरक्षसामिन्द्रायसूकरःसिंहो० होमारुतःकृकलासःपिप्पकाशकुनि-

विश्वामित्र, 'त्र्यायुषम्' अग्निकोण में कश्यप, 'अयं पश्चात्' से दक्षिणदिशा में जमदग्नि, 'अयं पुरः' से नैर्ऋत्यकोण में—वसिष्ठ, 'अत्र पितरो मा' से पश्चिमदिशा में अत्रि और 'पं पत्नीभिः' से वायव्यकोण में अरुन्धती का स्थापन करे।

स्तेशीरव्युये विश्श्वेषांदेवानांपृषतः ॥ खड्गाय० खड्गम् ॥ ३६ ॥ आवाहये पाशमहं निकामं तेजोवतां प्रीतिकरं जयन्तम्। विपद्वनाशोद्यतमुग्ररूपं रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ उदुत्तमंव्वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यमथ्थश्रंयाय ॥ अथाव्वयमादित्यव्रतेतवानागसोऽअदितयेस्याम ॥ पाशाय०पाशम् ॥४०॥ कृशानुतुल्यप्रभाङ्कुशं त्वामावाहयेहं भ्रुकुटिं दधानम्। मां रक्ष यज्ञेत्र परावरज्ञ यज्ञश्च मे पारय सज्जतश्रीः। ॐ अ०शुश्चंमेरश्मिश्चमेऽदाभ्यश्चमेऽधिपतिश्चमऽउपाछ्शुश्चंमेऽन्तर्य्यामश्चंमऽऐन्द्रवायवश्श्चंमेमैत्रावरुश्चंमऽआश्विनश्चंमेप्रतिप्रस्थानंश्चमे शुक्रश्चंमेमन्थीचंमेयज्ञेनंकल्पन्ताम्। अङ्कुशाय०अङ्कुशम् ॥ ४१ ॥ पुनः उत्तरादिक्रमेण-आवाहये गोतमविप्रराजं संसारमोहौघविनाशदक्षम् महद्युति तर्कविचारदक्षं रक्षाध्वरन्नः सततं शिवाय ॥ ॐ आयङ्गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरंपुरः ॥ पितरंञ्चप्रयन्त्स्वः ॥ गौतमाय० गौतमम् ॥ ४२ ॥ यज्ञे भरद्वाज महाप्रभाव बहुद्युते त्राहि महानते त्वम्। दयार्णवाधीश बहुज्ञदेव रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐअयन्दक्षिणाव्विश्वकर्मातस्यमनोव्वैश्वकर्मणङ्ग्रीष्मीष्मोमानसस्त्रिष्टुब्ग्रैष्मीत्रिष्टुभः स्वारंथ्थस्वारादन्तर्य्यामोन्तर्य्यामात्पञ्चदशःपञ्चदशाद्बृहद्भरद्वाजऽऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वयामनोगृह्णामिप्रजा-

प्र० २४४

प्र० ॥

ऽभ्यं॑ ॥ भरद्वाजाय० भरद्वाजम् ॥४३॥ श्रीविश्वामित्राद्भुतशक्तियोगात् यज्ञे नवसृष्टिविधायकस्त्वम् । आगच्छ योगीश्वर देवदेव गृहाण पूजां भगवन्नमस्ते ॥ ॐ इदमुत्तरात्स्वस्तस्यश्रोत्रं ठं० सौवठं० शरच्छ्रौत्र्यष्टुप्शार्द्यनुष्टुभऽऐडान्मन्थिनंऽएकविंशं ठं० शऽएकविंठं० शाद्वैराजं विश्वामित्रऽऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वयात्वयाश्रोत्रंगृह्णामिप्रजाभ्यः ॥ विश्वामित्राय० विश्वामित्रमा० ॥४४॥ आवाहये कश्यपमादितेयमृषिं पुराणं परमेष्ठिसूनुम् । सप्तर्षिमध्ये सहितं महेशं रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्यत्र्यायुषम् ॥ यद्देवेषुत्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् ॥ कश्यपाय० कश्यपम् ॥४५॥ आवाहयेहं जमदग्निमग्र्यं मुनिप्रवीरं श्रुतिशास्त्रभानाम् । कृपानिधीनाममितद्युतीनां तेजोवतां बुद्धिमतामृषीणाम् । ॐ अयंपश्चाद्विश्वव्यचास्तस्यचक्षुर्व्वैश्वव्यचसंव्वर्षाश्चाक्षुष्योजगतीव्वार्षीजगत्याऽऋक्समंसमाच्छुक्रः शुक्रात्सप्तदशःसप्तदशाद्वैरूपंजमदग्निऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वयाचक्षुर्गृह्णामिप्रजाभ्यः ॥ जमदग्नये० जमदग्निम् ॥ ४६ ॥ वसिष्ठयोगिन्सकलार्थवेत्ता आगच्छ यज्ञेऽत्र कृपां विधेहि । तेजस्विनामग्र्यसरोग्रबुद्धे वसिष्ठाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ अयंपुरोभुवस्तस्यप्राणोभौवायनोव्वसन्तःप्राणायनोगायत्रीव्वासन्तीगायत्र्यै-

२४५ ॥ प्र० ॥ २४५

उसके बाहर तीसरी काली परिधि पर पूर्वदिशा से क्रम से देवों का स्थान करे—

गायत्रङ्गायत्रन्त्रादुपाᳬंशुरंपाᳬंशोस्त्रिवृत्त्रिवृतोरथन्तरंव्वसिष्ठऽऋषिः प्रजापतिगृहीतयात्वयाप्राणङ्गृह्णामिप्रजाब्भ्यः ॥ वसिष्ठाय० वसिष्ठम् ॥४७॥ आवाहयेऽत्रिं तपसान्निधानं सोमात्तजं देवमुनिप्रवीरम् । पाहि त्वमस्मान्महता महिम्ना रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते ॥ ॐ अत्रपितरोमादयद्ध्वंयथाभागमावृषायद्ध्वम् ॥ अमीमदन्तपितरोयथाभागमावृषायिषत ॥ अत्रये० अत्रिम् ॥ ४८ ॥ पुनीहि मां देवि जगन्नुते च तापत्रयोन्मूलनकारिणी च । पतिव्रते धर्मपरायणे त्वमागच्छ कल्याणि नमो नमस्ते ॥ ॐ तम्पत्नीभिरनुगच्छेमदेवाःपुत्रैर्भ्रातृभिरुतवाहिरण्यैः ॥ नाकंगृब्भ्णानाःसुकृतस्यलोकेतृतीयेपृष्ठेऽअधिरोचनेदिवः ॥ अरुन्धत्यै० अरुन्धतीम् । ४९॥ तद्बाह्ये कृष्णपरिधौ पूर्वादिक्रमेण ऐन्द्र्यादीनां स्थापनम्—ऐन्द्रि त्वमागच्छ सुवज्रहस्ते ऐरावतेनात्र सुवाहनेन । देवाधिदेवेशि महेशि नित्यं गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ॥ ॐ अदित्यैरास्नासीन्द्राण्याऽउष्णीषः ॥ पूषासिघर्मायदीष्व ॥ एन्द्र्यै० एन्द्रीम् ॥ ५० ॥ आगच्छ कौमारि मयूरवाहे पवित्रताग्न्युद्भववामभागे । महाद्युते देवि कुरु प्रसादं गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ।। ॐ अम्बेऽअम्बिके-कौमार्यै०कौमारीम्

'अदित्यै रास्ना' से पूर्वदिशा में—ऐन्द्री, 'अम्बेऽअम्बिके' से अग्निकोण में कौमारी, 'इन्द्रायाहि' से दक्षिणदिशा में

ब्राह्मी, 'इन्द्रस्य क्रोडोऽदित्यै' से नैर्ऋत्यकोण में—वाराही, 'समख्ये' से पश्चिमदिशा में चामुण्डा, वायव्यकोणमें वैष्णवी 'रक्षोहणं बलगहनं वैष्णवी और 'या ते' से उत्तरदिशा में —वैनायकी का स्थापन करे। तदनन्दर प्राणप्रतिष्ठा

॥ ५१ ॥ ब्राह्मिश्रिया दीप्ततमे सुरेशे ब्राह्मित्वमागच्छ स वै मदीये। हंसाधिरूढ़े स्वसहित्रि सुस्थिते सौभाग्यमाधत्स्व नमो नमस्ते ॥ ॐ इन्द्रायाहिधियेषितोव्विप्रजूतःसुतावतः ॥ उपब्रह्माणिव्वाघतः॥ ब्राह्मै० ब्राह्मीम ॥ ५२ ॥ एह्येहि वाराहि वराहरूपे रुद्रोग्रलीलोद्धृभूमिकैव। पीताम्बरे देवि नमोस्तु तुभ्यं गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ॥ ॐ इन्द्रस्यक्क्रोडोऽदित्यैपाजस्यन्दिशाञ्जववोऽदित्यैभसज्जीमूतान्हृदयौपशेनान्तरिक्षपुरीततानभंऽउदुर्य्येणचक्रवाकौकतंस्नाभ्यान्दिवंव्वृक्काभ्यांगिरीन्प्लाशिभरुपलान्प्लीह्नाव ल्मीकान्क्लोमभिर्ग्लौभिगुल्मान्हिराभिःस्त्रवंन्तीह्रदान्कुक्षिभ्याᳬसमुद्रद्रमुदरेणव्वैश्वानरंभस्मना ॥ वाराह्यै० वाराहीम् ॥५३॥ एह्येहि चामुण्डसुचारुवक्त्रे मुण्डासुरध्वंसविधायिके त्वम्। सन्मुण्डमालाभिरलङ्कृते च अट्टाट्टहासैर्मुदिते वरेण्ये॥ ॐ समख्येदेव्याधियासन्दक्षिणयोरुचक्षसा ॥ मामऽआयुःप्रमोषीर्मोऽअहन्तवंव्वीरंविदेयतवदेविसन्दृशि ॥ चामुण्डायै० चामुण्डाम् ॥५४॥

पूर्वक उपचारों द्वारा पूजन तथा कलशस्थापन करे।

आवाहये वैष्णवि ! भद्रिके त्वां शंखाब्जचक्रासिधरां प्रसन्नाम् । खण्डेन्द्रसंस्थां स्थितिकारिणी च श्रीकृष्णरूपां वरदे नमस्ते ॥ ॐ रक्षोहणंव्वलग्रहनंव्वैष्णवीमिदमुहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मे-निष्ट्योयममात्योनिचखानेदमुहन्तंव्वलगमुत्किरामियम्मेसंबन्धुर्यमसंबन्धुर्निचखानेदमुहन्तंव्वल-गमुत्किरामियम्मेसजातोयमसंजातोनिचखानोत्कृत्याङ्किरामि ॥ वैष्णव्यै० वैष्णवीम् ॥५५॥ एह्येहि माहेश्वरि शुभ्रवर्णे वृषाधिरूढे वरदे त्रिनेत्रे । संहारसंहारकारित्वमाद्ये पूजां मम स्वीकुरु सर्वकाम्ये ॥ ॐ यतेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी॥तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि । माहेश्वर्यै० माहेश्वरीम् ॥५६॥ एह्येहि वैनायकि सर्वभूषावृते त्रिनेत्रे सुमुखि प्रसन्ने । गणाधि-पेष्टेऽत्र प्रयच्छ शर्मं गृहाण पूजां वरदे नमस्ते ॥ ॐ अम्बेऽम्बिके ॥ वैनायक्यै० वैनायकीम् ॥५७॥ इति देवान् आवाह्य तन्मध्ये कलशं संस्थाप्य सम्पूजयेत्[१] ।

१—स्कान्दे–प्रागुदीच्चाङ्गता रेखाः कुर्यादेकोनविंशतिः । ३ खण्डेन्दुस्त्रिपदः श्वेतः ५ पञ्चभिः कृष्णशृङ्खलाः ॥११ नीलैकादशवल्ली तु भद्र रक्तं पदैर्नव । २४ चतुर्विंशत्सिता वापी परिधिः २० पीतविंशतिः । मध्ये१६ षोडशभिः कोष्ठैः रक्तं पद्मं सकर्णिकम् । परिध्यावेष्टितं पद्मं बाह्ये १ सत्त्वं २ रजस्तमः ३ ॥ तन्मध्ये स्थापयेद्देवान् ब्राह्माद्यांश्च सुरेश्वरान् ॥

(२) कनकं कुलिशं नीलं पद्मरागं च मौक्तिकम् । एतानि पञ्चरत्नानि सर्वकार्येषु योजयेत् ॥ (२) यवगोधूमधान्यानि तिलाः कङ्गुस्तस्तथैव च । श्यामकाश्चणकाश्चैव सप्तधान्यमुदाहृतम् ॥ कुष्टं मांसी हरिद्रे द्वे मुराशैलेयचन्दनम् । वच चम्पकमुस्ता च सर्वौषध्यो दश स्मृताः ॥ (४) अश्वस्थाना-द्गजस्थानाद्वल्मीकात्संगमात् ह्रदात् । राजद्वाराच्च गोष्ठाच्च मृदमानीय निः क्षिपेत् ॥ (५) पाकर पत्र, वटपत्र,आम्रपत्र, गूलरपत्र और जामुनपत्र ।

प्र० २४८

प्र० २४८

श्री प्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(लिंगतोभद्रपूजनम्)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०
२४६

पूर्वलिंग--में-असितांगभैरव, अग्निकोणश्रृंखला में--रुरुभैरव, दक्षिणलिंग में--चण्डभैरव, नैर्ऋत्य श्रृंखला में--क्रोध भैरव, पश्चिमलिंग में--उन्मत्तभैरव, वायव्य श्रृंखला में कपाल-भैरव, उत्तरदिशा में भीषणभैरव और ईशानकोण में--संहार-भैरवका स्थापन जो करते हैं। वह अनौचित्य ही है। वस्तुतः-कृष्णपरिधि के संलग्न बाहर ही स्थापित करे। यही निबन्धों का प्रामाणिक सार है। इसके अतिरिक्त देवताओं का स्थापन करना कहीं मिलता नहीं है।

आधुनिक पद्धतिकार जो इसके अतरिक्त भव, शर्व, ईशान, पशुपति, रुद्र, उग्र, भीम, महान्, अनन्त, वासुकी, तक्ष, कुलिश, कर्कोटक, शंखपाल, कम्बल, अश्वतर और ईशानेन्द्रभद्रों में—शूल, चन्द्रमौल, चन्द्रमा, वृषभध्वज, त्रिलोचन, शक्तिधर, महेश्वर और शूलपाणि का आवाहन करते देखे गये हैं। वह सब निर्मूल ही है।

लिंगतोभद्र में विशेषदेवों का स्थापन करे। इस में कुल आठ ही देवतों का स्थापन 'रुद्रकल्पद्रुम' आदि

* अथ लिङ्गतोभद्रे विशेषदेवतास्थापनम् *

पूर्वे—ॐ नमस्ते रुद्रमन्यवऽउतोतऽइषवेनमः ॥ बाहुभ्यामुततेनमः ॥ असिताङ्गभैरवाय० असिताङ्गभैरवम् ॥ १ ॥ अग्निकोणे—ॐ श्वित्रऽआदित्यानामुष्ट्रोघृणीवान्वार्ध्रीनसस्तेमत्याऽअरण्यायसृमरोरुरूरौद्रःक्वयिः कुटरुर्दात्यौहस्तेव्वाजिनाङ्कामायपिकः ॥ रुरुभैरवाय० रुरुभैरवम् ॥ २ ॥ ॐ नमःशम्भवायच मयोभवायचनमःशङ्करायचमयस्करायचनमः शिवायच

निबन्धकारों ने लिखा है। आधुनिक—पद्धतिकारों ने विशेष देवताओं का जो समावेश किया है। वह सब निर्मूल है।

'नमस्ते' इस मन्त्र से पूर्वदिशा की कृष्णपरिधि पर असितांगभैरव, 'श्वित्रऽ आदित्यानाम्' से अग्निकोणमें रुरुभैरव,

---

१—रेखात्वष्टादश प्रोक्ताश्चतुर्लिङ्गसमुद्भवे। कोणेन्दुस्त्रिपदः श्वेतस्त्रिपदैः कृष्णशृङ्खला ॥ वल्लो सप्तपदा नीला भद्रं रक्तं चतुष्पदम्। भद्रपार्श्वे महारुद्रं कृष्णमष्टादशैः पदैः ॥ शिवस्य पार्श्वतो वापीं कुर्यात्पदां सिताम्। पदमेकं तथा पीतं भद्रं वाप्योस्तु मध्यतः ॥ शिरसि शृङ्खलाश्चैव कुर्यात्पीतं पदत्रयम्। लिङ्गानां स्कन्धतः कोष्ठा विंशती रक्तवर्णकाः ॥ परिधिः पीतवर्णस्तु पदैः षोडशभिः स्मृतः। पदैस्तु नवभिःपश्चारक्तं पद्मं सकर्णिकम् ॥

'नमः शंभवाय' से दक्षिणदिशामें चण्डभैरव, 'या ते रुद्र' से नैर्ऋत्यकोण में क्रोधभैरव, 'उन्नतऽ ऋषभः' से पश्चिमदिशा

शिवतंरायच ॥ दक्षिणे—चण्डभैरवाय० चण्डभैरवम् ॥ ३ ॥ ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी ॥ तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ नैर्ऋत्ये—क्रोधभैरवाय० क्रोधभैरवम् ॥४॥ ॐ उन्नतऽऋषभोव्वामनस्तऽऐन्द्राव्वैष्णवाऽउंन्नतःशितिवाहुःशितिपृष्ठस्तऽऐन्द्रावार्हस्त्याःशुकरूपाव्वाजिनाःकल्माषाऽआग्निमारुताःश्यामाः पौष्णाः ॥ पश्चिमे—उन्मत्तभैरवाय० उन्मत्तभैरवम् ॥ ५ ॥ ॐ कार्षिरसिसमुद्रस्यत्वाक्षित्याऽउन्नयामि ॥ समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधीभिरोषधीः ॥ वायव्ये-कपालभैरवाय० कपालभैरवम् ॥६॥ ॐ उग्रश्चभीमश्चध्वान्तश्चधुनिश्च । सासह्वाँश्चाभियुग्वाचंव्विक्षिपःस्वाहा । उत्तरदिशि-भीषणभैरवाय० भीषणभैरवम् ॥ ७ ॥ ॐ रुद्राःसꣳसृज्यंपृथिवींबृहज्योतिःसमीधिरे ॥ तेषांभानुरजस्रऽइच्छुक्रोदेवेषुरोचते ॥ ईशानदिशि-संहारभैरवाय० संहारभैरवम् ॥८॥ इति ।

में—उन्मत्तभैरव, 'कार्षिरसि' से वायव्यकोण में कपालभैरव, 'उग्रश्च' से उत्तरदिशा में—भीषणभैरव और 'रुद्राः सꣳ० सृज्य' से ईशानकोणमें संहारभैरव का आवाहन स्थापन तथा प्राणप्रतिष्ठा पूर्वक उपचारों द्वारा अर्चन करे ।

श्री प्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

अग्न्युत्तारणविधिः

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

किसी पात्र में सोने की प्रतिमा को पञ्चामृत लेपनपूर्वक पान के ऊपर रख इन मंत्रों से 'समुद्रस्य त्वा, हिमस्य त्वा, उपज्मन्नु, अपामिदम्, अग्ने पावक, स नः, पावकया, नमस्ते हरसे, नृषदेवेट्, ये देवा देवानाम्, ये देवा

प्र० कस्मिंश्चित्पात्रे स्वर्णमयीं प्रतिमां पञ्चामृतलेपनपूर्वकं ताम्बूलोपरि निधाय सततं जलधारां दद्यात्—समुद्रस्यत्वार्वकयाग्नेपरिव्ययामसि ॥ पावकोऽअस्मभ्यंशिवोभव ॥ १ ॥ हिमस्यत्वाजरायुणाग्नेपरिव्ययामसि ॥ पावकोऽअस्मभ्यंशिवोभव ॥ २ ॥ उपज्मन्नुपवेतसेऽवतरनदीष्ष्वा ॥ अग्नेपित्तमपामसिमण्डूकिताभिरागहिसेमन्नोयज्ञम्पावकवर्णशिवङ्कृधि ॥ ३ ॥ अपामिदन्न्ययनंसमुद्रस्यनिवेशनम् ॥ अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यंशिवोभव ॥ ४ ॥ अग्नेपावकरोचिषामन्द्रयादेवजिह्वया ॥ आदेवान्न्वक्षियक्षि च ॥ ५ ॥ सनः पावकदीदिवोग्नेदेवाँ२ऽइहावह ॥ उपयज्ञहविश्चनः ॥ ६ ॥ पावकयायश्चितयन्त्याकृपाक्षामन्रुरुचऽउषसोनभानुना ॥ तूर्वन्नयामन्नेतशस्यनूरणऽआयोघृणेनततृषाणोऽअजरः ॥ ७ ॥

देवेष्वधि और प्राणदाऽ अपानदा से जलधारा दे। इसको ही 'अग्न्युत्तारण' कहते हैं। कुछ गांव के साधारण पढ़े लिखे पौरोहित्य वृत्ति करनेवाले मूर्ति को अग्नि मे तपाना ही 'अग्न्युत्तारण' करना समझते हैं। उनकी यह मूर्खता है। तदनन्तर—प्रतिमा को हाथ से स्पर्शकर 'आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः' इन बीजों को पढ़कर

अ० २५५

मूर्ति में प्राणों का सञ्चार करे। फिर ओं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हंः सः—इन बीजों को पढ़ कर मूर्ति में जीव,

नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्ते ऽअस्त्वर्चिषे ॥ अन्न्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावको ऽअस्मभ्यं शिवो भव ॥ ८ ॥ नृषदे वेडप्सुषदे वेड्बर्हिषदे वेड्वनसदे वेट् स्वर्विदे वेट् ॥ ९ ॥ ये देवा देवानां यज्ञिया यज्ञियानां संवत्सरीणमुप भागमासते ॥ अहुतादो हविषो यज्ञे ऽअस्मिन्त्स्वयम्पिबन्तु मधुनो घृतस्य ॥ १० ॥ ये देवा देवेष्वधि देवत्वमायन्ये ब्रह्मणः पुर ऽएतारो ऽअस्य ॥ येभ्यो न ऽऋते पवते धाम किञ्चन न ते दिवो न पृथिव्या ऽअधि स्नुषु ॥ ११ ॥ प्राणदा ऽअपानदा व्यानदा वर्चोदा वरिवोदाः ॥ अन्न्याँस्ते ऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावको ऽअस्मभ्यं शिवो भव ॥१२॥ इति प्रतिमां करेण संस्पृश्य ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हंः अस्यां मूर्तौ प्राणा इह प्राणाः। ॐ आँ ह्रीं क्रों० अस्यां मूर्तौ जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों० अस्यां मूर्तौ सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुश्श्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ततस्तां प्रतिमां रजतादिसिंहासनोपरि संस्थाप्य अर्चयेत्।

संपूर्ण इन्द्रिय—वाक् मन, त्वक्, चक्षु, श्रोत्र, जिह्वा, घ्राण, पाणि, पाद, पायु और उपस्थिति ये सब मूर्ति में आकर सुखपूर्वक बहुत समय तक रहे। फिर उसी मूर्ति को, चाँदी, सोने आदिके सिंहासनपर स्थापितकर अर्चन करे।

अ० २५५

प्र०

२५६

श्री:॥ प्रतिष्ठादौ तत्र प्रथमं देवतास्थापनानन्तरमग्निस्थापनम् अग्निस्थापनानन्त
रं वा प्रधानस्थापनमिति विवादे आश्वलायनगृह्यपरिशिष्टे—
इत्यनेन प्रधानस्थापनानन्तरमग्निस्थापनस्य विहितत्वात् मयूखकारादिभिस्तथैव
लेखनात् आश्वलायनैस्तदनुसारेणानुष्ठानाच्च 'अनुक्रमणतो ग्राह्यम्' इति न्यायेन
अस्माभिर्याज्ञिकैरपि तथैवानुष्ठेयम्। अर्थात् प्रथमतः प्रधानस्थापनं ततोऽग्निस्था
पनमिति। तत्र वयं ब्रूमहे याज्ञवल्क्यस्मार्तसूत्रे परिशिष्टादौ ग्रहयज्ञस्य प्र

प्र०

२५६

प्र०

२५७

निर्जांदेवीऽनुक्तत्वेऽपि तत्र शाखान्तरस्यैव शरणीकरणीयत्वेन तत्र च बहूधरा स्वाखा भिन्नवेदगतत्वेन विप्रकृष्टत्वात् न तद् ग्रहीतुं शक्यम् किन्तु यजुर्वेदगता याः काश्चित् शाखास्ता एव सन्निकृष्टतरत्वेन तैवानुसर्तव्या इति सङ्केतम् । तत्र बौधायनगृह्ये अहयज्ञप्रकरणे (प्र॰६ खं॰१५)

अग्निस्थापनानन्तरमेव द्रव्यानस्थापनं विहितम् ।

तदेवास्माभिर्ग्रहीतुं युक्तम् । तस्या यजुर्वेदान्तर्गततैत्तिरीयशाखीयत्वात् । अतः

प्र०

२५८

तस्य च सर्वप्रकृतित्वस्य सर्वसंमतत्वात्। प्रकृतिवद्विकृतिः कर्तव्येति शास्त्रेण
सति विशेषवचने प्रकृतिनिर्दिष्टस्यैव क्रमस्य विकृतावपि स्वीकार्यत्वात्। अतएव
साद्यस्क्रे अग्नीषोमीयसवनीयानुबन्ध्यानां यथाक्रममेकस्मिन् काले समुत्थाने कस्य
प्रथमप्रयुक्तत्वमिति संशये स्थानरूपप्रमाणविशेषेण सवनीयस्य प्रथमप्रयुक्तत्वे कृते
अवशिष्टयोरग्नीषोमीयानुबन्ध्ययोर्मध्ये कस्य प्रथमप्रयुक्तत्वमिति संशये उत्पन्ने
सति तत्र विकृतौ विशेषाभावात् प्रकृतिदृष्टः क्रम एवानुसरणीयः। अतएव अ

प्र०

२५९

ग्नीषोमीयस्य प्रथमप्रयोगानंतरं आनुबन्ध्यस्येति निर्णीतं पश्यते। तद्वदग्न्यादि वि
कृतिभूते प्रतिष्ठादौ यत्र विशेषवचनं नास्ति तत्र ग्रहपशोक्त एव क्रमोऽनुष्ठेय इ
ति प्रथमप्रतिष्ठापनं ततः प्रभातस्थापनम्॥ यत्र त्वेकाहस्थापनादौ नैव क्रम
आश्रयितुं शक्यते तत्र पूर्वेद्युः प्रभातस्थापनस्य विहितत्वात् द्वितीयदिने एवाग्निस्था
पनस्य कर्तव्यत्वात् तत्र भवतु क्रमवैपरीत्यं पूर्वेद्युः प्रभातस्थापनमपरेद्युरग्निस्था
पनमिति। अन्यत्र सर्वत्रापि पूर्वोक्त एव क्रमः। आश्वलायनानां तु स्वगृह्योक्ता

प्र०

२५९

आदौ प्रधानस्थापनं ततोऽग्निस्थापनादीति प्रक्रमेण। यत्रापि अन्यप्रधानेन साङ्ग-
ग्रहयज्ञात्मकं यथा महारुद्रादौ तत्र प्रधानात्पूर्वं ग्रहस्थापनस्य विहितत्वेन विधा-
नात् तथैव कर्तव्यम्। प्रतिष्ठादौ तु प्रधानानन्तरमिति विशेषः। इति भावः।
ग्रहयज्ञोऽपि यदा परिशिष्टोक्तप्रकारेण क्रियते तदा ग्रहस्थापनानन्तरमग्निस्थापना-
दि कार्यम्। यदा तु पौराणो ग्रहयज्ञस्तदा "कुण्डेऽग्निं विप्रकल्पिते कृत्वा ग्रहावाहना-
नन्तरम्। अग्निप्रणयनं कृत्वा वेद्यां ग्रहानावाहयेत् कुर्यात्" इति मात्स्यात् अग्निस्थापनोत्तरं
ग्रहयज्ञस्थापनमिति निष्कर्ष इति प्रयोगचिन्तामणौ।

श्रीविद्याधरशर्मा

कुण्डों के बनाने का प्रकार

(कुण्डों के बनाने में सहायक यन्त्र)
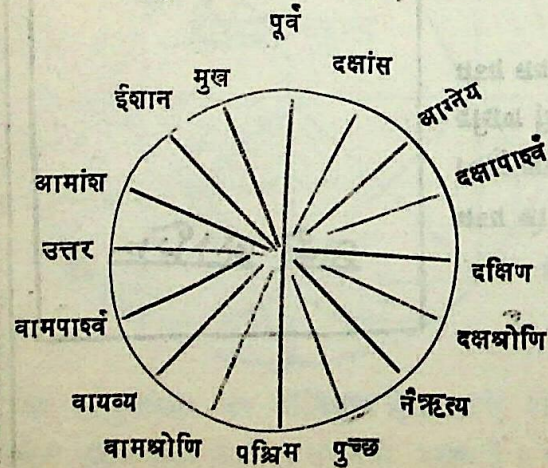
(यज्ञीय भूमिका नौ भाग)
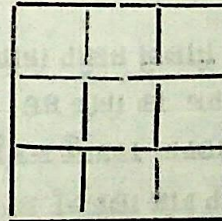
सोलह हाथ या बत्तीस हाथ का सम चतुरस्र एक हाथ या आधा हाथ ऊँचा चौतरा पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा से ठीक बराबर हो जाने पर उसका पूर्वदिशा से तीन हिस्सा बराबर का करे। वैसे ही दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा से हो जाने पर पूर्वदिशा से एक सुतरी लम्बी दे जो पश्चिमवाले भाग के प्रथम हिस्से में जाकर मिले वैसे ही दूसरी सुतरी दे जो पश्चिमवाले दूसरे भाग में मिले। ऐसा करने पर पूर्व तथा पश्चिम दिशा में तीन भाग होंगे। वैसे ही दक्षिण वाले हिस्से से सुतरी दे। इससे नौ कोष्ठात्मक भाग बराबर चबूतरे। का होगा।

यों पूर्णतया निश्चित हो जानेपर पूर्वदिशावाले नवमांशका मध्य साधन कर गज के मध्य को उस मध्य में रख पूर्वदिशा और पश्चिमदिशा से चिह्न करे। वैसे ही उत्तर और दक्षिण चिह्न करने से सम चतुरस्त्र कुण्डका नक्शा बन जाता है। नौ कुण्ड और पञ्चकुण्डी में योनी दक्षिण दिशा में होगी। उस योनी का अग्र उत्तरदिशा में होगा। यह कुण्ड एक कुण्डीपक्ष में मध्य नवमांश में होगा योनी पश्चिम दिशामें होगी और उसका अग्रभाग पूर्वदिशा में होगा।
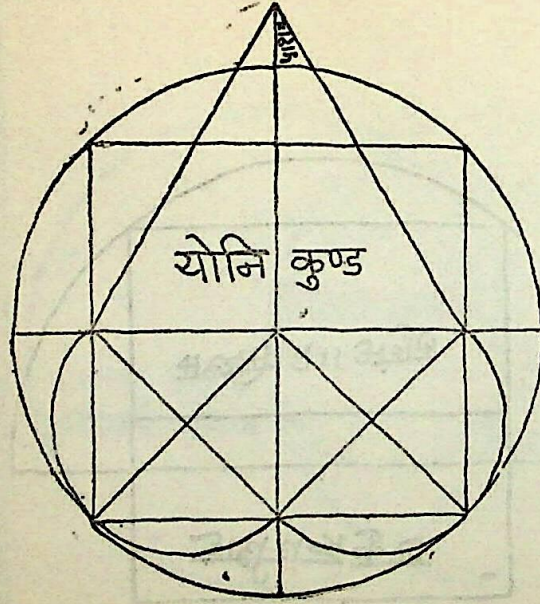
यह नवकुण्डीपक्ष का योनिकुण्ड है। इसमें योनि-भाग दक्षिण तथा अग्रभाग उत्तर में रहता है। एक कुण्डीपक्ष में योनीका भाग पश्चिकदिशा में तथा अग्र पूर्वदिशा में होता है।

एककुण्डी पक्ष में यह कुण्ड मध्य नवमांश में बनेगा। योनिकुण्ड में योनी नहीं लगती है। यह बहुमत है।

चौबीस अँगुलके चतुरस्र में दक्षिणोत्तर आधे पर अर्थात् १२ अंगुल पर एक लम्बी रेखा दे। पश्चिमभाग के आधे भाग का दो हिस्सा पूर्व और पश्चिम की तरफ करे। फिर उसके आधे में अर्थात्–कोने से एक रेखा दे जो टेढ़ी दूसरी कोने में जाकर मिले। इस तरह फिर दूसरे कोने से रेखा दे। इसी-प्रकार दूसरे कोने में दे। दोनों आधों में चार रेखा टेढ़ी होंगी। फिर चतुरस्र के ठीक पूर्वदिशा के मध्यसे पांच अँगुल, एक यव और दो यूका बढ़ा दे। चतुरस्र के किये हुए ठीक मध्यसे अर्थात्—दक्षिणदिशा से सटी एक रेखा टेढ़ी दे जो पूर्व दिशा के ठीक मध्य में बढ़ी हुई पांच अँगुल एक यव और दो यूका वाली रेखा के ऊपरी हिस्से में मिले इसतरह उत्तरदिशा से एक रेखा दे। अर्थात् दक्षिणोत्तर रेखा बढ़े हुए पाँच अँगुल, एक यव और दो यूका की रेखा में मिला दें। तदन्तर नीचे प्रकाल को दक्षिण को तरफ और उत्तर की तरफ बने हुए दोनों हिस्सों के ठीक मध्यसे अर्थात्–अलग-अलग घुमाकर पश्चिम भाग के ठीक मध्य की तरफ मिला दे। इसीतरह उत्तर की तरफसे प्रकाल द्वारा रेखा दे पश्चिमदिशा के ठीक मध्य में मिलाने से 'योनिकुण्ड बन जाता है। नवकुण्डीपक्ष में यह कुण्ड अग्निकोणके नवमांश में बनेगा।
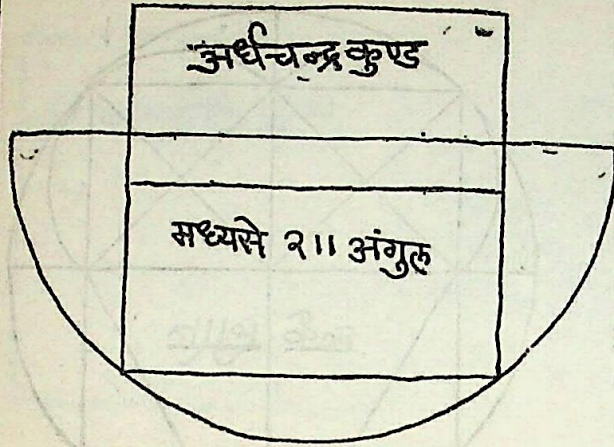
नवमांश के (दक्षिणदिशाके नवमांश में) मध्य में एक हाथ का (चौबीस अँगुल का) चतुरस्र बनाकर दक्षिणदिशाके मध्यसे अढ़ाई अँगुल उत्तर की तरफ हटा दे। फिर उन्नीस अँगुल, एक यव, एक यूका और पाँच लिक्षाको प्रकालको रख कर पूर्व से पश्चिम प्रकाल घुमाने पर 'अर्धचन्द्रकुण्ड' बन जाता है। यह पक्ष नवकुण्डी और पञ्चकुण्डी का हैं। एककुण्डपक्ष में पश्चिमदिशा से २॥ अँगुल पूर्वदिशा की तरफ हटाकर प्रकाल से घुमा दे। परन्तु अढाई अंगुल जो दक्षिणदिशा से नवकुण्डी आदि में हटाया जाता है। वह प्रायः कुण्डविदों के मत से ठीक नहीं प्रतीत होता है।

प्र०
२६५
२३

त्रिकोणकुण्ड
व्यास-३६।४
व्यासार्ध-१८।२
व्यास-३६।४
व्यासार्ध-१८।२
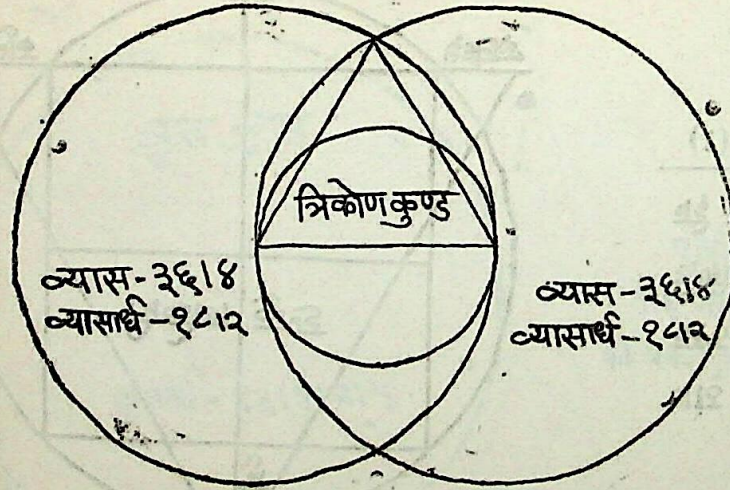
अठारह अँगुल दो यवका एक गोलाकार वृत्त बनाकर उस पूर्व निर्मित वृत्तको ठीक मध्य से स्पर्श करता हुआ दूसरा वृत्त अठारह अँगुल दो यवका बना दे। जो प्रथम वृत्तके ठीक दक्षिणदिशापर प्रकाल को रखकर घुमाने से दूसरा वृत्त भी प्रथम वृत्तके समान बन जायगा। (अर्थात् दूसरे वृत्त का आधा हिस्सा प्रथम वृत्तके मध्यमें प्रायः रहेगा। फिर प्रथम वृत्तके मध्यसे दक्षिणोत्तर एक सीधी रेखा दोनों वृत्तो में दे। ऐसा करने से पूर्व पश्चिम क्रमसे तीन तीन भाग होंगे। अर्थात्—तीन भागो में मध्यभाग देखने में छोटा मालुम पड़ेगा। तदनन्तर बीच के मध्य भाग का मध्य साधन कर उस मध्य में प्रकाल द्वारा वृत्त बनावे। तदन्तर उस वृत्त के भीतर दक्षिण वाली सीधी रेखाके अन्तिमसिर से क्रमशः एक एक टेढ़ी रेखा दे जो पूर्वदिशामें दोनो वृत्तों की सन्धि में जाकर मिले। ऐसा करने से 'त्रिकोणकुण्ड' बन जाता है इसमें योनी पश्चिमदिशा में रहेगी। यह पक्ष कुण्ड रत्नावलीकार का है।

प्र०
२६५
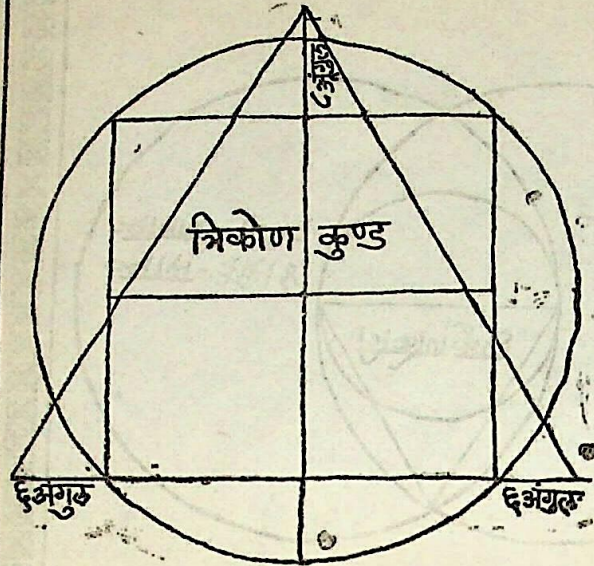
प्रकृतिक्षेत्र का चौबीस हिस्सा करे । उसमें से तृतीयाँश (याने आठ अँगुल) लेकर प्रकृति क्षेत्र जो चतुरस्र है उसके आगे पूर्व की तरफ बढ़ावे और चौबीस का चौथा हिस्सा छः अँगुल चतुरस्र के दोनों श्रेणी में अलग अलग कर दक्षिणोत्तर की तरफ बढ़ा दे । फिर बढ़े हुए भाग में सूत्र देने से 'त्रिकोणकुण्ड' बन जाता है ।

---

(१) अकारण मण्डपके मध्यभागमें कुण्ड न रखनेसे प्रजाओंका नाश होता है।

चौबीस, अँगुल चतुरस्र के ठीक मध्य से साढ़े तेरह अँगुल (तेरह अँगुल, चार पव, दो यूका, पाँच लिक्षा और तीन बालाग्र) का प्रकार लेकर गोलाकार घुमाने से 'वृत्तकुण्ड' का निर्माण हो जाता है।
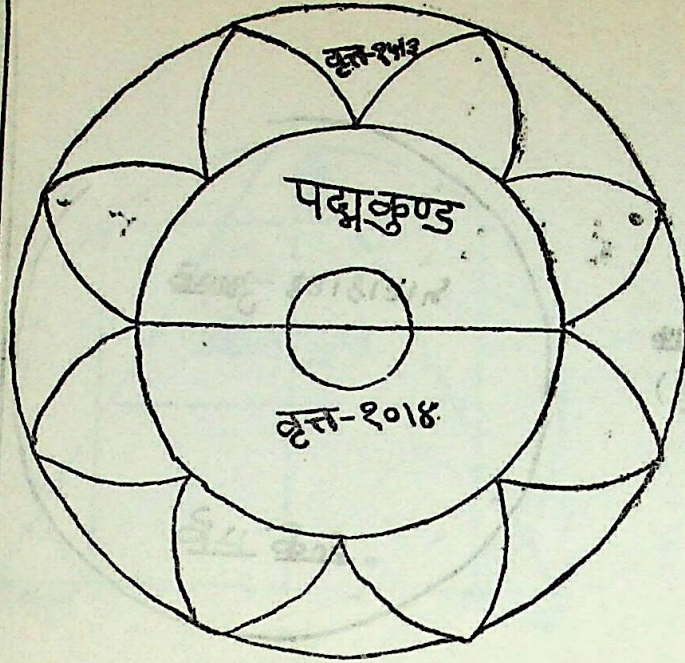
दस अँगुल तथा चार लिक्षा का प्रकाल द्वारा एक वृत्त बनावे। उस वृत्तके बार दूसरा वृत्त गोलाकार पन्द्रह अँगुल तीन यव का बनाकर बाहर के वृत्तका पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशा में चिह्न दिशाज्ञान के लिये करे। पुनः ईशान, अग्नि, नैर्ऋत्य और वायव्यकोण में चिह्न करे। फिर उत्तर और ईशान के मध्य में चिह्न करे। इस प्रकार सोलहभाग होजाने पर उत्तरदिशा से दस अगुल चार बालाग्र का जो भीतरी वृत्त है। उसपर प्रकाल रख एक चिह्न छोड़ दूसरा चिह्न ईशानकोण से वामांशपर (दूसरे वृत्त का पन्द्रह अँगुल, तीन यव) प्रकाल फिरा दे तो कमल पंखुडी का तरह आकार का होगा। पद्मकुण्ड में योनी पश्चिदिशा में रहेगी और उसका अग्र पूर्वदिशा में रहेगा। नवकुण्डी और पञ्चकुण्डीपक्ष में यह कुण्ड उत्तर-दिशा के नवमाँश में होगा।
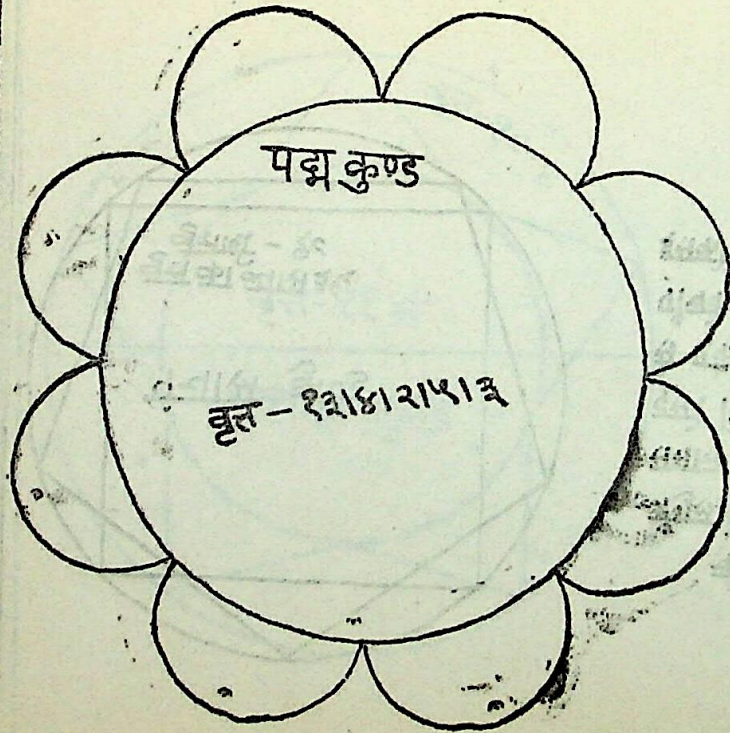
तेरह अँगुल, चार यव, दो यूका, पाँच लिक्षा और तीन वालाग्र का एक गोलाकार वृत्त बनावे (प्रायः—साढ़े तेरह अँगुल का)। उस वृत्त के दिशा और विदिशाओं में और उनके भी मध्य में एक एक चिह्न कर, पद्माकर घुमाने से पद्मकुण्ड 'कटोरियादार' बन जाता है। यह पद्मकुण्ड नवकुण्डी और पंचकुण्डी पक्ष में उत्तरदिशा के नवमांश में बनेगा। इसको योनी पश्चिमदिशा में होती है।
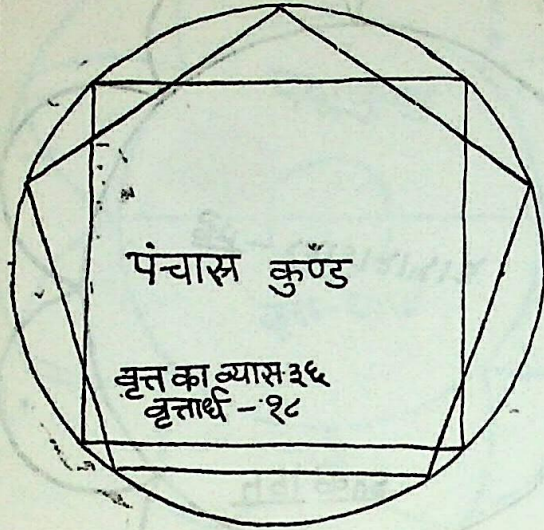
चौबीस अँगुल का चतुरस्र बनाकर उस चतुरस्र का चतुर्थांश अँगुल कम कर अठारह अँगुल का एक वृत्त बनावे। उस वृत्त का समान पाँच भाग करे। पूर्व से एक टेढ़ी रेखा जो दूसरे चिह्न में मिले। दूसरे चिह्नसे एक टेढ़ी रेखा दे जो तीसरे चिह्नमें मिले। तीसरे चिह्न से एक रेखा दे चौथे चिह्नमें मिले। चौथी रेखा से एक रेखा दे जो पाँचवे में मिले। पाँचवे चिह्न से एक रेखा दे जो उसी रेखा में मिले। इसको योनी पश्चिम भाग में होगी ओर उसका अग्र पूर्वदिशा में होगा।
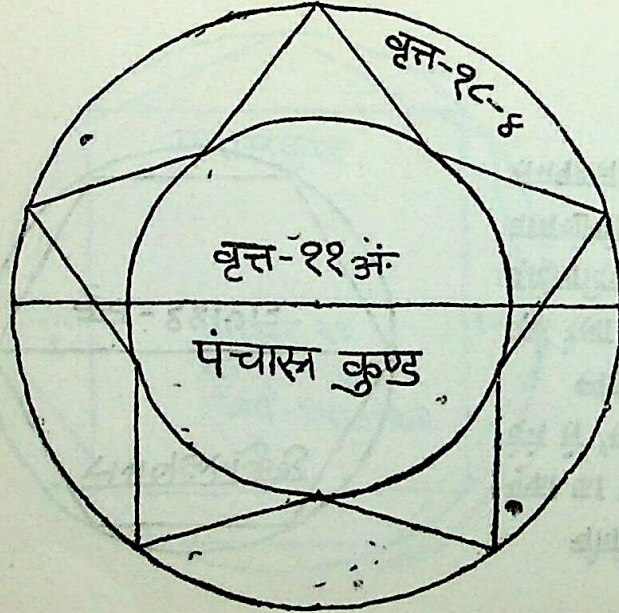
ग्यारह अँगुल का एक वृत्त बनाकर उस वृत्त के बाहर दूसरा वृत्त अठारह अँगुल चार यव का बना दे। जो प्रथम वृत्त है। (भीतरी वृत्त जो ग्यारह अँगुल का है) उसके पाँच भाग विदिशा से बराबर के करे। उन पाँच चिह्नों के मध्य में भी एक एक चिन्ह और करे। इसतरह प्रथम वृत्त (ग्यारह अँगुल) में दस चिह्न हुए। दूसरे वृत्त में समान पाँच भाग करे। प्रथम वृत्त में बराबर बराबर जो पाँच चह्नि किये गये हैं। उन चिह्नों के मध्य-में जो दूसरे चिह्न अप्रधानरूप से मध्य में किये गये हैं उन उप चिह्नों में से प्रथम पूर्वस्थित से एक टेढ़ो रेखा दे जो द्वितीय वृत्त (१८४) के पूर्वदिशा में जो चिह्न अँकित है उसमें वह टेढ़ी रेखा जाकर मिले। वैसे ही पूर्वदिशास्थित बाये हिस्से में पड़े हुए चिह्न से एक टेढ़ो रेखा दे जो पूर्व हिस्से के वामांश में ईशानवाले चिह्न में मिले। इसीतरह ग्यारह अँगुल वाले वृत्त में मध्यका एक चिह्न छोड़ कर दूसरे चिह्न से रेखा देने पर 'पञ्चास्त्रकुण्ड तैयार होता है।
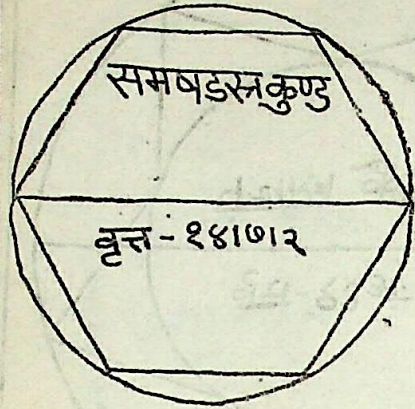
चौबीस अँगुलका चतुरस्र बनाकर उस पर चौदह अँगुल, सात यव और दो यूका का एक गोलाकर घृत्त बना दे। उस घृत्त में बराबर बराबर के छः चिह्न कर देने से 'समषडश्रकुण्ड' बन जाता।

स्पष्टीकरण यह है कि—उत्तरदिशा से टेढ़ी रेखा मुख पर मिला दे। मुख से एक रेखा दक्षाँसमें मिला दे। दक्षाँस से एक रेखा दक्षिणदिशा में दे। दक्षिणदिशा से एक रेखा टेढ़ी पुच्छ में दे। पुच्छ से एक रेखा वामश्रोणी में दे। वामश्रोणी से एक रेखा उत्तरदिशा में और उत्तरदिशा से मुख में मिलाने से समषडस्र कुण्ड हो जाता है।
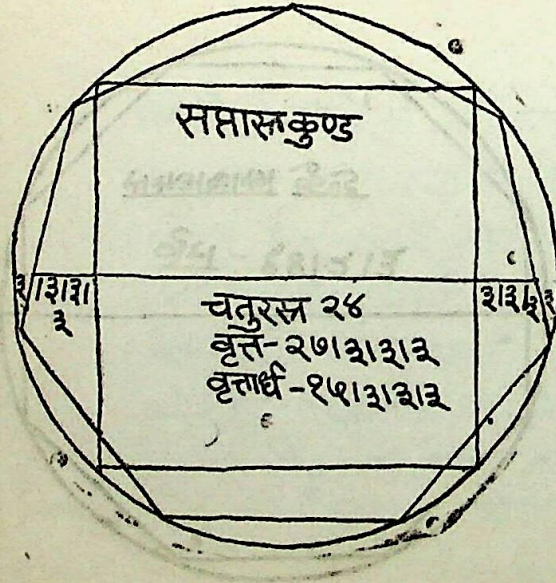
चौबीस अंगुल का चतुरस्र बनाकर उसके बाहर पूर्वदिशा में चतुरस्र का सातवाँ भाग तीन अंगुल, तीन यव, तीन यूका, तीन लिक्षा तथा तीन बालाग्र बढ़ा दे। इसीतरह दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशा में भी बढ़ा दे। फिर चतुरस्र के ठीक मध्य में प्रकालको रख बढ़ी हुई पूर्वदिशावाली रेखा को नापे। वैसे ही दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशाको नाप कर देखे। फिर पूर्वदिशासे बढ़ी हुई रेखा के सिरेसे एक वृत्त गोलाकार बनावे। यह वृत्त बढ़ी हुई चारों दिशाओं-की रेखाओं को स्पर्श करता हुआ आवे। फिर उस वृत्त में पूर्वदिशा से बराबर बराबर सात भाग कर दे। इन भागों में क्रम से रेखाओं को देने से 'सप्तास्रकुण्ड' बन जाता है।
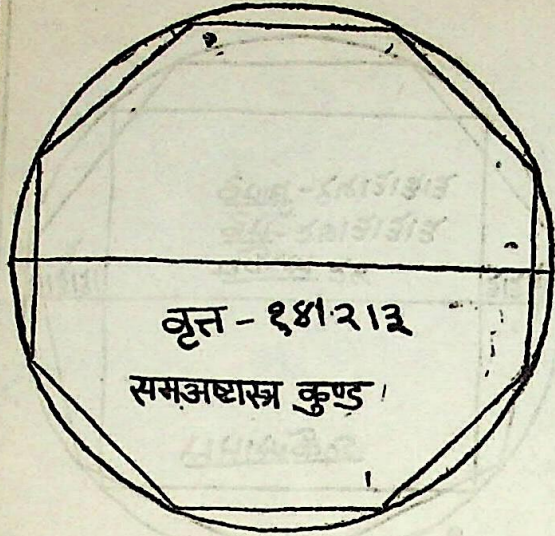
चौदह अँगुल, दो यव और तीन यूका का एक घृत्त बनाकर उस घृत्तसे पूर्वादिशा, विदिशा और उपदिशाओं[१]के भी मध्यमें चिह्न दे। ऐसे सोलहचिह्न करे। फिर पूर्व के समीप मुख से एक रेखा दक्षाँसमें दे। दक्षाँस से एकरेखा दक्षपार्श्वमें दे। इसीप्रकार क्रमसे रेखा अंकित करनेसे 'समअष्टास्रकुण्ड' होता है। यह नवकुण्डीपक्षमें ईशानकोण के नवमाँश में बनता है। इसकी योनी पश्चिम तथा अग्रभाग पूर्वदिशा में होता है।

(१) कुण्डस्थलको गोबर और जलसे लेपन करे। चावल पिसान से; नील, पात, हरा, पीला आदि द्वारा सुशोभित करे। अगस्त्य संहिता।

प्र०

२७२

मात्स्ये आग्नेये च प्रतिष्ठाविधिरूपकर्म – "वेदीपादान्तरं त्यक्त्वा कुण्डानि
नव पञ्च वा" इत्युक्तेः प्रतिष्ठाविधावेव पञ्चकुण्डीकरणं प्रत्युत मण्डपविधि
प्रमाणे तु – "एकं कुण्डं शुभं मध्ये शान्तौ जयाङ्कहवने तु। आग्नेय्यां दक्षिणी
लक्षहोमादिके हवनादिषु" इत्याद्यभियुक्तोक्तेः एकस्यैव कुण्डस्य विधानादेक
मेव कुण्डं कार्यमित्याशयात्। तथापि पूर्वोक्तवचनानुसारं कुण्डादिपक्षोऽपि नाङ्गतं प्र
तीयते। पञ्चकुण्डादिपक्षेऽपि आचार्यकुण्डं मध्ये कार्यं न प्रतिष्ठादिवत् प्रवेशा
न्तरेऽपि ध्येयं। अत्र होमस्य प्रधानत्वात् ("...प्रतिष्ठासु वेदी मध्ये प्रकीर्तिता"

प्र०

२७५

"प्राच्यामुदीच्यां ~~[illegible]~~ वा शालौ मुकुरोदरसन्निभा" इत्यादिना शालादिष्वेव मण्डपे वेदिविधानात्। नारायणभट्टैरपि— "कुण्डं तन्मध्यभागे तु कार्यं [illegible] वा" मण्डपे तु मण्डपस्यापि कुण्डं कुर्यादिति लक्षणम्" इत्यादिना मण्डपे एव कुण्डं साधितम्। रुद्रकल्पद्रुमेऽपि— ग्रहयज्ञादिविचारे मण्डपमध्यभागे कुण्डादि भवति। रुद्रादिपद्धतिस्थ ग्रहयज्ञविकृतिप्रोक्त मध्ये एव कुण्डम्। पूर्वेशानदिशि कुण्डकरणं तु यत्र मण्डपमध्यभागे कुण्डादिविधिः अतो नास्ति तद्विषयकम्। "प्रागुत्तरे समासोक्ते प्रदेशे मण्डपस्य तु। शतमन्तं कार्यं कुण्डम्" इत्यादिवचनस्य त्वयमर्थः— ;

'प्राक् पूर्वं मण्डपस्योत्तरं प्रथमं प्रदेशं प्राप्य कुण्डं कुर्यादिति। तेन नृपुष्टकेऽव मण्डपे कुण्डम्। ~~[illegible]~~ इत्युक्तम्। "स्थलसंस्थे तु मण्डपे कुण्डमन्यत्रैव शान्तानिति केचिदित्यपि तत्रैव। तेन स्वल्पप्रयासे मण्डपे कुण्डम्। प्रतिज्ञाप्रयासे एक कुण्डीपक्षेऽपि च मध्ये कुण्डमिति।

श्रीविद्याधरशर्मा

तीन कुशाओं से पश्चिमदिशासे पूर्वदिशा या दक्षिणदिशासे उत्तरदिशाकीतरफ तीन वार परिसमूहन कर उन कुशाओं को ईशानकोण में छोड़ दे। फिर—जल मिश्रित गोबरको लेकर उदक्संस्थ (दक्षिणसे उत्तर) या प्राक्संस्थ

अग्निस्थापनविधि

त्रिभिः कुशैः प्रागग्रैः प्राक्संस्थमुदक्संस्थं वा भूमिं त्रिः परिसमुह्य, तान्कुशानैशान्यां परित्यज्य गोमयोदकाभ्यामुदक्संस्थं त्रिरुपलिप्य, साग्निः स्फ्येन निरग्निः स्रुवेण वा षडङ्गु

पारिजाते–पावको लौकिको ह्यग्निः प्रथमः संप्रकीर्तितः। अग्निस्तु मारुतो नाम गर्भाधाने विधीयते॥ पुंसवे चमसो नाम शोभनः सर्वकर्मसु। सीमन्ते मङ्गलो नाम प्रबलो जातकर्मणि॥ नाम्नि वै पार्थिवो ह्यग्निः प्राशने तु शुचिः स्मृतः। सभ्यनामा तु चौले स्याद् व्रतादेशे समुद्भवः॥ गोदाने सूर्यनामाऽग्निर्विवाहे योजकः स्मृतः। चतुर्कर्मणि शिखि धृतिरग्निस्तथा परे॥ प्रायश्चित्ते विविश्चैव पाकयज्ञेषु साहसः। देवानां हव्यवाहश्च पितॄणां कव्यवाहनः। शान्तिके वरदः प्रोक्तः पौष्टिके बलवर्द्धनः। पूर्णाहुत्यां मृडो नाम क्रोधाग्निश्चाभिचारिके॥ वश्यार्थे कामदो नाम वनदाहे तु दूषकः कुक्षौ तु जाठरो ज्ञेयः क्रव्यादो मृतदाहके॥ लक्षहोमेऽभीष्टदः स्यात् कोटिहोमे महाशनः। समुद्रे वाडवो ह्यग्निः क्षये संवर्तकस्तथा। ब्रह्माऽग्निर्गार्हपत्यस्तु ईश्वरो दक्षिणस्तथा। विष्णुराहवनीयस्तु अग्निहोत्रे त्रयोऽग्नयः॥ आवसथ्यस्तथाऽऽधाने वैश्वदेवे तु पावकः। ज्ञात्वैवमग्निनामानि गृह्यकर्म समाचरेत्॥ इति। विशिष्टनाम्नामसंभवे च विश्वरूपो नामाग्निः सर्वत्र भवतीति केचित्।

(पश्चिमदिशा से पूर्वदिशा तक) तीन बार कुण्ड या वेदी का लेपन करे। फिर 'स्रुव' नामक यज्ञीयहवन करने वाले पात्रसे प्रादेशप्रमाण या स्थण्डिलप्रमाण प्रागग्र पश्चिमदिशासे पूर्वदिशाकी तरफ छः छः अंगुल व्यवहितकर उल्लेखन क्रमसे अनामिका और अंगूठेसे जहाँ रेखा दी है उन रेखाओं से एक-एक बार वहाँ की मिट्टीको उठाकर बायें हाथ में रख फिर बायें हाथकी सब मिट्टी दाहिने हाथमें रख ईशानकोणमें फेक दे। मुष्टिकृत नीचेको हाथकर जलसे अभ्युक्षण

लान्तरालाः प्रादेशमात्राः स्थण्डिलप्रमाणा वा प्रागग्राः त्रिरुल्लिख्य, अनामिकाङ्गुष्ठेनोद्धृत्य ईशान्यां प्रक्षिप्य च जलेनाभ्युक्ष्य निर्धूममग्निं तासु रेखासु—ॐ अग्निन्दूतंपुरोदंधेहव्यवाहमुपंब्रुवे ॥ देवाँ-ऽआसादयादिह ॥ इति मन्त्रेण स्थापयेत् ।

बिना धूम वाली अग्निको स्वाभिमुख मध्यमें रख आमाद और क्रव्याद नामक दो अंगारोंको वहाँ से अग्निकोण में त्यागकर अवशिष्ट अग्नि को मध्यमें 'अग्निन्दूतम्' इसमन्त्रसे स्थापन करे। अर्थात्—आमाद तथा क्रव्यादको स्थण्डिल के बाहर न निकले। शारदातिलक आदि मतसे तान्त्रिकों बाहर निकालना लिखा है। वैदिककर्ममें ऐसी बात नहीं है। गांव के पुरोहत आदि अपठ ब्रह्मासे 'कुशकण्डिका' 'कराते देखे गये हैं—यह अशास्त्रीय है।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(अथ ग्रहस्थापनम्)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र० २७९
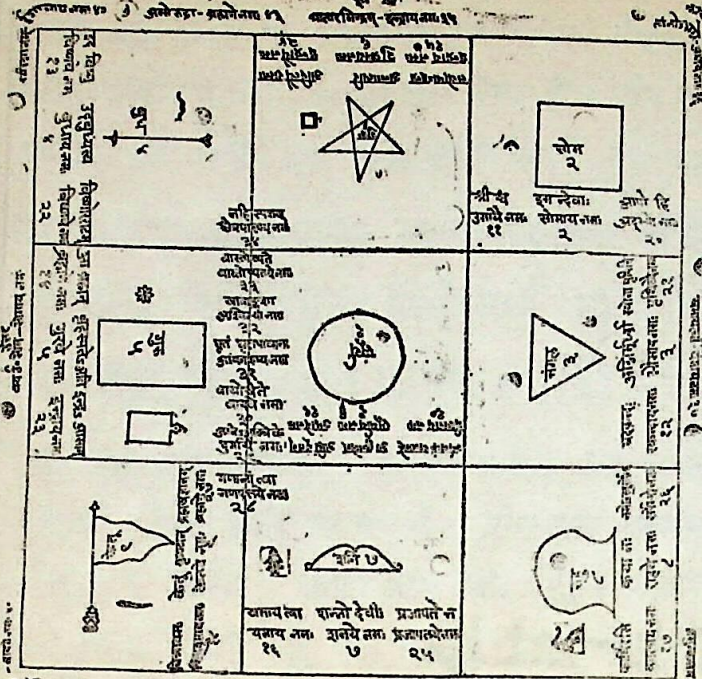
(१) 'वेदी स्त्री रूपा है ऋत्विग्गण उसके समीप में बैठ कर हवन करते हैं। स्वयं स्त्रीरूपादेवी अनावृत होने से लज्जा करती हैं। अतः कुशाओं से वेदी का आच्छादन किया जाता है।

(२) सुगमज्योतिषे-बुधस्य घटिका पञ्च, सौरेर्मध्याह्नमेव च। राहुकेत्वोश्च रात्रौ च जीवेन्दुश्चैव सन्ध्ययोः।। उदये भृगुरव्योश्च भौमस्य घटिकाद्वये। समे काले न कर्तव्यं दातृणां प्राणनाशनम्।

(३) बुधका दान सूर्योदयके पांचघड़ी बीतनेपर, शनिका मध्याह्नकालमें, राहु और केतुका रात्रिमें, गुरुका प्रातःकालकी सन्ध्या में और चन्द्रमाका सायंसन्ध्या में, शुक्र और रविका सूर्योदय के समय तथा मंगल का प्रातःकाल दो घड़ी बीतने पर दान करे।

(४) सब ग्रहों का दान एकही समय न करें। जो एक समय में करते हैं उनके प्राणनाशकी संभावना हो जाती है।

(५) पद्मपुराण तथा निबन्धोंका मत है-जो अधिदेवता है उन्हें ही प्रत्यधिदेवता कह सकते हैं। जो प्रत्यधिदेवता हैं उन्हें ही अधिदेवता कहा भी जा सकता है।

'आ कृष्णेन रजसा' इस मन्त्रसे सूर्य 'इमन्देवाअसपत्नम्' से सोम, 'अग्निमूर्धादिवः' से भौम, उद्बुध्यस्व' से बुध,

अथ ग्रहस्थापनम्

ॐ आकृष्णेनरजँसाव्वर्तमानोनिवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च ॥ हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कलिङ्गदेशोद्भव काश्यपगोत्र रक्तवर्ण भो सूर्य इहागच्छ इह तिष्ठ सूर्याय० सूर्यम् । ॐ इमन्देवाऽअसपत्नꣳसुवद्ध्वम्महतेक्षत्रायमहतेज्यैष्ठ्यायमहतेजानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय ॥ इममुष्ष्यपुत्रमस्यैव्विशऽएषवोमीराजासोमोऽस्माकंब्राह्मणानाꣳराजा ॥ ॐ भू० यमुनातीरोद्भवआत्रेय गोत्र शुक्लवर्ण भो सोम इहा० सोमाय० सोमम् । ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवःककुत्पतिःपृथिव्याऽअयम् ॥ अपाꣳरेताꣳसि जिन्वति ॥ ॐ भू० अवन्तिकापुरोद्भव भार-

---

१—वृत्तमण्डलमादित्यमर्मंचन्द्रं निशाकरम् । त्रिकोणं चैव बुधं च धनुषाकृतिम् । गुरुमष्टदल प्रोक्तं चतुष्कोणं च भार्गवम् । नराकृति शनिं विद्याद्राहुं च मकराकृतिम् ॥ केतुं खड्गसमं ज्ञेयं ग्रहमण्डलके शुभे ॥ अथवा—वृत्तमण्डलमादित्य चतुरस्रं निशाकरम् त्रिकोणं मङ्गलं चैव बुधं वै बाणसन्निभम् ॥ गुरवे पट्टिशाकार पञ्चकोण भृगुं तथा । मन्दे च धनुषाकारं सूर्पाकारं तु राहवे ॥ केतवे च ध्वजाकारं मण्डलानि क्रमेण तु ॥ अरुणो सूर्यभौमौ च श्वेतो शुक्रनिशाकरौ । हरितवर्णो बुधश्चैव पीतवर्णो गुरुस्तथा ॥ कृष्णवर्णं शनी राहुकेतवस्तु तथैव च ।

२—आवाहयामि स्थापयामि इस-वाक्य को प्रतिदेवता में जोड़ना चाहिये ।

प्र०
२८१

द्वाजगोत्र रक्तवर्ण भो भौम इहा० भौमाय० भौमम् । ॐ उद्बुध्यस्वाग्नेप्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्ते सꣳसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत ॥ ॐ भू० मगधदेशोद्भव आत्रेयगोत्र हरितवर्ण भो बुध इहा० बुधाय० बुधम् । ॐ बृहस्पतेऽअतियदर्योऽअर्हाद्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवसऽऋतप्रजा तदस्मासुद्रविणन्धेहिचित्रम् ॥ ॐ भू० सिन्धुदेशोद्भव आङ्गिरसगोत्र पीतवर्ण भो गुरो० बृहस्पतये०बृहस्पतिम् । अन्नात्परिस्रुतोरसंब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्रंपयःसोमंप्रजापतिः ॥ ऋतेनसत्यमिन्द्रियंविपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रियमिदम्पयोमृतम्मधु ॥ ॐ भू० भोजकटदेशोद्भव भार्गवगोत्र शुक्लवर्ण भो शुक्र इहा० शुक्राय० शुक्रम् ॐ शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये ॥ शंय्योरभिस्रवन्तुनः ॥ ॐ भू० सौराष्ट्रदेशोद्भव काश्यपगोत्र कृष्णवर्ण भो शनि० इहा० शनये० शनिम् । ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूतीसदावृधःसखा ॥ कयाशचिष्ठयावृता ॥ ॐ भू० राठिनापुरोद्भव पैठिनसगोत्र कृष्णवर्ण भो राहो इहा० राहवे० राहुम् । ॐ केतुं कृण्वन्नकेतवे पेशोमर्य्याऽअपेशसे ॥ समुषद्भिरजायथाः ॥ ॐ भू० अन्तर्वेदिसमुद्भव जैमिनिगोत्र कृष्णवर्ण भो केतो इहा० केतवे केतु म्।

'बृहस्पतेऽ अति' से बृहस्पति, 'अन्नात्परिस्रुतः' से शुक्र, 'शन्नो देवी' से शनि, 'कया नः' से राहु और 'केतु कृण्वन्' से केतु का आवाहन और स्थापन करे।

अथ ग्रहदक्षिणपार्श्वे अधिदेवतास्थापनम्

ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ॥ उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॥ ईश्वराय० ईश्वरम् । ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्व्वलोकम्मऽइषाण ॥ उमायै० उमाम् ॥ ॐ यदक्रन्दः प्रथमञ्जायमानऽउद्यन्त्समुद्द्रादुत वा पुरीषात् ॥ श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहूऽउपस्तुत्यम्महि जातन्तेऽअर्व्वन् । स्कन्दाय० स्कन्दम् । ॐ इदं विष्णुर्व्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्य पांᳬसुरे ॥ विष्णवे० विष्णुम् । ॐ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्व्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्य्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतान्निकामे निकामे नः पर्ज्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ ब्रह्मणे० ब्रह्मा-

१—आवाहयामि स्थापयामि इस-वाक्य को प्रतिदेवता में जोड़ना चाहिये।

'त्र्यंबकं यजामहे' से ईश्वर, 'श्रीश्च' से उमा, 'यदक्रन्दः' से स्कन्द, 'इदं विष्णुः' से विष्णु, 'आ ब्रह्मन्' से ब्रह्मा, 'सजोषाऽ इन्द्र, से इन्द्र, 'यमाय त्वा' से यम 'कार्षिरसि' से काल और 'चित्रावसो स्वस्ति' से चित्रगुप्त का ग्रहों के दक्षिण

प्र० णम् । ॐ सजोषाऽइन्द्रसगणोमरुद्भिःसोमम्पिबवृत्रहाशूर विद्वान् ॥ जहिशत्रूँ १॥ रपमृधोनुदस्वाथाभयङ्कृणुहिविश्वतोनः ॥ इन्द्राय० इन्द्रम् । ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वतेपितृमतेस्वाहा ॥ स्वाहाघर्मायस्वाहाघर्मःपित्रे ॥ यमाय० यमम् । ॐ कार्षिरसिसमुद्रस्यत्वाक्षित्याऽउन्नयामि ॥ समापोऽअद्भिरग्मतसमोषधीभिरोषधीः ॥ कालाय० कालम् । ॐ चित्रावसोस्वस्तितेपारमशीय ॥ चित्रगुप्ताय० चित्रगुप्तम् ।

आवाहनपूर्वक स्थापन करे ।

अथ ग्रहवामपार्श्वे प्रत्यधिदेवतास्थापनम्

ॐ अग्निन्दूतम्पुरोदधेहव्यवाहमुपब्रुवे ॥ देवाँऽआसादयादिह ॥ अग्नये० अग्निम् । ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्जे दधातन ॥ महेरणायचक्षसे ॥ अद्भ्यो० अपः । ॐ स्योनापृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनी ॥ यच्छानःशर्म्मसप्रथाः ॥ पृथिव्यै० पृथिवीम् । ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ॥ समूढमस्यपाᳬसुरे ॥ विष्णवे० विष्णुम् । ॐ इन्द्रऽआसान्नेता-

'अग्नि दूतम्' से अग्नि, 'आपो हि' से अप, स्योनापृथिवि' से पृथिवी, 'इदं विष्णुः' से विष्णु, 'इन्द्रऽआसाम्' से

बृहस्पतिर्द्दक्षिणायज्ञःपुरऽएंतुसोमं÷ ॥ देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयंन्तीनाम्मरुतोयन्त्वग्रम् ॥ इन्द्राय० इन्द्रम् । ॐ अदित्यै रास्नासीन्द्राण्याऽउष्णीषं÷ ॥ पूषासिघर्म्मायदीष्व ॥ इन्द्राण्यै० इन्द्राणीम् । ॐ प्रजापतेनत्वदेतान्यन्योविश्वारूपाणिपरिताबभूव । यत्कामास्तेजुहुमस्तन्नोऽअस्तुव्वयर्ठस्यामपतंयोरयीणाम् ॥ प्रजापतये० प्रजापतिम् । ॐ नमोऽस्तुसर्पेभ्योयेकेचपृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षेयेदिवितेभ्यं÷सर्पेभ्योनमं÷ ॥ सर्पेभ्यो० सर्पान् । ॐ ब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमितःसुरुचोव्वेनऽआवः ॥ सबुध्न्याउपमाऽअंस्यव्विष्ठाःसतश्चयोनिमसतश्चव्विवं÷ ॥ ब्रह्मणे० ब्रह्माणम् ।

इन्द्र, अदित्यै रास्ना, से इन्द्राणी, प्रजापते नत्वदेतान्' से प्रजापति, 'नमोऽस्तु सर्पेभ्यः' से सर्प और 'ब्रह्मयज्ञानम्' से ब्रह्मा का ग्रहोंके बाये भागमें आवाहनपूर्वक स्थापन करे ।

अथ पञ्चलोकपालस्थापनम्

ॐ गणानान्त्वा ॥ गणपतये० गणपतिम् । ॐ अम्बेऽअम्बिके ॥ दुर्गायै० दुर्गाम् ।

प्र०

२८६

'गणानां त्वा' से गणपति' अम्बे ऽ अम्बिके' से दुर्गा 'वायो ये ते' से वायु, घृतं घृतपावानः' से आकाश, 'यावां कशा' से अश्विनी,

ॐ व्वायुश्चेतैंसहस्रिणोरथासस्तेभिरागंहि ।। नियुत्वान्त्सोमंपीतये ।। वायवे० वायुम् । ॐ घृतं घृतपावानःपिबतव्वसांव्वसापावानंपिबतान्तरिक्षस्यहविरंसि स्वाहा ।। दिशंःप्रदिशऽआदिशोव्विदिशऽउद्दिशोदिग्भ्यः स्वाहा ।। आकाशाय० आकाशम् । ॐ यावाङ्कशामधुमत्यश्विनासूनृतावती ।। तयायज्ञम्मिमिक्षतम् ।। अश्विभ्यां० अश्विनौ० । ॐवास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्स्वावेशोऽ अनमीवो भवानः । यत्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं ना भव द्विपदे शं चतुष्पदे ।। वास्तोष्पतये० स्वास्तोष्पतिम् । ॐ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः ।। एमेनमवृधन्नमृताऽअमर्त्यंव्वैश्वारनङ्क्षैत्रजित्यायदेवाः ।। क्षेत्राधिपतिम् ।

'वास्तोष्पते प्रति' से वास्तोष्पति और 'नहिस्पशमविदन्' से क्षेत्राधिपपश्चलोकपालका आवाहन और स्थापन करे ।

अथ दशदिक्पालस्थापनम्

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रंहवेहवेसुहवंशूरमिन्द्रम् ।। ह्वयामिशक्रंपुरुहूतमिन्द्रंः स्वस्तिनोमघवाधात्विन्द्रः ।। इन्द्राय० इन्द्रम् । ॐ त्वन्नोऽअग्नेतवदेवपायुभिर्मघोनोरक्षन्वश्चवन्द्य ।।

प्र०

२८६

'त्रातारमिन्द्रम्' इस मन्त्रसे इन्द्र, 'त्वन्नऽ अग्ने तव' से अग्नि, 'यमाय त्वाङ्गिरस्वते' से यम, 'असुन्वन्तम

त्रातातोकस्यतनयेगवामस्यनिमेषꣳ रक्षमाणस्तवंव्रते ॥ अग्नये० अग्निम् ॥ ॐ यमायत्वाङ्गिरस्वते-पितृमतेस्वाहा ॥ स्वाहाघर्म्मायस्वाहाघर्मःपित्रे ॥ यमाय० यमम् ॥ ॐ असुन्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ॥ अन्यमस्मदिच्छसातंऽइत्यानमोदेविनिर्ऋतेतुभ्यमस्तु ॥ निर्ऋतये० निर्ऋतिम् । ॐ तत्त्वायामिब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्तेयजमानोहविर्भिः ॥ अहेडमानो व्वरुणेहबोध्युरुशꣳसमानऽआयुः प्रमोषीः ॥ वरुणाय० वरुणम् । ॐ आनोनियुद्भिःशतिनीभिरध्वरꣳ सहस्रिणीभिरुपयाहियज्ञम् ॥ व्वायोऽअस्मिन्सवनेमादयस्वयूयम्पातस्वस्तिभिः सदानः ॥ वायवे० वायुम् । ॐ व्वयꣳसोमव्रतेवमनस्तनूषुबिभ्रतः ॥ प्रजावन्तःसचेमहि ॥ सोमाय० सोमम् । ॐतमीशानञ्जगतस्तस्थुषस्पतिन्धियञ्जिन्वमवसेहूमहेव्वयम् ॥ पूषानोयथाव्वेदसामसद्वृधेरक्षिता-पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ईशानाय० ईशानानम् । ॐ अस्मेरुद्रामेहनापर्वतासोवृत्रहत्येभरहूतौ-सजोषाः ॥ यःशꣳसतेस्तुवतेधायिपज्रऽइन्द्रज्येष्ठाऽअस्माँ२ ॥ ऽअवन्तुदेवाः ॥ पूर्वेशानयोर्मध्ये-

यजमानम्' से निर्ऋति, 'तत्वायामि ब्रह्मणा' से वरुण, 'आ नो नियुद्भिः' से वायु, 'वयꣳ०' से सोम, 'तमीशानम्'

प्र०

२८७

से ईशान 'अस्मे रुद्रा मेहना' से पूर्व और ईशान के ठीक मध्य में ब्रह्मा और 'स्योना पृथिवि' से निर्ऋति तथा पश्चिम

ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं० । ॐ स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी ।। यच्छा नः शर्म्म सप्रथाः ।। निर्ऋतिपश्चिमयोर्मध्ये—अनन्ताय० अनन्तमा० ।। ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु ।। विश्वेदेवास इह मादयन्तामो ३।। प्रतिष्ठ ।। अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाः क्षरन्तु च । अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ।। सूर्यादि-अनन्तान्त-देवताः सुप्रतिष्ठिताःवरदाः भवन्तु । इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—ॐ ग्रहा ऽऊर्ज्जाहुतयो व्यन्तो विप्राय मतिम् ।। तेषां विशिप्रियाणा वोऽहमिषमूर्जꣳ समग्रभमुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम् ।। ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमि-सुतो बुधश्च ।। गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वे ग्रहाः शान्तिकरा भवन्तु । ग्रहस्येशानदिग्भागे कलशस्थापनविधिना रुद्रकलशं संस्थाप्य असङ्ख्याकरुद्रांश्चाऽऽवाहयेत्—ॐ असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा ऽअधि भूम्याम् ।। तेषाꣳसहस्रयोजनेऽव धन्वानितन्मसि ।। असङ्ख्याकरुद्रेभ्यो नमः—असङ्ख्याकरुद्रानावाहयामि । इति सम्पूजयेत् ।

दिशा के ठीक मध्य से अनन्त का ग्रहमण्डल के बाहर पूर्वादिदिशासे आवाहन पूर्वक स्थापन करे ।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(अथाग्नेयकोणे योगिनीपूजनम्)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र० २८६

* अथाग्नेयकोणे योगिनीपूजनम् *

अग्निकोण में योगिनीदेवी का पूजन करे। उसका क्रम यों है—प्रतिमा आदि में प्राणप्रतिष्ठापूर्वक महाकाली, महालक्ष्मी, और महासरस्वतीका अर्चन कर गजानना, सिंहमुखी, गृधास्या आदिका तमीशानम्, आब्रह्मन् इत्यादि

मण्डपस्याग्नेये हस्तमात्रे हस्तोन्नते प्रादेशोन्नते वा वप्रत्रययुते रक्तवस्त्राच्छादिते पीठे चतुर्धाविभाजिते पश्चिमतो भागत्रये पूर्वापरमुदग्दक्षिणं च नव नव रेखाकरणेन चतुःषष्टिकोष्ठानि सम्पाद्य तेषु प्रतिकोष्ठमेकैकं त्र्यस्त्रं सम्पाद्येत्वेवं चतुःषष्टित्र्यस्त्राणि संपादयेत्। तेषु च चतुःषष्टियोगिनीर्वक्ष्यमाणप्रकारेणावाहयेत्। अवशिष्टे पूर्वभागे त्रेधाविभक्ते त्रीणि त्र्यस्त्राणि प्राङ्मुखानि विलिख्य तेषु स्वस्तिवाचनविधिना मन्त्रावृत्त्या कलशत्रयं संस्थाप्य तासु महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीरुद्कूसंस्था आवाह्य पूजयेत्। योगिनीवेदेः पश्चादुपविश्य देशकालौ स्मृत्वा—अस्य

मन्त्रों द्वारा स्थापन कर पूजनादि करे।

१—पूजयित्वा महापीठं ततः सूक्तत्रयं जपेत्। रात्रिसूक्तं च श्रीसूक्तं देवीसूक्तं ततः परम्। महामायामयं सूक्तं केचिदिच्छन्ति साधवः। इतति कथितं ग्राह्यं योगिनीगणपूजनम्। कृतेन येन सङ्कल्पाः सिद्धयः स्युः करे स्थिता। अकृत्वा। योगिनीपूजां यः करोति तदाधमः। जप होम तथा दानं तत्सर्वं निष्फलं भवेत्। भस्मीभवति तत्सर्वं योगिनीपूजनं बिना। तस्मात्सर्वप्रयत्नेन योगिनीः पूजयेन्मतेति ग्रन्थान्तरे।

प्र०
२६१

कर्मणः समृद्धये महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीसहितानां चतुःषष्टियोगिनीनां पूजनं करिष्ये। इति संकल्प्य महाकाल्यादि-प्रतिमासु योगिनीप्रतिमासु च ॐ अश्मन्नूर्जम्० इत्यनुवाकेनाग्न्युत्तारणं कृत्वा प्रतिमा यथास्थानं संस्थाप्य तास्वावाहनादिकं कुर्यात। प्रतिमाभावे तण्डुलपुञ्जपूगफलरजतखण्डादावाहनम्। ॐ अम्बे॒ऽ अम्बि॒केऽम्बालिके॒नमानयति॒कश्च॒न। ससस्त्यश्व॒कःसुभद्रिकाङ्काम्पीलवा॒सिनीम्॥ अयमेव मन्त्रः सर्वेषूपचारेषु महाकालीपूजने आवर्तनीयः। एवं महालक्ष्मी-महासरस्वतीपूजने——ॐ श्रीश्चतेल॒क्ष्मीश्च॒ पत्न्यावहोरा॒त्रे पा॒र्श्वे नक्षत्रानि रूपम॒श्विनौ॒ व्यात्तम्॥ इ॒ष्णान्निषाणा॒मुम्मंऽइषाणसर्व॒लो॒कम्मंऽइषाण॥ ॐ पाव॒का॒नः॒सरस्वती॒ व्वाजेभिर्व्वा॒जिनीवती। य॒ज्ञं व्वष्टु॒धि॒यावसुः॥ इति मन्त्रावावर्तनीयौ। ततः—ॐतमीशा॒न॒ञ्जगतस्त॒स्थुष॒स्पतिं-

---

१—आग्नेय्यां मातृकावेदी वास्तुवेदी च नैर्ऋते। क्षेत्रपालस्य वायव्यामीशान्यां च नवग्रहाः॥ इति कुण्डरत्नावली-कुण्डकल्पद्रुमयोष्टीकायाम्।

२—रुद्रकल्पद्रुमोक्ता योगिन्यः—गजानना सिंमुखी गृध्रास्या काकतुण्डिका। उष्ट्रग्रीवा हयग्रीवा वाराही शरभानना। उलूकिका शिवारावा मयूरी विकटानना। अष्टवक्त्रा कोटराक्षी कुब्जा विकटलोचना। शुष्कोदरी ललज्जिह्वा श्वदंष्ट्रा वानरानना। ऋक्षाक्षी केकराक्षी च बृहत्तुण्डा सुराप्रिया। कलापहस्ता रक्ताक्षी शुकी श्येनी कपोतिका। पाशहस्ता दण्डहस्ता प्रचण्डा चण्डविक्रमा। शिशुघ्नी पापहन्त्री च काली रुधिरपायिनी। वसाधया गर्भभक्षा शवहस्ताऽऽन्त्रमालिनी। स्थूलकेशी बृहत्कुक्षिः सर्पास्या प्रेतवाहना। दन्तशूककरा क्रौञ्ची मृगशीर्षा वृषानना। व्यात्तास्या धूमनिश्वासा

प्र०

१९२

न्धियज्ञन्वमवंसेहूव्वयम् ॥ पूषानो ऽथाव्वेदंसामसंदृवृधेरंक्षितापायुरदंब्धःस्वस्तयें ॥ गजानन- नायै० गजाननामा० १ ॐ आब्रंह्मन् ब्रह्मणो ब्रंह्मवर्च्चसी जायतामाराष्ट्रे राजुन्न्यःशूरंऽ

व्योमैकचरणोर्ध्वदृक् । तापनी शोषणीदृष्टिः कोटरी स्थूलवासिका । विद्युत्प्रभा बलाकास्या मार्जारी कटपूतना । अट्टाट्टहासा कामाक्षी मृगाक्षी मृगलोचना चतुःषष्टि तु योगिन्यः पूजनीयाः प्रयत्नतः । इति ।

अथ शान्ति शान्तिसाराद्युक्ताः—जया च विजया चैव जयन्ती चापराजिता । दिव्ययोगी महायोगी गणेश्वरी । प्रेताशी डाकिनी काली कालरात्रिस्तथैव च । टङ्काक्षी रौद्रवेताली हुङ्कारी ऊर्ध्वकेशिनी । विरूपाक्षी च शुष्काङ्गी नरभोजनिका तथा । फट्कारी वीरभद्रा च धूम्राङ्गी कलहप्रिया । राक्षसी घोररक्ताक्षी विश्वरूपी भयङ्करी । चण्डमारी च चण्डी च वाराही मुण्डधारिणी । भैरवी च तथोर्ध्वाक्षी दुर्मुखी प्रेतवाहिनी । खट्वांगी चैव लम्बोष्ठी मालिनी मत्तयोगीनि । काली रक्ता च कङ्काली तथा च भुवनेश्वरी । त्रोटकी च महामारी यमदूती करालिनी । केशिनी मेदिनी चैव रोमगंगाप्रवाहिनी । विडाली कामुंकालाक्षी जया चाधोमुखी तथा । मुण्डाग्रधारिणी व्याघ्री काङ्क्षिणो प्रेतभक्षिणी । धूर्जटी विकटी घोरी कपाली विषलङ्घिनी ।

अथाग्नेयोक्ताः अ० ५२ श्लो० १—८ योगिन्यष्टकं वक्ष्ये ऐन्द्रादीशाक्तः क्रमात् । अक्षोभ्यां रूक्षकर्णी च राक्षसी कृपणाक्षया १ पिंगाक्षी चाक्षया क्षेमा इतानी लालया तथा । लोलाऽलक्ता बलाकेसी लालसा विमला पुनः २ हुताशा च विशालाक्षी हुङ्कारा बडवामुखी । महाक्रूरा क्रोधना तु भयङ्करी महानना ३ सर्वज्ञा तरलातारा ऋग्वेदा तु हयानना । साराख्या रुद्रसग्राही शम्बरा तालजंघिका ४ रक्ताक्षी सुप्रसिद्धा तु विद्युज्जिह्वा करङ्किणी । मेघनादा प्रचण्डोग्रा कालकर्णी वरप्रना ५ चन्द्रा चन्द्रावली चैव प्रपञ्चा प्रलयान्तिका । शिशुवक्त्रा पिशाची च पिशिताशा च लोलुपा ६ धमनी तापनी चैव रागिणी विकृतानना । वायुवेगा बृहत्कुक्षिर्विकृता विश्वरूपिका ७ यमजिह्वा जयन्ती च दुर्जया च जयन्तिका । बिडली रेवती चैव पूतना विजयान्तिका ८ अष्टहस्ताश्चतुर्हस्ता इच्छास्त्र सर्वसिद्धिदा इति ।

प्र० २६४

इषऽज्योतिव्याधी महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्व्वोढानड्वानाशुः सप्तिःपुरन्ध्रिर्य्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयोयुवास्य यजमानस्य व्वीरो जायतान्निकामेनिकामेनः पर्ज्जन्योव्वर्षतु फलवत्यो नऽ

अथ प्रतिष्ठातिलकोक्तः—अघोरा घोररूपा च चण्डा चण्डप्रभा तथा । विद्वन्माला सुपर्णाक्षी भीमा भीमपराक्रमा १ रेवती यक्षिणी दुर्गाकर्ममोटी च चण्डिका । विडाली विजया चान्या क्रोधाऽक्रोधा महासुरा २ भद्रकाली च रक्ताक्षी चक्षुषा । पद्मवक्षुषा । आनन्दा शुभदानन्दा अमृतामृदमालिनी ३ यशो यशोवती लक्ष्मी मेघा कान्ता कला शुभा'। वृद्धिर्मायाऽपि चाल्हादी व्यापिनी व्योकमातरः ४ घना च घर्घरा रौद्रा कामकाली सनन्दिनी । ऋद्धिर्ज्येष्ठा पराशान्ता भूमाता मननायका ५ प्रतिष्ठा मेघनादा च चक्रवारा शुचिक्रिया । भारती वीरहा सौम्या विज्ञाता ज्ञानदायिनी ६ चण्डाक्षी वामना दीर्घा सर्वंगा सर्वतोमुखी । कृमिकीटपतंगादि सर्वस्थानेषु वासिनी ७ चतुःषष्टिमयाऽऽख्याताः शान्तिकाले प्रपूजयेदिति ।

"दिव्ययोगी महोयोगी सिद्धयोगी गणेश्वरी । प्रेताक्षी डाकिनी कालरात्री निशाचरी । हुङ्कारी सिद्धवैताली हीङ्कारी भूतडामरी । उर्ध्वकेशी विशालाक्षी शुष्कांगी नरभोजिनी । फेत्कारी वीरभद्रा च धूम्राक्षी कलहप्रिया । राक्षसी घोररक्ताक्षी (कारी च) विरूपा श्री भयंकरी । वीरा कौमारिका चैव वाराही मुण्डीधारिणी । भैरवी चक्रिणी क्रोधी दुर्मुखी प्रेतवासिनी । कसवर्यैन्द्री प्रलम्बोष्ठी मालिनी मन्त्रयोगिनी । कालाग्नी मोहिनी चक्री हुंङ्कारी भुवनेश्वरी । कुण्डला बालकौमारी यमदूती कपालिनी । विशाला कालिका व्याघ्री रक्षणी प्रेतभक्षिणी । दुर्जया विकटा घोरा कपाली विषलंघिनी । महिषाशी चन्द्रहन्त्री आकाशी गिरिनायका । इति । दिव्ययोगी तमीशानमाब्रह्मन्महायोगिनी । यो नः पिता सिद्धयोगीमहांइन्द्रो गणेश्वरी । प्रेताशीमादित्यगर्भं स्वर्णघर्मेति शाकिनाम् । सत्यं च मेति कालीं च जिह्वा मे कालरात्रिका । निशाचरी भयैदार्वा हुङ्कारी हंसः शुचिसत् । अग्निस्तिग्मेन सिद्धिञ्च पूषं वैतालिकां यजेत् । विदद्यदीति हिङ्कारी अयमग्निर्भू तडामरोम् । ऊर्ध्वकेशीमिमं मेति विशालाक्षी यमाय च । गन्धर्वस्त्वेति शुष्काङ्गी मित्रो न नरभोजिनीम् । अग्ने ब्रह्म च फेत्कारी वीरभद्रा भग प्रणे । धूम्राक्षीं तु पितृभ्यश्च वरुणस्योत्त कालिप्रियाम् । राक्षसीं च सुपर्णोसि घोरां वरुण॰ प्राविता । हठं सश्च विरूपाक्षीं सुसन्दृशं च ह्रीकारीम् ।

प्र० २६५

प्र० १६५

ओषधयः पच्यन्तान्योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ सिंहमुख्यै० सिंहमुखीमा० २ ॐ महाँ२ऽ इन्द्रो वज्रहस्तःषोडशी शर्म्म यच्छतु ॥ हन्तु पाप्मानं योस्मान्द्वेष्टि। उपयामगृहीतोसि महेन्द्राय त्वैष ते योनिर्म्महेन्द्राय त्वा ॥ गृध्रास्यायै० गृध्रास्यामा० ३ ॐ सद्योजातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः। अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्यवाचि स्वाहा कृतंहविरदन्तुदेवाः ॥ काकतुण्डिकायै नमः काकतुन्डिकामा० ४ ॐ आदित्यङ्गर्भम्पयसासमङ्ग्धिसहस्रस्यप्रतिमांविश्वरूपम्। परिवृङ्धिहरसामाभिमंस्थाःशतायुषङ्कृणुहि चीयमानः ॥ उष्ट्रग्रीवायै० उष्ट्रग्रीवामा० ५ ॐ स्वर्णघर्म्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्णशुक्रः स्वाहा स्वर्णज्ज्योतिः स्वाहा स्वर्णसूर्य्यः स्वाहा ॥ हयग्रीवायै० हयग्रीवामा० ६ ॐ सत्यञ्च मे श्रद्धा च मे जगच्च मे धनञ्च मे विश्वञ्च मे महश्च मे क्रीडा च मे मोदश्च मे जातञ्च मे जनिष्यमाणञ्च मे सूक्तञ्च मे सुकृतञ्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ वाराह्यै० वाराहीमावा० ७ ॐ भायैदार्व्वाहारम्प्रभायाऽ अग्न्येधम्ब्रध्नस्य विष्टपायाभिषेक्तारं वर्षिष्ठाय नाकाय परिवेष्टारन्देवलोकाय पेशितारम्मनुष्यलोकाय प्रकरितार ६ सर्व्वेभ्यो लोकेभ्यऽउपसेक्तारमवऽऋत्यैवधायोपमन्थितारम्मेधायवासः पल्पूलीम्प्रकामा 'रजयि-

प्र० २६५

त्रोम् ॥ शरभाननायै० शरभाननामा० ८अथ द्वितीयषङ्क्तौ–ॐ जिह्वामेभद्द्रं व्वाङ्‌माहो मनो मन्न्युः
स्वराड्भामः ॥ मोदाः प्प्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानिमित्रम्मेसहः । उलूकिकायै० उलूकिकामा० १
ॐ हिङ्कारायस्वाहा हिङ्कृताय स्वाहा क्रन्दते स्वाहाऽ वक्रन्दाय स्वाहा प्प्रोथते स्वाहा प्प्रप्प्रोथाय
स्वाहा गन्धाय स्वाहा घ्राताय स्वाहा निविष्टाय स्वाहोपविष्टाय स्वाहा सन्दिताय स्वाहा व्वल्गते
स्वाहासीनायस्वाहा शयानाय स्वाहा स्वपते स्वाहा जाग्ग्रते स्वाहा कूजते स्वाहा प्प्रबुद्धाय स्वाहा
व्विजृम्भमाणाय स्वाहा व्विचृताय स्वाहा सꣳहानाय स्वाहोपस्त्थिताय स्वाहायनाय स्वाहा
प्प्रायणाय स्वाहा ॥ शिवारावायै० शिवारावामा० ॐ अग्निश्च मे घर्म्मश्च मेऽर्कश्च मे सूर्य्यश्च
मे प्प्राणश्च मे श्श्वमेधश्च मे पृथिवी च मेदितिश्च मेदितिश्च मे द्यौश्च मेङ्गुलयः शक्करयो
दिशश्च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ मयूरायै० मयूरामा० ३ ॐ पूषन्तवव्व्रतेव्वयन्नरिष्येमकदाचन ॥
स्तोतारस्तऽइहस्मसि ॥ विकटाननायै० विकटाननामा० ॐ व्वेद्याव्वेदिःसमाप्यतेवर्हिषाव्व-
र्हिरिन्द्रियम् ॥ यूपेनयूपऽआप्यतेप्प्रणीतोऽअग्निरग्निना ॥ अष्टवक्त्रायै० अष्टवक्त्रामा० ५ ॐ
अयमग्निः सहस्रिणोव्वाजस्यशतिनस्पतिः ॥ मूर्द्धाकवीरयीणाम् ॥ कोटराक्ष्यै० कोटराक्षीमा० ६

प्र० २९६

प्र०

ॐ इमम्मे व्वरुण श्श्रुधीहवमद्या च मृडय ॥ त्वामवस्युराचके ॥ कुब्जायै० कुब्जामा० ७
ॐ यमायत्वा मखायत्वा सूर्य्यस्यत्वा तपसे ॥ देवस्त्वा सविता मद्ध्वानक्तुपृथिव्याः सᳬ स्पृश-
स्पाहि ॥ अर्च्चिरसिशोचिरसितपोसि ॥ विकटलोचनायै० विकटलोचना० ८ अथ तृतीयपंक्तौ-
ॐ यमेनदत्तं त्रितऽएनं मायुनगिन्द्रऽएनं प्रथमोऽअध्यतिष्ठत ॥ गन्धर्वोऽअस्य रशनामगृब्भ्णात्सू-
रादश्वं व्वसवो निरतष्ट ॥ शुष्कोदर्यै० शुष्कोदरीमा० १ ॐमित्रस्यचर्षणीधृतोवो देवस्यसानसि ॥
द्युम्नञ्चित्रश्रवस्तमम् ॥ ललज्जिह्वायै० ललज्जिह्वामा० २ ॐ अग्ने ब्रह्म गृब्भ्णीष्व धरुणमस्यन्त-
रिक्षन्दृᳬहब्रह्मवनित्वाक्षत्रवनि सजातवन्युपदधामिभ्रातृव्व्यस्यव्वधाय ॥ धर्त्रमसि दिवन्दृᳬहब्रह्म-
वनित्वाक्षत्त्रवनि सजातवन्युपदधामिभ्रातृव्यस्यव्वधाय ॥ व्विश्श्वाब्भ्यस्त्वाशाब्भ्यऽउपदधामिचित-
स्त्थोर्द्ध्व चितो भृगूणामङ्गिरसान्तपसातप्प्यद्ध्वम् ॥ श्वदंष्ट्रायै० श्वदंष्ट्रामा० ३ ॐ भगप्प्रणेतर्भगसत्य-
राधोभगे मान्धियमुदवाददन्नः ॥ भगप्रनोजनयगोभिरश्श्वैर्भगप्रनृभिर्न्नृ न्तः स्याम ॥ वानरान-
नायै०वानराननामा०४ ॐसुपर्णोसि गरुत्मांस्त्रिवृत्तेशिरो गायत्त्रञ्चक्षुर्बृहद्रथन्तरेपक्षौ ॥ स्तोमऽ-
आत्माछन्दाᳬस्यङ्गानियजूᳬषिनाम ॥ साम ते तनूर्व्वामदेव्व्यं य्यज्ञायज्ञियम्पुच्छन्धिष्ण्याःशफाः

२१७

प्र०

२१७

प्र०

२९८

सुपर्णोऽसि गुरुत्मान्दिवङ्गच्छ स्वःपत ॥ ऋक्षाद्यै० ऋक्षाक्षीमा० ५ ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः
स्वधा नमः पितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा
नमः ॥ अक्षन्पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृपन्त पितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥ केकराद्यै० केकरा-
क्षीमा० ६ ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरा पापकाशिनी । तयानस्तन्वा सन्तंमयागिरिसन्ताभिचाक
शीहि ॥ बृहत्तुण्डायै० बृहत्तुण्डामा० ७ ॐ वरुणः प्राविता भुवन्मित्रोविश्वाभिरू-
तिभिः ॥ करतान्नः सुराधसः ॥ सुरप्रियायै० सुरप्रियामा० ८ अथ चतुर्थपङ्क्तौ—ॐ हंसः
शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत् ॥ नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जागोजाऋतजाऽ
अद्रिजाऽऋतम्बृहत् ॥ कपालहस्तायै० कपालहस्ता० १ ॐ सुसन्दृशन्त्वावयमघवन्वन्दिषीमहि ।
प्रनूनम्पूर्णबन्धुरस्तुतोयासिवशाँ२ऽ अनुयोजान्विन्द्रते हरी ॥ रक्ताद्यै० रक्ताक्षीमा० २ ॐ प्रति-
पदसिप्रतिपदेत्वानुपदस्यनुपदेत्वासम्पदसिसम्पदेत्वातेजोऽसितेजसेत्वा ॥ शुष्कायै० शुष्कामा० २
ॐ देवीरापोऽअपान्नपाद्योवऽऊर्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान्मदिन्तमः । तन्देवेभ्योदेवत्रादत्तशुक्रपेभ्यो-

प्र०

२९८

प्र०

२६६

येषाम्भागस्थस्वाहा ॥ श्येन्यै० शेनीमा० ४ ॐ देवीरापो ऽअपान्नपाद्यो वं ऽऊर्म्मिर्हविष्यं ऽइन्द्रियावान्न्म-
दिन्तमः । तन्देवेभ्यो देवत्त्रा दत्त शुक्रपेभ्यो येषाम्भागस्थ स्वाहा ॥ कपोतिकायै० कपोतिका० ५
ॐ श्रीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्त्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ॥ इष्णन्निषाणामुम्मं ऽइषाण-
सर्व्वंलोकम्मं ऽइषाण ॥ पाशहस्तायै० पाशहस्ता० ६ ॐ भुवो यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्त्रा नियुद्भिः
सचसे शिवाभिः ॥ दिवि मूर्द्धानन्दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम् ॥ दण्डहस्तायै० दण्ड-
हस्तामा० ७ ॐ कदाचन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ॥ उपोपेन्नु मघवन्भूय ऽइन्नु ते दानन्देवस्य-
पृच्यते ॥ प्रचण्डायै० प्रचण्डमा० ८ अथ पञ्चमपंक्तौ—ॐ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रम्प-
श्येमाक्षभिर्य्यजत्राः ॥ स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवा ᳪं सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ चण्डविक्रमायै०
चण्डविक्रमा० १ ॐ इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्प्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्म्मण ऽआप्प्या-
यद्ध्वमघ्न्या ऽइन्द्राय भागम्प्रजावतीरनमीवा ऽअयक्ष्मा मा वस्तेन ऽईशत माघश ᳪं सो ध्रुवा ऽअस्मिन्गो -
पतौ स्यात बह्वीर्य्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ शिशुघ्न्यै० शिशुघ्नीमा० २ ॐ देवीद्यावापृथिवी मखस्य
वामद्य शिरो राद्ध्यासन्देवयजने पृथिव्याः ॥ मखाय त्वा मखस्य त्वा शीर्ष्णे । पापहन्त्र्यै० पापहन्त्रीमा० ३

प्र०

२६६

ॐ विश्वानिदेवसवितर्दुरितानिपरासुव ॥ यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥ काल्यै न० कालीमा० ४

ॐ असुन्न्वन्तमयजमानमिच्छस्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य ॥ अन्न्यमस्म्मदिच्छसातऽइत्यानमो-
देविनिर्ऋतेतुब्भ्यमस्तु ॥ रुधिरपायिन्यै० रुधिरपायिनी० ५ ॐ अश्मश्चमऽआपश्चमे व्वीरुधश्श्चमऽ-
ओषधयश्श्चमेकृष्टपच्च्याश्चमेकृष्टपच्च्याश्चमेग्ग्राम्म्याश्चमेपशवऽआरण्ण्याश्श्चव्वित्तञ्चमेवित्तिश्श्चमे-
भूतञ्चमेभूतिश्चयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ वसाधयायै० वसाधयामा० ६ ॐ बह्वीनाम्पिताबहुरस्यपुत्त्र-
श्चिच्चश्च्चाकृणोतिसमनावगत्य ॥ इषुधिःसङ्काःपृतनाश्च्चसर्व्वाः पृष्ठेनिनद्धोजयतिप्रसूतः ॥
गर्भभक्षायै० गर्भक्षामा० ७ ॐ नमस्तेरुद्रमन्न्यवऽउतोतऽइषवेनमः ॥ बाहुभ्यामुतते नमः ॥
शवहस्तायै० शवहस्तामा० ८ षडुपङ्क्तौ—ॐ ऋतञ्चमेमृतञ्चमेऽयक्ष्मञ्चमेनामयच्चमेजीवातुश्च
मेदीर्घायुत्वञ्चमेनमित्रञ्चमेभयञ्चमेसुखञ्चमेशयनञ्चमेसूषाश्चमेसुदिनञ्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ आन्त्र-
मालिन्यै० आन्त्रमालिनीमा० १ ॐ तेऽआचरन्तीसमनेवयोषामातेवपुत्त्रम्बिभृतामुपस्त्थे ॥ अप-
शत्त्रूँन्न्विद्धयताᳬसम्बिदानेऽआर्क्त्नीऽइमेव्विष्फुरन्तीऽअमित्त्रान् ॥ स्थूलकेश्यै० स्थूलकेशीमा० २
ॐ वेद्यावेदिःसमाप्यतेबर्हिषाबर्हिरिन्द्रियम् ॥ यूपेनयूपऽआप्प्यते प्रणीतोऽअग्निरग्निना ॥

प्र०

बृहत्कुक्ष्यै० बृहत्कुक्षीमा० ३ ॐ पावका नः सरस्वती व्वाजेभिर्व्वाजिनीवती ।। यज्ञम्वष्टु धियावसुः ।।
सर्पास्यायै० सर्पास्यामा० ४ ॐ अस्कन्नमद्य देवेभ्य ऽआज्यᳯ सम्भ्रियासमङ्घ्रिणा व्विष्णो मात्वावक्क्र-
मिषं व्वसुमतीमग्ग्ने ते च्छायामुपस्थेषं व्विष्णो स्थानमसीत ऽइन्द्रो व्वीर्य्यमकृणोदूर्द्ध्वोद्ध्वर ऽआस्थात् ।।
प्रेतवाहिन्यै० प्रेतवाहिनीमा० ५ ॐ तीव्रान्घोषान्कृण्वते वृषपाणयोश्वा रथेभिः सहव्वाजयन्तः ।।
अवक्क्रामन्तः प्रपदैरमित्त्रान्क्षिणन्ति शत्रूँ१।। रनपव्ययन्तः ।। दन्तशूककरायै० दन्तशूककरामा० ६
ॐ मही द्यौः पृथिवी चन ऽइमं यज्ञम्मिमिक्षताम् ।। पिपृतान्नो भरीमभिः ।। क्रौञ्च्यै० क्रौञ्चीमा० ७
ॐ उपयामगृहीतोसि सावित्रोसि चनोधाश्चनोधा ऽअसि चनो मयि धेहि ।। जिन्व यज्ञञ्जिन्व यज्ञपतिं
म्भगाय देवाय त्वा सवित्रे ।। मृगशीर्षायै० मृगशीर्षामा० ८ अथ सप्तमपंक्तौ—ॐ अप्यायस्व
समेतु ते व्विश्वतः सोम व्वृष्ण्यम् ।। भवा व्वाजस्य सङ्गथे ।। वृषवाहिन्यै० वृषवाहिनीमा० १
ॐ कार्षिरसि समुद्रस्य त्वाक्षित्या ऽउन्नयामि ।। समापो ऽअद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः ।। व्यात्तास्या-
यै० व्यात्तास्यामा० २ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।। उर्व्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय-

२०१

२६

प्र०

२०१

मातृतात् ।। त्र्यंम्बकं यजामहे सुगन्धिम्पंतिवेदंनम् ।। उर्व्वारुकमिव बन्धंनादितोमुंक्षीयमामुतः ।।
धूमविश्वासायै० धूमविश्वासामा० ३ ॐ अम्बेऽअम्बिकेऽम्बालिकेनमानयतिकश्चकश्चन ।। ससंस्त्यश्वकः
सुभंद्रिकाङ्कांपीलवासिनीम् ।। व्योमैकचरणोर्ध्वंदृशे० व्योमैकचरणोर्ध्वदृशमा० ४ ॐ व्विष्णोरराटंमसि
व्विष्ष्णोः श्नप्त्रैस्थोव्विष्ष्णोःस्यूरंसिव्विष्ष्णोर्दुध्रुवोसि ।। व्वैष्ष्णवमंसिव्विष्ष्णंवेत्वा ।। तापिन्यै०
तापिनीमा० ५ ॐ ब्राह्मणमद्यव्विदेयम्पितृमन्तंम्पैतृमत्यमृषिमार्षेयꣳसुधातुंदक्षिणम् ।। अस्मद्रातादेव-
त्रागच्छतप्रदातारमाविंशत ।। शोषणीदृष्ट्यै० शोषणीदृष्टिमा० ६ ॐ भद्रङ्कर्णेभिःशृणुयामदेवा
भद्रम्पंश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।। स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसंस्तनूभिर्व्व्यंशेमहिदेवहितंयदायुः ।। कोटयै
नमः कोटरीमावा० ७ ॐ एकाचमेतिस्रश्चंमेतिस्रंश्चमेपञ्चचमेपञ्चमेसप्तचंमेसप्तचंमे नवंचमेनवंचमऽ
एकादशचमऽ एकादशचमेत्रयोदशचमेत्रयोदशचमेपञ्चंदशचमेपञ्चंदशचमेसप्तदंशचमेसप्तदंशचमे
नवंदशचमेनवंदशचमऽएकंविꣳशतिश्चमऽएकंविꣳ शतिश्चमेत्रयोविꣳशतिश्चमेत्रयोविꣳशतिश्चमेपञ्चंविꣳ
शतिश्चमेपञ्चंविꣳशतिश्चमेसप्तविंꣳशतिश्चमेसप्तविꣳशतिश्चमेनवंविꣳशतिश्चमेनवंविꣳ शतिश्चमऽएकंत्रिꣳ

शञ्चम॒ऽएकांत्रि॒ꣳशञ्च॒मे॒त्रय॑स्त्रि॒ꣳशञ्चष॒ज्ञेनंकल्पन्ताम् ॥ स्थूलनासिकायै० स्थूलनासिका० ८

अथाष्टमपङ्क्तौ—ॐब्रह्माणिमेम॒तय॒ꣳशꣳसु॒तास॒ꣳशुष्मं॑ऽइयर्तिप्रभृ॑तो मे॒ऽअद्रिः॑ ॥ आशास॒ते

प्रतिहर्य॑न्त्यु॒क्थेमाहरी॑व्वहत॒स्तानो॒ऽअच्छं ॥ विद्युत्प्रभायै० विद्युतप्रभामा० १ ॐ असंख्याता-

स॒हस्राणि॒श्वेरु॒द्द्रा ऽअधि॒भूम्याम् ॥ तेषांꣳसहस्रयोज॒नेव॒धन्वा॑नितन्मसि ॥ बलाकास्यायै० बलाका-

स्यामा० २ ॐ अहि॑रिवभो॒गैःपर्य्येतिबा॒हुञ्ज्याया॑हे॒तिम्परि॒बाधमानः ॥ ह॒स्त॒घ्नोव्विश्वा॑व्वयु॒नानि

व्वि॒द्वान्न्पुमा॒न्पुमाꣳसम्प॒रिपातुव्वि॒श्वतः॑ ॥ मार्जार्यै० मार्जारीमा० ३ ॐ ति॒स्रस्त्रेधासरस्व-

त्य॒श्श्विनाभार॒तीडा ॥ ती॒व्रंपरि॒स्रुता॒सोम॒मिन्द्रा॑यसुषुवुर्मदं॑म् ॥ कटपूतनायै० कटपूतनामा० ४

ॐसरस्व॒तीयोन्याङ्गर्भ॑मन्तर॒श्श्विभ्यां पत्नी॒ सुकृ॑तंबिभर्ति ॥ अ॒पाꣳरसेन॒व्वरु॑णो॒नसाम्नेन्द्रꣳ

श्रि॒यैज॒नयं॑न्नप्सुराजा ॥ अट्टाट्टहासायै० अट्टाट्टहासामा० ५ ॐइ॒दंव्विष्णु॒र्व्विचंक्रमेत्रे॒धानिदंधे

प॒दम् ॥ समूढमस्यपाꣳसु॒रेस्वाहा ॥ कामाक्ष्यै० कामाक्षीमा० ६ ॐव्वृष्णोऽ ऊ॒र्म्मिरंसिराष्ट्रदा-

रा॒ष्ट्रम्मेंदेहि॒स्वाहा॒व्वृष्णंऽऊ॒र्म्मिरंसिराष्ट्रदाराष्ट्रम॒मुष्म्मैदेहिव्वृषसे॒नोसिराष्ट्रदारा॒ष्ट्रम्मेंदेह॒स्वाहाव्वृषसे॒ -
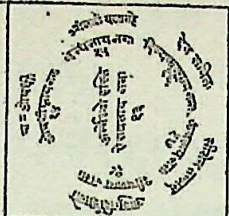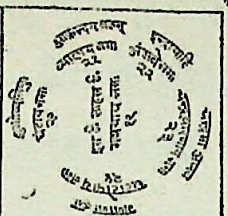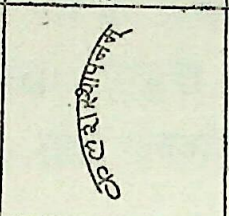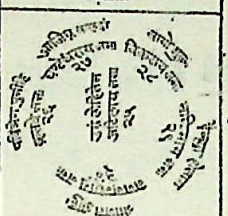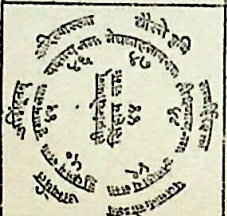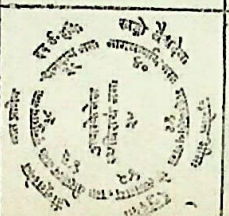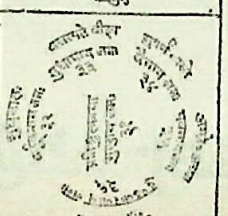
नोसिराष्ट्रदाराराष्ट्रममुष्मैंदेहि ॥ मृगाक्ष्यै० मृगाक्षीमा० ७ कुंॐमृगोनभीमःचरोगिरिष्ठाःपराापतऽ-आजगन्थापरस्याः ॥ सृकꣳ सꣳ शायंपविमिन्द्रतिग्मंव्विशत्रून्ताढिव्विमृधोनुदस्व ॥ मृगलोच-नायै० मृगलोचनामा० ८—ॐमनोजूतिर्जुषतामाज्ज्यस्यबृहस्पतिर्य्यज्ञमिमन्तंनोत्वरिष्टंयज्ञꣳसमि-मन्दंधातु ॥ व्विश्वेदेवासऽइहमादयन्तामों २ प्रतिष्ठ ॥ ततः प्रार्थयेत्—ॐसम्पूजिता मया देव्यो योगिन्यः सगणाः शुभाः । मम यज्ञन्तु निर्विघ्नं कुर्वन्तु गणक्षेत्रपैः । इति प्रार्थ्य—ततः साङ्गाः सपरिवाराः सायुधा सशक्तिकाः सवाहनाः दिव्यादिचतुःषष्टियोगिन्यः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु । ततः षोडशोपचारैः पूजयेत् ।

प्र०
३०४

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(अथ क्षेत्रपालपूजनम्)

प्र०

३०५

श्रीदौलतराम गौड वेदाचार्य

क्षत्रपालचक्र—

(१) सुबह, मंगल, रविवार, रात और ठीक मध्यकालमें मृत्तिका स्नान, सन्ध्याकालमें गोमूत्र और रातमें गोबरसे स्नान न करे। स्मृति-मुक्ताफल। (२) षष्ठी, सप्तमी, नवमी, त्रयोदशी, संक्रान्ति, पर्वकाल और रविवारको आंवलेसे स्नान न करे। (३) अमावास्या, सप्तमी और नवमीको धात्रीफलसे स्नान न करे। (४) उत्तमादिद्रव्योंके लंघनसे लक्ष्मीका नाश होता है। (५) मृत्तिका तथा गोमयको रात्रिमें तथा प्रदोषकालमें गोमूत्र ग्रहण न करे। (६) द्रव्यान्तर-युततेल सदा ग्राह्य है और तुलसी मिश्रित तेल ग्रहणमें भी स्वीकृत है। (७) अग्निको अग्निमें सक्षेप तथा अग्निको हाथसे स्पर्श न करे। (८) प्रस्थानके समय और रात्रिमें दधिभक्षण न करे और मधुपर्कका अकारण भक्षण निषिद्ध है। (९) धान, सत्तू और दधिका श्रेयस्कामनार्थी भक्षण न करे। तिलभोजन और अकारण स्नान भी रातमें निषेध है। (१०) यज्ञमें, विवाहमें, यात्राकालमें, पुस्तकवाचकमें तथा इतिहासके श्रवणमें रात्रिमें दान करना कहा है। (११) रातमें शान्ति इच्छुक यज्ञभूमिमें निवास न करे। रात्रौ न यज्ञभूमौ निवसेच्छान्तिमिच्छुकः। कालिकापुराण।

प्र०
३०६

अथ वायव्यकोणे क्षेत्रपालपूजनम्

वायव्यकोण में क्षेत्रपाल का पूजन करे। उसका क्रम यों है—अजर, व्यापक, इन्द्र और आदि का तत् तत् मन्त्रों से स्थापन कर प्राणस्थापनपूर्वक षोडशोपचार से पूजन करे।

वायव्यां श्वेतवस्त्राच्छादिते पीठे चतुरस्रं विलिख्य तिर्यङ्मान्यां पार्श्वमान्यां च सूत्रद्वन्द्वं समानान्तरं दद्यात्। एवं समानि नवकोष्ठानि भवन्ति। पूर्वादिकोष्ठेषु षट्सु षट् दलानि सम्पाद्य उत्तरेशानयोः कोष्ठयोस्तु सप्तसप्तदलानि कुर्यात्। ततः सपत्नीको यजमानः स्वासने उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य—देशकालौ स्मृत्वा—अस्मिन् विष्ण्वादिप्रतिष्ठाकर्मणि क्षेत्रपालपूजनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य पूर्वकोष्ठे षट्सु दलेषु—स्थापनं पूजनं कुर्यात्। तद्यथा—ॐ इमौतेपक्षावजरौपतत्त्रिणौयाभ्याᳩं रक्षाᳩंस्य पहᳩस्यग्ने ॥ ताभ्याम्पतेमसुकृतामुलोकंयत्रऽऋषयोजग्मुः प्रथमजाः पुराणाः ॥ अजराय नमः अजरमा० १ ॐ प्रथमावाᳩंसरथिनासुवर्णादेवौपश्यन्तौभुवनानिविश्वा ॥ अपिप्प्रयञ्चोदनावाम्मिमानाहोताराज्ज्योतिः प्रदिशादिशन्ता ॥ व्यापकाय न० व्यापकमा० २ ॐ इन्द्रस्यव्वज्रोमरुतामनीकम्मित्रस्यगर्भोव्वरुणस्यनाभिः ॥ सेमान्नोहव्यदातिञ्जु-

प्र० ३०८

षाणो देवंरथप्प्रतिंहृव्व्या गृंभाय ।। इन्द्रचौराय० इन्द्रचौरमा० ।।३ ॐ एवेदिन्द्रंव्वृषणंव्वज्रंबाहुं व्वसिष्ठासोऽअभ्यर्च्चन्त्यर्कैः ।। सनंस्ततोव्वीरवंद्धातुगोर्मद्यूयम्पातस्वस्तिभिःसदानः ।। इन्द्रमूर्त्तये० इन्द्रमूर्ति० ४ ॐ उक्षासंमुद्रोऽअंरुणः सुंपर्ण्णःपूर्व्वस्ययोनिम्पितुराविंवेश । मद्ध्येंदिवोनिहितः पृश्निरश्म्माव्विचंक्रमेरजंसस्पात्यन्तौ ।। उक्षणे नमः० उक्षाणमा० ५ ॐ यद्देवा देवहेडंनन्देवा-सश्चकृमाव्वयम् ।। अग्निम्मातस्म्मादेनंसोव्विश्वान्मुञ्चत्वःहंसः ।। कूष्माण्डाय० कूष्माण्डमा० ६ आग्नेये षट्सु दलेषु—ॐ सन्नऽइन्द्रायंयज्ज्यवेव्वरुंणायमरुद्भ्यः ।। व्वरिवोवित्परिस्रव ।। वरुणाय० वरुणमा० ७ ॐ ब्बाहूमेबलंमिन्द्रियःहस्तौमेकर्म्मव्वीर्य्यम् ।। आत्माक्षत्रमुरोममं ।। वटुकाय न० वटुकमा० ८ ॐमुञ्चन्तुमाशपथ्याद्थोव्वरुण्याद्दुत ।। अथोयमस्यपड्वीशात्सर्व्वस्म्माद्देवकिल्विषात् ।। विमुक्ताय० विमुक्तमा० ९ ॐ कुर्व्वन्नेवेहकर्म्माणि जिजीविषेच्छतःसमाः ।। एवन्त्वयिनान्यथे-तोस्तिनकर्म्मलिप्प्यतेनरे ।। लिप्तकाय० लिप्तकमा० १० ॐ सन्नःसिन्धुंरवभृथायोद्यतःसमुद्द्रोभ्य-वह्रियमाणःसलिलःप्रप्प्रुतो यज्ञोरोजंमास्कमितारजा०सिव्वीर्र्येभिव्वीरतंमाशविष्ठा ।। यापत्यैते ऽअप्रेतोतासहोभिर्व्विष्णूऽअगन्व्वरुंणापूर्व्वहूतौ ।। लीलालोकाय० लीलालोकमा० ११ ॐ नमो-

प्र० ३०८

प्र०

गणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्व्रातेभ्योव्व्रातपतिभ्यश्चवोनमोनमोगृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्यश्चवोनमोनमोव्विरूपेभ्योव्विश्वरूपेभ्यश्चवोनमः ॥ एकदंष्ट्राय० एकदंष्ट्रमा० १२ दक्षिणषट्के—ॐ अम्मैभ्योहस्तिपञ्चायाश्वम्पुरुषैगोपालंव्वीर्याविपालन्तेजंसेजपालमिरायैकीनाशक्कीलालायसुराकारम्भद्रायंगृहपश्रेयसेवित्तधमाध्यंदयायानुक्षत्तारम् ॥ ऐरावताय० ऐरावतमा० १३ ॐ या ऽओषधीः पूर्व्वाजातादेवेभ्यस्त्रियुगम्पुरा ॥ मनैनुबभ्रूणामहᳬंशतंधामानिसप्तच ॥ ओषधीघ्नाय० ओषधीघ्नमा० १४ ॐ त्र्यम्बकं यजामहे० । बन्धनाय० बन्धनमावा० १५ ॐ देवसवितःप्रसुवयज्ञम्प्रसुवयज्ञपतिम्भगाय ॥ दिव्व्योगन्धर्व्वःकेतपूःकेतन्नःपुनातुव्वाचस्पतिर्व्वाजन्नःस्वदतु स्वाहा ॥ दिव्यकरणाय० दिव्यकरणमा० १६ ॐ सीसेनतन्त्रम्मनसामनीषिण ऽऊर्णासूत्रेणकवयोव्वयन्ति ॥ अश्विनायज्ञᳬंसवितासरस्वतीन्द्रस्यरूपंव्वरुणोभिषज्ज्यन् ॥ कम्बलाय० कम्बलमावा० १७ ॐ आशुःशिशानोव्वृषभोनभीमोघनाघनःक्षोभणश्चर्षणीनाम् ॥ सङ्क्रन्दनोनिमिष ऽएकवीरःशतᳬंसेना ऽअजयत्साकमिन्द्रः ॥ भीषणाय० भीषणमा० १८ नैर्ऋत्यषट्के—ॐ इमᳬंसाहस्रᳬंशतधारमुत्सव्व्यच्यमानᳬं सरिरस्यमध्ये ॥ घृतन्दुहानामदितिञ्जनायाग्नेमाहिᳬंसीःपरमेव्व्योमन् ॥ गवयमारण्यमनुतेदिशामितेनंचि-

१०६

प्र०

१०६

न्न्वानस्तन्न्वोनिषीद ।। गवयन्तेशुगृच्छतु यन्द्विष्ष्मस्तन्तेशुगृच्छतु ।। गवयाय न० गवयमा० १६
ॐ कुम्भाव्वनिष्ठुज्जनिताशचीभिर्य्यस्मिन्नग्ग्रेयोन्न्याङ्गर्भोऽअन्तः ।। प्लाशिव्व्यक्तःशतधारऽ
उत्सो-दुहेनकुम्भीस्वधाम्पितृभ्यः ।। घण्टाय० घण्टामा० २० ॐ आक्रन्दयबलमोजोनऽआधानिष्ट-
निहिदुरितावाधमानः ।। अपप्प्रोथदुन्दुभेदुच्छुनाऽ इतऽइन्द्रस्यमुष्टिरसिव्वीडयस्व ।। व्यालाय०
व्यालमा० २१ ॐ इन्द्रायाहितूतुजानऽउपब्रह्माणिहरिवः ।। सुतेदधिष्ष्वनश्श्चनः ।। अंशवे
न०अंशुमावा०२२ ॐचन्द्रमाऽअप्स्वन्तरासुपर्णोधावतेदिवि ।। रयिम्पिशङ्गम्बहुलम्पुरुस्पृहहरिरेति-
कनिक्रदत् ।। चन्द्रवारुणाय०चन्द्रवारुणमा० २३ ॐगणानान्त्वा०घटाटोपाय०घटाटोपमावा० २४
पश्चिमे षट्सु दलेषु——ॐ उग्ग्रँलोहितेनमित्त्रः सौब्रत्येनरुद्द्रन्दौर्ब्रत्येनेन्द्रम्प्रक्रीडेनमरुतोबलेनसा-
द्ध्यान्प्रमुदा ।। भवस्यकण्ठ्यःरुद्द्रस्यान्तःपार्श्व्यम्महादेवस्ययकृच्छर्व्वस्यव्वनिष्ठुःपशुपतेःपुरीतत् ।।
जटिलाय०जटिलमा० २५ ॐपवित्रेण पुनीहिमाशुक्रेणदेवदीद्यत् ।। अग्ग्नेक्रत्वाक्रतूँ१रनु ।। क्रतवे०
क्रतुमा०२६ ॐआजिघ्रकलशम्मह्यात्वा० ।। घण्टेश्वराय०घण्टेश्वरमा०२७ ॐव्वायोशुक्रोऽअयामि
तेमद्ध्वोऽअग्ग्रन्दिविष्टिषु ।। आयाहिसोमपीतयेस्पार्होदेवनियुत्वता ।। विटकाय० विटकमा० २८

ॐ दैव्याहोतारा ऽऊर्द्ध्वमध्वरन्नोऽग्नेर्ज्जिह्वामभिगृणीतम् ॥ कृणुतन्नः स्विष्टिम् ॥ मणिमानाय० मणिमानमावा० २९ ॐ त्रीणितऽआहुर्दिविबन्धनानित्रीण्यप्सुत्रीण्यन्तः समुद्रे ॥ उतेवमेव्वरुणश्चन्नस्यर्व्वन्न्यत्रातऽआहुः परमञ्जनित्रम् ॥ गणबन्धाय० गणबन्धमा० ३० वायव्यदिक्कोष्ठे षट्सु दलेषु क्रमेण——ॐ प्रतिश्रुत्कायाऽअर्तनङ्घोषायभषमन्तायबहुवादिनमनन्तायमूकः शब्दायाडम्बराघातम्महसेव्वीणावादङ्क्रोशायतूणवध्ध्ममवरस्थरायशंखध्ध्मंव्वनायव्वनपमन्न्यतोरण्यायदावपम् ॥ मुण्डाय० मुण्डमा० ३१ ॐ शुद्धबालः सर्व्वशुद्धबालोमणिबालस्तऽआश्विनाः श्येतः श्येताक्षोरुणस्तेरुद्रायपशुपतयेकर्णायामाऽअवलिप्तारौद्रानभोरूपाः पार्ज्जन्न्याः ॥ वर्बूकराय न० वर्बूकरमा० ३२ ॐ व्वनस्पतेव्वीड्वङ्गोहिभूयाऽअस्म्मत्सखाप्रतरणः सुवीरः । गोभिः सन्नद्धोऽअसिव्वीडयस्वास्थातातेजयतुतेत्वानि ॥ सुधापाय० सुधापमा० ३३ ॐ सुपर्णव्वस्तेमृगोऽअस्यादन्तोगोभिः सन्नद्धापततिप्रसूता ॥ यत्रानरः सञ्चविचद्द्रवन्तितत्रास्म्भ्यमिषवः शर्म्मयंसन् ॥ वैनाय० वैनमा० ३४ ॐ अग्ग्नेऽअच्छाव्वदेहनः प्रतिनः सुमनाभव ॥ प्रनोयच्छसहस्रजित्वः हिधनदा असिस्वाहा ॥ पवनाय० पवनमा० ३५ ॐ भद्रङ्कर्णेभिः शृणुयाम० ढुण्ढकरणाय० ढुण्ढकरणमा० ३६

ॐ अपाम्फेनेनुनमुचेः शिरऽइन्द्रोदवर्त्तयः ॥ व्विश्वायदजं युस्पृधः ॥ स्थविराय० स्थविरमा० ३७
ॐ वातंप्प्राणेनापानेननासिके उपयाममधरेणोष्ठेनसदुत्तरेण प्रकाशेनान्तरमनूकाशेनबाह्यन्निवेष्प-
म्मूर्द्धास्तनयित्नुन्निर्बाधेनाशनिम्मस्तिष्केणविद्युतङ्कनीनकाभ्यांकर्णाभ्यांश्रोत्रंश्रोत्राभ्याङ्कर्णौ-
तेदनीमधरकण्ठेनापःशुष्ककण्ठेनचित्तम्मन्याभिरदितिंशीर्ष्णानिर्ऋतिन्निर्जर्जल्येन शीर्ष्णा संक्रोशैः
प्राणान्नेष्माणंस्तुपेन ॥ दन्तुरा० दन्तुरमा० ३८ ॐ उत्तरादिकोष्ठे सप्तसु दलेषु—ॐ इद
हविःप्रजननम्मेऽअस्तुदशवीरं सर्वगणंस्वस्तये ॥ आत्मसनिप्रजासनिपशुसनिलोकसन्न्यं
भयसनि ॥ अग्निःप्रजाम्बहुलाम्मेकरोत्वन्नम्पयोरेतोऽअस्मासुधत्त ॥ ॐ धनदाय० धनदमा० ३९
ॐ खङ्गोव्वैश्वदेवःश्वाकृष्णःकर्णोगर्दभस्तरक्षुस्तेरक्षसामिन्द्रायसूकरः ॥ सिंहोमारुतःकृकलासः
पिप्पकाशकुनिस्तेशरव्यायैव्विश्वेषान्देवानाम्पृषतः ॥ नागकर्णाय० नागकर्णमा० ४० ॐ मृगोन-
भीमःकुचरोगिरिष्ठाःपरावतऽआजगन्थापरस्याः ॥ सृकंसंशायपविमिन्द्रतिग्मंव्विशत्रून्ताडिविवि-
मृधोनुदस्व ॥ महाबलाय० महाबलमा० ४१ ॐ इन्दुर्दक्षःश्येनऽऋतावाहिरण्यपक्षःशकुनो-
भुरण्युः ॥ महान्त्सधस्थेध्रुवऽआनिषत्तोनमस्तेऽअस्तुमामाहिंसीः ॥ फेत्काराय न० फेत्कारमा० ४२

प्र० ३१२

ॐ जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे ॥ अनाविद्धया तन्वा जय त्वꣳ स त्वा वर्म्मणो महिमा पिपर्त्तु ॥ वीरकाय० वीरकामा० ४३ ईशानदिक्कोष्ठे सप्तसु दलेषु क्रमेण —ॐ तीव्रान्घोषान्कृण्वते वृषपाणयोऽश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ॥ अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान्क्षिणन्ति शत्रूँ रनपव्ययन्तः ॥ सिंहाय० सिंहमा० ४४ ॐ अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ२ आसादयादिह ॥ मृगाय० मृगमा० ४५ ॐ अदित्यास्त्वा पृष्ठे सादयाम्यन्तरिक्षस्य धर्त्रीं विष्टम्भनीं दिशामधिपत्नीं भुवनानाम् ॥ ऊर्मिर्द्रप्सो ऽअपामसि विश्वकर्मा त ऽऋषिरश्विनाध्वर्यू सादयतामिह त्वा ॥ यक्षाय० यक्षमा० ४६ ॐ द्यौस्ते पृथिव्यन्तरिक्षं वायुश्छिद्रं पृणातु ते ॥ सूर्यस्ते नक्षत्रैः सह लोकं कृणोतु साधुया ॥ मेघवाहनाय० मेघवाहनमा० ४७ ॐ सम्बर्हिरङ्क्ताꣳ हविषा घृतेन समादित्यैर्वसुभिः सम्मरुद्भिः ॥ समिन्द्रो विश्वदेवेभिरङ्क्तां दिव्यं नभो गच्छतु यत्स्वाहा ॥ तीक्ष्णाय० तीक्ष्णमा० ४८ ॐ पवमानः सो ऽअद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः ॥ यः पोता स पुनातु मा ॥ अमलाय नमः अमलमा० ४९ ॐ अभ्यर्षत सुष्टुतिं गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ॥ इमं यज्ञं नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥ शुक्राय० शुक्रमा० ५० ततः—ॐ मनोजूति० इति अजरादिक्षेत्रपालाः सुप्रतिष्ठिताः वरदाः भवन्तु । ततः षोडशोपचारैः पूजयेत् ।

प्र० ३१२ २७

प्र० ३१३

प्र०

३१४

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(कुशकण्डिका, ग्रहहोम, वास्तुहोम, सर्वतोभद्रादिहोम, योगनीहोम, क्षेत्रपाल, प्रधानदेवता आदि का होमकथन)

श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

३१४

अग्निदेव दक्षिणदिशाकी तरफ ब्रह्मदेवके लिए कुशासन रखे। अग्निके उत्तरदिशामें 'प्रणीतापात्र' के लिये दो आसन रखे। ब्रह्माके आसन पर ब्रह्मा को बैठा दे। कहे-हे ब्रह्मन्, जब तक कर्म की समाप्ति न हो तब तक आप ब्रह्मपद पर आसीन हों।

❀ अथ कुशकण्डिका ❀

अग्नेर्दक्षिणतो ब्रह्मासनम्। अग्नेरुत्तरतः प्रणीतासनद्वयम्। ब्रह्मासने ब्रह्मोपवेशनम्। यावत्कर्म समाप्यते तावत्त्वं ब्रह्मा भव। 'भवामि' इति पठित्वा तत्रोपवेशनम्। 'भवामि' इति ब्रह्मणः प्रत्युक्तिः। ब्रह्मा वाग्यतश्च भवेत्। ततः प्रणीतापात्रं सव्यहस्ते धृत्वा दक्षिणहस्तगृहीते-नोदकपात्रेण तत्र जलं सम्पूर्य पश्चादास्तीर्णकुशेषु दक्षिणहस्तेन निधाय (कुशैराच्छाद्य तत्पात्र-

ब्रह्मा—मैं होता हूँ-यों कहकर पूर्वस्थापित आसनपर बैठे। तदनन्तर—ब्रह्मा मौन हो जाय। फिर प्रणीतापात्र को बायें हाथ में धारण कर दाहिने हाथ से ग्रहण किये हुए जलपात्रसे उस प्रणीतापात्रमें जल को भर कर पहलेसे बिछी हुई कुशाओं पर दहिने हाथ से रखकर (कुशों द्वारा आच्छादन कर) उस पात्र को स्पर्श कर ब्रह्मदेव के मुख को देखकर ईक्षणमात्र से ब्रह्मा की आज्ञा लेकर उत्तरदिशाकी तरफ बिछी हुई कुशाओं पर रख दे। तदनन्तर बारह परिस्तरण कुशाओंके चार भागों को बायें हाथ में रखे उसमें से एक एक भाग से परिस्तरण अग्निकोणसे ईशानादि में करें।

तदनन्तर—पश्चिमदिशा से उत्तरदिशा की तरफ बिछी कुशाओं पर दो दो पात्रों को यथासंभव न्युब्ज उदक् संस्थ या प्राक्संस्थ आसादन करे। दो पवित्र छेदन करनेके लिए कुशा, प्रोक्षणीपात्र, आज्यस्थाली, चरुस्थाली, संमार्जनकुशा पांच, उपमनकुशा सात, तीन समिधा, स्रुव, घृत, चावल, पूर्णपात्र, आदिरखे। सूर्यादि ग्रहों के अनेकवर्ण के वस्त्र,

मालभ्य ब्रह्मणोमुखमवलोक्य ईक्षणमात्रेण ब्रह्मणाऽनुज्ञातः उत्तरत आस्तीर्णेषु कुशेषु निदध्यात्। ततो द्वादशानां परिस्तरणकुशानां चतुरो भागान् वामहस्ते कृत्वा एकैकभागेन आग्नेयादीशानान्तम्, ब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तम्, नैर्ऋत्याद्वायव्यान्तम्, अग्नितः प्रणीतापर्यन्तम्। इतरथावृत्तिः। तत उत्तरतः स्तीर्णकुशेषु द्विःपात्राणि यथासम्भवं न्युब्जानि उदक्संस्थानि प्राक्संस्थानि वा आसादयेत्। पवित्रे छेदनकुशाः। प्रोक्षणीपात्रम्। आज्यस्थाली। चरुस्थाली। संमार्जनकुशाः पञ्च। उपयमनकुशाः सप्त। समिधस्तिस्रः। स्रुवः। आज्यम्। तण्डुलाः। पूर्णपात्रम्। उपकल्पनीयानि—द्रव्याणि निधाय तत्तद्ग्रहवस्त्राणि। अधिदेवताद्यर्थं श्वेतानि। तत्तद्ग्रहवर्णाः। तत्तद्ग्रहपुष्पाणि। तत्तद्-

अधिदेवता आदिके लिये सफेद वस्त्र, सूर्यादिग्रहोंके लिए अनेकप्रकार के चन्दन, तत्-तत् वर्णके ग्रहों की धूप, ग्रहों के नैवेद्य, फल, दक्षिणा, बितान, सूर्यादिकी समिधा, यव, तिल, पूर्णाहुत्यर्थ नारिकेल तथा वस्त्र का आसादन करे।

---

(१) आचारभूष—हस्ते धृतानि पुष्पाणि ताम्रपात्रे च चन्दनम्। गङ्गोदकं चर्मपात्रं निषिद्धं सर्वकर्मसु॥ 'द्रवीभूतं घृतं चैव द्रवीभूतं च च[ं]दनम् नार्पयेन्मम तुष्ट्यर्थं घनीभूतं तदर्पयेत्॥

तदनन्तर—पवित्र बनावे। जैसे—स्थापित मध्य (बीच कुशा से रहित) शल्य रहित दो कुशपत्रद्वय को आगेसे बराबर नाप कर बायें हाथ में कर कुशा के अग्रभाग से प्रादेशमात्र नापकर उसके मूल पर उन दोनों कुशा के ऊपर तीन कुशाओं को उदगग्र रखकर उन कुशाओं को उस दो कुशा के मूलभाग से प्रादक्षिण्यक्रम से वेष्टन कर उन दो कुशपत्रों को प्रादेशमाण परिमाण के अग्रभाग को बायें हाथ में कर बचे हुए मूलभाग को और तीन कुशाओं को दाहिने हाथ से तोड़ दे और उसका त्याग करे। शिष्टपत्रद्वय ही पवित्र है। उस पत्रद्वय में अविश्लेषण के लिए गाँठ दे

ग्रहधूपाः। तत्तद्ग्रहानैवेद्यानि। फलानि। दक्षिणाः। वितानम्। अर्कादिसमिधिः। सयवतिलाः। पूर्णाहुत्यर्थं नारिकेलवस्त्रादि। ततः पवित्रकरणम्। आसादितकुशपत्रद्वयं स्थौल्येन समं मध्य-शल्यरहितं वामहस्ते कृत्वा अग्रतः प्रादेशमात्रं परिमाय मूले तयोरुपरि कुशात्रयमुदगग्रं निधाय तत्कुशात्रय तयोर्मूलभागेन प्रादक्षिण्येन परिवेष्ट्य तयोः प्रादेशपरिमणामग्रभागं वामहस्ते कृत्वा

तदनन्तर प्रागग्र प्रोक्षणोपात्रको प्रणीता के समीप रख वहाँ से सपवित्र पात्रान्तर या हाथ से प्रणीता पात्रके जल को तीनबार आसेचन कर प्रोक्षणीपात्रको बायें हाथ में कर दाहिने से बायें हाथ से धारण किये हुए ही कान की तरफ उठाकर नीचे की तरफ कर प्रणीतापात्रके जल से पवित्र द्वारा ग्रहण किये हुए उत्तान हाथ से प्रोक्षणीपात्र का प्रोक्षण करे। फिर प्रोक्षणीजलसे आज्यस्थाली का प्रोक्षण करे। चरुस्थालीका प्रोक्षण करे। संमार्जनकुशाओं का प्रोक्षण करे। उपयमनकुशाओं का, समिधा का, स्रुवका, आज्यका और पूर्णपात्र का प्रोक्षण करे।

प्र०
३१७

प्र० २१८

तदनन्तर उन दोनों पवित्रों को प्रोक्षणीपात्र में स्थापन कर उस प्रोक्षणीपात्रको अग्नि और प्रणीतीपात्र के मध्य में रख दे। फिर अग्नि के पीछे आज्यस्थाली रख उसमें आज्य का प्रक्षेप करे। इसीप्रकार अग्निके पश्चिम चरुस्थाली रख सपवित्रवाली उसमें तीनबार धोये हुए चावलों को छोड़ प्रणीतापात्रके जलसे आसेचन कर उपयुक्त जल को

अवशिष्टं मूलभागं कुशत्रयं च दक्षिणहस्ते धृत्वा दक्षिणहस्तेन त्रोटयेत् परित्यजेच्च। शिष्टं पत्रद्वयं पवित्रम् तस्मिन्पत्रद्वयेऽविश्लेषाय ग्रन्थि कुर्यात्। तत्रः प्रागग्रं प्रोक्षणीपात्रं प्रणीता-सन्निधौ निधाय तत्र सपवित्रेण पात्रान्तरेण हस्तेन वा प्रणीतोदकं त्रिरासिच्य प्रोक्षणीपात्रं सव्ये कृत्वा दक्षिणेन वामहस्तधृतमेव कर्णसमुत्थाय नीचः कृत्वा प्रणीतोदकेन पवित्रानीतेनोत्तनहस्तेन प्रोक्षणीः प्रोक्षयेत। ततः प्रोक्षणीजलेन आज्यस्थालीं प्रोक्षणम्। चरुस्थालीं प्रोक्षणम्। संमा-र्जनकुशानां प्रोक्षणम्। उपयमनकुशानां प्रोक्षणम्। समिधां प्रोक्षणम्। स्रुवस्य प्रोक्षणम्।

उसमें छोड़कर ब्रह्मा के दक्षिण तरफ घी को आचार्य उत्तरदिशासे अदग्ध अश्रावित पक्क चरु को पका दे। तदनन्तर अग्निकुण्ड या स्थण्डिल से जलते हुए उल्मुक को लेकर ईशानकोण आदि से प्रदक्षिणकर ईशानकोणपर्यन्त अग्निस्थित आज्य और चरुके चारों तरफ घुमकर उस उल्मुक को अग्नि में छोड़ दे। फिर अप्रदक्षिणक्रमसे अपने हाथको ईशानकोण पर्यन्त घुमा दे। चरुके आधे पक्क जाने पर स्रुव को हाथ में ग्रहण कर उस स्रुव के विल को नीचे की तरफ कर एकबार

प्र० २१८

अग्नि में तपाकर संमार्जन कुशाओं के अग्रभाग से भीतर की तरफ से और मूलभाग से आरंभकर अग्रभागपर्यन्त पूर्वकी तरफ संमार्जन कर कुश मूलोंसे बाहर और नीचे के हिस्से में अग्रभाग से आरंभ कर शुद्धकर संमार्जनकुशाओं को अग्नि में

आज्यस्य प्रोक्षणम् । पूर्णपात्रस्य प्रोक्षणम् । ततस्ते पवित्रे प्रोक्षणीपात्रे संस्थाप्य प्रोक्षणीपात्रमग्निप्रणतयोर्मध्ये निदध्यात् । ततोऽग्नेः पश्चादाज्यस्थालीं निधाय तत्राज्यं प्रक्षिपेत् । एवं चरुस्थालीमग्नेः पश्चिमतो निधाय तत्र सपवित्रायां त्रिःप्रक्षालियान् तण्डुलान् प्रक्षिप्य प्रणीतोदकमासिच्योपयुक्तं जलं पत्र निनीय ब्रह्मदक्षिणत आज्यम् आचार्य उत्तरतश्चरुमदग्धमस्रावितमण्डपन्तरूष्मपक्वं सुशृतं पचेत् । (केवलाज्ये तु उत्तराश्रितामाज्यस्थालीमग्नावारोपयेत्) । ततोऽग्नेर्ज्वलदुल्मुकमादाय ईशानादिप्रदक्षिणमीशानपर्यन्तमग्निमाज्यचर्वोः परितं भ्रामयित्वोल्मुकमग्नौ प्रक्षिप्य अप्रदक्षिणं हस्तमीशानकोणपर्यन्तं पर्यावर्तयेत् । अर्द्धश्रिते चरौ स्रुवं गृहीत्वाऽधोबिलं सकृत् प्रतप्य समार्जनकुशानाममग्रैरन्तरतः—उपरि मूलादारभ्याग्रपर्यन्तं प्राञ्चं संमृज्य कुशमूलैर्बहिरधः प्रदेशे

फेंककर प्रणीताजल से स्रुव का अभ्युक्षण तथा स्रुव का प्रतपन कर दक्षिणादिशाकी तरफ उस स्रुवको रख दे ।

तदनन्तर पके हुए चरुमें स्रुव के द्वारा घी को छोड़ आज्यस्थाली को चरुके पूर्व से ले आकर उत्तरदिशाकी तरफ रख फिर अग्नि के पश्चिमदिशाकी तरफ स्थापन करे । फिर चरुको लेकर उत्तरदिशासे उतारे हुए घी के पूर्व से

प्र०

३१९

लेआकर घी के उत्तर की तरफ स्थापन करे।

तदनन्तर—दाहिने हाथ के अँगूठे और अनामिका से उस दोनों कुशाओं (पवित्र) के अग्रभाग को पकड़कर ऊपर के अग्रभाग को नम्र बनाकर धारण करते हुए ही आज्य (घी) में प्रक्षेपकर आज्य को उत्पवन करे। (अर्थात्–उछाले)

आग्रादारभ्य प्रत्यञ्चं सम्मृज्य संमार्जनकुशानग्नौ प्रक्षिप्य प्रणीतोदकेन स्रुवमभ्युक्ष्य पुनः स्रुवं प्रतप्य दक्षिणस्यां दिशि तं स्थापयेत्। ततः शृतं चरुं स्रुवेण गृहीतेनाज्येनाभिघार्य आज्यस्थालीं चरोः पूर्वेणानीयोत्तरत उद्वारस्याग्नेः पश्चिमतः स्थापयेत्। ततश्चरुमादाय उत्तरत उद्वास्य आज्यस्य पूर्वेणानीय आज्यस्योत्तरतः स्थापयेत्। ततो दक्षिणहस्तस्याङ्गुष्ठानामिकाभ्यां पवित्रयोर्मूलं सङ्गृह्य वामहस्तस्याङ्गुष्ठानामिकाभ्यां तयोरग्रं सङ्गृह्य ऊर्ध्वाग्रेऽनम्रीकृत्य धारयन्नेवाज्ये प्रक्षिप्याज्यस्योत्पवनं कुर्यादुच्छालयेत्। तत आज्यमवेक्ष्य सत्यपद्रव्ये तन्निरस्येत्। ततः पूर्ववत्पवित्रे गृहीत्वा प्रोक्षणीनामप्युत्पवनं कुर्यात्। ततो वामहस्ते उपयमनादाय दक्षिणेन प्रादेशमात्रीः पालाशी-

फिर घी को देखकर उसमें अपद्रव्य हो तो उसे निकाल दे। तदनन्तर फिर पवित्रों को ग्रहण कर प्रोक्षणीस्थित जलका उत्पवन करे। फिर बायें हाथ में उपयमनकुशा को लेकर दाहिने हाथ में प्रादेशप्रमाण की तीन समिधाओं को घी में भिगोकर दो अँगुल ऊपर मध्यमा अनामिका अँगूठे के मूलभाग में धारण की हुई तर्जनी की तरह मोटी समिधा को

एक साथ चुपचाप अग्नि में प्रक्षेप कर सपवित्र वाली प्रोक्षणीपात्रके जलसे चुल्लू द्वारा ग्रहण कर ईशानकोण से प्रक्षेप कर फिर ईशानपर्यन्त प्रदक्षिण क्रम से पर्युक्षण कर अप्रदक्षिणक्रम से ईशानकोणपर्यन्त अपने दाहिने हाथ को केवल घुमा दे। तदनन्तर उन पवित्र को प्रणीतापात्र में रख अपने दाहिने जानु को मोड़कर ब्रह्मा से कुशों द्वारा

स्तिस्रः समिधो घृताक्ता द्व्यङ्गुलादूर्ध्वं मध्यमानामिकाङ्गुष्ठैर्मूलभागे घृतास्तर्जन्यग्रवत्स्थूलास्तन्त्रेणाग्नौ तूष्णीं प्रक्षिप्य सपवित्रेण प्रोक्षण्युदकेन चुलुकगृहीतेन ईशानादि प्रदक्षिणमीशानकोण पर्यन्तं पर्युक्ष्य अप्रदक्षिणमीशानकोणपर्यन्तं हस्तं पर्यावर्तयेत्। ततः पवित्रे प्रणीतासु निधाय दक्षिणं जान्वाच्य ब्रह्मणा कुशैरन्वारब्धः उपयमनकुशसहितं प्रसारिताङ्गुलिहस्तं हृदि निधाय दक्षिणहस्तेन मूले चतुरङ्गुलं त्यक्त्वा शङ्खसन्निभमुद्रया स्रुवं गृहीत्वा समिद्धतमेऽग्नौ वायव्यकोणादारभ्याग्निकोणपर्यन्तं प्राञ्चं वा सन्ततघृतधारया मनसा प्रजापतिं ध्यायन् स्रुवेण तूष्णीं सशेषं मौनी जुहुयात्। नात्र स्वाहाकारः। इदं प्रजापतये न मम इति यजमानेन त्यागः कर्तव्यः।

अन्वारब्ध (स्पर्श) कर उपयमनकुशा के सहित अपने हाथ की अँगुलियों को फैला कर उस हाथ को हृदय में लगा कर दाहिने हाथ से स्रुव के मूल से चार अँगुल छोड़कर 'शंखमुद्रा' से स्रुव को ग्रहणकर प्रदीप्त अग्निमें वायव्यकोणसे प्रारंभकर अग्निकोण पर्यन्त या पूर्वदिशाकी तरफ निरन्तर घी को धारा द्वारा प्रजापति का मन से ध्यान कर स्रुव से

प्र० ३२१

चुपचाप शेषके सहित हवन करे। इसमें स्वाहाकार नहीं है। 'इदं प्रजापतये न मम' इस वाक्य का यजमान त्याग करे। होमत्याग के बाद स्रुवस्थित आज्य का सर्वत्र प्रोक्षणीपात्र में प्रक्षेप करे।

तदनन्तर—निर्ऋतिकोण से आरम्भकर ईशानकोणपर्यन्त या पूर्व की तरफ 'इन्द्राय स्वाहा' इससे हवन करे। 'इदमिन्द्राय न मम' इससे त्याग करे। फिर उत्तर-पूर्वार्धमें 'अग्नये स्वाहा' से हवन करे। दक्षिणपूर्वार्ध में

होमत्यागानन्तरं स्रुवावशिष्टस्याज्यस्य सर्वत्र प्रोक्षणीपात्रे प्रक्षेपः कार्यः। ततो निर्ऋतिकोणादारभ्येशानकोणपर्यन्तं प्राञ्चं वा—ॐ इन्द्राय स्वाहा इति जुहुयात्। इदमिन्द्राय न मम—इति त्यजेत्। तत उत्तरपूर्वार्द्धे—ॐ अग्नये स्वाहा—इदमग्नये न मम इति हुत्वा दक्षिणपूर्वार्द्धे—ॐ सोमाय स्वाहा—इदं सोमाय न मम इति जुहुयात्। ततो यजमानः द्रव्यत्यागं कुर्यात्। तत्र च बहुकर्तृके होमे यथाकालं प्रत्याहुतित्यागस्य कर्तुमशक्यत्वात्सर्वं हवनीयं द्रव्यं देवताश्च मनसा ध्यात्वा

सोमाय स्वाहा—से हवन करे। तदनन्तर यजमान त्याग करे। क्यों कि बहुकर्तृक हवन में यथासमय प्रति आहुति के बाद प्रोक्षाणीपात्र में त्याग करना असंभव है। अतः सब हवनीयद्रव्य तथा देवताओं को मनसे ध्यान कर 'इदमुपकल्पितं समित्तिलादिद्रव्यं या या यक्ष्यमाणदेवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तं न मम' इस वाक्यको पढ़कर जल

सहित अक्षत को भूमि में प्रक्षेप करे । 'यथादैवतमस्तु' ये कहे ।

त्यजेत्। तच्चैवम्–इदमुपकल्पितं समित्तिलादिद्रव्यं (यथासम्पादितम्) या या यक्ष्यमाणदेवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तं न ममेति साक्षतजलं भूमौ क्षिपेत् । यथादैवतमस्तु ।

* अथ [1]ग्रहहोमः *

ॐगणानां त्वा । अम्बेऽ अम्बिके । आ कृष्णेन । इमन्देवाः । अग्निर्मूर्द्धा । उद्बुध्यस्व । बृहस्पतेऽ अति । अन्नात्परि । शन्नः । कया नः । केतुं कृण्वन् । त्र्यम्बकं यजमहे । श्रीश्च । यदक्रन्दः । विष्णोरराटम् । आ ब्रह्मन् । सजोषाऽ इन्द्र । यमाय त्वा । कार्षिरसि । चित्रावसः । अग्निन्दूतम् । आपो हि । स्योना पृथिवि । इदं विष्णुः । इन्द्रऽ आसाम् । अदित्यै रास्ना ।

गणानां त्वा, अम्बे अम्बिके, आ कृष्णेन, इमन्देवाः अग्निर्मूर्धा, उद्बुध्यस्व, बृहस्पतेऽ अति, अन्नात्परि, शन्नः, कया नः, केतुं कृण्वन्, त्र्यंबकं यजामहे, श्रीश्च, विष्णोरराटम्, आ ब्रह्मन् सजोषा इन्द्र, यमाय त्वा, कार्षिरसि, चित्रावसः,

(१) अर्क। (मदार) पलाशः खदिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः । उदुम्बरः (गूलर) शमी दूर्वा कुशाश्च समिधस्त्विमाः ।।

अग्नि दूतम्, आपो हि, स्योना पृथिवि, इदं विष्णुः, इन्द्रऽआसाम्, अदित्यै रास्ना, प्रजापते नत्वम्, नमोऽस्तु, ब्रह्म-यज्ञानम्, गणानां त्वा, अंबेऽ अम्बिके, वायो ये ते, घृतं घृतपावानः, यावांकशा, वास्तोष्पते, नहिस्पशम्, त्रातारमिन्द्रम्,

प्र०

प्रजापते। नमोऽस्तु। ब्रह्मयज्ञानम्। गणानां त्वा। अम्बेऽअम्बिके। व्वायो येते। घृतपावानः। यावाङ्कशा। वास्तोष्पते। नहिस्पशम्। त्रातारमिन्द्रम्। त्वन्नोऽ अग्ने। यमाम त्वा। असुन्वन्त। तत्त्वायामि। आ नो नियुद्भिः। वयꣳ सोम। तमीशानम्। अस्मे रुद्रा। स्योनापृथिवि। इति मन्त्रैः जुहुयात्। ततः स्थापितदेवानां सकृत्सकृदाज्येन जुहुयात्।

३१४

स्वन्नोऽ अग्ने, यमायत्वा, असुन्वन्तम्, तत्त्वा यामि, आ ना नियुद्भिः, वयꣳ सोम, तमीशानम्, अस्मे रुद्रा और स्योना पृथिवि, इन मन्त्रों से ग्रहों के लिए आहुति दे। तदनन्तर स्थापित देवताओं के लिए एक एक बार घृत से हवन करे।

प्र०

३२४

प्र०

३२५

२८

तत आचार्यो गणपत्यम्बिका-वरुण-सगणेश-षोडशमातृका-सप्तघृतमातृका-वास्तुपीठदेवता-(मण्डपदेवता) सर्वतोभद्रदेवता-चतुःषष्टियोगिनी-क्षेत्रपालदेवताभ्यः-सकृत्सकृदाज्येन जुहुयात्। तिलादिना दश दशाष्टोत्तरशमष्टौ वाऽऽहुतयः इति जीर्णसम्प्रदायः। तद्यथा—ॐगणपतये स्वा० १ ॐअम्बिकायै स्वाहा २ ॐवरुणाय स्वा० ३ ॐगणपतये स्वा० ४ ॐगौर्यै स्वा० ५ ॐपद्माय स्वा० ६ ॐशच्यै स्वा० ७ ॐमेधायै० ८ ॐसावित्र्यै स्वा० ९ ॐविजयायै स्वा० ॐजयायै स्वा०११ देवसेनाय स्वा० १२ ॐस्वधायै स्वधायै स्वा० १३ ॐस्वाहायै स्वा० १४ ॐमातृभ्यः स्वा० १५ ॐलोकमातृभ्यः स्वा० १६ ॐधृत्यै स्वा० १७ ॐपुष्ट्यै स्वा० १८ ॐतुष्ट्यै स्वा० १९ ॐआत्मनः कुलदेवतायै स्वा० २० ॐश्रियै स्वा० २१ लक्ष्म्यै स्वा०२२ॐधृत्य स्वा० २३ ॐमेधायै स्वा० २४ ॐस्वाहायै० स्वा० २५ ॐप्रज्ञायै स्वा० २६ ॐसरस्वत्यै स्वा० २७

प्र०

३२५

प्र०

१२६

* अथ वास्तुमण्डल होमः *

शिख्यादि देवताओं के नाम मन्त्रों से हवन करे फिर बिल्वादि से वास्तोष्पते आदि मन्त्रों से हवन करे।

ॐशिखिने स्वाहा १ ॐपर्जन्याय स्वाहा २ ॐजयन्ताय स्वाहा ३ ॐकुलिशायुधाय स्वाहा ४ ॐ सूर्याय स्वाहा ५ ॐसत्याय स्वाहा ६ ॐभृशाय स्वाहा ७ ॐआकाशाय स्वाहा ८ ॐवायवे स्वाहा ९ ॐपूष्णे स्वाहा १० ॐवितथाय स्वाहा ११ ॐगृहक्षताय स्वाहा १२ ॐयमाय स्वाहा १३ ॐगन्धर्वाय स्वाहा १४ ॐभृङ्गराजाय स्वाहा १५ ॐमृगाय स्वाहा १६ ॐपितृभ्यः स्वाहा १७ ॐदौवारिकाय स्वाहा १८ ॐसुग्रीवाय स्वाहा १९ ॐपुष्पदन्ताय स्वाहा २० ॐवरुणाय स्वाहा २१ ॐअसुराय स्वाहा २२ ॐशेषाय स्वाहा २३ ॐपापाय स्वाहा २४ ॐरोगाय स्वाहा २५ ॐअहये स्वाहा २६ ॐमुख्याय स्वाहा २७ ॐभल्लाटाय स्वाहा २८ ॐसोमाय स्वाहा २९ ॐसर्प्पेभ्यः स्वाहा ३० ॐअदित्यै स्वाहा ३१ ॐ दित्यै स्वाहा ३२ ॐअद्भ्यः स्वाहा ३३ ॐसावित्राय स्वाहा ३४ ॐजयाय स्वाहा ३५ ॐ रुद्राय स्वाहा ३६ ॐ अर्यम्णे स्वाहा ३७ ॐ सवित्रे स्वाहा ३८ ॐ विवस्वते स्वाहा ३९ ॐविबुधाधिपाय

प्र०

१२६

प्र०

स्वाहा ४० ॐमित्राय स्वाहा ४१ राजयक्ष्मणे स्वाहः ४२ ॐपृथ्वीधराय स्वाहा ४३ ॐआप वत्साय स्वाहा ४४ ॐब्रह्मणे स्वाहा ४५ ॐचरक्यै स्वाहा ४६ ॐविदार्यै स्वाहा ४७ ॐपूतनायै स्वाहा ४८ ॐपापराक्षस्यै स्वाहा ४९ ॐस्कन्दाय स्वाहा ५० ॐअर्यम्णे स्वाहा ५१ ॐजृम्भकाय स्वाहा ५२ ॐपिलिपिच्छाय स्वाहा ५३ ॐइन्द्राय स्वाहा ५४ ॐअग्नये स्वाहा ५५ॐयमाय स्वाहा ५६ ॐनिर्ऋतये स्वाहा ५७ ॐवरुणाय स्वाहा ५८ ॐवायवे स्वाहा ५९ ॐकुबेराय स्वाहा ६० ॐईशानाय स्वाहा ६१ ॐ ब्रह्मणे स्वाहा ६२ ॐअनन्ताय स्वाहा ६३ ॐवास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः। यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शञ्चतुष्पदे स्वाहा १ ॐवास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभरश्वेभिरिन्दो। अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रति तन्नो जुषस्व स्वाहा २ ॐ वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या। पाहि क्षेम उत योगे वं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः स्वाहा ३ ॐ अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्। सखासुशेव एधि नः स्वाहा ४ ॐवास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांऽसत्रं सोम्यानाम्। द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा

स्वाहा ५ इति मन्त्रैः प्रतिकुण्डं पञ्च-पञ्च बिल्वफलानि एकैको होता जुहुयुः। बिल्वहोमे न विभागः। किन्तु प्रतिकुण्डं पञ्च २ बिल्वहोमः पञ्चविंशति पञ्चविंशति वा बिल्वहोमः। इति वास्तुहोमः। (अघोरहोमः) ॐअघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः स्वाहा ६ इति सर्वेषु कुण्डेषु अष्टोत्तरशतमष्टोरशतं एकैको होता जुहुयात्। अत्रापि न विभागः, इत्यष्टोत्तरशताहुति कुर्यात्। इति वास्तुहोमः।

* अथ सर्वतोभद्रदेवताहोमः

सर्वतोभद्र के मन्त्रों से अर्थात्—ब्रह्मा आदि से हवन करे।

ॐब्रह्मणे स्वाहा १ ॐसोमाय स्वाहा २ ॐईशानाय स्वाहा ३ ॐइन्द्राय स्वाहा ४ ॐअग्नये स्वाहा ५ ॐयमाय स्वाहा ६ ॐनिर्ऋतये स्वाहा ७ ॐवरुणाय स्वाहा ८ ॐवायवे स्वाहा ९ ॐअष्टवसुभ्यः स्वाहा १० ॐएकादशरुद्रेभ्यः स्वाहा ११ ॐद्वादशादित्येभ्यः स्वाहा १२ ॐअश्विभ्यां स्वाहा १३ ॐसपैतृकविश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा १४ ॐसप्तयक्षेभ्यः स्वाहा १५ ॐनागेभ्यः स्वाहा १६ ॐगन्धर्वाप्सरोभ्यः स्वाहा १७ ॐस्कन्दाय स्वाहा १८ ॐनन्दीश्वराय स्वाहा १९

प्र० ३२८ प्र० ३२९

ॐशूलाय स्वाहा २० ॐमहाकालाय स्वाहा २१ॐदक्षादिभ्यः स्वाहा २२ॐदुर्गायै स्वाहा २७ ॐ अद्भ्यः स्वाहा २८ ॐ मरुद्भ्यः स्वाहा २९ ॐपृथिव्यै स्वाहा ३० ॐगङ्गादिनदीभ्यः स्वाहा ३१ ॐ सप्तसागरेभ्यः स्वाहा ३२ ॐमेरवे स्वाहा ३३ ॐगदायै स्वाहा ३४ ॐत्रिशूलाय स्वाहा ३५ ॐवज्राय स्वाहा ३६ ॐशक्तये स्वाहा ३७ ॐदण्डाय स्वाहा ३८ ॐखड्गाय स्वाहा ३९ ॐपाशाय स्वाहा ४० ॐअङ्कुशाय स्वाहा ४१ ॐगौतमाय स्वाहा ४२ ॐभरद्वाजाय स्वाहा ४३ ॐविश्वा-मित्राय स्वाहा ४४ ॐकश्यपाय स्त्राहा ४५ ॐजमदग्नये स्वाहा ५० ॐकौमार्यै स्वाहा ५१ ॐ ब्राह्म्यै स्वाहा ५२ ॐवाराह्यै स्वाहा ५३ ॐचामुण्डायै स्वाहा ५४ ॐवैष्णव्यै स्वाहा ५५ ॐमाहेश्वर्यै स्वाहा ५६ॐ ॐवैनायक्यै स्वाहा ५७ इति सर्वतोभद्रहोमः ।

* अथ लिंगतोभद्रहोमे तु विशेषमाह *

लिङ्गतोभद्र के देवताओं से हवन करे ।

ॐ असिताङ्गभैरवाय स्वाहा १ ॐ रुरुभैरवाय स्वाहा २ ॐ क्रोधभैरवाय स्वाहा ३ ॐचण्ड-

प्र०
३२९

भैरवाय स्वाहा ४ ॐउन्मत्तभैरवाय स्वाहा ५ ॐ कपालभैरवाय स्वाहा ६ ॐभीषणभैरवाय स्वाहा ७ ॐसंहारभैरवाय स्वाहा ८ इति लिङ्गतोभद्रहोमः।

❀ अथ योगिनीहोमः ❀

ॐगजाननायै स्वाहा १ ॐसिंहमुख्यै० २ ॐगृध्रास्यायै० ३ ॐकाकतुण्डिकायै० ४ ॐउष्ट्रग्रीवायै० ५ ॐहयग्रीवाय० ६ ॐ वाराह्यै० ७ ॐशरभाननायै० ८ ॐउलूकिकायै० ९ ॐशिवारावायै० १० ॐमयूरायै०११ ॐविकटाननायै० १२ अष्टवक्त्रायै० १३ ॐकोटराक्ष्यै० १४ ॐ कुब्जायै० १५ ॐविकटलोचनायै० १६ ॐ शुष्कोदर्यै०१७ ॐललज्जिह्वायै० १८ ॐश्वदंष्ट्रायै० १९ ॐवानराननायै० २० ॐऋक्षाक्ष्यै० २१ॐकेकराक्ष्यै० २२ॐबृहत्तुण्डायै०२३ ॐसुराप्रियायै० २४ ॐकपालहस्तायै० २५ ॐरक्ताक्ष्यै० २६ ॐशुक्यै०२७ ॐश्येन्यै० २८ ॐकपोतिकायै० २९ ॐपाशहस्तायै० ३० ॐदण्डहस्तायै० ३१ ॐप्रचण्डायै ३२ ॐचण्डविक्रमायै० ३३ ॐशिशुघ्न्यै०३४ ॐ पापहन्त्र्यै०३५ ॐकाल्यै० ३६ ॐरुधिरपायिन्यै ३७ ॐवसाधयायै० ३८ ॐगर्भभक्षायै० ३९

प्र० ३३०

ॐ शवहस्तायै० ॐ आन्त्रमालिन्यै० ४१ ॐ स्थूलकेश्यै० ४२ ॐ बृहत्कुक्ष्यै० ४३ ॐ सर्पास्यायै० ४४ ॐ प्रेतवाहिन्यै० ४५ ॐ दन्दशूकरायै० ४६ ॐ क्रौञ्च्यै० ४७ ॐ मृगशीर्षायै० ४८ ॐ वृषाननायै० ४९ ॐ व्यात्तास्यायै० ५० ॐ धूम्रनिश्वासायै० ५१ ॐ व्योमैकचरणोर्ध्वदृशे० ५२ ॐ तापिन्यै० ५३ ॐ शोषिणीदृष्ट्यै० ५४ ॐ कोटर्यै० ५५ ॐ स्थूलनासिकायै० ५६ ॐ विद्युत्प्रभायै० ५७ ॐ बलाकास्यायै० ५८ ॐ मार्जार्यै० ५९ ॐ कटपूतनायै० ६० ॐ अट्टाट्टहासायै० ६१ ॐ कामाक्ष्यै० ६२ ॐ मृगाक्ष्यै० ६३ ॐ मृगलोचनायै० ६४ इति योगिनीहोमः ।

❀ अथ क्षेत्रपालहोमः ❀

अजर आदि देवताओं के नाममन्त्रों से हवन करे ।

ॐ अजराय स्वाहा १ ॐ व्यापकाय स्वाहा २ ॐ इन्द्रचौराय स्वाहा ३ ॐ इन्द्रमूर्तये स्वाहा ४ ॐ उक्षणे स्वाहा ५ ॐ कूष्माण्डाय स्वाहा ६ ॐ वरुणाय स्वाहा ७ ॐ बटुकाय स्वाहा ८ ॐ विमुक्काय स्वाहा १३ ॐ ओषधीघ्नाय स्वाहा १४ ॐ बन्धनाय स्वाहा १५ ॐ दिव्यकरणाय १६ ॐ कम्बलाय स्वाहा १७ ॐ भीषणाय स्वाहा १८ ॐ गवयाय स्वाहा १९ ॐ घंटाय स्वाहा २०

ॐव्यालाय स्वाहा २१ ॐअंशवे स्वाहा २२ ॐचन्द्रवारुणाय स्वाहा २३ ॐघटाटोपाय स्वाहा २४ ॐजटिलाय स्वाहा २५ ॐ क्रतवे स्वाहा २६ ॐघण्टेश्वराय स्वाहा २७ ॐविकटाय स्वाहा २८ ॐमणिमाणाय स्वाहा २९ ॐगणबन्धाय स्वाहा ३० ॐमुण्डाय स्वाहा ३१ ॐवर्वूकराय स्वाहा ३२ ॐसुधापाय स्वाहा ३३ ॐवैनाय स्वाहा ३४ ॐपवनाय स्वाहा ३५ ॐढुण्ढकरणाय स्वाहा ३६ ॐस्थविराय स्वाहा ३७ ॐदन्तुराय स्वाहा ३८ ॐधनदाय स्वाहा ३९ ॐनागकर्णाय स्वाहा ४० ॐमहाबलाय स्वाहा ४१ ॐफेत्काराय स्वाहा ४२ ॐवीरकाय स्वाहा ४३ ॐसिंहाय स्वाहा ४४ ॐमृगाय स्वाहा ४५ ॐयक्षाय स्वाहा ४६ ॐमेघवाहनाय स्वाहा ४७ ॐतीक्ष्णाय स्वाहा ४८ ॐअमलाय स्वाहा ४९ ॐशुक्राय ५० इति क्षेत्रपालहोमः ।

* अथ प्रधानहोमः *

प्रधान देवताओं के मन्त्रों से हवन करे ।

विष्णोः—ॐ इदंविष्णुर्विचंक्रमेत्रेधानिदंधे पुदम् ॥ समूंढमस्य पांᳪसुरे स्वाहा १०८ ।

प्र०

२३२

शिवस्य—ॐ नमः शम्भवाय च मयोभवाय च नमः शङ्कराय च मयस्कराय च नमः शिवाय च शिवतराय च स्वाहा १०८। सूर्यस्य—ॐ आकृष्णे० स्वाहा १०८। गणपतेः—ॐ गणानान्त्वा० स्वाहा १०८ देव्यास्तु—ॐ अम्बेऽ अम्बिके० स्वाहा १०८। वृषभध्वजस्य—ॐ आशुः शिशान० स्वाहा १०८ गरुडस्य—ॐ सुपर्णोसि गरुत्मान् पृष्ठे पृथिव्याः सीद ॥ भासान्तरिक्षमापृणाज्योतिषादिवमुत्तभानतेजसा दिशऽउद्दृंह० ह स्वाहा १०८ इति प्रधानहोमः।

* अथ कर्मकुटीकर्म *

कर्मकुटी को कहते हैं। यजमान ऋत्विगादियों साथ वाद्यघोषसे युक्त होकर शिल्पिशालामें जाकर देवता के आगे

तत्राचार्यो यजमानः ऋत्विक्सुवासिनीसहितस्तूर्यघोषेण शिल्पिशालां गत्वा देवस्याग्रे प्राणायामादिकं कृत्वा 'आ नो भद्राः' इत्यादि शान्तिसूक्तं पठित्वा—प्रतिमानिर्माणे प्राणिदोषनिरासार्थं घृतेन तिलैर्वा होमं करिष्ये—इति संकल्प्य कलशस्थापनविधिना कलशं संस्थाप्य मनोजूतिरिति प्रतिष्ठां कृत्वा तीर्थान्यावाहयेत्—ॐ काशी कुशस्थली मायाऽवन्त्योध्या मधोः पुरी। शालिग्रामः

प्राणायामादिकर शान्तिपाठ करे। फिर प्रधानसंकल्पकर तीर्थों का आवाहन करे। तदनन्तर कुम्भके दिशा और

प्र०

२३३

विदिशाओं में इन्द्रादिका ध्यान—पूजनादिकर पञ्चभूसंस्कार पूर्वक अग्निका स्थापनकर कुशकण्डिकाको करें। फिर जितने देवताओंका स्थापन करना हो उनका उनके मन्त्रों से हवनादि कर आचार्यादि शिल्पिकर्णको उत्साह युक्त होकर

सगोकर्णः नर्मदा च सरस्वती ॥ गङ्गाद्याः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च। वृषारूढा सरोजाक्षी पद्महस्ता शशिप्रभा ॥ आगच्छन्तु सरिज्ज्येष्ठा गङ्गापापप्रणाशिनो । नीलोत्पलदलश्यामा पद्म-हस्ताम्बुजेक्षणा ॥ आयातु यमुना देवी कूर्मयानस्थिता सदा । प्राची सरस्वती पुण्या पयोष्णी गौतमी तथा ॥ उर्मिला चन्द्रभागा च सरयू गण्डकी तथा ॥ एता नद्याश्च तीर्थानि गुह्यक्षेत्राणि सर्वशः । तानि सर्वाणि कुम्भेऽस्मिन् विशन्तु ब्रह्मशासनात् ॥ इति तीर्थान्यावाह्य सम्पूज्य कुम्भस्य चतुर्दिक्षु विदिक्षु च इन्द्राय नमः अग्नये नमः । यमाय नमः । निर्ऋतये नमः वरुणाय नमः। कुवेराय नमः । ईशानाय नमः । इत्यष्टलोकपालान् गन्धादिभिः सम्पूज्य प्रतिमादिषु न्यूनातिरि-क्तपाषाणदोषोपशयनार्थं प्रतिमायोग्यं स्थण्डिलं कृत्वा पञ्चभूसंस्कारपूर्वमग्निस्थापनपूर्वकं

कुशकण्डिकादिकं समाप्य यावन्तः स्थाप्यदेवतास्तत्तन्मन्त्रेण प्रत्येकं शतसंख्यया हुत्वा पूर्णपात्रविमोकान्ते कर्मेश्वरार्पणं कृत्वा भूयसीं दद्यात् । शिल्पिनेऽपि रत्नादिकं च दद्यात् । ❀ दक्षिणा दे । ❀

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(कर्मकुटी, जलाधिवास और अन्नाधिवासकथन)

श्री दौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०
३३५

कर्मकुटी—

प्र०
३३६
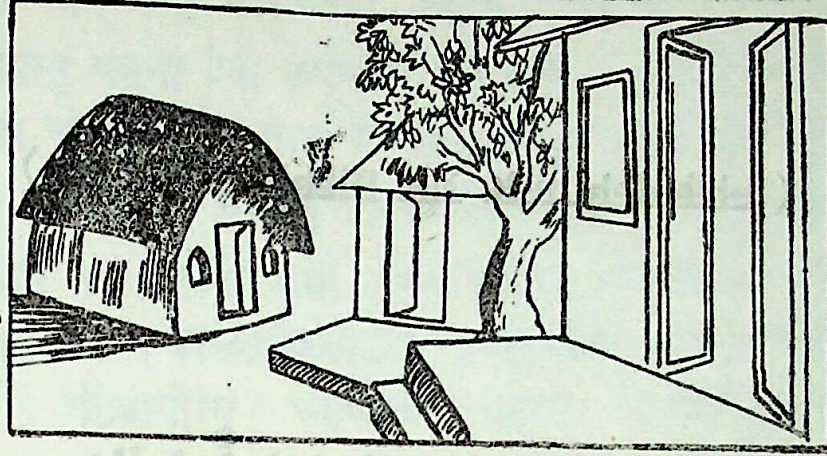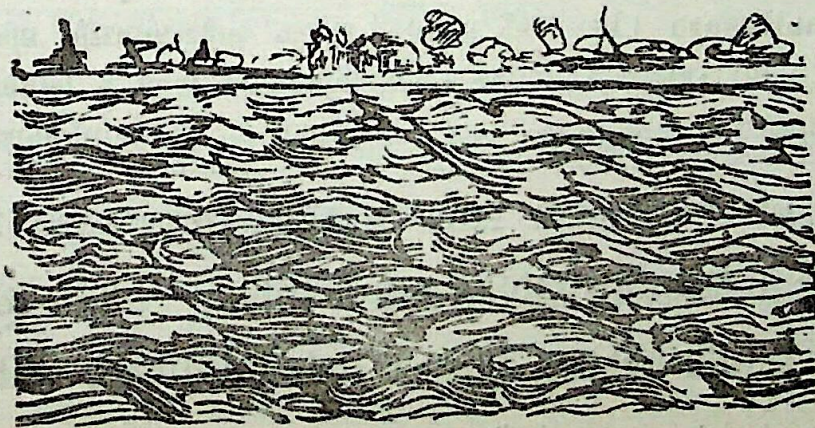
जलाधिवास—

❀ अथ मार्कण्डेयपुराणोक्तजलाधिवासः प्रयोगः ❀

यजमान कारुशाला में जाकर शान्तिपाठादि कर 'आसां मूर्तीनां देवता' इत्यादि जलाधिवास का सङ्कल्प कर

सपत्नीको यजमानः कारुशालायां गत्वा कुशासने उपविश्य आचम्य प्राणानायम्य शान्ति-पाठं पठित्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य––"आसां मूर्तीनां देवतायोग्यताधिष्ठानसिद्ध्यर्थं जलाधिवासाख्यं

'यदत्र संस्थितम्' पढ़कर पीलीसरसों द्वारा भूतादिकों को हटाकर पूर्वमुख या उत्तरमुख देवता का स्थापन कर

१—जलाधिवासात्प्रागग्न्युत्तारणमुक्तं वासुदेवादिभिः। आदौ वेदोदितैर्मन्त्रैरग्न्युत्तारणमाचरेत्। धातुर्निमितचक्राणां मूर्तीनां च विशेषतः। प्रतिमानां च सर्वेषां जातानामग्नियोगतः। नवानामेव कर्तव्यमग्नेरुत्तारणं ततः। अग्न्युत्तारणप्रकारो निर्णयसिन्धौ—अग्निः सप्तमिति सूक्तमग्निपदहीनं पठित्वा तत्सहितं पुनः पठेत्। एवमष्टसहस्रमष्टशतमष्टाविंशति वा पठन् देवोपरि जलं पातयेदिति लक्षणसागरे। अयं चाधिवासनमण्डपप्रवेशात्प्रागेवोक्तः कमलाकरवासुदेवादिभिः। महामण्डपस्य पश्चिमतश्चतुर्हस्तं षड्हस्तं वा जलाधिवासमण्डपं कुर्यादिति वासुदेवः। अत्र मण्डपप्रतिष्ठां कृत्वाऽकृत्वा वा जलाधिवासनमिति निर्णयसिन्धौ। "वासयेत्सप्तरात्रं तु पञ्चरात्रमथापि वा। कालं गोदोहमात्रं तु नद्यादौ विमले ह्रदे। अधिवास्य जलेदेवमेवं पार्थिवपुङ्गव। तत उत्थाय विप्रैस्तु स्नात्वालङ्कारपूर्वकम्। रथादिना नयेदेव मङ्गलैः स्नानमण्डपम्। अयमग्न्युत्तारणपूर्वको-जलाधिवासो मात्स्येऽनुक्तत्वात्कृताकृतः। अत एव त्रिविक्रम मयूख—पूर्त—दिनकरादिभिर्नोक्तः।

सप्तमृत्तिका आदि से स्नान करा कर देवता का व्रण भंगकर अग्न्युत्तारण और प्रार्थना करे। फिर जलद्रोणी में

कर्म करिष्ये" इति सङ्कल्प्य यदत्र संस्थितेति भूतोत्सर्पणं विधाय पीठादौ प्राङ्मुखमुदङ्मुखं वा देवं संस्थाप्य सप्तमृत्-पञ्चवृक्षीयकषाय-पञ्चामृत-भस्म-गोमूत्र-गोमय-क्षीरः जलान्तरितैः पृथक् पृथक् संस्थाप्य मधु-आज्ययोरभ्यङ्गेन देवस्य व्रणभङ्गं कृत्वा जलान्तरितेन स्नापयित्वाभ्यर्च्य "देवस्यावयवान् सम्यक् निरीक्षध्वं जगद्गुरो" इत्यभ्यर्थितो गुरुः अवयवान्निरीक्ष्य---देशकालौ-स्मृत्वा "सपरिवाराय विष्ण्वादिमूर्तेः अङ्गप्रत्यङ्गसन्धिसमुत्पन्नवासाग्निकण्टकाग्न्या-तपोभिनिरा-सार्थं शीतलत्वप्राप्तये देवाधिष्ठानयोग्यतासिद्ध्यर्थं च अग्न्युत्तारणं करिष्ये" इति सङ्कल्प्य— "अश्मन्नूर्जमित्यवाकेन" पयसा जलेन वा देवस्योपरि सन्ततधारां दद्यात्। एवमग्न्युत्तारणं विधाय प्रार्थयेत्---ॐ त्वयि संपूजयामीशं नारायणमनामयम्। रहिताशेषदोषस्त्वमृद्धियुक्ता सदा भव ॥ १ ॥ सर्वसत्वमयं शान्तं परंब्रह्म सनातनम्। त्वामेवालङ्करिष्यामि त्वं वन्द्यो भवते नमः ॥२॥ इति नत्वा ततः कुश-वस्त्रवेष्टितां प्रतिमां जलद्रोण्यामधिवासयेत्। तत्तत् संस्थाप्य देव-

मूर्तियों का अधिवासन करे। यह अधिवासन स्नानमण्डप में भी कर सकता है।

सूक्तांश्च पठेत्। शान्त्यध्यायं जपेत्। अयं जलाधिवासः स्नानमण्डपे वा कार्यः।

इति मार्कण्डेयपुराणोक्तजलाधिवासः[1]।

१—अथातो हयशीर्षपञ्चरात्रागमोक्त-सप्ताधिवासप्रकारो लिख्यते—अर्थातः सप्ताधिवासं देवेभ्य. प्रीतिमावहम्। जलाधिवासनं चैव ततो गन्धादिवासनम् १ ततः पुष्पाधिवासं च ततो धान्याधिवासनम् २ ततः फलाधिवासं च तथौषध्याधिवासनम्। ततः शय्याधिवासश्च क्रमशोऽमी शुभावहाः ३ हस्तानिनक्षत्रदिने शुभं सप्तैव मण्डपम्। अष्टहस्तात्मकं दिव्यं तोरणादिविभूषितम् ४ तद्वारतरणकं कुर्याद्दिव्यवस्त्रकठादिना ४ तत्र देवांस्तु संस्थाप्य तत्तन्मन्त्रेण स्थापकः ५ प्राङ्मुखान्वस्त्रगन्धाद्यैभूपयित्वा यथाविधिः ततो वस्त्रैः प्रावरणान्कृत्वा तदुपरि क्षिपेत् ६ वारुणैर्यजुषैर्मन्त्रैः सामगैश्च रथन्तरैः। सूक्तैर्गन्धादिसद्द्रव्यैः केशराद्यगरैश्शुभैः ७ गन्धद्वाराद्यंऽशुनाते गन्धैर्वेष्टनमाचरेत्। ततो वस्त्रैस्तु संच्छाद्य पुष्पैश्च कमलादिभिः ८ ओषधीः प्रतिमन्त्रैश्च संछाद्य पाटलादिभिः। ततो रक्तैः सुवस्त्रैश्च वेष्टयित्वा सुधान्यकैः ९ सप्तभिः सप्तदशकैर्धान्यमस्यादिसूक्तकैः १० पौरुषैः पावमानीभिर्मन्यु सूक्तादिभिः क्रमात्। तदूर्ध्वं पीतवस्त्रैश्च संछाद्याः प्रतिमाः समाः ११ तदूर्ध्वं नारङ्गादिधान्यादिबहुबीजकैः। यदश्वायेति मन्त्रेण ह्यधिवासनमाचरेत् १२ ततस्तु श्वेतवस्त्रेण समाच्छाद्यामराञ्छुभान्। तदूर्ध्वमोषधीभिश्च कुष्टमांसादिभिस्तथा १३ महौषधीभिः सर्वाभिर्या ओषधीरनुवाकैः। ततः षोडशसम्भारैरर्चयेदमरास्तथा १४ रुद्रसूक्तैः पौरुषैश्च स्तुत्वा देवोत्थितिं चरेत्। रथमारोप्य तान् देवा नामूरजेति मन्त्रतः १५ आनघ्नन्ति च मन्त्रेण घण्टादुन्दुभिनारतः भेरीस्वनैर्वेदघोषैर्ग्रामं वा नगरं तथा १६ महामण्डपमेवं वा प्रादक्षिण्येन चानयेत्। प्रत्यक् द्वारं प्रावेशयेदाकृष्णेनेति मन्त्रतः १७ मधुपर्केण सम्पूज्य मधुमतीभिर्ऋग्भिश्च। (जलाधिवासनं रात्रं यामं गोदोहनमात्रं कुर्यादिति प्रतिष्ठारत्नमालायाम्।

अन्नाधिवास और शर्कराधिवास—
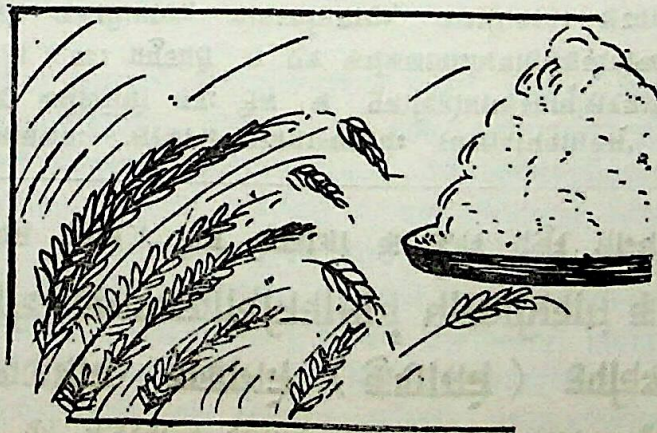
अथ धान्याधिवासः—

यजमान—'मम, गृहे प्रचुरधान्य' इत्यादि सङ्कल्प पढ़कर पवित्र भूमि में धान्य को गिराकर ज्येष्ठक्रम से

सपत्नीको यजमानः शुद्धासने (कुशासने) उपविश्य देशकालौ सङ्कीर्त्य—मम गृहे प्रचुरधान्यपुत्रपौत्रादिसुखसम्पत्त्यादिनिवासार्थं धान्याधिवासं करिष्ये"—इति सङ्कल्प्य गोमयोपलिप्ते

मूर्तियों को शयन करावे। फिर देवताओं के ऊपर प्रचुर धान्य कुटुम्ब प्रक्षेप करें फिर षोडशोपचार या

१—अधिवासननिर्णयः—"संस्कारो गन्धमाल्याद्यैर्यः स्यात्तदधिवासनम्" इति कोषात् "अधिवास्यन्ते देवा यस्मिन्निति व्युत्पत्त्या अधिवासनशब्दः कर्मविशेषो रूढ़ः तेन च पूनादिहोमान्तस्यावृत्तिरत्राभिधीयते" इति प्रतिष्ठादिनकरोद्योतलेखनाच्च यत आरम्भ अधि वर्सति शब्दः प्रयुज्यते स एव कर्मकलापोऽधिवासनशब्देनोच्यते। तत्र यद्यपि अन्नाधिवासः, गन्धाधिवासः, पुष्पाधिवासः धृताधिवासः, फलाधिवासः, ओषध्यधिवासः, जलाधिवासः शय्याधिवास इत्यादयोऽनेकेऽधिवासा उक्ताः तथापि शय्याधिवासस्यैवात्र प्राधान्येन ग्रहणम्। मात्स्याग्नेयमयूरवसरण्यादौ अस्यैव विहितत्वात्। अन्येषां पञ्चरात्रादौ, जलाधिवास्य मार्कण्डेयपुराणेऽपि विधानेऽपि मात्स्यादावनुक्तत्वेन मयूखकारादिभिर्नैते लिखिताः अतश्च "अनेकदिननिवर्त्येह्यधिवासनकर्मणि। होमानष्टौ सहस्राणि विदधीरन् पृथक् पृथक्॥ इत्यादिना विहितोऽधिवासनाङ्गहोमः शय्याधिवासाङ्गत्वेनैव कार्यः न तु जलाद्यधिवासाङ्गत्वेन। मयूखादौ शय्याधिवासे एव अधिवासनहोमस्य विहितत्वात्। मयूखादौ जलाद्यधिवासस्यैव अविधानेन तदधिवासनाङ्गहोमस्याभावः सुतरां सिद्धः। अतोऽधिवासशब्देन शय्याधिवासस्यैव ग्रहणम्। "त्रिरात्रमेकरात्रं वा पञ्चरात्रमथापि वा। अथवा सप्तरात्रं तु कार्यं स्यादधिवासनम्" इति मात्स्ये शय्याधिवासस्यैव एकरात्रादिपक्षा उक्ताः। तेन शय्याधिवासाना-

पञ्चोपचार से पूजन करे।

वस्त्राच्छादिते शुद्धभूमौ किञ्चित् धान्यं विकीर्य भूम्यादिपूजनं कृत्वा शनैः २ ज्येष्ठक्रमेण देवान् स्वापयेत। ततः देवोपरि पुनः प्रचुरधान्यं सकुटुम्बं प्रक्षिपेत्। ततः तत्तन्मन्त्रेण षोडशोपचारैः पञ्चोपचारैः वा पूजयेत्। इति।

नन्तरं यदहः शय्याधिवासः कृतस्ततो द्वितीयदिनमारम्य एकाहं त्रिरात्रं पञ्चरात्रादिवाऽधिवासनं कार्यम्। अधिवासनदिनेषु आवाहितदेवपूजा वास्तु-ग्रहादिहोममारभ्य देवमन्त्रेण च होमः इत्येतत्पर्यन्ता होमाश्च प्रत्यावर्तनीयाः। "अनेकदिननिवर्त्ते ह्यधिवासनकर्मणि" इत्यादिना वक्ष्यमाणेन अधिवासनहोमस्य अनेकदिननिवर्त्येऽधिवासने विधानादेकाहाधिवासनपक्षे अधिवासनाङ्गहोमो भवति। "तस्मिन्नेकदिने निवर्त्ये" इत्यादिना न एकाहाधिवासपक्षे विशेषतया विहितं हवनं तु एकाहाधिवासनपक्षे भवत्येव। तच्च हवनं पराय विष्ण्वात्मने स्वाहेत्येव नान्यत्। एकाहाधिवासनपक्षे अयमेव होम एकाहाधिवासनाङ्गहोम इत्युच्यते। सद्योऽधिवासनपक्षस्यापि बौधायनाद्युक्तत्वेन तस्मिन्पक्षे एकाहाधिवासनाङ्गहोमोऽपि न भवति। यदा एकस्मिन्नेव दिने शय्याधिवासो देवस्थापनं च असौ सद्योऽधिवासः। पूर्वदिने शय्याधिवासो द्वितीयदिने स्थापना इत्येकाहाधिवासपक्षः। अयमेव पक्षोऽद्यत्वे प्रचलति। प्रथमदिने शय्याधिवासः ततो द्वितीयतृतीयचतुर्थदिवसेषु अधिवासनहोमः पञ्चमदिवे स्थापने त्रिरात्रधिवासपक्षः एवं पञ्चसप्ताहाधिवासपक्षा अपि बोध्याः। सर्वेष्वपि एकाहाद्यधिवासपक्षेषु स्थापनादिवसस्य अधिवासनदिवसेषु न गणना। शय्याधिवासात् पूर्वभाविनां कर्मणां सौकर्यार्थं एक-द्वि-त्रि-चतुः पञ्चादिभिरहोभिः करणेऽपि न क्षतिः। प्रतिष्ठामयूखादौ अधिवासनान्तं कर्म पूर्वदिने विधाय द्वितीयेऽह्नि स्थापनमिति दिवद्वयसाध्यताप्रतिष्ठाप्रयोगस्य मयूखमते। असम्भवे तु अधिवासनान्तं कर्म अनेकैरपि दिवसैः क्रियते साम्प्रदायिकैः तत्र कस्मिन्दिने कियत्कर्मकार्यमितिसंशये उचितरीत्यैव विभागः कार्यः।

प्र० ३४३

घृताधिवास—

घृतं गव्यं तेजो बलिमतिकरं सत्वगुणदं पवित्रं चायुष्यं त्रिदशदयितं मङ्गलकरम् ।
घृतानां सर्वेषां सुखदमधिवासो श्रुतिमतं सदा देवा हृष्टया विपुलवरदा याज्ञिकजने ॥
रसेषु सर्वेषु प्रधानरूपं गुणं सुराणां मधुरं महाङ्गम् ।
गुणाधिवासात्सुरतामुपेता भवन्ति देवा बहुमोदमाना ॥

गन्धाधिवास—

अगरतगरपूर्णमष्टगन्धं कपूरं बहुकुसुमसुगन्धी अत्तरं केशरं च ।
नृपतिधनिकलोकैः सप्ततन्तो सुयोज्यं सुरगणहितार्थं धर्मकामार्थमूलम् ॥

पुष्पाधिवास—
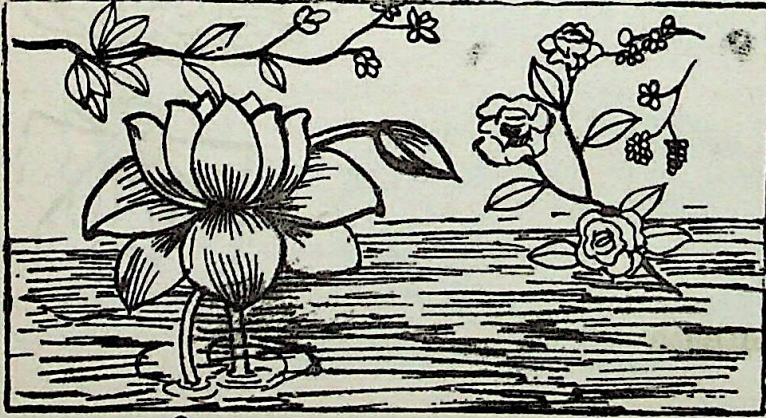
चम्पाचमेलीकमलानिजूहीगुलाववेलारजनीसुगन्धा
दुर्वाशमीजीवकगन्धराजं गेन्दाधतूरागुलमेहदीं च।
अगस्तिकां सूर्यमुखीकनेरं शेफालिकानामकपरिजातं
तिलकस्य पुष्पं हरश्रृङ्गहारं मालरपत्रं तुलसीमदारम् ॥
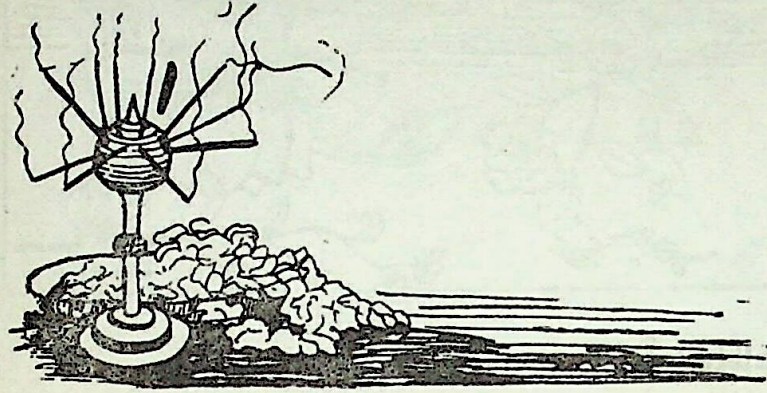
धूपाधिवास—

दशाङ्गयुग्गुग्गुलळोद्भवानं ज्वालामुखी धूपवती सुवत्ती ।
सुगन्धबालाखसदेवदारु धूपाधिवासे विहितं च वेदे ॥

प्र०

३४६

वस्त्राधिवास—

प्र०
१४७
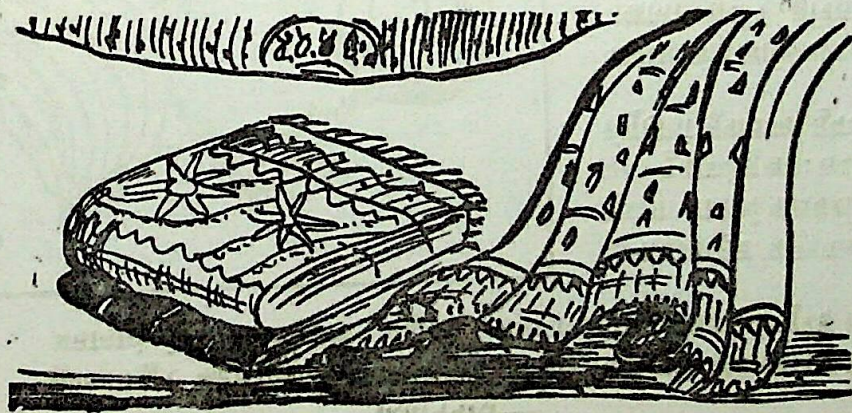
फलाधिवास—

सुपक्वमङ्कुरं कटहरपपीता अमरुतमनारं जम्बीरमरुणसदृशं संतततराम् ।
अनानासं केला सरससहकारं सहतुतं विजोरामोसंमीवरदवदरीसेंवमुरई ॥
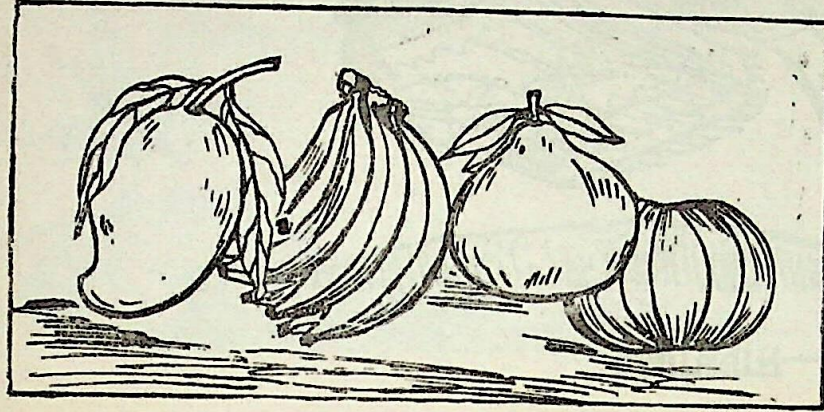
सिघाडाजामूनं प्रचुरनसपाति सिरफलम् ।
सुराणां वासार्थं फलवरमिदं वेदलिखितम् ॥
यथा सुसाध्यं सुखतः सदेव स्वदेशकालोद्‌नवजं सुवस्तु ।
संगृह्यतां भूपतिभिः सुयज्ञे फलाधिवासे कथितं सुरेष्टम् ।

वादामं छोहाडाकिसमिसचिरौञ्जी अखरुटं
मखाना खजूरं हरितपिसता सद्मुमफली ।
मुनक्का आवजोसं शुभचिरगुजा सक्करयुतं
सुराणां सन्मेवार्दयितमधिवासे च कथितम् ॥

मिष्टान्नाधिवास—
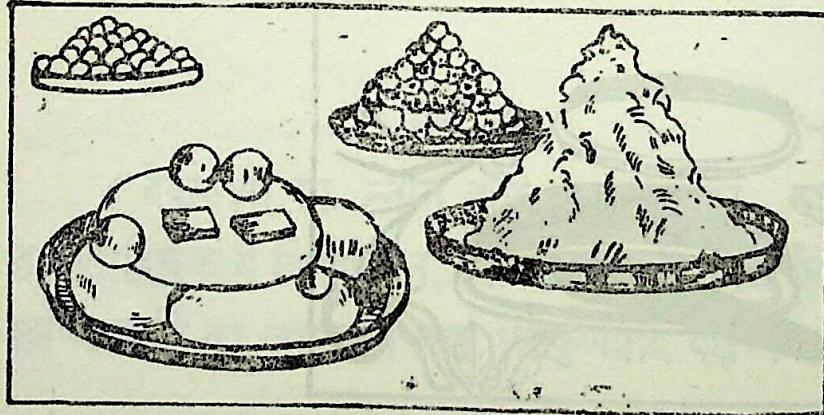
बालस्याहीजलेबीचमचमबरफीमोहनंछप्सिमुख्यं
कुष्माण्डैः पाकपेडासरसरसगुल्लासोहनं पापडीकम् ।
खोवापूडी इमर्तीबहुलगुणगुलाजामुनं खीरमोहम्
लड्डूबुन्दीमिठाईसुरगणप्रियदं यज्ञकार्ये सुयोज्यम् ॥

पूआ पूडी कचौडी उरदजवटकं गन्धितं हिङ्गजीरैः
नानाप्राकारपूर्णमगणितरसभृद् व्यञ्जनं चारुलेह्यम् ।
सन्तोषप्रेमकारी शिखरनदधि युग्वाससहेतोः सुराणां
श्रेष्ठे यज्ञे कवीन्द्रैर्बहुविधकथितं यत् तो योजनीयम् ॥

ओषध्याधिवासः—

प्र०
३५०
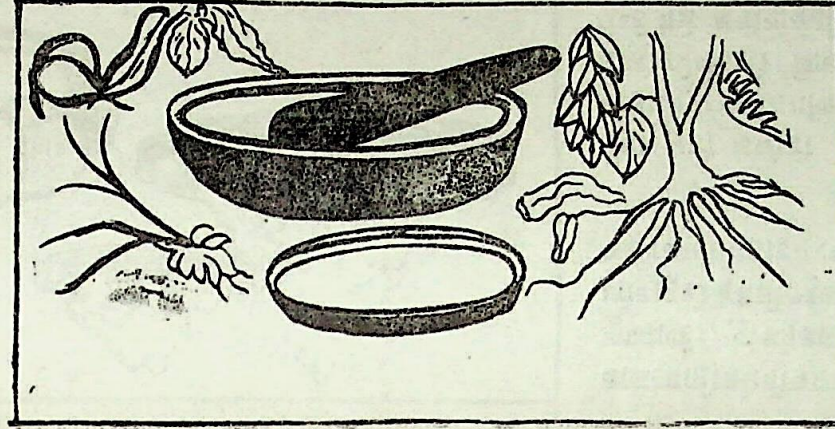
श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(देवताओं का स्नान और पूजनविधान, यात्रा, शय्याधिवास, प्रणवादिन्यासकथन, द्वादशादिचक्र में विष्णुपूजन, शिवका अष्टदलाकारार्चन, शिवादिपञ्चायनप्रकारकथन, पाषाणादिखण्डितमूर्ति का जलप्रक्षेप तथा एककुण्डादि पक्ष में हवन प्रकार कथन)

श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०
३५१

अथ आग्नेयपुराणोक्त-देवस्नपनप्रयोगः

प्र०

आचार्य स्नान मण्डप में 'ॐ नमो नरायण इत्यादि से प्रधानस्थापन मन्त्रसे पञ्चगव्यसे अभिमन्त्रण कर उससे स्नानमण्डप का प्रोक्षण कर बालुकी की तीन वेदियों पर चावलसे स्वस्तिक लिखकर उसमें तीन महापीठको रखकर

प्र०

आचार्यः स्नानमण्डपे "ॐ नमो नारायणाय" "ॐनमःशिवाय" इत्यादिना प्रधानस्थाप्य-देवमन्त्रेण पञ्चगव्यमभिमन्त्र्य तेन सर्वं स्नानमण्डपं सम्प्रोच्य वेदिकात्रये प्रकीर्णबालुके अक्षतैः स्वस्तिकमालिख्य तत्र भद्रपीठत्रयं निधाय विश्वकर्माणं ध्यायेत्—"ॐविश्वकर्मा तु कर्तव्यः श्मश्रुलोमांमलाधरः । सन्दंशपाणिर्द्विभुजस्तेजोमूर्तिः प्रतापवान् ॥ इति ध्यात्वा ततः—सप्तधान्येषु त्रिसूत्रोवेष्टितमपल्लव–वारिपूर्ण–कलशानामाजिघ्रेति स्थापनम् । तत्र दक्षिणवेद्याः पश्चाद् द्वादश-कलशा उदक्संस्थाः प्राक्संस्था वा अत्रान्यो द्वादशः स्थपतिसंज्ञकः कलशः । तत्र क्रमेण पञ्चसु कलशेषु मृत्तिका १ पञ्चपल्लववृक्षीयकषायः २ गोमूत्रम् ३ गोमयम् ४ भस्म ५ इति प्रक्षिप्य

३५२

विश्वकर्मा का ध्यान करे। तदनन्तर सप्तधान्यों पर त्रिसूत्री से वेष्टित पञ्चपल्लव एवं जलादि पूर्ण कलशों का स्थापन करे। उसमें दक्षिणवेदी के पीछे बारह कलश उदक्संस्थ या प्राक् संस्थ रखे। उसमें बारहवाँ 'स्थपतिसंज्ञक' कलश होता है।

३५२

उन कलशों से क्रमसे द्रव्यों का प्रयोग करें। पाँच कलशों में क्रमसे पहले में मृत्तिका, दूसरे में—पञ्चपल्लव कषाय, चौथे में—गोमूत्र, पाँचवे में—भस्म, शेष सात कलशों में गन्धोदक (गुलाबजल) रहेगा। इसोप्रकार मध्य वेदीके

शेषेषु सप्तसु गन्धोदकं (गुलाबजल) प्रक्षिपेत्। एवं मध्यवेदेः पश्चादेकादश कलशाः पूर्वोक्त-द्रव्ययुताः स्थाप्याः। नात्र स्थपतिकलशो द्वादशः। उत्तरवेदेः पश्चात् प्रथमपङ्क्तौ-पञ्च शुद्धोदक-कलशाः। द्वितीयपङ्क्तौ विंशतिकलशाः। तत्र विषमेषु अष्टपलमृत्तिका १ सप्तपलगोमयम् २ द्वादशपलं गोमूत्रम् ३ मुष्टिमितं भस्म ४ त्रिपल्लवपञ्चगव्यम् ५ षोडशपलं क्षीरम् ६ विंशतिपलं दधि ७ सप्तपलं घृतम् ८ त्रिपलं मधु ९ त्रिपलं शर्करा १० इति क्षिपेत्। समेषु शुद्धोदकमेव। तृतीयपङ्क्तौ—द्वौ शुद्धोदकयुतौ। चतुर्थपङ्क्तौ षट् तत्राद्ये पञ्चामृतम, अन्येषु शुद्धोदकम्। पञ्चमपङ्क्तौ—चतुर्दशकलशाः—तेषु क्रमेण—गन्धः १ पञ्चपल्लवकषायः २ सर्वौषध्यः ३ सितपुष्पाणि ४ शान्त्युदकम् ५ अष्टौ फलानि ६ सुवर्णम् ७ गोभृङ्गोदकम् ८ सप्तधान्यानि ९ सहस्रछिद्रकलशः तत्सहायार्थोऽप्येकः १० पुनः दिव्यौसर्वौषध्यः ११ पञ्चपल्लवाः १२ रत्नानि नव १३ तीर्थोदकम् १४ इति प्रक्षिपेत्। वेदिकोऽष्टौ पूर्वाद्यष्टदिक्षु समुद्रसंज्ञकाः कलशाः।

पीछे ग्यारह कलश में पूर्वोक्त द्रव्य रहेंगे। इसमें स्थपतिसंज्ञक बारहवाँ कलश नहीं रहेगा।

इसी प्रकार उत्तर वेदी के प्रथमपंक्ति में पांच शुद्धोदककलश होंगे। द्वितीयपंक्ति में बीस कलश होंगे—

एतान् कलशान्—हिरण्यग० १ य प्राणतो० २ यस्ये मे हि० ३ य आत्मदा बल० ४ आपो हयद्धृ० ५ यश्चिदापो० ६ येन द्यौरु ७ वेनस्तत्प० ८ इति मन्त्रैः विन्यस्य—तेषु क्षारोदकम् १ क्षीरम् २ दधि ३ घृतम् ४ इक्षुरसः ५ सुरोदकम् ६ स्वादूदकम् ७ गर्भोदकम् ८ इति प्रक्षिपेत्। षष्ठपङ्क्तौ—दश, तेषु—कदम्ब १ शाल्मली २ जम्बू ३ अशोक ४ प्लक्ष ५ चूत ६ वट ७ विल्व ८ नाग ९ पलाश १० पत्राणि निक्षिपेत्। एषु दशसु क्रमेण लोकपालानप्यावाहयेत्। सप्तमपङ्क्तौ—चत्वारो बृहत्कलशाः। एको वा। सूक्ष्मसितवस्त्रं—सुगन्धतैलं—यव—शालि—गोधूम मसूरिका—बिल्व—आमलकचूर्णमुद्वर्तनार्थम्। अन्यत्सुगन्धितवस्तु च—"कस्तूरिकाया द्वौ भागौ द्वौ भागौ कुङ्कुमस्य च। चन्दनस्य त्रयो भागाः शशिनस्त्वेक एव हि" इति लक्षणकं यक्षकर्दमं जटामासीं चासादयेत्। ततः पञ्चमपङ्क्तिस्थे अन्तिमे चतुर्दशे तीर्थोदककलशे "सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदानदाः॥ आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः। इति तीर्थान्यावाहयेत्। इति देवस्नपनद्रव्यप्रकारः।

उसमें—आठ पलमृत्तिका प्रथम कलशमें। सात पलगोमय दूसरे कलशमें। गोमूत्र बारह पल तीसरे में। चौथे में—एक

मध्यमा वेदिः

पूर्व

उत्तर दक्षिण

पश्चिम

प्र० ३५५

अथ (जलाद्देवं बहिर्निष्कास्य) "ॐस्वागतं देवदेवेश विश्वरूपनमोऽस्तु ते। शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्मः सहस्व ताम्" इति प्रार्थ्य "ॐउत्तिष्ठ ब्रह्मण०" इति मन्त्रेण उत्थाप्य अग्न्युत्तारणं च कृत्वा प्रतिमा कुशैः संम्मार्ज्य मधुघृताभ्यङ्गेन देवस्य व्रणभङ्गं कृत्वा सम्पूज्य पञ्चगव्येन पृथक्-पृथक् जलान्तरितेन स्नापयित्वा पुनः सम्पूज्य शङ्खादिनादेन रथादिना महामण्डपप्रादक्षिण्येन स्नानमण्डपमानयेत्। गुरुर्दक्षिणवेद्यां कुशास्तृते ॐस्तीर्णंबर्हिः सुष्टरीमाजुषाणोरुपृथुप्रथमानम्पृथिव्याम्। देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनङ्कृण्वानासुवितेदंधातु १ ॐभद्रं कर्णेभिः २ इति मन्त्राभ्यां प्राङ्मुखं देवं (प्रत्यङ्मुखमित्युद्योते) निवेश्य स्थपतिसंज्ञं कलशं हिरण्यवस्त्ररत्नादिकसहितं देवसमीपे निधाय तत्र तीर्थान्यावाहयेत्। तद्यथा—ॐकाशी कुशस्थली माया ऽवन्त्ययोध्या मधोः पुरी। शालिग्रामं सगोकर्णं नर्मदा च सरस्वती १ तीर्थान्येतानि कुम्भेऽस्मिन्विशन्तु ब्रह्मशासनात्। झषारूढा सरोजाक्षी पद्महस्ता शशिप्रभा २ आगच्छतु सरिज्ज्येष्ठा गङ्गापापप्रणाशिनी। नीलोत्प-

दो कलश शुद्धोदक के होंगे। चतुर्थपंक्ति में छ कलश होंगे। उनमें क्रम से पहले में पञ्चामृत अन्यों में शुद्धोदक

लदलशगामा पद्महस्तांऽम्बुजेक्षणा ३ आयातु यमुनादेवी कूर्मयानस्थिता सदा। प्राची सरस्वती पुण्या पयोष्णी गोतमी तथा ४ ऊर्मिला चन्द्रभागा च सरयूर्गण्डकी तथा। जम्बुका च शतद्रुश्च कलिङ्गा सुप्रभा तथा ५ वितस्ता च विपाशा च शर्मदा च पुनः पुनः। गोदावरी महावर्त्ता शर्करा-वर्त्तमार्जनो ६ कावेरी कौशिकी चैव तृतीया च महानदी। विटङ्गा प्रतिकूला च सोमनन्दा च विश्रुता ७ करतोया वेत्रवती देविका वेणुका च या। आत्रेयगङ्गा वैतरणी काश्मीरी ह्लादिनी च या ८ प्लाविनी च शवित्रा सा कल्माषा संशिनी तथा। वसिष्ठा च अपापा च सिन्धुवत्यारुणी तथा ९ ताम्रा चैव त्रिसन्ध्या च तथा मन्दाकिनी परा। तैलकाह्वी च पारा च दुन्दुभीर्नकुली तथा १० नील गन्धा च बोधा च पूर्णचन्द्रा शशिप्रभा। अमरेशं प्रभासं च नैमिषं पुष्करं तथा ११ आषाढि डिण्ड-भारत्नं भारभूतं बलाकुलम्। हरिश्चन्द्रं परं गुह्यं मध्यं मध्यमकेश्वरम् १२ श्रीपर्वतं समाख्यातं जले-श्वरमतः परम्। आम्नातकेश्वरं चैव महाकालं तथैव च १३ केदारमुत्तमं गुह्यं महाभैरवमेव च। गयां

छोड़ दे। पाँचवी पंक्ति में उनमें क्रमसे गन्ध, पञ्चपल्लव कषाय, सर्वौषधी, सफेदपुष्प, शान्तिजल आठफल,

प्र० ३५७ प्र० ३५७

सुवर्ण, गोश्रृङ्गोदक, सप्तधान्य, सहस्रछिद्रकलश, एवं सर्वौषधी, पञ्चपल्लव, रत्नोदक, और तीर्थोदक का प्रक्षेप करे। फिर

चैव कुरुक्षेत्रं गुह्यं कनखलं तथा १४ विमलं चन्द्रहासं च माहेन्द्रं भीममष्टकम्। वस्त्रापदं रुद्रकोटिम विमुक्तं महाबलम् १५ गोकर्णं भद्रकर्णं च महेशस्थानमुत्तमम्। छागलाण्डं द्विरण्डं च कर्कोटं मण्डलेश्वरम् १६ कालञ्जरवनं चैव देवदारुवनं तथा। शङ्कुकर्णं तथैवेह स्थलेश्वरमतः परम् १७ एता नद्यश्च तीर्थानि गुह्यक्षेत्राणि सर्वशः। तानि सर्वाणि कुम्भेऽस्मिन्विशन्तु ब्रह्मशासनात् १८ इति मन्त्रेण तीर्थान्यावाह्य तेन देवं स्नपयेत्। यजमानश्च शिल्पिवर्गं यथाशक्ति पूजयेत्। ततो गुरुर्बहिर्निर्गत्य "करिष्यमाणदेवस्नपनाङ्गभूतं सिद्धार्थघृतपायसैः रुद्राय बलिदानं करिष्ये" इति सङ्कल्प्य स्नानमण्डपस्य प्रागादि दिक्षु ॐ त्र्यम्बकं यजामहे०" इति मन्त्रावृत्या रुद्राय एष सिद्धार्थघृतपायसबलिर्नमः" इति प्रयोगेण सर्वत्र रुद्राय बलिं दत्त्वाऽऽचम्य स्नानमण्डपमागत्य देवसमीपे उपविश्य "ॐत्रातारमिन्द्रम०" इत्यादि दशमन्त्रैर्दशदिक्षु "भो इन्द्र प्राची रक्ष" "भो आग्नेयी रक्ष" इत्यादि प्रयोगेण रक्षां कुर्यात्। तत देवस्याग्रे चतुरो ब्राह्मणानुपवेश्य स्वस्तिवाचनं कारयेत्। तद्यथा— "भो ब्राह्मणाः "अमुकदेवार्चाशुद्धिस्नपननेत्रोन्मीलनकर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु" ॐपुण्याहम्

वेदीके पूर्वादि आठ दशाओं में समुद्रसंज्ञक आठ कलशों का स्थापन कर उनमें क्रमसे क्षारोदक, दूध, दधि, घृत,

प्र०

३५८

प्र०

३५६

इक्षुरस, सुरोदक, स्वादूदक और उष्णोदक छोड़ दे ।

ॐ पुनन्तु मादेवज० १ भो ब्राह्मणाः "अमुकदेवार्चाशुद्धिस्नपननेत्रोन्मीलनकर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु" ॐ कल्याणम् ॐ यथेमां वाचं क० २ भो ब्राह्मणाः "अमुकदेवार्चाशुद्धि-स्नपनेत्रोन्मीलनकर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु" ॐ कर्म ऋध्यताम् । ॐसत्रस्यऽ ऋद्धिरस्य० ३ भो ब्राह्मणाः अमु० कर्मणे स्वस्ति भवन्तो ब्रवन्तु" ते च—अस्मै विष्णु-आदि-अर्चाशुद्धिस्नपनाय नेत्रोन्मीलनकर्मणे च स्वस्ति इति वदेयुः । ॐस्वस्तिनऽ इन्द्रो० ततः "कृतस्य पुण्याहवाचन-कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं दक्षिणाद्रव्यं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो विभज्य दातुमहमुत्सृजे" इति सङ्कल्पं कृत्वा यजमानः उपविष्टब्राह्मणेभ्यो चन्दनादिना पूजनपूर्वकं दक्षिणां दत्त्वाऽ-शिषो गृह्णीयात् । ततः—ॐअ॒ग्निम॒मू॒र्द्धा दि॒वः क॒कुत्पतिः॑ पृथि॒व्याऽअ॒यम् । अ॒पाᳬरेता॑ᳬसिजि न्न्वति ।। इति मृत्तिकाकलशेन १ ॐ य॒ज्ञा य॑ज्ञावोऽअ॒ग्नये॑गि॒रागि॑राच॒दक्ष॑से । प्रप्रवयम॒ मृतं॑ञ्जा॒तवे॑दसम्प्रि॒यम्मि॒त्रन्नशᳬ० सिषम् ।। इति कषायोदकेन २ "ॐतत्सवितु० गोमूत्रेण ३ ॐगन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।। इति

छठी पंक्तिमें दश कलश होंगे—उनमें क्रमसे कदम्ब, शाल्मली, जम्बू, अशोक, प्लक्ष, आम, बिल्व, नाग और

प्र०

३५६

पलाशके पत्तोंका प्रक्षेप कर उन्हीं दशों में लोकपालों का आवाहन करे। सातवी पंक्तिमें...चार बड़े-बड़े कलश रखे

गोमयोदकेन ४ ॐमानस्तोकेतनयेमान ऽआयुषिमानोगोषमानो ऽश्वेषुरोरिषः। मानोव्वीरान्रुद्रभामिनोव्वधीर्हविष्मंन्तःसदमित्वाहवामहे ॥ इति भस्मोदकेन ५ ॐतत्सवितुर्व० इति गन्धोदकेन ६ ॐनमः शम्भवायचमयोभवायचनमः शङ्करायचमयस्करायचनमः शिवायचशिवतरायच ॥ इति गन्धोदकेन ७ ॐहंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जागोजा ऽऋतजा ऽअद्रिजा ऽऋतम्बृहत् ॥ इति गन्धोदकेन ८ ॐ यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी। तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि॥इति गन्धोदकेन९ ॐव्विष्णोरराटमसिव्विष्णोःश्नप्त्रेस्थोविष्णोःस्यूरसिव्विष्णोर्ध्रुवोसि ॥ व्वैष्णवमसिव्विष्णवेत्वा॥ इति गन्धोदकेन १० ॐ ब्रह्मयज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतःसुरुचोव्वेन ऽआवः। सबुध्न्या ऽउपमा ऽअस्यव्विष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्चव्विवः ॥ इति गन्धोदकेन ११ ॐ शतंवो ऽअम्बधामानिसहस्रमुतवोरुहः ॥ अधाशतक्रत्वोयूयमिमम्मे ऽअगदङ्कृत। इति दूर्वाक्षतपुष्पैः सम्पूज्य ॐ सुजातो ज्योति० इति सितसूक्ष्मवस्त्रेण देवमाच्छादयेत् ॥ इति प्रथमवेदिस्नपनम्।

या एक कलश रखे। तदनन्तर सफेद महीनवस्त्र नया, सुगन्धित तेल, यव, शील, गोधूम, मसूरी, बिल्व आदि का

मध्यमा वेदिः

पूर्व

उत्तर — दक्षिण

पश्चिम

चूर्ण देवताओं के मर्दन के लिए रखे। यही देवस्थापनप्रकार है।

एवं संस्नाप्य ततः—ॐततो मध्यवेद्यां ॐभद्रंकर्णेभि शृणु० १ ॐस्तीर्णंबर्हिःसुष्टरीमाजुषाणोरुपृथुःप्रथमान्पृथिव्याम्। देवेभिर्युक्तमदितिःसजोषाः स्योनङ्कृण्वानासुविते दधातु २ इति प्रागग्रास्तृतकुशे पीठे देवं प्राङ्मुखं निधाय स्वयमुदङ्मुखो भूत्वा कुङ्कुमाक्तेन सूत्रेण लिङ्गमावेष्ट्य लिङ्गस्य मध्यभागे मुखं कल्पयित्वा प्रतिमायां मुखे नेत्राणि सुवर्णशलाकया मध्वाज्याक्तया ॐचित्रन्देवानामुदगादनीकञ्चक्षुर्म्मित्रस्यव्वरुणस्याग्नेः॥ इत्यर्द्धर्चेन कल्पयेत्। तथैव शलाकया ऊर्ध्वाधः पृथग्भूतं पक्ष्मपुटद्वयं च "ॐआ कृष्णेन रज०" इति कल्पयेत्। नेत्रमध्ये त्रिभागेन कनीनिकामपि कल्पयेत्। तदा न कश्चित्पुरतस्तिष्ठेत्। (इदं नेत्रोन्मीलनं न बाणरत्नादिलिङ्गेष्विति शङ्करभट्टाः) ततः सुवर्णं पायसं भक्ष्यं भोज्यं आदर्शं च शीघ्रं दर्शयेत्। शिल्पी च लोहेनोल्लिखेत्। ततो गुरुर्मधुसर्पिर्भ्यामभ्यज्य "ॐइमम्मेव्वरुणश्रुधीहवमद्याचमृडय॥ त्वामवस्युराचके॥ इति शुद्धोदकेन लौकिकेनाभ्युक्ष्य स्थापितैकादशकलशैः

(जलसे देवताओं को बाहर निकालकर) प्रार्थनकर स्नानमण्डप ले आकर तीर्थोंका आवाहनाकर स्नान करावे।

फिर बलि और पुण्याहवाचन करावे। तदनन्तर समन्त्रक अग्निर्मूधा—आदि मन्त्रों से प्रथमवेदिका स्नपन कराकर

स्नापयेत्पूर्ववत्। "ॐअग्निर्मूर्द्धा०" इति मृत्तिकाकलशेन १ ॐयज्ञायज्ञावोऽअग्नयेगिरागिराचदक्षसे। प्रप्रंवयममृतञ्जातवेदसम्प्रियम्मित्रन्नशंर्ठ० सिषम्॥ इति कषायोदकेन २, ॐतत्सवितुः० गोमूत्रेण ३, गन्धद्वारामिति गोमयोदकेन ४, ॐमा नस्तोके त० भस्मोदकेन ५, ६, तत्सवितुर्वरेण्यम्, गन्धोदकेन ६ ॐनमः शम्भवाय० ७, ॐ हर्ठ०, सः ८, ॐ या ते रुद्र० ९, ॐ विष्णोरराट० १०, ॐ ब्रह्मयज्ञानं ११ इत्यादि मन्त्रेण पृथक्२ गन्धोदकेन संस्नाप्य—ॐशतंवोऽअम्बधामानिसहस्रमुतवोरुहः। अधाशतक्रत्वोयूयमिमम्मेऽअगदङ्कृत॥ इति दूर्वाक्षतपुष्पः सम्पूज्य"ॐसुजातो०"इति वस्त्रेण देवमाच्छाद्यसुवर्णशलाकादिकं प्रतिमाघटकाय (शिल्पिने) (तदभावे आचार्यायैव दद्यात् इति त्रिविक्रमः) दद्यात्। इदं सहिरण्यं गोनिष्क्रयद्रव्यमाचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे। इति च आचार्याय (गुरवे) दद्यात्। (अन्येभ्योऽपि ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दद्यात् इति प्रतिष्ठेन्दौ) इति द्वितीयवेदिस्नपनम्।

मध्यवेदीमें देवोंको रख मुख आदिकी कल्पनाकर पायस, सीसा आदि रख नेत्रों की कल्पना करे। स्नान करावे। अब

प्र०

३६३

उत्तरावेदिः
पूर्व
पश्चिम

प्र०

३६६
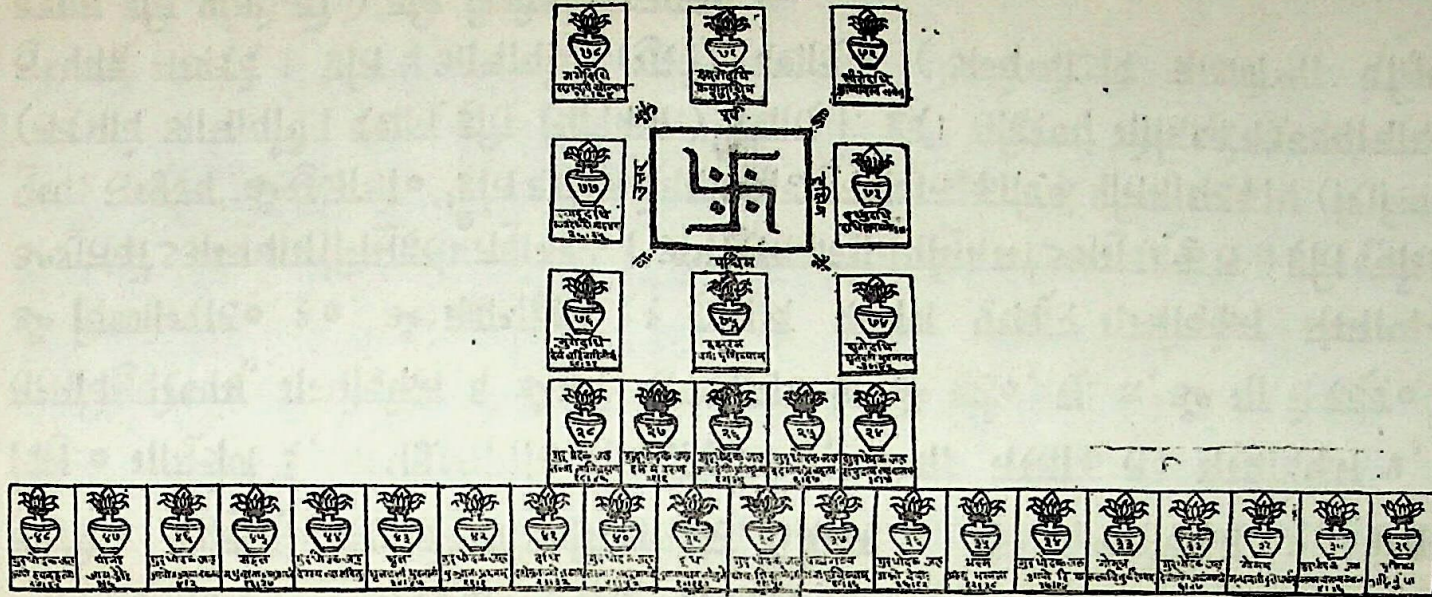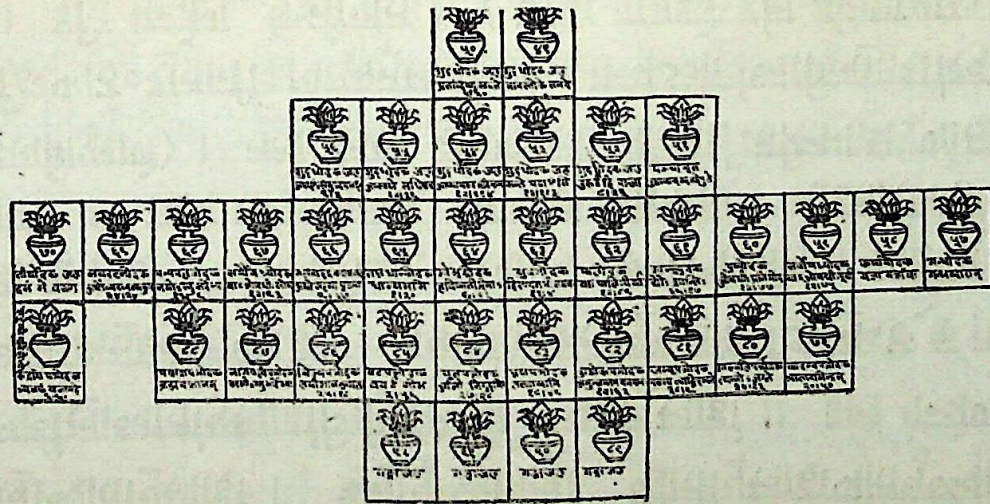
तीसरी वेदी के स्थापित कलशों से स्नपन कराकर वस्त्र से मूर्तियों को पूछकर पाद्यादि से सविधि पूजन कराकर

अथ गुरुरुत्तरवेद्यां पूर्ववद्देवं स्नापयित्वा आद्य-पङ्क्तिस्थाद्यकलशेन—"ॐसमुद्रायंत्वाव्वातायस्वाहासररायंत्वाव्वातायस्वाहा । अनाधृष्यायंत्वा व्वातायस्वाहाप्रतिधृष्यायंत्वाव्वाताय-स्वाहा । अवस्यवैत्वाव्वातायस्वाहाशिमिदायंत्वा व्वातायस्वाहा ।। इति मन्त्रेण संस्नाप्य ॐ शतंव्वोऽअम्बधामानिसहस्रमुतवोरुहः । अधाशतक्क्रत्वोयूयमिमम्मेऽअगदङ्कृत ।। इति दूर्वा-क्षतान्मूर्ध्नि दत्वा प्रार्थयेत्—"ॐनमस्तेऽर्चे, सुरेशानि प्रकृतेर्विश्वकर्मणः । प्रभाविताशेषजगद्धात्रि तुभ्यं नमो नमः १ त्वयि सम्पूजयामीशं नारायणमनामयम् । रहिताशेषदोषैस्त्वमृद्धियुक्ता-सदा भव २ (इत्यग्निपुराणे) । ततो देवस्य दक्षिणहस्ते प्रतिमावितस्तिमात्रमूर्णासूत्रं "ॐयदा-बध्नन्दाक्षायणाहिरण्यꣳशतानीकायसुमनस्यमानाः ।। तन्मऽआबध्नामिशतशारदायायुष्माञ्जर-दष्टिर्यथासम् ।। इति मन्त्रेण बध्नीयात् । (देव्या वामकरे इति प्रतिष्ठाभास्करे) ततः—"ॐ सर्वसत्वमयं शान्तं परं ब्रह्मसनातनम् । त्वामेवालङ्करिष्यामि त्वं वन्द्यो भवते नमः १ इति पुष्पाञ्जलि दे । यही देवताओं की स्नपनविधि है ।

प्र०

३६७

प्र०

३६७

पठेत् । ततोऽवशिष्टैः चतुर्भिः शुद्धोदककलशैः स्नपयेदेभिर्मन्त्रैराद्यङ्क्तिस्थैः—ॐइदमापःप्रवह-
तावद्यञ्चमलञ्चयत् । यच्चाभिदुद्रोहानृतंयच्चशेपेऽअभीरुणम् । आपोमातस्मादेनसःपवमानश्चमु-
ञ्चतु ॥ इति शुद्धोदकेन १ ॐ आपोदेवीःप्रतिगृभ्णीतमस्मैतत्स्योनेकृणुध्वःसुरभाऽउलोके ।
तस्मैनमन्ताञ्जनंयःसुपत्क्नीम्मातेवपुत्रम्बिभृताप्स्वेनत् ॥ इति शुद्धोदकेन २ ॐइमम्मेव्वरुणश्रुधीह
वमद्याचमृडय । त्वामवस्युराचके ॥ इति शुद्धोदकेन ३ ॐतत्त्वायामिब्रह्मणावन्दमानस्तदाशास्तेयज-
मानोहविर्भिः । अहेडमानोव्वरुणेहबोध्युरुशःसमानऽआयुःप्रमोषीः ॥ इति शुद्धोदकेन ४ इति
व्याऽश्रयम् । अपाꣳरेताꣳसिजिन्वति ॥ इति मृत्तिकाकलशेन १ ॐव्वरुणस्योत्तम्भनमसिव्वरुण-
स्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थोव्वरुणस्यऽऋतसदन्न्यसिव्वरुणस्य ऽऋतसदनमसिव्वरुणस्य ऽऋतसदनमा-
सीद ॥ इति शुद्धोदकेन २ ॐगन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहो-
पह्वये श्रियम् । इति गोमयेन ३ ॐदेवीरापोऽअपान्नपाद्योवऽऊर्म्मिर्हविष्यऽइन्द्रियावान्मदिन्तमः ।
तन्देवेभ्योदेवत्रादत्तशुक्रपेभ्योयेषाम्भागस्थस्वाहा ॥ इति शुद्धोकेन ४ ॐतत्सवितुरिति गोमू-

प्र०

३६७

स्नान मण्डपस्थ देवताओं का उन उनके सूक्तों से स्तुतिकर उन मूर्त्तियों को उठाकर स्थापन कर बाजे गाजे

त्रेण ५ ॐआपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्ज्जेदधातन महेरणायचक्षसे ॥ इति शुद्धोदकेन६ ॐप्रसद्य-
भस्मनायोनिमपश्चपृथिवीमग्ग्ने । सꣳसृज्यमातृभिष्ट्वंज्योतिष्मान्पुनरासदः ॥ इति भस्मोदकेन ७
“ॐशन्नोदेवी०” इति शुद्धोदकेन ८ ॐपयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षेपयोधाः ।
पयस्वतीःप्रदिशःसन्तुमह्यम् ।। इति पञ्चगव्येन ९ ॐ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः । उशती-
रिवमातरः।।इतिशुद्धोदकेन१०ॐआप्यायस्वसमेतुतेव्विश्वतःसोमव्वृष्ण्यम् । भवाव्वाजस्यसङ्गथे।।
इति क्षीरजलेन ११ ॐतस्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्न्वथ । आपोजनयथाचनः ॥ इति शुद्धो-
दकेन १२ ॐदधिक्राब्णोऽअकारिषञ्जिष्णोरश्वस्यव्वाजिनः । सुरभिनोमुखाकरत्प्रणऽआयूꣳषिता-
रिषत् ॥ इति दधिजलेन १३ ॐयुञ्जानःप्रथमम्मनस्तत्वायसविताधियः।। अग्नेर्ज्योतिर्न्निचाय्यपृथि-
व्याऽअध्याभरत् ॥ इति शुद्धोदकेन १४ ॐघृतवतीभुवनानामभिश्रियोर्वीपृथ्वीमधुदुघेसुपेशसा ।
द्यावापृथिवीव्वरुणस्यधर्म्मणाविष्कभितेऽअजरेभूरिरेतसा ॥ इतिघृतेन १५ ॐदेवस्यत्वा सवितुः०

के साथ मण्डप, प्रासाद, गांव शहर आदिकी प्रदक्षिणक्रमसे प्रदक्षिणाकर यागमण्डपके पश्चिमद्वारमें ले आकर रथसे

मूर्तियों को उतार कर उसी द्वारसे मध्यवेदी के पश्चिमभागमें महापीठमें प्राङ्मुख देवताओं बैठाकर यजमान मधुपर्क

प्र०

शुद्धोदकेन १६ ॐमधुवाताऽऋता० मधुना १७ ॐआपोऽअस्मान्मातरं÷शुन्धयन्तुघृतेननोघृतप्व÷ पुनन्तु। व्विश्वर्ठं०हिरिप्रंप्रवहन्तिदवीरुदिदाभ्य꞉शुचिरापूतऽएमि। शुद्धोदकेन १८ ॐआयङ्गौ पृश्निरक्रमीदसंदम्मातरम्पुर꞉। पितरञ्चप्प्रयन्स्व÷॥ इति शर्करया १६ ॐआपोहयद्बृहतीर्व्वि- श्वमायन्गर्भन्दधानाजनयन्तीरग्निम्। ततोदेवानाꣳसमवर्त्ततासुरेक꞉कस्मैदेवायहविषाव्विधेम॥ शुद्धोदकेन २० ॐयज्ञायज्ञावोऽअग्नयेगिरागिराचदक्षसे। प्रप्प्रंवयममृतञ्जातवेदसम्प्रियम्मित्रन्न- शर्ठं० सिषम्॥ इति वस्त्रेण संमार्ज्य तेनैव सुगन्धितैलेनाभ्यज्य "ॐद्रुपपादिवमुमुचानꣳस्विन्न꞉ स्नातोमलादिव॥ पूतम्पवित्रेणेवाज्यमाप÷शुन्धन्तुमैनस꞉॥ इति मन्त्रेण यव-शालि-गोधूम-मसूरि- काद्यामलकचूर्णैरुद्वर्त्य ततः—यातेरुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी। तयानस्तन्न्वाशन्तमयागिरि- शान्ताभिचाकशीहि॥ इति मन्त्रेण यक्षमकर्दमेन जटामास्यानुलिम्पेत्। ततस्तृतीयपङ्क्तस्थकल- शद्वयेन—ॐमानस्तोकेतनयेमानऽआयुषिमानोगोषुमानोऽअश्वेषुरीरिषः। मानोव्वीरान्दरुद्रभा- मिनोव्वधीर्हविष्मन्त꞉सदमित्वाहवामहे १ ॐप्रतद्विष्णुस्तवतेव्वीर्य्येणमृगोनभीम꞉कुचरोगिरिष्ठा꞉।

अपने शाखाके अनुसार करे। फिर वेदी में कुशाओं को बिछाकर पूर्वदिशाकी तरफ शय्याका स्थापनकर देवताके यस्योरुषुत्रिषुविक्क्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानिव्विश्वा २ इति मन्त्रद्वयेन क्रमेण स्नपयेत्। चतुर्थपङ्क्तिस्थैः षड्भिः क्रमेण—ॐ आप्यायस्वसमे० इति पञ्चामृतेन १ ॐ उरुठं० हि राजा० २ शुद्धोदक ॐ मन्तेपयाᳬंसिमम्मुयन्तुव्वाजाः संव्वृष्ण्यान्न्यभिमातिषाहः ॥ आप्यायमानोऽ-अमृतायसोमदिविश्रवाᳬंस्युत्तमानिधिष्व ॥ इति शुद्धोदकेन ३ ॐ आप्यायस्वमदिन्तमसोम-व्विश्वेभिरᳬंशुभिः। भवानः सप्रथस्तमः सखाव्वृधे ॥ इति शुद्धोदकेन ४ ॐ अप्स्वग्नेसधिष्ट-वसौषधीरनुरुध्यसे। गर्ब्भेसञ्जायसेपुनः ॥ इति शुद्धोदकेन ५ ॐ अपाᳬंरसमुद्वयसᳬंसूर्ये-सन्तᳬंसमाहितम्। अपाᳬंरसस्ययोरसस्तंव्वोगृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वाजुष्टङ्गृह्णा-म्म्येषतेयोनिरिन्द्रायत्वाजुष्टतमम् ॥ इति शुद्धोदकेन ६ अथ पञ्चमपङ्क्तिस्थैश्चतुर्दशाभिः क्रमेण ॐ गन्धद्वारा० गन्धोदकेन १ ॐ यज्ञायज्ञायोऽअग्नयेगिरागिराच दक्षसे। प्रप्रवयममृतञ्जातवेद-सम्प्रियम्मित्रन्नशᳬंसिषम् ॥ इति कषायोदकेन २ ॐ याऽओषधी० इति सर्वौषधिजलेन ३ ॐ ओषधीः प्रतिमो० इति पुष्पादकेन ४ ॐ द्यौः शान्तिर० इति शान्त्युदकेन ५ ॐ याः फलि-

प्र०

३७१

मन्त्रसे रखे ।

नीर्या ऽअफला ऽअपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ॥ बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चन्त्वꣳ हसः ॥ इति फलोदकेन ६ ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक ऽआसीत् । सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमाङ्कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ इति सुवर्णोदकेन ७ ॐ हविष्मतीरिमा ऽआपो हविष्माँ ऽआविवासति ॥ हविष्मान्देवो अध्वरो हविष्माँ ऽअस्तु सूर्य्यः ॥ इति गोशृङ्गोदकेन ८ ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान्प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा ॥ दीर्घामनु प्रसितिमायुषे धान्देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनाम्पयोऽसि ॥ इति सप्तधान्योदकेन ९ ॐ अग्ने सहस्व पृतना ऽअभिमातीरपास्य । दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसि ॥ इति सहस्रच्छिद्रकलशेन १० ॐ या ऽओषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताः पृथिवीमनु । बृहस्पतिप्रसूता ऽअस्यै सन्दत्त वीर्य्यम् ॥ इति पुनः सर्वौषधिकलशेन ११ ॐ नमो ऽस्तु सर्पेभ्यो० पञ्चपल्लवोदकेन १२ ॐ अष्टौ व्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्रिधन्व योजना सप्त सिन्धून् । हिरण्याक्षः सविता देवा ऽआगाद्दधद्रत्ना दाशुषे वार्य्याणि । नवरत्नोदकेन १३ ॐ इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्याच मृडय । त्वामवस्युराचके ॥ तीर्थोदकजलेन १४ अथ

प्र०

३७१

शिवप्रतिष्ठामें वेदीके पूर्वादिदिशाओंमें भवादि देवताओं आवाहन आदि करे। विष्णुप्रतिष्ठामें विष्णु आदि देव-
वेदिपरितो अष्टभिः समुद्रसंज्ञिवः क्रमेणतत्र ॐ कयानश्चित्रऽआभुवदूतीसदावृधः सखा ॥ कयाशचि-
ष्ठयावृता ॥ क्षीरोदधिकलशेन १ आप्यायस्वेति क्षीरोदधिकलशेन २ ॐदधिक्राव्ण० दध्युदधिजलशेन
३ ॐघृतवतीभुवनानामभिश्रियोर्व्वीपृथ्वीमधुदुघेसुपेशसा ॥ द्यावापृथिवीव्वरुणस्यधर्मणाव्विष्कभि-
तेअजरेभूरिरेतसा ॥ इति घृतोदधिकलशेन ४ ॐपयः पृथिव्या० इति इक्षुरसोदकेन ५ ॐदेवंब-
र्हिर्वारितानामध्वरेस्तीर्णमश्विभ्यामूर्णम्रदाः सरस्वत्यास्योनमिन्द्रतेसदः ॥ ईशायैमन्यु राजान-
म्बर्हिषादधुरिन्द्रियंव्वसुवनेव्वसुधेयस्यव्यन्तुयज ॥ इति सुरोदधिकलशेन ६ ॐस्वादिष्ठयामदिष्ठ-
यापवस्वसोमधारया ॥ इन्द्रायपातवेसुतः ॥ इति स्वादूदधिकलशस्थितजलेन ७ ॐसरस्वतीयोन्याङ्ग-
र्भमन्तरश्विभ्याम्पत्नीसुकृतम्बिभर्ति ॥ अपाᳬरसेनव्वरुणोनसाम्नेन्द्रᳬश्रियैजनयन्नप्सुराजो ॥
इति गर्भोदधिजलेन ८ अथ षष्ठङ्क्तिस्थैर्दशभिः क्रमेण स्नापयेत्—ॐत्रातारमिन्द्र० इति कद-
म्बजलेन १ ॐत्वन्नोऽअग्ने० इति शाल्मलिजलेन २ ॐयमाय त्वाङ्गिर० इति जम्बूजलेन ३
ॐअशुन्वन्तम० इति अशोकजलेन ४ ॐतत्त्वा यामि० प्लक्षजलेन ५ ॐआ नो नियुद्भिः०

इति चूतजलेन ६ ॐवयर्ठं० सोम व्र० इति वटजलेन ७ ॐतमीशानंजग० इति बिल्वजलेन ८ ॐनमोस्तुसर्पेभ्यो ये० इति नागवल्लीजलेन ९ ॐ ब्रह्मयज्ञानं प्रथ० इति पलाशजलेन १० (शिवे—त्र्यम्बकं०इति रुद्राक्षपत्रजलेन ११) अथ सप्तमपङ्क्तिस्थैश्चतुर्भिरेकेन वा आ नो भद्रा इत्यनुवाकेन । ततः सूक्ष्मवस्त्रेण परिमृज्य ततः समङ्गलघोषैः पुरुषसूक्तेन विष्णवे रुद्रसूक्तेन शिवस्य इमं मे वरुणेतितीर्थोदकेन देवं स्नापयित्वा सुगन्धिना सितवस्त्रेण परिमृज्य ॐविश्वतं-श्चक्षुरुतव्विश्वतोमुखोव्विश्वतोबाहुरुतव्विश्वतंस्पात् । सम्बाहुभ्यान्धमतिसम्पतत्रैर्द्यावाभूमीञ्जनयं-न्देवऽएकः ॥ इति मन्त्रेणसकलीकृत्य देवमावाहयेत्—ॐएह्येहि भगवन्देव लोकानुग्रहकाम्यया । यज्ञभागं गृहाणेमं स्थाप्यदेव नमोऽस्तु ते ॥ अमुकाय नमः आवाहयामि ॥ ॐआ कृष्णेनेति मन्त्रेण अमुकाय नमः पादयो पाद्यं समर्पयामि ॥ ॐहिरण्यगर्भेति अमुका० हस्तयोरर्घं स० । ॐविभ्राट् इति अमुका० अर्धाङ्गमाचमनीयं स० । ॐपञ्चनद्यः स० । अमुका० इति पञ्चामृतं स० । ॐदेवस्येति अमुकाय० शुद्धोदकस्नानं स० । ॐअभिधाऽअसिभुवनमसिय-न्तासि धर्त्ता । सत्वमग्निंव्वैश्वानरर्ठं०सप्रथसङ्गच्छस्वाहाकृतः ॥ इति मन्त्रेण अमुका०

वस्त्रमुपवस्त्रं च समर्पयामि । वस्त्रान्ते आचमनीयं समर्पयामि । ॐवेदाहमेति यज्ञोपवीतान्ते शुद्धोदकस्नानं स० । ॐत्र्यम्बकेति कनिष्ठामूलगताङ्गुष्ठयोगेन गन्धमुद्रां प्रदर्श्य अनामिकया गन्धानुलेपनं समर्प० । ॐअक्षन्नमो० मन्त्रेण अक्षतान् समर्प० । ॐइदं विष्णुर्वि० इति तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन पुष्पमालां समर्पयामि । ॐकाण्डात्का० इति दूर्वाङ्कुरान् समर्प० । ॐअहिरिव० इति परिमलद्रव्यं समर्पयामि । नैवेद्यं पुरतो निधाय—ॐधूरसि धू० धूपमाघ्रापयामि । ॐचन्द्र-मामन० अमुकाय० दीपं दर्शयामि हस्तप्रक्षालनम् । ॐअन्नपते० अमुका० नैवेद्यं निवेदयामि । नैवेद्यान्ते आचमनीयं समर्पयामि मध्ये पानीयं समर्पयामि । अनामिका-मूलयोरङ्गुष्ठयोगेन नैवेद्यमुद्रां प्रदर्श्य ग्रासमुद्राः प्रदर्शयेत् अङ्गुष्ठप्रदेशिनीमध्यमाभिः—ॐप्राणाय स्वाहा १ अङ्गुष्ठमध्यमानामिकाभिः—ॐअपानाय स्वाहा २ अङ्गुष्ठानामिकाकनिष्ठिकाभिः—ॐव्यानाय स्वाहा ३ कनिष्ठातर्जन्यङ्गुष्ठैः—ॐसमानाय स्वाहा ४ साङ्गुष्ठाभिः सर्वाभिः—ॐउदानाय स्वाहा ५ इति प्रदर्श्य उत्तरापोषणं समर्पयामि । करोद्वर्तनार्थे गन्धानुलेपनं समर्पयामि । ॐयाः फलिनी० ताम्बूलपत्रं पूगीफलं च सम० । ॐहिरण्यगर्भ० इति दक्षिणाद्रव्यं समर्पयामि ।

ताओं की स्थापन करे। फिर देवमन्त्रों से शय्यामें देवताओं को स्थापनकर शयनकराकर निद्राकलशका शिरोभागमें

ॐइदर्ठ० ह० ॐआरा०नि० इति मन्त्राभ्यां नीराजनं समर्पयामि। ॐयज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानिधर्म्माणिप्रथमान्यासन्। तेहनाकम्महिमानःसचन्तयत्रपूर्व्वेसाध्याःसन्तिदेवाः। ॐराजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। ॐकुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ॐस्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्सार्वभौमस्सार्वायुषान्तादापरार्धात्पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराडिति तदप्येषश्लोकोभिगीतो मरुतः परिवेष्टारोमरुत्तस्यावसन् गृहे। आवीक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति। ॐविश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमतिसम्पतत्रैर्द्यावाभूमीजनयन्देवऽएकः॥ अमुकाय नमः मन्त्रपुष्पाञ्जलिसमर्प०। ॐये तीर्थानि प्र० अमुकाय नमः प्रदक्षिणां सम०। इति पूजां समाप्य स्नानवस्त्रं नैवेद्यादिकं च सर्वं शिल्पिने दद्यात्। इत्याग्नेय पुराणोक्त स्नपनविधिः।

भूमिमें स्थापन करे।

प्र०
३७५

(रथयात्रा)

प्र० ३७६

(शय्याधिवास)
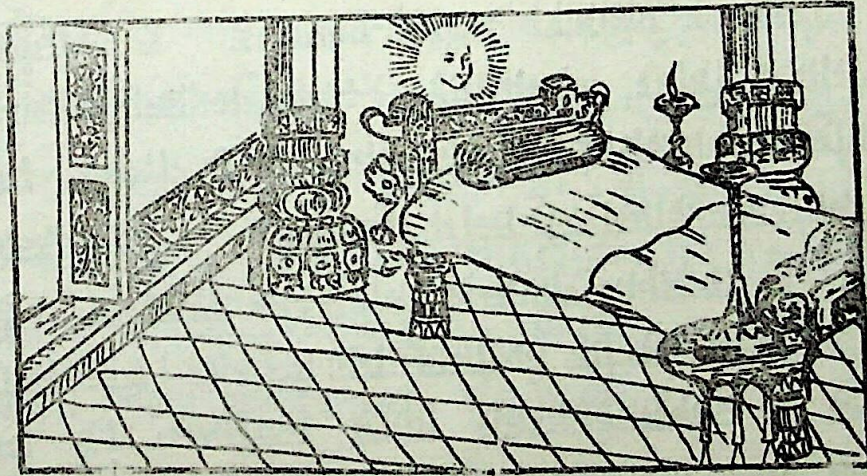
* अथ शय्यायामर्चाधिवासः *

तदनन्तर कंकण, छत्र, पंखा, चँवर, जलके कलश, आसन, शीशा, घण्टा, भोजन सामग्री, घ, दधि, सहत,

स्नानमण्डपस्थं देवं पुरुषसूक्तेन स्तुत्वा ततस्तच्चद्देवसूक्तेन च स्तुत्वा ॐउत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगत्पते । त्वयि सुप्ते जगत्सुप्तमुत्थिते चोत्थितं जगत् ॥ इति ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पते देवयन्तंस्त्वेमहे । उपप्प्रयंन्तुमरुतंः सुदानंवऽइन्द्रंप्प्राशूर्भवासचा १ ॐआमूरंजप्प्रत्यावर्त्तयेमाः केतुमद्दुन्दुभिर्व्वावदीति । समश्वपर्ण्णाश्चरंन्तिनोनरोस्माकंमिन्द्ररथिनोजयन्तु २ इति मन्त्राभ्यां देवमुत्थाप्य ॐरथेतिष्ठन्नयतिव्वाजिनंः पुरोयत्रंयत्रकामयंतेसुषारथिः । अभीशूंनाम्महिमानंम्पनायतमनंः पश्चादनुंयच्छन्तिरश्मयंः १ इति मन्त्रेण रथादौ देवमारोप्य ॐआनोभद्रा" इति सूक्तेन मङ्गलतूर्यघोषेण च सह मण्डप-प्रसाद-ग्रामप्रादक्षिण्येन आनीय यागमण्डपपश्चिमद्वारे रथादवतार्य तेनैव द्वारेण "ॐआ कृष्णेन रजसा०" इति मन्त्रेण प्रवेश्य वेद्याः पश्चिमभागे भद्रपीठे प्राङ्मुखं देवमुपवेश्य स्वयमुदङ्मुखः यजमानः स्वशाखोक्तविधिना मधुपर्कं कुर्यात् ।

घृत, भोजन पात्र, वस्त्र, आभूषण, तांबूल आदि सामग्री को रखे । फिर बलि दशदिक्पालों को दे ।

प्र०

३७९

कमलाकरस्तु–ॐअन्नपते०" इति मन्त्रेण मधुपर्कस्य निवेदनमात्र माह) ततो देशकालौ स्मृत्वा–"अमुकदेवप्रतिष्ठाकर्मणि अर्चाधिवासनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य वेद्यां कुशानास्तीर्य तदुपरि प्राक्शिरस्कां याम्यशिरस्कां वा शय्यां स्थाप्य देवलिङ्गकमन्त्रेण निदध्यात् ।

❀ अथ शिवप्रतिष्ठायां वेद्याः पूर्वादिदिक्षु देवावाहनम् ❀

पूर्वे–ॐभवाय न०भवमा० १ दक्षिणे–ॐशर्वाय न० शर्वमा० २ पश्चिमेचॐईशानाय० ईशानमा० ३ उत्तरे–ॐपशुपतये० पशुपतिमा०४ आग्नेये–ॐरुद्राय न० रुद्रमा० ५ नैर्ऋत्याम्–ॐउग्राय न० उग्रमा० ६ वायव्ये—ॐभीमाय न० भीममा० ७ ईशान्याम्—ॐमहते न० महान्तमा० ८ ॐभूर्भुवः भवाद्यावाहितदेवताभ्य० इति पूजयेत् ।

❀ अथ विष्णुप्रतिष्ठायां पूर्वादिदिक्षु अक्षतपुञ्जादौ देवावाहनम् ❀

पूर्वे–ॐविष्णवे न० विष्णुमा० १ दक्षिणे–ॐमधुसूदनाय न० मधुसूदनामा० २ पश्चिमे ॐत्रिविक्रमाय० त्रिविक्रमा० ३ उत्तरे–ॐवामनाय न० वामनमा० ४ आग्नेये–ॐश्रीधराय न०

प्र०

३७९

श्रीधरमा० ५ नैर्ऋत्याम्—ॐहृषीकेशाय० हृषीकेशमा० ६ वायव्याम्—ॐपद्मनाभाय० पद्मनाभमा० ७ ईशान्याम—ॐदामोदराय० दामोदरमा० ८ ॐभूर्भुवः विष्णवाद्यावाहितदेव० इति पूजयेत्। ततः स्थाप्यदेवलिङ्गकयन्त्रे ग शय्यायां देवं निवेश्य स्थापयित्वा स्वापयित्वा त्रिभिर्वस्त्रैर्देवमाच्छाद्य देवस्य शिरोदेशे भूमौ खण्डखाद्ययुतं सहिरण्यं निद्राकलशं "ॐअपोदेवीरूपसृजमधुमतीरयक्ष्मायंप्रजाभ्यः। तासामास्थानादुज्जिहतामोषधयःसुपिप्पलाः ॥ इति मन्त्रेण प्रतिष्ठाप्य ॐआप्यायस्व० इति मन्त्रेण मधुसर्पिभ्यां देवमभ्यज्य "या ते रुद्रशिवातनूः शिवा० इति तैलसर्षपकल्कैरुपलिप्य गन्धादिना तत्तद्देवमन्त्रेण देवं पञ्चोपचारैरभ्यर्च्य—ॐबृहस्पतेपरिदीया० इति परिसरं दद्यात्। (अत्र वा ॐबृहस्पतेपरीति मन्त्रेण देवस्य दक्षिणपाणौ कङ्कणबन्धनमित्येके) ॐविश्वतश्च० इति मन्त्रेण देवस्य (देवयोर्देवानां) पाद—नाभि—वक्षः—शिरांसि आलम्भेत। प्रत्यालम्भनं मन्त्रावृत्तिः। ॐबृहस्पते० इति दक्षिणपार्श्वे छत्रम्, ॐवातोवामनोवागन्धर्वाःसप्तविंशतिः। तेऽअग्रेश्वमयुञ्जँस्तेऽअस्मिञ्जवमादधुः॥ इति वामपार्श्वे व्यजनं चामरं च, ॐत्रीणिपदाविचक्रमे० इति चरण देशे पादुके, ॐआजिघ्रक० इतिपार्श्वयोः शान्तिकुम्भौ, ॐअभित्वाशूरनोनुमोदुग्धाऽ-

इवधेनवं॰ ।। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्रतस्थुषः॰ ।। इति देवस्य पुरतः भाजन—आसन—दर्पण—घण्टा—भक्ष्य—भोज्यान्नपयो—दधि—मधु—घृतादिकं गृहोपस्करजातं जलपात्रं भोजनपात्रं—वस्त्रभूषणादिकं—ताम्बूलसामग्रीञ्च परिकल्पयेत्। ततो भस्म—दर्भ—तिलैर्देवस्य परितोरक्षार्थं प्राकारत्रयमीशानीमारभ्य ईशान्यन्तं कुर्यात्। ततः—देशकालौ सङ्कीर्त्य—'अमुकदेवार्चाधिवासनाङ्गभूतमिन्द्रादिदशलोकपालेभ्यः भूतेभ्यश्च बलिदानमहङ्करिष्ये—इति सङ्कल्प्य मण्डपाद्बहिर्गत्वा ॐत्रातारमिन्द्रम॰ इत्यादिमन्त्रैः गन्धादिभिः पञ्चोपचारैरिन्द्रादीन् सम्पूज्य तत्तन्मन्त्रेण माषभक्तबलीन्दद्यात्। पुनः प्रतिदिक्षु दशसु "ॐत्र्यम्बकं यजामहे॰ ।। इति मन्त्रान्ते "ॐभूतेभ्यो बलिरयमुपतिष्ठतु" इत्युक्त्वा सर्वभूतेभ्यो बलिं दद्यात्। आचामेच्च। (अथवा—सङ्क्षेपेण बलिदानं त्रिविक्रमोक्तमन्त्रेण कुर्यात्। तद्यथा—"ॐनमः पूर्वदिग्वासिभ्यो-दिक्पति—दिग्भूताधिपति—दिग्गणपति—दिग्रुद्र—दिङ्मातृ—दिक्क्षेत्रपालेभ्यो नमः। एवं प्रतिदिशं बलि दत्त्वाऽऽचामेत्) तत आचार्यः—ॐपराय विष्णवात्मने स्वाहा १ ॐपराय शिवात्मने स्वाहा २ ॐपराय देव्यात्मने स्वाहा ३ (ॐपराय रामात्मने स्वाहा) इत्याद्यूहितेनमन्त्रेण

प्र० ३८१

प्र० ३८१

यावत्यः स्थाप्यदेवतास्ताभ्यः सर्वाभ्यः प्रत्येकमष्टोत्तरसहस्र----अष्टोत्तरशत----अष्टाविंशति-अष्टान्यतमसङ्ख्यया तिल—यवान्यतरद्रव्येण स्वकुण्डे जुहुयात्। अयं होम आचार्यकुण्डे एव नान्यकुण्डेषु पञ्चकुण्ड्यादिपक्षेऽपीति बोध्यम्। (अत्र—"पराय विष्णवे स्वाहा" इति प्रयोगः प्रतिष्ठासरणावुक्तः)। अथ वेद्यामुदङ्मुखो वा देवसम्मुखो भूत्वा देशकालौ सङ्कीर्त्य—"अस्मिन् अमुकदेवार्चाधिवासनकर्मणि देवकलासान्निध्यार्थं प्रणवादिन्यासान् करिष्ये" इति सङ्कल्प्य ततः करे पुष्पं गृहीत्वा न्यासाः कार्याः—

*** प्रथमः प्रणवन्यासः सर्वदेवसाधारणः ***

ॐ अं नमः पादयोर्न्यसामि १ ॐ उं नमः हृदये न्यसामि २ ॐ मं नमः ललाटे न्यसामि ३ इति प्रणवन्यासः।

*** द्वितीयो व्याहृतिन्यासः सर्वदेवसाधारणः ***

ॐ भू नमः पादयोः न्यसामि १ ॐ भुवः नमः हृदये न्यसामि २ ॐ स्वः नमः ललाटे न्यसामि ३ इति व्याहृतिन्यासः।

* तृतीयो मातृकान्यासः सर्वदेवसाधारणः *

ॐ अं नमः शिरसि न्यसामि १ ॐ आं नमः मुखे न्यसामि २ ॐ इं नमः दक्षिणनेत्रे न्यसामि ३ ॐ ईं नमः वामनेत्रे न्यसामि ४ ॐ उं नमः दक्षिणश्रवणे न्यसामि ५ ॐ ऊं नमः वामश्रवणे न्यसामि ६ ॐ ऋं नमः दक्षिणगण्डे न्यसामि ७ ॐ ॠं नमः वामगण्डे न्यसामि ८ ॐ ऌं नमः दक्षिणनासापुटे न्यसामि ९ ॐ ॡं नमः वामनासापुटे न्यसामि १० ॐ एं नमः ऊर्ध्वदंशनेषु न्यसामि ११ ॐ ऐं नमः आधोदंशनेषु न्यसामि १२ ॐ ओं नमः ऊर्ध्वोष्टे न्यसामि १३ ॐ औं नमः अधरोष्ठे न्यसामि १४ ॐ अं नमः ललाटे न्यसामि १५ ॐ अः नमः जिह्वायां न्यसामि १६ ॐ यं नमः त्वचि न्यसामि १७ ॐ रं नमः चक्षुषोर्न्यसामि १८ ॐ लं नमः नासिकायां न्यसामि १९ ॐ वं नमः दशनेषु न्यसामि २० ॐ शं नमः श्रोत्रयोर्न्यसामि २१ ॐ षं नमः उदरे न्यसामि २२ ॐ सं नमः कटिदेशे न्यसामि २३ ॐ हं नमः हृदये न्यसामि २४ ॐ क्षं नमः नाभौ न्यसामि २५ ॐ ळं नमः लिङ्गे न्यसामि २६ ॐ पं फं बं भं नमः दक्षिणबाहौ न्यसामि २७ ॐ तं थं दं धं नं नमः वामबाहौ न्यसामि २८ ॐ टं ठं डं ढं णं नमः

प्र०
३८३

दक्षिणजङ्घायां न्यसामि २९ ॐ चं छं जं झं ञं नमः वामजङ्घायां न्यसमामि ३० ॐ कं खं गं घं ङं नमः सर्वाङ्गुलिषुन्यसामि ३१ इति मातृकान्यासस्तृतीयः सर्वदेवेषु कार्यः।

* चतुर्थ ऋक्षन्यासः सर्वदेवसाधारणः *

ॐ रविचन्द्राभ्यां नमः नेत्रयोर्न्य० ॐ भौमाय नमः हृदये न्य० २ ॐ बुधाय नमः स्कन्धे-न्य० ३ ॐ बृहस्पतये नमः जिह्वायां न्य० ४ ॐ शुक्राय नमः लिङ्गे न्य० ५ ॐ शनैश्चराय नमः ललाटे न्य० ६ ॐ राहवे नमः पादयोर्न्य० ७ ॐ केतुभ्यो नमः केशेषु न्य० ८ ॐ रोहि-णीभ्यो नमः हृदये न्य० ९ ॐ मृगशिरसे नमः शिरसि न्य० १० ॐ आर्द्रायै नमः केशेषु न्य० ११ ॐ पुनर्वसुभ्यां नमः ललाटे न्य० १२ ॐ पुष्याय नमः मुखे न्य० १३ ॐ आश्लेषाभ्यो नमः नासिकायां न्य० १४ ॐ मघाभ्यो नमः दन्तेषु न्य० १५ ॐ पूर्वाफाल्गुनीभ्यो नमः दक्षिण-श्रवणे न्य० १६ ॐ उत्तराफाल्गुनीभ्यो नमः वामश्रवणे न्य० १७ ॐ हस्ताय नमः हस्त-

तदनन्तर हवनादिकर प्रणवन्यास, व्याहृतिन्यास, ऋक्षन्यास, कलान्यास, ब्राह्मणादिन्यास, वेदन्यास, वैराजन्यास मूर्तिन्यास, ऋतुन्यास और गुणन्यास शिवसाधारण करे। विष्णुप्रतिष्ठामें आयुधन्यास करे। शिवप्रतिष्ठामें वज्रादि

प्र० आयुधन्यास करे। फिर अगमन्त्रन्यास विष्णु और शिव में करे।

योर्न्य० १८ ॐ चित्रायै नमः दक्षिणभुजे न्य० १९ ॐ स्वायै नमः वामभुजे न्य० २० ॐ विशाखाभ्यां नमः हृदि न्य० २१ ॐ अनुराधाभ्यो नमः स्तनयोर्न्य० २२ ॐ जेष्ठाभ्यो नमः दक्षिणकुक्षौ न्य० २३ ॐ मूलाय नमः वामकुक्षौ न्य० २४ ॐ पूर्वाषाढाभ्यो नमः कटिपार्श्वयोर्न्य० २५ ॐ उत्तराषाढाभ्यो नमः लिङ्गे न्य० २६ ॐ श्रवणधनिष्ठाभ्यो नमः वृषणयोर्न्य २७ ॐ शतभिषाभ्यो नमः नेत्रे न्य० २८ ॐ पूर्वाभाद्रपदाभ्यो नमः दक्षिणोरौ न्य० २९ ॐ उत्तराभाद्रपदाभ्यो नमः वामोरौ न्य० ३० ॐ रेवतीभ्यो नमः दक्षिणजङ्घायां न्य० ३१ ॐ अश्विनीभ्यां नमः वामजङ्घायां न्य० ३२ ॐ भरणीभ्यो नमः दक्षिणपादे न्य० ३३ ॐ कृत्तिकाभ्यो नमः वामपादे न्य० ३४ ॐ ध्रुवाय नमः नाभ्यां न्य० ३५ ॐ सप्तर्षिभ्यो नमः कण्ठे न्य० ३६ ॐ मातृमण्डलाय नमः कटिदेशे न्य० ३७ ॐ विष्णुपदेभ्यो नमः पादयोर्न्य० ३८ ॐ नागवीथ्यै नमः १ ॐ अङ्गवीथ्यै नमः २ वनमालादेशे न्य० ३९ ॐ ताराभ्यो नमः रोमकूपेषु न्य० ४० ॐ अगस्त्याय नमः कौस्तुभदेशे न्य० ४१ इति ऋक्षन्यासश्चतुर्थः।

❀ अथ पञ्चमः कालन्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

प्र०

ॐ चैत्राय नमः शिरसि न्य० १ ॐ वैशाखाय नमः मुखे न्य० २ ॐ ज्यैष्ठयाय नमः हृदये न्य० ३ ॐ आषाढाय नमः दक्षिणस्तने न्य० ४ ॐ श्रावणाय नमः वामस्तने न्य० ५ ॐ भाद्रपदाय नमः उदरे न्य० ६ ॐआश्विनाय नमः कट्यां न्य० ७ ॐकार्तिकाय नमः दक्षिणोरौ न्य० ८ ॐमार्गशीर्षाय नमः वामोरौ न्य० ९ ॐ पौषाय नमः दक्षिणजङ्घायां न्य० १० ॐ माघाय नमः वामजङ्घायां न्य० ११ ॐफाल्गुनाय नमः पादयोर्न्य० १२ ॐसम्वत्सराय नमः दक्षिणोर्ध्वबाहौ न्य० १३ ॐपरिवत्सराय नमः दक्षिणाधोबाहौ न्य० १४ ॐ इद्वत्सराय नमः वामोधोबाहौ न्य० १५ ॐअनुवत्सराय नमः वामोर्ध्वबाहौ न्य० १६ ॐपर्वतेभ्यो नमः सन्धिषु न्य० १७ ॐऋतुभ्यो नमः लिङ्गे न्य० १८ ॐअहोरात्रेभ्यो नमः अस्थिषु न्य० १९ ॐक्षणाय नमः १ ॐ लवाय नमः २ ॐ कामायै नमः ३ ॐ काष्ठायै नमः रोमसु न्य० ॐकृतयुगाय नमः मुखे न्य० २१ ॐत्रेतायुगाय नमः हृदये न्य०२२ ॐद्वापराय नमः नितम्बे न्य, २३ ॐकलियुगाय नमः पादयोर्न्य० २४ ॐचतुर्दशमन्वन्तरेभ्यो नमः बाह्वोर्न्य० २५ ॐपराय नमः १ ॐ

परार्द्धाय नमः २ जङ्घयोर्न्य० २६ ॐ महाकल्पाय नम शरीरे न्य० २७ ॐ उदगयनाय नमः १ ॐ दक्षिणायनाय नमः २ पादयोर्न्य० २८ ॐ विषुवद्भ्यो नमः सर्वाङ्गुलिषु न्य० २९ इति काल-न्यासः पञ्चमः ।

❀ अथ षष्ठो न्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

ॐ ब्राह्मणाय नमः मुखे न्य० १ ॐ क्षत्रियाय नमः बाह्वोर्न्य० २ ॐ वैश्याय नमः ऊर्वोर्न्य० ३ ॐ शूद्राय नमः पादयोर्न्य० ४ ॐ सङ्करजेभ्यो नमः पादाग्रे न्य० ५ ॐ अनु-लोमजेभ्यो नमः सर्वाङ्गसन्धिषु न्य० ६ ॐ गोभ्यो नमः मुखे न्य० ७ ॐ अजाभ्यो नमः १ ॐ आविकाभ्यो नमः २ हस्तयोर्न्य० ८ ॐ ग्राम्यपशुभ्यो नमः १ ॐ आरण्यपशुभ्यो नमः २ ऊर्वोर्न्य० ९ इति वर्णन्यासः षष्टः ।

❀ सप्तमस्तोयन्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

ॐ मेघेभ्यो नमः केशेषु न्य० १ ॐ अभ्रेभ्यो नमः रोमसु न्य० २ ॐ नदीभ्यो नमः सर्वगा-त्रेषु न्य० ३ ॐ समुद्रेभ्यो नमः कुक्षिदेशे न्य० ४ इति तोयन्यासः सप्तमः ।

❀ अष्टमो वेदन्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

ॐ ऋग्वेदाय नमः शिरसि न्य० १ ॐ यजुर्वेदाय नमः दक्षिणभुजे न्य० २ ॐ सामवेदाय नमः वामभुजे न्य० ३ ॐ सर्वोपनिषद्भ्यो नम हृदये न्य० ४ ॐ इतिहासपुराणेभ्यो नमः जङ्घयोर्न्य० ५ ॐअथर्वाङ्गिरसेभ्यो नमः नाभौ न्य० ६ ॐकल्पसूत्रेभ्यो नमः ७ ॐव्याकरणेभ्यो नमः वक्त्रे न्य० ८ ॐतर्केभ्यो नमः कण्ठे न्य० ९ ॐ मीमांसायै नमः १ ॐ निरुक्ताय नमः २ हृदये न्य० १० ॐ छन्दःशास्त्रेभ्यो नमः १ ॐ ज्योतिःशास्त्रेभ्यो नमः २ नेत्रयोर्न्य० ११ ॐगीताशास्त्रेभ्यो नमः ॐ भूतशास्त्रेभ्यो नमः २ श्रोत्रयोर्न्य० १२ ॐ आयुर्वेदाय नमः दक्षिणभुजे न्य० १३ ॐ धनुर्वेदाय नमः वामभुजे न्य० १४ ॐ योगशास्त्रेभ्यो नमः हृदये न्य० १५ ॐ नीतिशास्त्रेभ्यो नमः पादयोर्न्य० १६ ॐ वश्यतन्त्राय नमः ओष्ठयोर्न्य० १७ इति वेदान्यासोऽष्टमः ।

❀ अथ नवमो वैराजन्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

ॐदिवे नमः मूर्ध्नि न्य० १ ॐसूर्यलोकाय नमः १ ॐचन्द्रालोकाय नमः नेत्रयोर्न्य० २ ॐअनिल (वायु) लोकाय नमः घ्राणे न्य० ३ ॐव्योम्ने नमः नाभौ न्य० ४ ॐसमुद्रेभ्यो नमः वस्तिदेशे न्य० ॐपृथिव्यै नमः पादयोर्न्य० ६ इति वैराजन्यासो नवमः ।

❀ अथ दशमो देवता (मूर्ति) न्यासः सर्वदेवसाधारणः ❀

ॐ हिरण्यगर्भाय नमः शिरसि न्य० १ ॐ कृष्णाय नमः केशेषु न्य० २ ॐ रुद्राय नमः ललाटे न्य० ३ ॐ यमाय नमः भ्रुवो न्य० ४ अश्विभ्यां नमः कर्णयोर्न्य० ५ ॐ वैश्वानराय नमः मुखे न्य० ६ ॐ मरुद्भ्यो नमः घ्राणे न्य० ७ ॐ वसुभ्यो नमः कण्ठे न्य० ८ ॐ रुद्रेभ्यो नमः दन्तेषु न्य० ९ (ॐ आदित्येभ्यो नमः मुखे न्य० इति प्रतिष्ठाभास्करेऽधिकः पाठः) ॐ सरस्वत्यै नमः जिह्वायां न्य० १० ॐ इन्द्राय नमः दक्षिणभुजे न्य० ११ ॐ वलये नमः वामभुजे न्य० १२ ॐ प्रह्लादाय नमः दक्षिणस्तने न्य० १३ ॐ विश्वकर्मणे नमः वामस्तने न्य० १४ ॐ नारदाय नमः दक्षिणकुक्षौ न्य० १५ ॐ अनन्तादिभ्यो नमः वामाकुक्षौ न्य० १६ ॐ वरुणाय नमः हस्तयोर्न्य० १७ ॐ मित्राय नमः पादयोर्न्य० १८ ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः ऊर्वोर्न्य० १९ ॐ पितृभ्यो नमः जान्वोर्न्य० २० ॐ यक्षेभ्यो नमः जङ्घयोर्न्य० २१ ॐ राक्षसेभ्यो नमः गुल्फयोर्न्य० २२ ॐ पिशाचेभ्यो नमः पादयोर्न्य० २३ ॐ असुरेभ्यो नमः पादाङ्गुलिषु न्य० २४ ॐ विद्याधरेभ्यो नमः पार्ष्ण्योर्न्य० २५ ॐ ग्रहेभ्यो नमः पादतलयोर्न्य० २६ ॐ गुह्यकेभ्यो नमः गुह्ये न्य० २७ ॐ पूतनादिभ्यो नमः नखेषु

प्र०

३८९

न्य० २८ ॐगन्धर्वेभ्यो नमः ओष्ठयोर्न्य० २९ ॐकार्तिकेयाय नमः दक्षिणपार्श्वे न्य० ३० ॐ गणेशाय नमः वामपार्श्वे न्य० ३१ ॐमत्स्याय नमः मूर्ध्नि न्य० ३२ ॐकूर्माय नमः पादयोर्न्य० ३३ ॐनृसिंहाय नमः ललाटे न्य० ३४ ॐवराहाय नमः जङ्घयोर्न्य० ३५ ॐवामनाय नमः मुखे न्य० ३६ ॐपरशुरामाय नमः हृदये न्य० ३७ ॐरामाय नमः बाहुषु न्य० ३८ ॐ कृष्णाय नमः नाभ्यां न्य० ३९ ॐबोधाय नमः बुद्धौ न्य० ४० ॐकलङ्किने नमः जानुदेशे न्य० ४१ ॐकेशवाय नमः शिरसि न्य० ४२ ॐनारायणाय नमः मुखे न्य० ४३ ॐमाधवाय नमः ग्रीवायां न्य० ४४ ॐगोविन्दाय नमः बाह्वोर्न्य० ४५ ॐविष्णवे नमः हृदये न्य० ४६ ॐमधुसूदनाय नमः पृष्ठे न्य० ४७ ॐत्रिविक्रमाय नमः कट्यर्योर्न्य० ४८ ॐवामाय नमः जठरे न्य० ४९ ॐश्रीधराय नमः १ ॐहृषीकेशाय नमः २ जङ्घयोर्न्य० ५० ॐपद्मनाभाय नमः गुल्फयोर्न्य० ५१ ॐदामोदराय नमः पादयोर्न्य० ५२ इति देवन्यासो दशमः अयमेव "मूर्तिन्यासः" "देवयोनिन्यासः" इति चोच्यते ।

प्र०

३९०

एकादश: क्रतुन्यासः सर्वदेवसाधारणः—

ॐअश्वमेधाय नमः मूर्ध्नि न्य० १ ॐनरमेधाय नमः ललाटे न्य० २ ॐराजसूयाय नमः मुखे न्य० ३ ॐगोसवाय नमः कण्ठे न्य० ४ ॐद्वादशाहाय नमः हृदि न्य० ५ ॐअहीनेभ्यो नमः नाभौ न्य० ६ ॐसर्वजिद्भ्यो नमः दक्षिणकट्यां न्य० ७ ॐसर्वमेधाय नमः वामकट्यां न्य० ८ ॐअग्निष्टोमाय नमः लिङ्गे न्य० ९ ॐआतरात्राय नमः वृषणयोर्न्य० १० ॐआप्तोर्यामाय नमः ऊर्वोर्न्य० ११ ॐषोडशिने नमः जान्वोर्न्य० १२ ॐउक्थ्याय नमः दक्षिणजङ्घायां न्य० १३ ॐवाजपेयाय नमः वामजङ्घायां न्य० १४ ॐअत्यग्निष्टोमाय नमः दक्षिबाहौ न्य० १५ ॐचातुर्मास्याय नमः वामबाहौ न्य० १६ ॐसौत्रामणये नमः हस्तेषु न्य० १७ ॐपशिवष्टिभ्यो नमः अङ्गुलीषु न्य० १८ ॐदर्शपूर्णमासाभ्यां नमः नेत्रयोर्न्य० १९ ॐसर्वेष्टिभ्यो नमः रोमकूपेषु न्य० २० ॐस्वाहाकाराय नमः १ ॐवषट्काराय नमः २ स्तनयोर्न्य० २१ ॐपञ्चमहायज्ञेभ्यो ममः पादाङ्गुलीषु न्य० २२ ॐ आहवनीयाय नमः मुखे न्य० २३ ॐदक्षिणाग्नये नमः हृदये न्य० २४ ॐगार्हपत्याय नमः नाभौ न्य० २५ ॐवेद्यै नमः उदरे न्य० २६ ॐप्रवर्ग्याय नमः भूषणेषु

प्र०
३९१

न्य० २७ ॐसवनेभ्यो नमः पादयोर्न्य० २८ ॐइध्मेयो नमः बाहुषु न्य० २९ ॐदर्भेभ्यो नमः केशेषु न्य० ३० इति क्रतुन्यास एकादशः।

प्र०

द्वादशो गुणन्यासः सर्वदेवसाधारणः--

ॐधर्माय नमः मूर्ध्नि न्य० १ ॐज्ञानाय नमः हृदि न्य० २ ॐवैराग्याय नमः गुह्ये न्य० ३ ॐऐश्वर्याय नमः पादयोर्न्य० ४ इति गुणन्यासो द्वादशः।

३९२

त्रयोदश आयुधन्यासः विष्णुप्रतिष्ठामात्रविषयः--

ॐखड्गाय नमः शिरसि न्य० १ ॐशार्ङ्गाय नमः मस्तके न्य० २ ॐमुसलाय नमः दक्षिणभुजे न्य० ३ ॐहलाय नमः वामभुजे न्य० ४ चक्राय नमः नाभिजठरपृष्ठेषु न्य० ५ ॐशङ्खाय नमः लिङ्गे वृषणदेशे च न्य० ६ ॐगदायै० नमः जङ्घयोर्जानुनोश्च न्य० ७ ॐपद्माय नमः गुल्फयोः पादयोश्च न्य० ८ इत्यायुधायन्यासस्त्रयोदशः।

त्रयोदश आयुधन्यासः शिवप्रतिष्ठामात्रविषयः--

ॐ वज्राय नमः शिरसि न्य० १ ॐ शक्तये नमः मस्तके न्य० २ ॐ दण्डाय नमः

दक्षिणभुजे० न्य०३ ॐखड्गाय नमः वामभुजे न्य०४ पाशाय नमः जठर-नाभि-पृष्ठदेशेषु न्य०५ ॐअङ्कुशाय नमः लिङ्गे वृषणयोश्च न्य० ६ ॐत्रिशूलाय नमः जान्वोर्न्य० ७ ॐध्वजाय नमः जङ्घयोर्न्य० ८ ॐ चक्राय नमः गुल्फयोर्न्य० ९ ॐ पद्माय नमः पादयोर्न्य० १० इति शिवस्यायुधन्यासस्त्रयोदशः ।

अथ चतुर्दशः शक्तिन्यासः सर्वदेवसाधारणः—

ॐलक्ष्म्यै नमः ललाटे न्य० १ ॐसरस्वत्यै नमः मुखे न्य० २ ॐरत्यै नमः गुह्ये न्य० ३ ॐप्रीत्यै नमः कण्ठे न्य० ४ ॐकीर्त्यै नमः दिक्षु न्य० ५ ॐशान्त्यै नमः हृदि न्य० ६ ॐतुष्ट्यै नमः जठरे न्य० ७ ॐपुष्ट्यै नमः सर्वाङ्गे न्य० ८ इति शक्तिन्यासश्चतुर्दशः ।

अथ पञ्चदशोऽङ्गमन्त्रन्यासः विष्णुप्रतिष्ठामात्रविषयः—

ॐहृदयाय नमः हृदये न्य० १ ॐशिरसे स्वाहा शिरसि न्य० २ ॐशिखायै वषट् शिखायां न्य० ३ ॐकवचाय हुम् सर्वाङ्गेषु न्य० ४ ॐनेत्रत्रयाय वौषट् नेत्रयोर्न्य० ५ ॐअस्त्राय फट् करयोर्न्य० ६ ॐ नमः हृदये न्य० ७ ॐ नं नमः शिरसि न्य० ८ ॐ भगवते नमः शिखायां

प्र०

३१४

न्य० ६ ॐवासुदेवाय नमः कवचे न्य० १० ॐनमो भगवते वासुदेवाय अस्त्रं न्य० ११ ॐ श्रीवत्साय नमः दक्षिणवामस्तनयोर्न्य० १२ ॐकौस्तुभाय नमः उरसि न्य० १३ ॐवनमालायै नमः कण्ठे न्य० १४ ॐनमः पादयोर्न्य० १५ ॐनं नमः जानुनोर्न्य० १६ ॐमों नमः गुह्ये न्य० १७ ॐभं नमः नाभ्यां न्य० १८ ॐगं नमः हृदये न्य० १९ ॐवं नमः कण्ठे न्य० २० ॐतें नमः मुखे न्य० २१ ॐवां नमः नेत्रयोर्न्य० २२ ॐसुं नमः भाले न्य० २३ ॐदें नमः मूर्ध्नि न्य० २४ ॐवां नमः दक्षिणपार्श्वे न्य० २५ ॐयं नमः वामपार्श्वे न्य० २६ इत्यङ्गमन्त्रन्यासः पञ्चदशो विष्णोरेव । एवमेव तत्तद्देवताया अङ्गमन्त्रन्यासकल्पना कार्या ।

अथ मन्त्रन्यासः सर्वदेवसाधारणः पञ्चदशः—

ॐअग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् ।। होतारंरत्नधातमम् ।। पादयोर्न्य० ॐइषेत्वोर्ज्जेत्त्वावायवस्थदेवोवः सवितापार्पयतुश्रेष्ठतमायकर्मणऽआप्यायध्वमघ्न्याऽइन्द्रायभागंप्रजावतीरनमीवाऽअयक्ष्मामा स्तेनईशतमाघशंसो ध्रुवाऽअस्मिन्गोपतौस्यातबह्वीर्यजमानस्यपशून्पाहि ।। गुल्फयोर्न्य० २ ॐअग्नआयाहिवीतयेगृणानोहव्यदातये ।। निहोतासत्सिबर्हिषि ।। जङ्घयोर्न्य० ३ ॐ

प्र०

३९४

शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये । शंय्योरभिस्रवन्तुनः ॥ जान्वोर्न्यसामि ४ ॐएकाचमे० ऊर्वोर्न्य० ५ ॐस्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनः पूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥ जठरे न्य० ६ ॐदीर्घायुस्तऽओषधेखनितायस्मै चत्वाखनाम्यहम् ॥ अथोत्वन्दीर्घायुर्भूत्वाशतवल्शाविरोहतात् ॥ हृदये न्य० ७ ॐविश्वतश्चक्षु० कण्ठे न्य० ८ ॐत्रातारमिन्द्र० वक्त्रे न्य० ९ ॐत्र्यम्बकं यजा० स्तनयोनेत्रयोश्च न्य० १० ॐमूर्द्धानं दिवो० मूर्ध्न न्य० इति साधारणो मन्त्रन्यासः । अयं वैकल्पिक इति त्रिविक्रमः ।

अथ नारायणमूर्तौ द्वादशाक्षरमन्त्रेण न्यास पञ्चदश—

ॐकें केशवाय नमः शिरसि न्य० १ ॐनं नारायणाय नमः मुखे न्य०२ ॐमों माधवाय नमः ग्रीवायां न्य० ३ ॐभं गोविन्दाय नमः कण्ठे न्य० ४ ॐगं विष्णवे नमः पृष्ठे न्य० ५ ॐवं मधुसूदनाय नमः कुक्षौ न्य० ६ ॐतें त्रिविक्रमाय नमः कटिदेशे न्य० ७ ॐवां वामनाय नमः जङ्घयोर्न्य० ८ ॐसुं श्रीधराय नमः वामगुल्फे न्य० ९ ॐदें हृषीकेशाय नमः दक्षिणगुल्फे न्य० १० ॐवां पद्मनाभाय नमः वामपादे न्य० ११ ॐ ं दामोराय नमः दक्षिणपादे न्य० १२ इति द्वादशाक्षरमन्त्रन्यासः विष्णोरेव ।

अथ नारायणमूर्तौ विष्णवष्टाङ्गमन्त्रन्यास पञ्चदशः—

नारायणमूर्तिमें द्वादशाक्षरमन्त्रसे न्यास करे। फिर अष्टाङ्गमन्त्रन्यास करे। पुरुषसूक्तसे नारायण मूर्तिमें न्यास करे। तदनन्तर उत्तरनारायणन्यास करे।

ॐहुं हृदयाय नमः हृदये न्य० १ ॐविष्णवे नमः शिरसि न्य० २ ॐब्रह्मणे नमः शिखायां न्य० ३ ॐध्रुवाय नमः कवचे न्य० ४ ॐचक्रिणे नमः १ अस्त्रायफट् २ अस्त्रहस्तयोर्न्य० ५ ॐ नमः शम्भवाय गायत्रीं दक्षिणनेत्रे न्य० ६ ॐविजयाय नमः सावित्रीं वामनेत्रे न्य० ७ ॐचक्रशूलाय नमः पिङ्गलास्त्रं दिक्षु न्य० ८ इत्यष्टाङ्गमन्त्रन्यासो विष्णोरेव।

अथ नारायणमूर्तौ पुरुषसूक्तन्यास पञ्चदश—

ॐसहस्रशी० पादन्योर्न्य० १ ॐपुरुषएव० जङ्घयोर्न्य० २ ॐएतावानस्य० जान्वोर्न्य० ३ ॐत्रिपादूर्ध्व० ऊर्वोर्न्य० ४ ॐततो विराट्० न्य० ५ ॐतस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सं० कट्योर्न्य० ६ ॐतस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सा० नाभौ न्य० ७ ॐतस्मादश्वाऽ अ० हृदि न्य० ८ ॐ तं यज्ञं ब० स्तनयोर्न्य० ९ ॐयत्पुरुषं न्य० बाह्वोर्न्य० १० ॐब्राह्मणोऽस्य० मुखे न्य० ११ ॐचन्द्र-

प्र० ३९६

फिर गायत्रीन्यास सूर्य के लिए करे। देवीके लिए निवृत्तिन्यास करे। तदनन्तर सर्वसाधारण जीवन्यास करे।

मा मन० चक्षुषोर्न्या० १२ ॐनाभ्याऽ आसी० कर्णयोर्न्या० १३ ॐयत्पुरुषेण० भ्रुवोर्न्या० १४ ॐसप्तास्यास० भाले न्य० १५ ॐयज्ञेन यज्ञ० शिरसि न्य० १६ इति पुरुषसूक्तन्यासो विष्णोरेव पञ्चदश।

अथोत्तरनारायणन्यासो विष्णोरेव—

ॐअद्भ्यः संभृ० हृदये न्य० १ ॐवेदाहमे तं० शिरसि न्य० २ ॐप्रजापतिश्चर० शिखायां न्य० ३ ॐ ॐयो देवेभ्यऽआ० कवचे न्य० ४ ॐ रुचं ब्राह्मं० नेत्रयोर्न्या० ५ ॐश्रीश्च ते ल० अस्त्रायफट् न्य० ६ इत्युत्तरनारायणन्यासः।

अथ पञ्चदशो गायत्रीन्यासः सूर्यस्य। सूर्यमूर्तेर्गायत्रीन्यासः कार्यो नान्यदेवस्य—

ॐतकारं पादाङ्गुष्ठयोर्न्या० १ ॐत्सकारं गुल्फयोर्न्या० २ ॐविकारं जङ्घयोर्न्या० ३ ॐ तुःकारं जानुनोर्न्या० ४ ॐवकारं ऊर्वोर्न्या० ५ ॐरेकारं गुह्ये न्य० ६ ॐणिकारं वृषणयोर्न्या०

शिवके लिये ही ब्रह्मन्यास करे। तत्पुरुषकलाचतुष्टयन्यास, अघोरकलान्यास, वामदेव कलाष्टकन्यास करे। फिर

हृदयादिन्यास करे। नृसिंहमूर्तिमें तो हृदयादिन्यास नहीं होता है। किन्तु 'ॐनृसिंह' इसीसे ही छ आवृत्ति कर षडंगन्यास करे। इसप्रकार न्यासविधिकार निद्राका आवाहन तथा बलिकर सर्वतोभद्रादिपीठमें सुवर्णप्रतिमाओं में उन

प्र०

७ ॐयंकारं कटिदेशे न्य० ८ ॐभकारं नाभौ न्य० ९ ॐगोकारं जठरे न्य० १० ॐदेकारं स्तनयोर्न्य० ११ ॐवकारं हृदये न्य० १२ ॐस्यकारं कण्ठे न्य० १३ ॐधीकारं वदने न्य० १४ ॐमकारं तालुदेशे न्य० १५ ॐहिकारं नासिकाग्रे न्य० १६ ॐधिकारं चक्षुषोर्न्य० १७ ॐयोकारं भ्रूमध्ये न्य० १८ ॐयोकारं ललाटे न्य० १९ ॐनःकारं पूर्वशिरसि न्य० २० ॐप्रकारं दक्षिणशिरसि न्य० २१ ॐवोकारं पश्चिमशिरसि न्य० २२ ॐदकारं उत्तरशिरसि न्य० २३ ॐयाकारं मूर्ध्नि न्य० २४ ॐतकारं सर्वत्र न्य० २५ ॐतत्सवितुः हृदये न्य० २६ ॐवरेण्यम् शिरसि न्य० २७ ॐभर्गोदेवस्य शिखायां न्य० २८ ॐधीमहि कवचे न्य० २९ ॐधियो यो नः नेत्रयोर्न्य० ३० ॐ प्रचोदयात् अस्त्रे न्य० ३१ इति गायत्रीन्यासः सूर्यमात्र-विषयः पञ्चदश।

उनके देवमन्त्रों से आवाहनकर पूजन करे।

देवीमूर्त्तौ षोडशन्यासान्तरं निवृत्तिन्यासः कार्यः--

ॐ ह्रीं अं निवृत्त्यै नमः शिरसि न्य० १ ॐ ह्रीं आँ प्रतिष्ठायै न० मुखे न्य० २ ॐ ह्रीं इं विद्यायै न० दक्षिणनेत्रे न्य० ३ ॐ ह्रीं ईं शान्त्यै न० वामनेत्रे न्य ४ ॐ ह्रीं उं धुन्धिकायै न० दक्षिणश्रोत्रे न्य० ५ ॐ ह्रीं ऊँ दीपिकायै न० वामश्रोत्रे न्य० ६ ॐ ह्रीं ऋं रेचिकायै न० दक्षिण-नासापुटे न्य० ७ ॐ ह्रीं ॠं मोचिकायै न० वामनासापुटे न्य० ८ ॐ ह्रीं लृं परायै न० दक्ष-कपोले न्य० ९ ॐ ह्रीं लॄं सूक्ष्मायै न० वामकपोले न्य० १० ॐ ह्रीं एं सूक्ष्मामृतायै न० ऊर्ध्व-दन्तपङ्क्तौ न्य० ११ ॐ ह्रीं ऐं ज्ञानामृतायै न० अधोदन्तपङ्क्तौ न्य० १२ ॐ ह्रीं ओं सावित्र्यै न० ऊर्ध्वोष्ठे न्य० १३ ॐ ह्रीं औं व्यापिन्यै न० अधरोष्ठे न्य० १४ ॐ ह्रीं अं सुरूपायै न० जिह्वायां न्य० १५ ॐ ह्रीं अः अनन्तायै न० कण्ठे न्य० १६ ॐ ह्रीं कं सृष्ट्यै न० दक्षबाहुमूले न्य० १७ ॐ ह्रीं खं ऋध्यै न० दक्षकूर्परे न्य० १८ ॐ ह्रीं गं स्मृत्यै न० दक्षमणिवन्धे न्य० १९ ॐ ह्रीं घं मेघायै न० दशकराङ्गुलिमूलेषु न्य० २० ॐ ह्रीं ङं कान्त्यै न० दशाङ्गुल्यग्रेषु न्य० २१ ॐ ह्रीं चं लक्ष्म्यै न० वामबाहुमूले न्य० २२ ॐ ह्रीं छं द्युत्यै न० वामकूर्परे न्य० २३

प्र०
३९९

प्र०

ॐ ह्रीं जं स्थिरायै न० वाममणिबन्धे न्य० २४ ॐ ह्रीं झं स्थियायै न० वामाङ्गुलिमूले न्य० २५ ॐ ह्रीं ञं सिध्यै न० वामाङ्गुल्यग्रेषु न्य० २६ ॐ ह्रीं टं जरायै न० दक्षपादमूले न्य० २७ ॐ ह्रीं ठं पालिन्यै न० दक्षजानुनि न्य० २८ ॐ ह्रीं डं शान्त्यै न० दक्षगुल्फे न्य० २९ ॐ ह्रीं ढं ऐश्वर्यै न० दक्षपादाङ्गुलीषु न्य० ३० ॐ ह्रीं णं रत्यै न० वामपादमूले न्य० ३१ ॐ ह्रीं तं कामिन्यै न० दशपादमूले न्य० ३२ ॐ ह्रीं थं रदायै न०वामजानुनि न्य० ३३ ॐ ह्रीं दं ह्रादिन्यै न० वाम-गुल्फे न्य० ३४ ॐ ह्रीं धं प्रीत्यै न० वामपादाङ्गुलिमूले न्य० ३५ ॐ ह्रीं नं दीर्घायै न० वाम-पादाङ्गुल्यग्रेषु न्य० ३६ ॐ ह्रीं पं तीक्ष्णायै न० दक्षिणकुक्षौ न्य० ३७ ॐ ह्रीं फं सुप्त्यै न० वाम-कुक्षौ न्य० ३८ ॐ ह्रीं बं अभयायै न० पृष्ठे न्य० ३९ ॐ ह्रीं भं निद्रायै न० नाभौ न्य० ४० ॐ ह्रीं म मात्रे न० उदरे न्य० ४१ ॐ ह्रीं यं शुद्धायै न० हृदि न्य० ४२ ॐ ह्रीं रं क्रोधिन्यै न० कण्ठे न्य० ४३ ॐ ह्रीं लं कृपायै न० ककुदि न्य० ४४ ॐ ह्रीं वं उत्कायै न० स्कन्धयोर्न्य० ४५ ॐ ह्रीं शं मृत्यवे न० दक्षिणकरे न्य० ४६ ॐ ह्रीं षं पीतायै न० वामकरे न्य० ४७ ॐ ह्रीं सं श्वेतायै न० दक्षिणपादे न्य० ४८ ॐ ह्रीं हं अरुणायै न० वामपादे न्य० ४९ ॐ ह्रीं त्रं असितायै

४००

न० मूर्द्धादिपादान्तं न्य० ५० ॐ ह्रीं क्षं सर्वसिद्धिगौर्यै न० पादादिमूर्द्धान्तं न्य० । ५१ इति तृतीयो निर्वृत्तिन्यासो देवीमूर्तौ । निर्वृत्तिन्यासानन्तरं वशिन्यासो देवीमूर्तौ कार्यः । तद्यथा—

प्र०

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं लृं ॡं एं ऐं ओं औं अं अः ब्लूं वसिनीवाग्देवतायै नमः ब्रह्मरन्ध्रे न्य० १ ॐ कं खं गं घं ङं क्लीं ह्रीं कामेश्वरीवाग्देवतायैश्वर्यै न० ललाटे न्य० ॐ चं छं जं झं ञं क्ली मोदिनीवाग्देवतायै न० भ्रूमध्ये न्य० ३ ॐ टं ठं डं ढं णं ब्ल्यूं विमलावाग्देवतायै न० कण्ठे न्य० ४ ॐ तं थं दं धं नं ज्म्रीं अरुणावाग्देवतायै न० हृदि न्य० ५ ॐ पं फं बं भं मं ह्स्लब्ल्यूं जयनीवाग्देवतायै न० नाभौ न्य० ६ ॐ ं रं लं वं हस्ल्ब्यूं सर्वेश्वरीवाग्देवतायै न० आधारे न्य० ७ ॐ शं षं सं हं क्षं क्ष्म्रीं कौलिनीवाग्देवतायै न० सर्वाङ्गे न्य० इति वशिन्यादिन्यासः ।

४०१

स यथा—स्वहृत्पद्मात् ऐश्वर्यं तेजःपुञ्जं वामनाड्या निःसार्य ब्राह्मरन्ध्रेण प्रतिमाया बुद्धिः कर्मेन्द्रियाणि मनःसहितानि यथास्थानं हृत्पद्मे प्रणवेन पुरुषं न्यसेत् । ॐ मं जीवात्मने न० ॐ भं प्राणात्मने न० देवशरीरे व्यापकं न्य० १ ॐ बं बुद्ध्यात्मने ॐ फं अहङ्कारात्मने० ॐ पं

मन आत्मने न० हृदि न्य० २ ॐनं शब्दतन्मात्रात्मने न० शिरसि न्य० ३ ॐधं स्पर्शतन्मात्रात्मने न० मुखे न्य० ४ ॐदं रूपतन्मात्रात्मने न० हृदये न्य० ५ ॐथं रसतन्मात्रात्मने न० हस्तयोर्न्य ६ ॐतं गन्धतन्मात्रात्मने न० पादयोर्न्य० ७ ॐणं श्रोत्रात्मने न० श्रोत्रयोर्न्य० ८ ॐढं त्वगात्मने न० त्वचि न्य० ९ ॐडं चक्षुरात्मने न० नेत्रयोर्न्य० १० ॐठं जिह्वात्मने न० जिह्वायां न्य० ११ ॐटं घ्राणात्मने न० घ्राणे न्य १२ ॐञं वागात्मने न० वाचि न्य० १३ ॐझं पाण्यात्मने न० पाण्योर्न्य० १४ ॐजं पदात्मने न० पादयोर्य० १५ ॐछं पाय्वात्मने न० पायौ न्य० १६ ॐचं उपस्थात्मने न० उपस्थे न्य० १७ ॐङं पृथिव्यात्मने न० पादयोर्न्य० १८ ॐघं अबात्मने न० बस्तौ न्य० १९ ॐगं तेजआत्मने न० हृदि न्य० ॐखं प्राणात्मने न० घ्राणे न्य० २१ ॐकं आकाशात्मने न० शिरसि न्य० २२ ॐषं सूर्यात्मने न० हृत्पुण्डरीकमध्ये न्य० २३ ॐ ॐसं हृत्पुण्डरीकमध्ये न्य० २४ ॐवं वह्न्यात्मने न० सामात्मने न० हृत्पुण्डरीकमध्ये न्य० २५ ततः अर्चाबीजं स्वाभिमतं मूर्त्यास्वमन्त्रेण संयोज्य, "विशेषबीजाद्यनुपलब्धौ तु देवतानाम्नः आद्यमक्षरं रसानुस्वारं चतुर्थ्यन्तं तत्तद्देवतानाम्ना संयोज्य" तद्यथा—

ॐशिं शिवात्मने नमः १ ॐविं विष्णवात्मने नमः २ ॐरां रामात्मने नमः ३ इत्यादिप्रकाण देवं भावयित्वा—२६ ॐयं सर्वात्मने नमः—इति सर्वसाक्षिणं भावयित्वा २७ ॐगं सर्वात्मने न० इति देवं सर्वतोमुखं भावयित्वा २८ ॐवः अनुग्राहकात्मने न० इति अनुग्राहकं भावयित्वा २९ ॐयं सर्वभूतात्मने न० इति सर्वभूतकारणं ध्यात्वा ३० ॐलं सर्वसंहारात्मने न० इति सर्वसंहारात्मकं भावयित्वा ३१ ॐकोपात्मने न० इति सर्वक्षयकारं ध्यात्वा—३२ तत्त्वत्रयं न्यसेत्—ॐआत्मतत्वाय नमः १ ॐआत्मतत्वाधिपतये ब्रह्मणे नमः २ पादयोर्न्य० ३३ ॐ विद्यातत्वाय न० १ ॐ विद्यातत्वाधिपतये विष्णवे न० २ हृदये न्य० ३४ ॐशिवतत्वाय न० १ ॐशिवतत्वाधिपतये रुद्राय न० २ शिरसि न्य० ३५ इति जीवन्यासः षोडशः सर्वदेवसाधारणः। एते षोडश न्यासाः सर्वदेवसाधारणाः इति प्रतिष्ठासरणौ।

शिवस्य पञ्चदशब्रह्मन्यासः, नान्यदेवस्य—

ॐईशानाय न० अङ्गुष्ठयोर्न्य० १ ॐतत्पुरुषाय न० तर्जन्योर्न्य० २ ॐअघोरेभ्यो न० मध्यमयोर्न्य० ३ ॐवामदेवाय न० अनामिकयोर्न्य० ४ ॐसद्योजाताय न० कनिष्ठिकयोर्न्य० ५

प्र०
४०३

ॐसद्योजाताय न० हृदि न्य०६ ॐवामदेवाय न० शिरसि न्य० ७ ॐअघोराय न० शिखायां न्य० ८ ॐतत्पुरुषाय न० कवचे न्य० ९ ॐईशानाय न० अस्त्रे न्य० १० ॐहृदयाय न० कनिष्ठिकयोर्न्य० ११ ॐशिरसे स्वाहा अनामिकयोर्न्य० १२ ॐशिखायै वषट् मध्यमयोर्न्य० १३ ॐकवचाय हुँ तर्जन्योर्न्य० १४ ॐअस्त्राय फट् अङ्गुष्ठयोर्न्य० १५ एवं विन्यस्य, परेण तेजसा संयोज्य, कवचेनावगुण्ठ्य, सर्वकर्मसु नियोजयेत्। आचमनं सर्वत्र। इत्थं देवस्य करन्यासं कृत्वा "लिङ्गमुद्रां बध्वा" ॐईशानः सर्व० सदाशिवोऽम् इति मन्त्रेण ईशान (नाम्नीं) मुष्टीं बध्नीयात्। ॐ ईशानः स० शिवोऽम् ईशानं मूर्ध्नि न्य० अङ्गुल्यग्रैः (रुद्रमुद्रया) अयं न्यासः कार्यः १ ॐ तत्पुरुषाय वि० तत्पुरुषं मुखे न्य० तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन २ ॐअघोरेभ्योऽथ० रुद्ररूपेभ्यः। अघोरं हृदि न्य० मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन ३ ॐ वामदेवाय नमोज्ये० मनोन्मनाय नमः। वासुदेवं गुह्ये न्य० अङ्गुष्ठानामिकायोगेन ४ ॐ सद्योजातं प्रप०---सद्योजातं पादादारभ्य मस्तकान्तं न्य० कनिष्ठाङ्गुष्ठयोगेन ५। इति पञ्चदश ब्रह्मन्यासः शिवस्य मन्त्रन्यासः पञ्चदशः।

अथ शिवस्य "कलान्यासः" कलाश्चाष्टत्रिंशत् । तत्रादौ ईशान्याद्याः पञ्च शिवमात्रविषयोऽयम्—

"ॐईशानः सर्वविद्यानाम् नमः" ईशानीं देवस्य उपरि मूर्ध्नि न्य० १ "ॐईश्वरः सर्वभूतानाम् नमः" अभयदां देवस्य पूर्वमूर्ध्नि न्य० २ "ॐ ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोऽधिपतिर्ब्रह्मा नमः" इष्टदां कलां देवस्य दक्षिणमूर्ध्नि न्य० ३ "ॐ शिवो मे अस्तु नमः" मरीचीं कलां देवस्य मूर्ध्नि न्य० ४ "ॐ सदा शिवोऽस्मि नमः" ज्वालिनीं पश्चिमवक्त्रे न्य० ५ इति ईशानपञ्चकलान्यासः पञ्चदशः ।

प्र० ४०५

अथ तत्पुरुषकलाचतुष्टयन्यासः । कलाश्च शान्त्याद्याश्चतस्रः ।

"ॐतत्पुरुषाय विद्महे नमः" पूर्ववक्त्रे शान्तिं न्य० १ "ॐमहादेवाय धीमहि नमः" दक्षिणवक्त्रे विद्यां न्य० २ "ॐतन्नो रुद्रो नमः" उत्तरवक्त्रे प्रतिष्ठां न्य० ३ "ॐप्रचोदयात् नमः" पश्चिमवक्त्रे धृतिं न्य० ४ इति तत्पुरुषकलाचतुष्टयन्यासः शिवमात्रविषयः पञ्चदशः ।

प्र० ४०५

अथ अघोरकलान्यासः—

ॐअघोरेभ्यो नमः तमां हृदये न्य० १ ॐथघोरेभ्यो न० जरां उरसि न्य० २ ॐघोरेभ्यो

न० सत्वां स्कन्धयोर्न्य० ३ ॐघोरतरेभ्यो न० निद्रां नाभौ न्य० ४ ॐसर्वेभ्यो न० सर्वव्याधिं कुक्षौ न्य० ५ ॐसर्वशर्वेभ्यो न० मृत्युं पृष्ठे न्य० ६ ॐनमस्ते न० क्षुधां वक्षसि न्य० ७ ॐरुद्ररूपेभ्यो न० तृषां उरसि न्य० ८ इत्यष्टावघोरकला: शिवमात्रविषया:। अयं न्यासोऽपि पञ्चदश:।

अथ वामदेव:-त्रयोदशकलान्यास:—

ॐवामदेवाय न० जरां गुह्ये न्य० १ ॐज्येष्ठाय न० रक्षां लिङ्गे न्य० २ ॐश्रेष्ठाय न० रतिं दक्षिणोरौ न्य० ३ ॐरुद्राय न० पालिनीं वामोरौ न्य० ४ ॐकालाय न० कलां दक्षिणजानौ न्य० ५ ॐकलविकरणाय न० संजीवनीं वामजानौ न्य० ६ ॐबलविकरणाय न० धात्रीं दक्षिणजङ्घायां न्य० ७ ॐबलाय न० वृद्धिं वामजङ्घायां न्य० ८ ॐबलाय नम: छायां दक्षिणस्फिचि न्य० ९ ॐप्रमथनाय न० क्रियां वामस्फिचि न्य० १० ॐसर्वभूतदमनाय न० भ्रामणीं कटिदेशे न्य० ११ ॐमनो नम: शोषणीं दक्षिणपार्श्वे न्य० १२ ॐउन्मनाय न० ज्वरां वामपार्श्वे

न्य० १२ इति त्रयोदश-कलान्यासः पञ्चदश एव। मन्त्रसम्बद्धाः सर्वे न्यासाः पञ्चदशान्तर्गता बोध्याः।

सद्योजात कलाष्टकन्यासः पञ्चदशः–

ॐसद्योजातं प्रपद्यामि नमः सिद्धिं दक्षिणपादे न्य० १ ॐसद्योजाताय वै नमो नमः ऋद्धिं वामपादे न्य० २ ॐभवे न० दितिं दक्षिणापाणौ न्य० ३ ॐअभवे न० लक्ष्मीं वामपाणौ न्य० ४ नातिभवे न० मेधां नासायां न्य० ५ ॐभवस्व मां न० कान्तिं शिरसि न्य० ६ ॐभव नमः स्वधां दक्षिणबाहौ न्य० ७ ॐउद्भवाय न० प्रभां वामबाहौ न्य० ८ इति सद्योजातकलाष्टकं शैवे।

ततः "तमाद्याः कला अत्र विशन्तु" इति मन्त्रेण अवशिष्टकलान्तरन्यासभावनां कुर्यात्। इत्थं न्यासकरणेन विद्यादेवं हंसं भावयित्वा 'हंस हंस' इति मन्त्रेण हृदयादिन्यासं कुर्यात्। तद्यथा–"ॐहंसां हृदयाय नमः १ ॐ हंसीं शिरसे स्वाहा २ ॐ हंसूं शिखायै वषट् ३ ॐहंसैं कवचाय हुम्" ४ ॐहंसः अस्त्राय फट् ५ अयं हृदयादिन्यासः सर्वदेवसाधारणः (पञ्चदशः) मन्त्रन्यासत्वात्।

पृ० ४०८

नृसिंहमूर्तौ तु–नायं हृदयादिन्यासः, किन्तु "ॐ नृसिंह उग्ररूप ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल स्वाहा" इति मन्त्रेण षडावृत्तेन षडङ्गन्यासाः कार्याः । न्यासानन्तरं बलिञ्च नृसिंहाय देय इति विशेषः । "नारसिंही यदाथाप्या अधिवास्य निशागमे । कृत्रिमं वाऽथ साक्षाद्वा पशुं दत्वा बलिं हरेत् ॥ इति वचनात् न्यासविधिं कृत्वा निद्राकलशे निद्राकलशे निद्रामावाहयेत् । तद्यथा–

ॐ परमेष्ठिनं नमस्कृत्य-निद्रामावाहयाम्यहम् । मोहिनीं सर्वभूतानां मनोविभ्रमकारिणीम् १ विरूपाक्षो शिवे शिवे आगच्छ त्वं तु मोहिनी । वासुदेवहिते कृष्णे कृष्णाम्बरविभूषिते २ आगच्छ सहसाऽजस्त्र सुप्तसंसारमोहिनी । सुषुप्तं संहरे देवि कुमार्यैकान्तमानसे ३ श्रमविश्वासबाह्यंबु आगच्छ भुवनेश्वरि । तमःसत्त्वरजायुक्ते आगच्छवरवाहिनि ४ मनोबुद्धिरहङ्कारासंहारस्त्वं सरस्वति । शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च पञ्चमः ५ आगच्छ गृह्ण संक्षिप्य मोहपाशनि-बन्धिनि । भवस्योपत्तिहेतुस्त्वं यावदाभूतसंप्लवम् ६ भुवः कल्पान्तसन्ध्यां वससे त्वं चराचरे । भोगिशय्याप्रसुप्तस्य वासुदेवस्य शासने ७ त्वं प्रतिष्ठाऽसि वै देवि मुनियोगिसमुत्थिते ।

पृ० ४०८

पितृदेवमनुष्याणां सयक्षोरगराक्षसाम् ८ पशुपक्षिमृगाणां च योगमायाविवर्द्धिनि । वससे सर्व-
सत्त्वेषु मातेव हितकारिणी ९ एहि सावित्रि मूर्तिस्त्वं चक्षुर्भ्यां स्थानगोचरे । विश नासापुटे देवि
कण्ठे चोत्कण्ठिता विश १० प्रतिभावय मां सर्वं मातृवद् देवि सुन्दरि । इदमर्घ्यं मया दत्तं पूजेयं
प्रतिगृह्यताम् ११ इति । ततः ॐ उपप्रागात्परमंयत्सधस्थमर्व्वां२ ऽअच्छापितरम्मातरञ्च ।
अद्यादेवाञ्जुष्टतमोहिगम्याऽअथाशास्तेदाशुषेवार्य्याणि ॥ इति मन्त्रेण "निद्रायै नमः" इति निद्रां
पूजयेत् । ततः—ॐत्रातारमिन्द्रम० इत्यादिमन्त्रैर्मण्डपाद्बहिः पूर्वादिदिक्षु लोकपालेभ्यो बलि
दत्त्वा ॐसमख्ये देव्या० इति मन्त्रेण "मातृभ्यो नमः" इति बलिं समर्पयामि । ततः—"ॐ
नहिस्पशम०" इति मन्त्रेण क्षेत्रपालाय नमः बलिं समर्पयामि इति बलिं दद्यात् आचामेच्च ।
ततो यावन्तः स्थाप्यदेवाः तान् सर्वान् शय्यातः प्राञ्चां सर्वतोभद्रे सुवर्णादिप्रतिमासु तत्तद्देव-
मन्त्रेण आवाह्य पूजयेत् ।

प्र०
४०६
३५
प्र०
४०१

अथ विष्णुद्वादशारचक्रम्
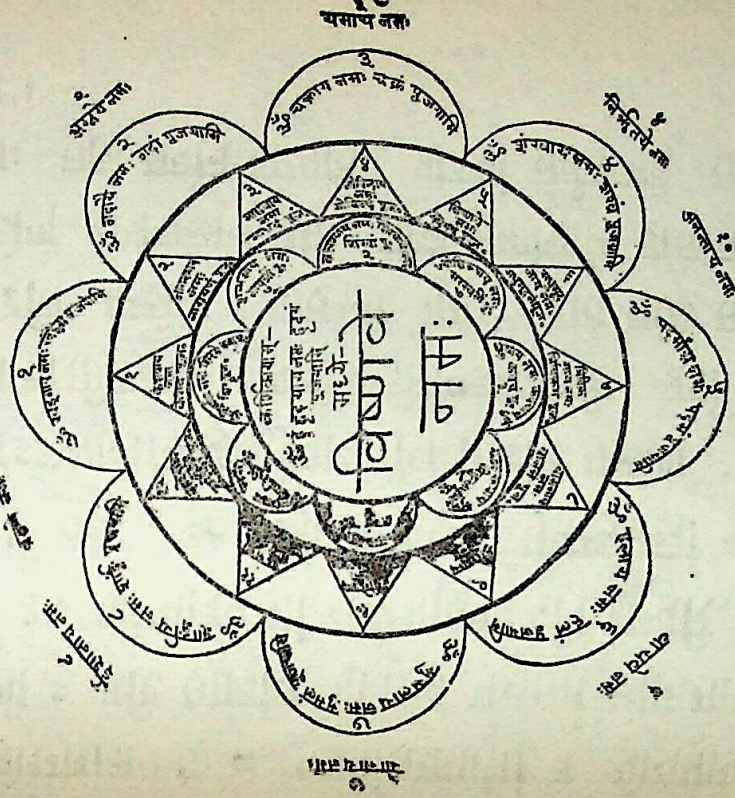
(विष्णु प्रतिष्ठायाम्)

इस चक्रमें रंग हरा, लाल, पीला आदि अपनी इच्छासे भरे ऐसा शास्त्रीय मत है।

अथ विष्णुमूर्तौ तु विशेषः । तद्यथा—वस्त्रताम्रस्थाल्यादौ द्वादशारं चक्रं निर्माय तदन्तर्गते ऽष्टदलपद्मे मध्ये "ॐ इदं विष्णुः" इति सुवर्णप्रतिमामयं विष्णुं स्थापयित्वाऽऽवाह्य सम्पूज्य वक्ष्यमाणदेवानावाहयेत्—कर्णिकायाम्—ॐ हुं हृदयाय नमः हृदयं पू० १ पूर्वपत्रे—ॐ विष्णवे नमः शिरसे स्वा० शिरः पू० २ दक्षिणपत्रे—ॐ ब्रह्मण्याय नमः शिखायै वषट् शिखां पू० ३ पश्चिमपत्रे—ॐ ध्रुवाय न० कवचाय हुं कवचं पू० ४ उत्तरपत्रे—ॐ चक्रिणे न० अस्त्राय फट् अस्त्रं पू० ५ आग्नेयदले—ॐ शम्भवाय न० गायत्रीं पू० ६ ईशानदले—ॐ विजयाय न० सावित्रीं पू० ७ नैर्ऋत्यदले—ॐ ज्योतीरूपाय न० सरस्वतीं पू० ८ वायव्यदले—ॐ चक्रिरूपाय न० पिङ्गलास्त्रं पू० ९ इति विष्णुदेवे गर्भावरणम् । इदमेव प्रथमावरणमिति चोच्यते ।

अथ विष्णमूर्तौ द्वितीयावरणं द्वादशु आरासु (वैष्णवे) पूर्वादिक्रमेण—

ॐ केशवाय न० केशवं पू० १ ॐ नारायणाय न० नारायणं० पू० २ ॐ माधवाय न०

प्र० ४११

माधवं पू० ३ ॐगोविन्दाय न० गोविन्दं पू० ४ ॐविष्णवे न० विष्णुं पू० ५ ॐमधुसूदनाय न० मधुसूदनं पू० ६ ॐत्रिविक्रमाय न० त्रिविक्रमं पू० ७ ॐवामनाय न० वामनं पू० ८ ॐश्रीधराय न० श्रीधरं पू० ९ ॐहृषीकेशाय न० हृषीकेशं पू० १० ॐपद्मनाभाय न० पद्मनाभं पू० ११ ॐदामोदराय न० दामोदरं पू० १२ इति द्वितीयावरणं वैष्णवे ।

अथ तृतीयावरणं विष्णुमूर्तौ अष्टसु दलेषु पूर्वादिक्रमेण—

ॐखड्गाय न० खड्गं पू० १ ॐगदायै न० गदां पू० २ ॐचक्राय न० चक्रं पू० ३शंखाय न० शंखं पू० ४ ॐपद्माय न० पद्मं पू० ५ ॐहलाय न० हलं पू० ६ ॐमुसलाय न० मुसलं पू० ७ ॐशार्ङ्गाय न० शार्ङ्गं पू० ८ इति तृतीयावरणम् । एते न्यासाः विष्णोरेव ।

अष्ट दलाकार पद्म चक्रम्

१

ॐ पृथिवीमूर्तये नम ॐ पृथिवीमूर्त्यधि-
पतये शर्वाय नमः पृथिवीमूर्तिं पृथिवीमूर्त्यधि-
पतिं शर्वमावाहयामि पूजयामि।

२

३

कर्णिकायाम्
ॐ हृं हृदयावलं
मध्ये-
ॐ शिवाय नमः
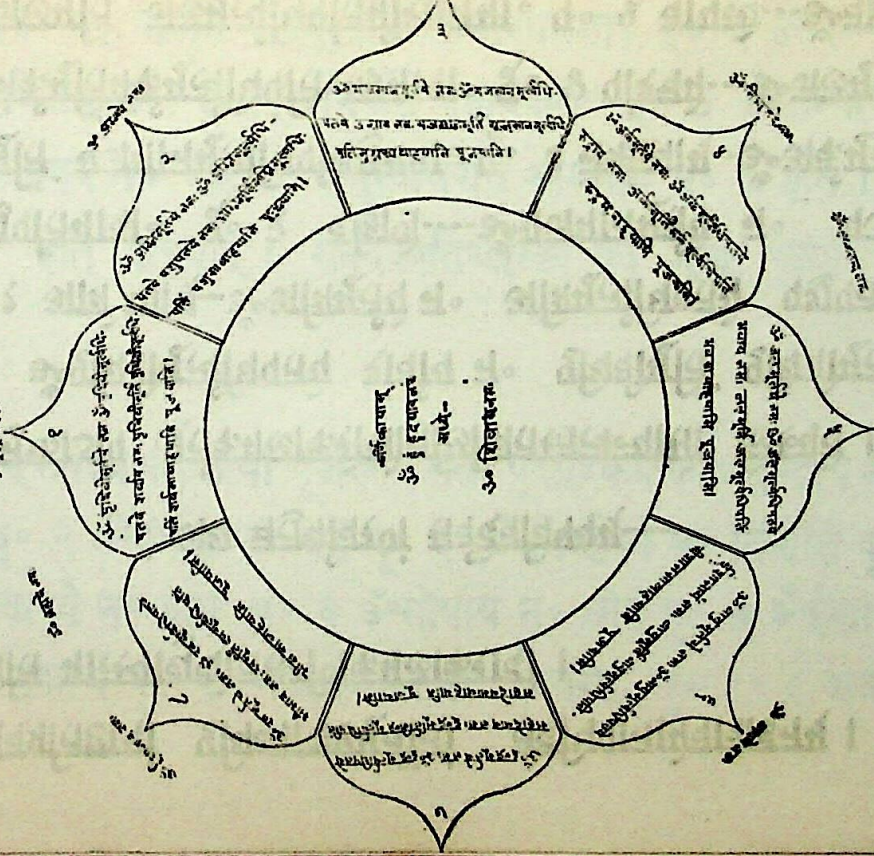
[अथ सर्वदेवप्रतिष्ठायां पृथिव्याद्यष्टमूर्तीनां तदधिपानामेवावाहनम्। सर्वदेवप्रतिष्ठासु मूर्तिपास्त्वित एव हीति मात्स्याद्युद्योतसरणिकमलाकरादौ।

अथ चतुर्थावरणं सर्वदेवविषयम्—

अथ मयूखाद्यनुक्तोऽपि पूर्तकमलाकरोद्योतलिखितस्तत्वन्यासो लिख्यते। तद्यथा—पूर्वे—ॐ पृथिवीमूर्तये न० ॐपृथिवीमूर्त्यधिपतये शर्वाय न० पृथिवीमूर्तिं पृथिवीमूर्त्यधिपतिं शर्वमावाहयामि पूजयाम १ आग्नेय्याम्—ॐअग्निमूर्तये न० अग्निमूर्त्यधिपतये पशुपतये न० अग्निमूर्तिमग्निमूर्त्यधिपतिं पशुपतिमावा० पू० २ दक्षिणे----ॐयजमानमूर्तये न० यजमानमूर्त्यधिपतये उग्राय न० यजमानमूर्तिं यजमानमूर्त्यधिपतिमुग्रमा० पू० ३ नैर्ऋत्याम्--ॐअर्कमूर्तये न० अर्कमूर्त्यधिपतये रुद्राय न० अर्कमूर्तिमर्कमूर्त्यधिपतिं रुद्रमावा० पू० ४ पश्चिमे---ॐजलमूर्तये न० जलमूर्त्यधिपतये भवाय न० जलमूर्तिं जलमूर्त्यधिपतिमीशानमा० पू० ५ वायव्ये---ॐवायुमूर्तये न० वायु-

मूर्त्यधिपतये ईशानाय न० वायुंति वायुमूर्त्यधिपतिमीशानमा० पू० ६ उत्तरे---ॐचन्द्रमूर्तये न० चन्द्रमूर्यधिपतये महादेवाय न० इन्द्रमूर्त्यधिपतिं महादेवमा० पू० ७ ईशान्याम्---ॐ---खमूर्तये न० खमूर्त्यधिपतये भीमाय न० खमूर्तिं खमूर्त्यधिपतिं भीममा० पू० ८ इति। सर्वदेवप्रतिष्ठासु मूर्तिपास्त्वेत एव हि" इति वाक्यात्। सर्वदेवप्रतिष्ठास्वेव एव देवाः पूज्याः। मयूखोक्तं तु निर्मूलमेव।

ततो लोकपालान् सर्वदेवप्रतिष्ठायां पूजयेत्। ततः पूर्वादिक्रमेण—ॐइन्द्राय न० इन्द्रं पू० १ ॐअग्नये न० अग्निं पू० २ ॐयमाय न० यमं पू० ३ ॐनिर्ऋतये न० निर्ऋतिं पू० ४ ॐवरुणाय न० वरुणं पू० ५ ॐवायवे न० वायुं पू० ६ ॐसोमाय न० सोमं पू० ७ ॐईशानाय न० ईशानं पू० ८ ॐब्रह्मणे नमः ब्रह्माणं पू० ९ ॐअनन्ताय नमः अनन्तं पू० १० (अत्र वितानबन्धनमिति भास्करे)

प्र० ४१५

शिवपञ्चायतन

विष्णु सूर्य

शिव

देवी गणेश
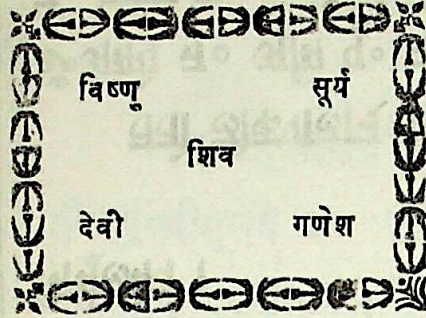
मध्यमें शंकर, ईशानकोणमें विष्णु, अग्निकोणमें सूर्य, नैर्ऋत्यकोणमें, गणेश तथा वायव्यकोणमें पार्वती का स्थापन करे।

विष्णुपञ्चायतन
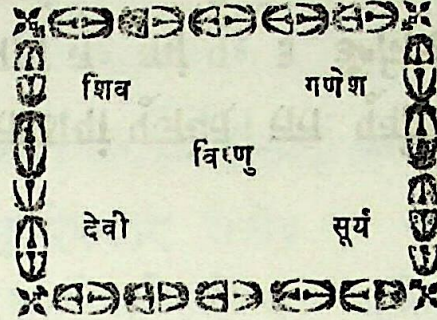
मध्यममें विष्णु, ईशानकोणमें शिव, अग्निकोणमें गणेश, निर्ऋति कोणमें सूर्य और वायव्यकोणमें देवीका स्थापन करे।

सूर्यपञ्चायतन
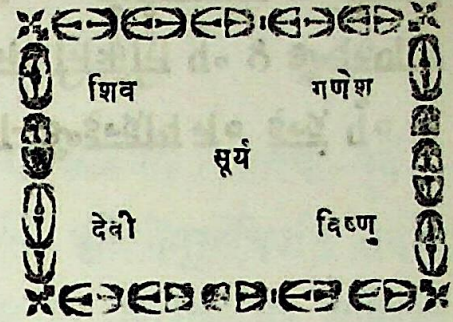
मध्यमें सूर्य, ईशान कोणमें शंकर, अग्निकोणमें गणेश, निर्ऋतिकोण में विष्णु और वायव्यकोणमें देवी का स्थापन करे।

प्र०
४१६

देवीपञ्चायतन

विष्णु		शिव
	देवी	
सूर्य		गणेष

मध्यमें देवी, ईशानकोणमें विष्णु, अग्निकोणमें शिव, नैऋत्यकोणमें गणेश तथा वायव्यकोणमें सूर्य का स्थापन करे।

गणेशपञ्चायतन

विष्णु		शिव
	गणेश	
देवी		सूर्य

मध्यमें गणेश, ईशानकोणमें विष्णु अग्निकोणमें शिव, निऋतिकोणमें सूर्य तथा वायव्यकोणमें देवी का स्थापन करे।।

रामपञ्चायतन

श्रीरामजी मध्यमें, इनके बायें श्रीसीता जी तथा शत्रुघ्न, दक्षिण भागमें लक्ष्मण और भरतजी होंगे। कहीं पर रामसीताजी के पीछेकी तरफ लक्ष्मण तथा भरतजी को सेवक भाव से रखते हैं।

शिवपञ्चायतनक्रम

विष्णु

देवी

शंकर

सूर्य

गणेश

पाषाणादिनिर्मित खण्डित मूर्तिका अगाधजलमें प्रक्षेप कथन

प्र०

४१९

मण्डप का स्वरूप

प्र० ४२०

हवनकुण्ड

प्र०
४२१
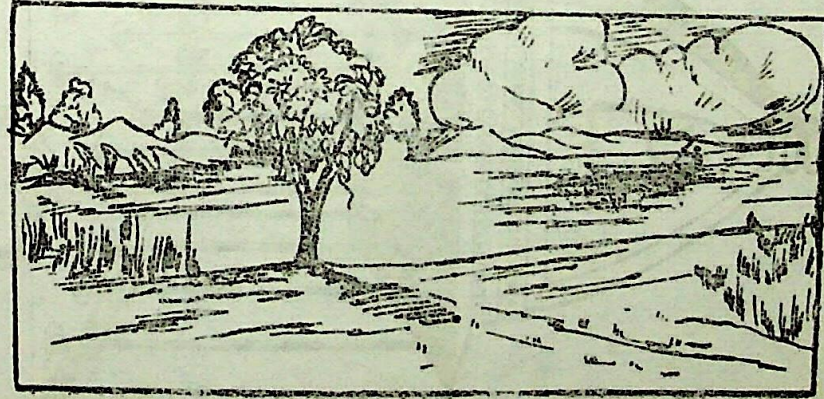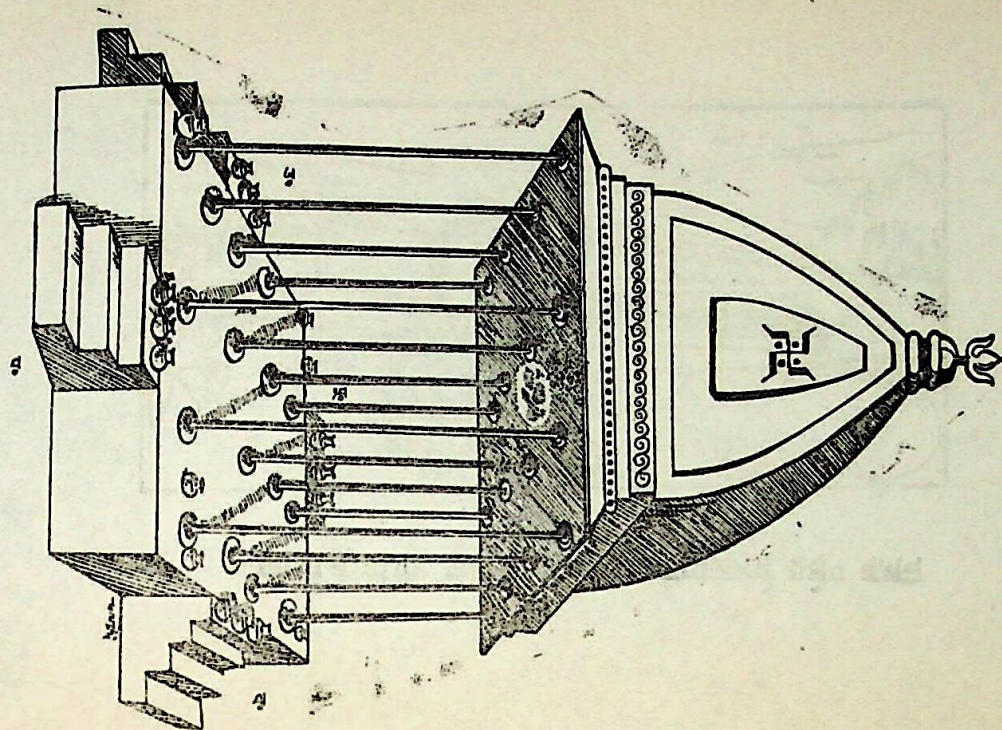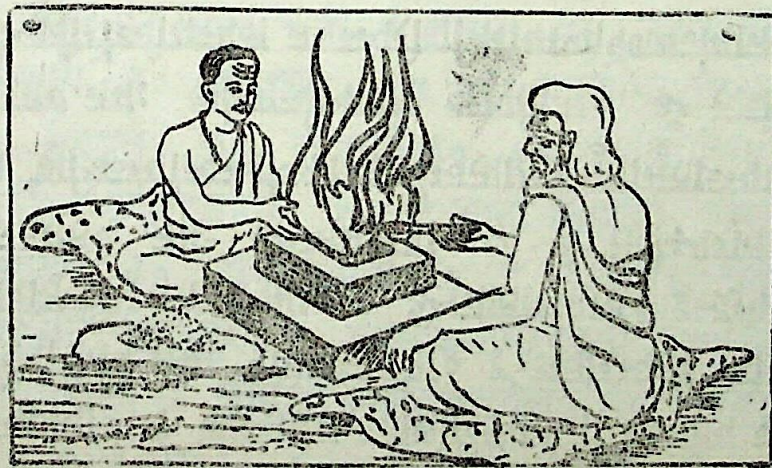
एक कुण्डीपक्ष में होम को कहते हैं। आचार्य कुण्डके ईशानमें दक्षिणोत्तर क्रमसे मूर्ति-मूर्ति लोकेश के स्थापन के

प्र०

अथैककुण्डीपक्षे होमोपक्रमः। तत्रादौ आचार्यः कुण्डस्येशान्यां दक्षिणोत्तरक्रमेण सम्पातोदकार्थं मूर्ति-मूर्तिप-लोकेश स्थापनार्थं च कलशद्वयं महीद्यौरित्यादिना संस्थाप्य कलशे पूर्णपात्रोपरि——

ॐ स्योना पृथिवी० पृथिवीमूर्तये नमः पृथिवीमूर्तिमा० १ अघोरेभ्योथ घोरेभ्यो० पृथिवीमूर्त्यधिपतये शर्वाय न० पृथिवीमूर्त्यधिपतिं शर्वमा० २ ॐ त्रातारमिन्द्र० इन्द्राय नमः इन्द्रमावा० ३ ॐ अग्निदूतं० अग्निमूर्तये नमः अग्निमूर्तिमा० ४ ॐ तेजः पशूनां ँ हविरिन्द्रियावत्परिस्रुता पयसा सारघम्मधु। अश्विभ्यान्दुग्धम्भिषजा सरस्वत्या सुतासुताभ्याममृतः सोम ऽइन्दुः॥ अग्निमूर्त्यधिपतये पशुपतये नमः अग्निमूर्त्यधिपतिं पशुपतिमा० ॐ त्वन्नो अग्ने० ॐ अग्नये नमः अग्निमा० ६ ॐ सुवीरो वीरान्प्रजनयन्परीह्यभिरायस्पोषेण यजमानम्। सञ्जग्मानो दिवापृथिव्या शुक्रः शुक्रशोचिषा निरस्तः शण्डः शुक्रस्याधिष्ठानमसि॥ यजमानमूर्तये न० यजमानमूर्तिमावा० ७ ॐ उग्रश्च० यजमानमूर्त्यधिपतये उग्राय न० यजमानमूर्त्यधिपतिमुग्रमा० ८ ॐ यमाय त्वाङ्गिरस्वते० यमाय न० यममावा० ९ ॐ उदुत्यं जात० सूर्यमूर्तये न०

सूर्यमूर्तिमा० १० इमारुद्राय० ॐ सूर्यमूर्त्यधिपतये रुद्राय न० सूर्यमूर्त्यधिपतिं रुद्रमा० ११ ॐ असुन्वन्तम० निर्ऋतये नमः निर्ऋतिमा० १२ ॐ आपो हिष्ठा० जलमूर्तये न० जलमूर्तिमा १३ ॐनमोबभ्लुशाय॑०_।धिनेऽन्नानाम्पतयेनमोभवस्यहेत्यैजगताम्पतयेनमोनमोरुद्रायाततायिनेक्षेत्राणाम्पतये_नमः ।। जलमूर्त्यधिपतये भवाय न० जलमूर्त्यधिपति भवमा० १४ ॐ इमम्मे व्व० वरुणाय न० वरुणमा० १५ ॐ तवव्वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत । अवा ᳪ स्यावृणीमहे ।। वायुमूर्तये न० वायुमूर्तिमा० १६ ॐ तमीशानं० वायुमूर्त्यधिपतये ईशानाय न० वायुमूर्त्यधिपतिमीशानमा० १७ ॐ आनो नियुद्भिः वायवे न वायुमा० १८ ॐ वय ᳪ सोम० सोममूर्तये न० सोममूर्तिमा० १९ ॐ उग्रंलोहितेनमित्र ᳪ सौव्रत्येनरुद्रन्दौर्व्रत्येनन्द्रम्प्रक्रीडेनमरुतोबलेनसाध्यान्प्रमुदा ।। भवस्यकण्ठय ᳪ रुद्रस्यान्तःपार्श्व्यम्महादेवस्यकृच्छर्वस्यव्वनिष्ठुःपशुपतेःपुरीतत् ।। सोमूर्त्यधिपतये महादेवाय न० सोममूर्त्यधिपति महादेवमा० २० ॐ अभित्यंदेव ᳪ सवितामोण्योः कविक्रतुमर्च्चामिसत्यसव ᳪ रत्नधामभिप्रियम्मतिङ्कविम् । ऊर्ध्वायस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनिहिरण्यपाणिरमिमीतसुक्रतुः कृपास्वः । प्रजाभ्यस्त्वाप्रजा-

लिए कलशद्वयका स्थापनकर कलशमें पृथिवी आदिका स्थापन पूजन करे ।

स्वानुप्राणन्तुप्रजास्वमनुप्राणिहि ॥ कुबेराय न० कुबेरमा० २१ ॐ आदित्यङ्गर्भम्पयसासमङ्‌धिसहस्रस्यप्रतिमांविश्वरूपम् । परिवृङ्धिहरसामाभिमंᳫस्थाःशतायुषङ्कृणुहिचीयमानः ॥ आकाशमूर्तये न० आकाशमूर्तिमा० २२ ॐ मृगोनभीमः कुचरोगिरिष्ठाःपरावतऽआजगन्थापरस्याः । सृकᳫसᳫशायपविमिन्द्रतिग्मंविशत्रून्ताढिविमृधोनुदस्व ॥ आकाशमूर्त्यधिपतये भीमाय न० आकाशमूर्त्यधिपतिं भीममा० २३ ॐ अभित्वाशूरनोनुमोदुग्धाऽइवधेनवः ॥ ईशानमस्यजगतःस्वर्दृशमीशानमिन्द्रतस्थुषः ॥ ईशानाय न० ईशानमा० २४ एता देवता आवाह्य सम्पूजयेत् ।

अथ शान्तिक पौष्टिकहोमः

अब शान्तिकपौष्टिकहोम कहते हैं। आचार्य पलाश, उदुम्बर, अश्वत्थ, अपामार्ग और शमी आदि क्रमसे

तत आचार्यः द्वादशसहस्र-त्रिसहस्र-अष्टोत्तरसहस्र-अष्टोत्तरशतान्यतमसङ्ख्यया क्रमेण पलाश-उदुम्बर-अश्वत्थ-अपामार्ग-शमीसमिधः "हिरण्यगर्भ०" इति मन्त्रेण कुण्डसमीपे संस्थाप्य

द्वादश सहस्रादि किसी पक्ष द्वारा घृताक्त समिधाकर शन्नो वातः इत्यादि मन्त्रसे हवन करे।

घृताक्ताः कृत्वा "ॐशन्नोव्वातः पवताᳬ शन्नस्तपतुसूर्य्यः ॥ शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्योऽअभिवर्षतु ॥ ॐ अहानिशम्भवन्तुनः शᳬरात्री प्रतिधीयताम्। शन्नऽइन्द्राग्नीभवतामवोभिः शन्नऽइन्द्रावरुणारातहव्या ॥ ॐ शन्नो दे० इति शान्तिकैः। ॐ अयमग्निः पुरीष्योरयिमान्पुष्टिवर्द्धनः। अग्ने पुरीष्याभिद्युम्नमभिसहऽआयंच्छस्व १ ॐ त्वष्टातुरीपोऽअद्भुतऽइन्द्राग्नीपुष्टिवर्द्धना। द्विपदाच्छन्दऽइन्द्रियमुक्षागौर्न्नवयोदधुः ॥ ॐ त्र्यम्बकं यजा० इति पौष्टिकैश्च (षड्भिः) मन्त्रैः प्रतिमन्त्रं प्रतिद्रव्यं द्विसहस्र-एकसहस्र-पञ्चश -अष्टषष्ट्युत्तरशत-अष्टादशान्यतमसङ्ख्यया जुहुयात्। इति शान्तिकपौष्टिकहोमः।

अथ वेदादिहोमः—आचार्यः पलाशसमित्-तिल-घृतान्यतमद्रव्येण "अग्निमीडे" इत्याद्याष्टभिर्मन्त्रैः प्रतिमन्त्रमष्टोत्तरसहस्रं, अष्टोत्तरशतं वा जुहुयात्। ते च मन्त्राः—ॐ अग्निमीडे पुरोहितं० १ ॐ वौषट् स्वाहा २ ॐ इषे त्वोर्ज्जेत्वा० स्वाहा ३ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

अब वेदादि होम कहते हैं। आचार्य पलाशकी समिधा आदि से 'अग्निमीडे' इत्यादि आठ मन्त्रों से

हवन करे ।

तत्ववितु० स्वाहा ३ ॐ अग्न आयाहि० स्वाहा ५ ॐ जातवेदसे सुनवामसोममरातियतो हि दहाति वेदः । स नः पर्षदति विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः स्वाहा ६ ॐ शन्नो देवी० स्वाहा ७ ॐ ब्रह्मयज्ञानं० स्वाहा ८ इति वेदादिहोमः ।

अब मूर्त्यादिहोम कहते है। आचार्य पलाशादि किसी द्रव्य से प्रत्येक मूर्ति मूर्तिप लोकपालोंको अष्टोत्तर सहस्रादि किसीपक्षसे हवन करे ।

अथ मूर्त्यादिहोमः—आचार्यः पलाशसमित्-तिल-घृतान्यतमद्रव्येण मूर्ति-मूर्तिप-लोकपान् प्रत्येकमष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा तत्तदुक्त (आवाहन) मन्त्रैर्जुहुयात् । इति मूर्त्यादिहोमः ।

अब महाव्यहृतिहोम कहते हैं। आचार्य तिल, यव, व्रीहि, चरु, घी आदि द्रव्यों से क्रमसे अष्टोत्तर सहस्रादि किसीपक्षसे 'ॐ भू र्भुवः स्वाहा' से हवन करे । यह हवन आचार्य कुण्डमें नहीं होता है ।

अथ महाव्याहृतिहोमः—आचार्यः तिल-यव-व्रीहि-चरु-आज्यद्रव्यैः क्रमेण प्रतिद्रव्यमष्टोत्तर-

अब स्थाप्यदेवता लिंगके मन्त्रमें होम आचार्य करे। तदनन्तर देवताके दाहिने कानमें होम निवेदन करे। तदनन्तर

प्र०

४२७

आचार्य स्थापित देवता के मन्त्रसे आठ आहुति घी से करे। देवता के पैरोंका स्पर्श करे। फिर उसी मन्त्रसे आठ

सहस्रमष्टोत्तरशतमष्टाविंशति अष्टौ वा "ॐ भूर्भुवः स्वाहा" इति जुहुयात्। (नायं होम आचार्यकुण्डे आचार्यकर्तृको वेति सरणौ स्पष्टम्। अयं होमः प्रतिकुण्डमष्टोत्तरशतं नात्रविभागः। विभागोक्त्यभावात्) इति महाव्याहृतिहोमः।

अथ स्थाप्यदेवतालिङ्गकमन्त्रहोमः—आचार्यः यावत्यः स्थाप्यदेवताः सन्ति तल्लिङ्गकमन्त्रेण अष्टोत्तरसहस्र-अष्टोत्तरशत-अन्यतरसङ्ख्ययाति-घृतान्यतरद्रव्येण हुत्वा "होम कृतः" इति देवस्य दक्षिणकर्णे होमं निवेदयेत्। तत आचार्यः स्थाप्यदेवतालिङ्गकमन्त्रेण घृताहुत्यष्टकं हुत्वा मूलमन्त्रेण (देवतालिङ्गकेनेति भास्करे) देवस्य पादौस्पृशेत्। ततस्तेनैव मन्त्रेण अष्टसङ्ख्यया हस्तेन दधि हुत्वा देवस्य नाभिं क्षीरं हुत्वा हृदयं मधु हुत्वा "ॐ मूर्द्धानम्०" इति घृतादिचतुष्टयं मिश्रितं हुत्वा देवस्य सर्वाङ्गं स्पृशेत्। इति स्थाप्यदेवतामूलमन्त्रहोमः। इत्येककुण्डीपक्षे होमः।

वार हाथसे दधिसे हवनकर देवताके नाभिमें क्षीर से हवनकर हृदयमें मधु से हवनकर मूर्धानम्—इस मन्त्रसे घृतादि चतुष्टय द्रव्यमिश्रितसे हवन कर देवताके सब अंगोंका स्पर्श करे।

प्र०

४२७

प्र०

४२८

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

कूर्मशिलादिस्थापनम्

श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

४२८

❀ अथ कूर्मशिलादिस्थापनम् ❀
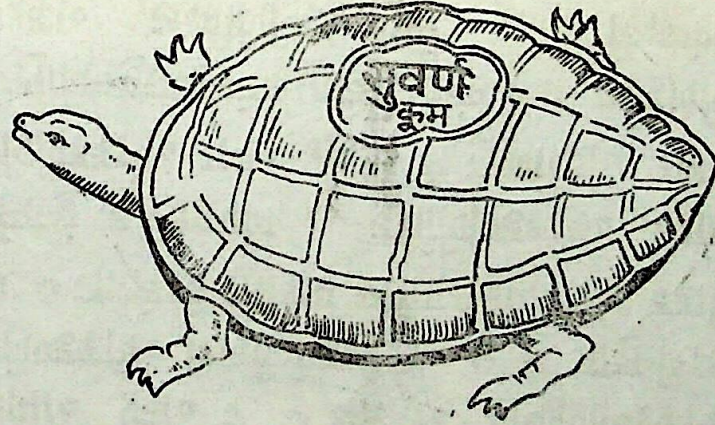
तदनन्तर कूर्मशिला ब्रह्मशिलाका पिण्डकावाहन परिवारदेवताओंका वैदिक या नाम मन्त्रों से पूजनकर प्रतिमाके

ततः कूर्मशिलाब्रह्मशिलापिण्डकावाहनपरिवारदेवान् अन्यत्प्रतिमाजातमपि वैदिकैर्नाम-मन्त्रैर्वा सम्पूज्य प्रतिमावामपार्श्वे सर्वाणि वस्त्राच्छादिनान्यधिवासयेत्तत्र—ॐ यस्यंकर्मागृहेह-

बाद पार्श्वके सबोंको वस्त्र आदि से अधिवासन करे। उसमें यस्य कूर्मः, ब्रह्मणे ब्राह्मणम्, श्रीश्च, अम्बे अम्बिके, आशु

शिशानः, जातवेदसे सुनवाम, सुपर्णोऽसि गरुत्मान्, श्रीश्च, विष्णोर्नुकम, तत्सवितुः, आपो हि, इत्यादि मन्त्रों से क्रमसे

विस्तमग्नेव्वर्द्धयात्वम् । तस्मै देवाऽअधिब्ब्रवन्नयञ्च ब्रह्मणस्पतिः ॥ कूर्मशिलायै नमः । कूर्मशिलामा० पू० १ ॐ ब्रह्मणेब्राह्मणङ्क्षत्रायं राजन्यम्मरुद्भ्यो व्वैश्यन्तपसेशूद्रन्तमसे तस्करन्नारकायव्वीरहणंम्पाप्मनें क्लीबमाक्रयायाऽअयोगूङ्कामाय पूँश्चलूमतिक्रुष्टायमागधम् ॥ ब्रह्मशिलायै न० ब्रह्मशिलामा० पूज० २ ॐ श्रीश्चते० विष्णुपिण्डिकायै० विष्णुपि० ३ । ॐ अम्बेऽअम्बिके० । शिवपिण्डकायै० शिवपिण्डिकां पू० ४ ॐ आशुःशिशानः । नन्दपिण्डिका० नन्दपिण्डिकामा० पू० ५ ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्निः ॥ दुर्गापिण्डिकायै० दुर्गापिण्डिकामा० पू० ६ ॐ गणानान्त्वा । गणपतिपिण्डिकायै० गण० पू० ७ ॐ सुपर्णोऽसि गरुत्मान्पृष्ठे पृथिव्याःसीद । भासान्तरिक्षमापृणज्योतिषादिवमुत्तभानतेजसादिशऽउद्दृंह ॥ गरुडपिण्डिका० गरुडपि० पू० ८ श्रीश्चते० । लक्ष्मीपिण्डिका० लक्ष्मीपिण्डि० पू० ९ ॐ व्विष्णोर्न्नुकंव्वीर्य्याणिप्रवोचंरुयाः

कूर्मशिला, ब्रह्मशिला, विष्णुपिण्डिका, नन्दपिण्डिका, दुर्गापिण्डिका, गणपतिपिण्डिका, गरुडपिण्डिका, नारायण-

१०

२०

३०

४२०

पिण्डिका, सूर्यपिण्डिका, भैरवादिपिण्डिका, पार्वतीपिण्डिका, हनुमत्पिण्डिका और रामपिण्डिका का प्रधान देवके वाम पार्श्व में अधिवासन करे। इस प्रकार आवाहनों को और परिवार देवोंको नाम मन्त्रोंसे या वैदिक मन्त्रों से पूजन कर

पार्थिवानिव्विममेरजाᳬंसि ॥ योऽअस्कंभायदुत्तरᳬसधस्थं व्विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायो व्विष्णवे त्वा ॥ नारायणपिण्डिका० नारायणपि० पू० १० ॐ तत्सवितुर्व्वरेण्यं०। ब्रह्मपिण्डिका० ब्रह्म-पिण्डिका० पू० ११ ॐ आपो हि०। सूर्यपिण्डिका० सूर्यपिण्डिका० पू० १२। ॐ जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहाति वेदः। स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरिता-त्यग्निः ॥ भैरवादिपिण्डि० भैरवादिपि० पू०। १३ ॐ अम्बेऽअम्बिके० पार्वतीपिण्डिकायै० पार्वतीपिण्डिकामा० पू० १४ ॐ दिव्यौषधिप्रदानेन कपिकोटीरनेकशः। हनुमते जीवपते नमस्तस्मै परात्मने ॥ ॐ आतिथ्यरूपम्मासरम्महावीरस्य नग्नहुः ॥ रूपमुपसदामेतत्तिस्रो रात्रीः सुरासुता ॥ हनुमत्पिण्डिकायै न०। हनुमत्पि० पू० १५ रामपिण्डिकायै नमः इत्यादिभि-र्नाममन्त्रैर्वा सम्पूज्य प्रधानदेववामपार्श्वेऽधिवासयेत्। एवमेवावाहनानि पारिवारदेवांश्च नाममन्त्रै-र्वैदिकमन्त्रैर्वा सम्पूज्याधिवासयेत्।

अधिवासन करे।

स्थापनदेशमें पहले ही मन्त्रों से संस्कार करे। फिर प्रधान पिण्डिकामें पंचांगन्यास इदंविष्णु—से और हृदयाय

स्थापनदेशे पूर्वमेवदार्व्यं चेत्तत्र मन्त्रेण संस्कारः कार्यः। पक्षद्वयेऽपि पिण्डिकामधुघृताभ्यामभ्यज्य शुद्धवारिणा प्रक्षाल्य सम्पूज्य वस्त्रेणाच्छाद्य प्रधानपिण्डिकायां पञ्चाङ्गन्यासं कुर्यात्। तत्र मन्त्रः—ॐ इदं विष्णुर्वि० हृदयाय न० १ ॐ इदंविष्णु० शिरसे स्वाहा २। ॐ इदं वि० शिखायै० ३। ॐ इदं वि० कवचाय हुम् ४ ॐ इदं वि० ॐ इदं वि० नेत्रत्रयाय वौ० ५ इति। एवमेवतत्तदेवमन्त्रानुक्त्वा ॐ हृदयाय नमः—इत्यादिना देवतानन्तरप्रधानपिण्डिकायां न्यासः। यथा—ॐ नमस्ते रुद्र म० ॐ हृदयाय नमः। इत्यादि।

[अथवा—ॐ लक्ष्म्यै नमः ॐ हृदयाय नमः १। ॐ ठं लक्ष्म्यै० शिरसे० स्वाहा। ॐ वं लक्ष्म्यै० शिखायै वषट् ३ ॐ न लक्ष्म्यै० कवचाय हुम् ४। ॐ फं लक्ष्म्यै० नेत्रत्रयाय वौषट् ५ इति मन्त्रैर्न्यासः पिण्डिकायां कार्यः।]

[अथवा—ॐ घं ठं वं वं फं फट् लक्ष्म्यै नमः। ॐहृदयाय नमः। इत्यादिप्रकारेण न्यासः।]

नमः—इत्यादि मिश्रित से करे। या लक्ष्म्यै नमः हृदयाय नमः इससे करे। या 'ॐ घं ठं वं फं इत्यादि से—करे।

तदनन्तर पिण्डिकामें 'आत्मतत्त्वाय नमः' इत्यादि से न्यास करे। फिर 'पृथिवीमूर्तये नमः' इत्यादि से न्यासकर 'ॐ ह्रीं

ततः—ॐ आत्मतत्वाय नमः आत्मतत्वाधिपतये ब्रह्मणे नमः १ ॐ विद्यातत्वाय नमः विद्यातत्वाधिपतये विष्णवे नमः २ ॐ शिवतत्वाय नमः शिवतत्वाधिपतये विष्णवे नमः ३ इति तत्वत्रयं पिण्डिकायां न्यसेत्।

ततः—ॐ पृथिवीमूर्तये नमः पृथिवीमूर्त्यधिपतिं शर्वाय नमः १ ॐ अग्निमूर्तये नमः—अग्निमूर्त्यधिपतिं पशुपतये नमः २ ॐ यजमानमूर्तये नमः यजमानमूर्त्यधिपतिमुग्राय नमः ॐ अर्कमूर्तये नमः अर्कमूर्त्यधिपतिं रुद्राय नमः ४ ॐ जलमूर्तये नमः जलमूर्त्यधिपतिं भवाय नमः ५ ॐ वायुमूर्तये नमः वायुमूर्त्यधिपति ईशानाय नमः ६। ॐ इन्द्रमूर्तये नमः—इन्द्रमूर्त्यधिपति महादेवाय नमः ७। खमूर्तये नमः खमूर्त्यधिपतिं भीमाय नमः ८ इति विन्यस्य। ॐ ह्रीं श्रीं ह्रां क्षः परब्रह्मणे सर्वाधाराय नमः। ॐ ह्रीं श्रीं ह्रां दिव्यतेजो धारिणि सुभगे नमः। इति मन्त्राभ्यां कूर्मादिशिला अधिवासयेदित्यधिवासनम्।

श्रीं ह्रां क्षं' इत्यादि से दो मन्त्रोंसे कूर्मादिशिलाओंका अधिवासन करे।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(प्रसादाधिवासन, प्रासादवास्तुपूजन, प्रासादोत्सर्ग, स्थापनदिवसकृत्य, रत्नान्यासकथन, पिण्डिकामें तत्त्वन्यासादिकथन, प्रासादबहिरष्टदिक्षु स्थण्डिलादिस्थापन तथा प्राणप्रतिष्ठा आदि का विधान)

श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य

प्र०

❀ अथ प्रासादाधिवासनम् ❀

सपत्नीक यजमान प्रधान प्रासाधिवासन का संकल्पकर प्रासादमें या उसके आगे दश रेखाअ से इकासी कोष्ठ कर उनमें मध्यके नौ कोष्ठोंको क्रमसे अलग-अलग जानकर मध्य और पूर्वादिक्रमसे नवोंमें शमी, उदुम्बर,

४३७

सपत्नीको यजमानः आचम्य प्राणानायम्य शान्तिपाठादिकं पठित्वा देशाकालौ सङ्कीर्त्य— 'अस्मिन्प्रासादे देवताधिष्ठानयोग्यतासिध्यर्थं स्नपनपूर्वकं प्रासादाधिवासनं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य ततः प्रासादे तदग्रे वा दशरेखाभिः पूर्वोत्तराग्राभिरेकाशोतिपदं मण्डलमक्षतैः कृत्वा तेषु सप्त-धान्यपुञ्जान् कृत्वा तत्र नवनवकानां मध्य कोष्ठं ज्ञात्वा तेषु नवकुम्भानि मध्ये पूर्वादिक्रमेण च 'ॐ महोद्यो'रित्यादिना विन्यस्य मध्यकुम्भे शमी—उदुम्बर-अश्वत्थ—चम्पक-अशोक-पलाश-प्लक्ष-न्यग्रोध-कदम्ब-आम्र-बिल्व-अर्जुन-इति पल्लावान् 'ॐ सोमायवनस्यत्यन्तर्गताय नमः" इतिमन्त्रेण क्षिपेत् । पूर्वमध्यकुम्भे-पञ्चकाष्ठ-गोरोचनदूर्वाङ्कर-दर्भपिञ्जल-श्वेत-सर्षप (पीतसर्षप) श्वेत-चन्दन-रक्तचन्दन जाती (चमेली) पुष्प-नद्यावर्तक (सेवार) मिति 'ॐ सोमाय व० उक्तमन्त्रेण

प्र०

४३७

अश्वत्थ चम्पक, अशोक, पलाश आदि द्रव्योंको छोड दे । शेष अर्थात्—नवोंमें मन्त्रोंसे गन्धोदक छोड़ दे । फिर

इक्यासो कलशोंका स्थापनकर देवमन्त्र से अभिमन्त्रणकर बाहर-भीतर तथा ऊपर से प्रासादको पञ्चगव्यसे प्रोक्षण करे।

क्षिपेत्। आग्नेयमुख्यकुम्भे—यव-व्रीहि-तिल-सुवर्ण-रजत-समुद्रगामिनदीकूलमृत्तिका-भूम्यसंस्पृष्ट-गोमयमिति ॐ सोमा० इतिमन्त्रेण क्षिपेत्। याम्ये—सहदेवी-विष्णुक्रान्ता भृङ्गराज-महौषधी-शमी-शतावरी-श्यामाकमिति ॐ सोमा० इति मन्त्रेण क्षिपेत्। नैऋत्ये—कदली-पूगीफल-नारिकेल-बिल्व-नारिंग-मातुलिङ्ग-बदरी-आमलकमिति। पश्चिमे—मन्त्रसाधितं पञ्चगव्यम्। वायव्ये-शमी-उदुम्बर-अश्वस्थन्यग्रोधपलाश-त्वक्कषायपञ्चकम्। उत्तरे-सहदेवी-शतावरी-शंखपुष्पीवला-कुमारी-गुडूची-वचा-व्याघ्रीति। ईशाने—अश्वस्थानादिसप्तमृदः।

ततः—हिरण्यवर्णामित्यादि षोडमन्त्रैः। (पञ्चदशर्चेनेतिभास्करे) मध्यकुम्भानभि-मन्त्र्य शेषान् गन्धोदकपूरितान् त्रिशूत्रावेष्टितान् मध्यमादिकलशानां समन्तान् पूर्वादिक्रमेण अष्टौ-अष्टौ कलशान् विन्यस्य सर्वान्ते एकाशीतिकलशान् संस्थाप्य देव (मूल) मन्त्रेणाभि-

मूर्धानम्—इस मन्त्रसे वल्मीक मट्टीसे प्रासादका लेपनकर ईशानदिशावाले कुंभसे समुद्राय त्वा—इससे स्नान करावे। इसीतरह सब कलशोंसे स्नान करावे।

प्र०

यज्ञायज्ञाव:—इस मन्त्रसे वायव्यकोणस्थ कषायकुम्भसे पय: पृथिव्याम्—इससे वारुणसंज्ञक पञ्चगव्यसे, या: फलिनी:—इससे नैऋर्त्यफलकुम्भसे, हर्ठ० स:—से उत्तरदिक्स्थ कुम्भसे, विष्णोरराटम्—से पूर्ववाले कलशसे, सोमर्ठ०

मन्त्र्य—अन्तर्बहिरधस्तादूर्ध्वं च प्रसादं पञ्चगव्येनाभ्युक्ष्य 'ॐ मूर्द्धानम्' इति वल्मीकमृदा प्रासादं विलिप्य 'ॐ समुद्रद्रायं त्वा व्वाताय स्वाहा सरिरायं त्वा व्वाताय स्वाहा । अनाधृष्यायंत्वा ताय स्वाहा । अवस्यवेत्वा व्वातायस्वाहा शिमिदायं त्वा व्वाताय स्वाहा ॥ इति—ईशानदिक्स्थेन मृत्तिकैककुम्भेन स्नपयेत् १ ॐ यज्ञायज्ञावो ऽअग्नयेगिरागिराचदक्षसे ॥ प्रप्रवयममृतञ्जातवेद-सम्प्रियम्मित्रन्नशंर्ठशिषम् ॥ इति वायव्यकषायकुम्भेन स्नपयेत् २ ॐ पयः पृदिव्यामितिवारुणेन पञ्चगव्येन स्नपयेत् ३ ॐया ऽफलिनोरिति नैऋर्त्यफलकुम्भेन स्नपम्येत् ४ ॐहर्ठ० सर्ठशुचि-षद्वसुरन्तरिक्ष सद्धोताव्वेदिषदतिथिद्दुरोणसत् । नृषद्वरसद्दतसद्व्योमसदब्जागोजा ऽऋतजा ऽअ-द्रिजाऋतंबृहत् ॥ इतिसौम्यमूलकुम्भेन स्नपयेत् ५ ॐविष्णोरराटमितिपूर्वकलशेन स्नपयेत् ६ ॐ सोमर्ठ राजानमवसेग्निमन्वारभामहे । आदित्त्यान्विष्णुर्ठ सूर्य्यम्ब्रह्माणञ्चबृहस्पतिर्ठ

सोमर्ठ० राजा—से अग्निकोणकुम्भसे, विश्वतश्चक्षु:—से याम्यकुम्भसे नमोऽस्तु सर्पेभ्य:—से मध्यकुम्भसे, इदमाप: प्रवहता—से इस मन्त्रकी आवृत्तिसे प्रागादिक्रमसे आठ-आठ प्रतिकोष्ठकलशों से शिखर के सहित प्रासादका स्नान करावे ।

४२६

प्र०

४२६

तदनन्तर प्रसाद को वस्त्रसे या सूत्र से वेष्टन कर स्नान करा कर ध्वजा-पताकों से चारों तरफ आच्छादनकर गन्धादि से पूजन कर उसके नीचे देवरूप प्रसाद की चिन्ताकर 'ॐ ह्रीं सर्वदेवमयाचिन्त्य' इस मन्त्रसे अधिवासन करे।

प्र०

स्वाहा ॥ इति इत्याग्नेयकुम्भेन स्नपयेत् ७ ॐ त्रिश्वतश्चक्षुरितियाम्यकु० ८ ॐ नमोऽस्तुस० इति मध्यकु० ९ ॐ इदमापः प्रवहतावद्यञ्च मलञ्चयत्। यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्चशेपेऽअभीरुणम् ॥ इति मन्त्र्यावृत्या प्रागादिक्रमेण अष्टभिरष्टभिः प्रतिकोणकलशैः सशिखं प्रासादञ्च स्नापयेत्। ततः प्रसादं वस्त्रेण सूत्रेण वा आवेष्ट्य स्नापयित्वा चिन्तयित्वा पताकाध्वजादिभिः समन्ताच्छादयित्वा गन्धादिना संपूज्य तस्याधस्तात् देवरूपं प्रसादं चिन्तयित्वा—ॐ ह्रीं सर्वदेवमयाचिन्त्य सर्वरत्नोज्वालाकृते। यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च तावदत्र स्थिरो भव ॥ इति—मन्त्रेणाधिवासयेत्।

४४०

ततः—श्रीश्चते—इति विष्णुपिण्डकामन्त्रेण वैष्णवे। शैवे—'ॐ अम्बेऽअम्बिके—इति शिवपिण्डकामन्त्रेण। ॐ आशुः शिशान इति नन्द्यावाहनमन्त्रेण। वैष्णवे—ॐ सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ। स्तोमऽआत्मा छन्दाᳪंस्यङ्गानि यजूᳪंषि नाम। साम-

तदनन्तर श्रीश्च—से विष्णुपिण्डकाके मन्त्र से वैष्णवमें, शिवमें—अम्बे अम्बिके से—शिवपिण्डकाके मन्त्रसे। आशुः शिशानः—से नन्दी के आवाहन मन्त्र से। वैष्णवमें—सुपर्णोऽसि—से गरुडमन्त्रसे। इदं विष्णुः आ कृष्णेन, गणानां

त्वा, अम्बे अम्बिके—इनसे पिण्डकावाहन परिवार देवताओं का प्रतिमन्त्रसे अठ्ठाइस होम तिल से आचार्य अपने कुण्ड में मूल मन्त्रसे चरु द्वारा एक सौ आठ बार हवनकर चार गौ देवता के लिए निवेदन कर ब्राह्मणों का भोजन करा

तेतनूर्व्वा॑मदेव्ठ्रसंशाज्ञायज्ञियम्पुच्छन्धिषण्ण्णा॑शुरक्षः । सुपर्ण्णोसिगरुत्मान्दिवङ्गच्छस्वः॑पत ॥ इति गरुडमन्त्रेण । ॐ इदं विष्णुः० १ ॐ आकृष्णे० २ ॐ गणानान्त्वा ३ ॐ अम्बे अम्बिके ४ इतिपिण्डकावाहनपरिवारदेवतानां प्रतिमन्त्रमष्टाविंशतिसंख्याकं होमं तिलैराचार्यः स्वकुण्डे एव हुत्वा चतस्रो गा [मण्डपदक्षिणतः स्थिता इति कमलाकरः] ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् । इति विष्णुगायत्र्या दुग्ध्वा तत्क्षीरेण तथैव ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् । इति रुद्रगायत्र्या चरुं श्रपयित्वा [रुद्रगायत्र्यैव श्रपणं निवेदनं चोक्तम्] देवाय (देवाभ्याम्, देवेभ्यश्च) निवेद्य [विष्णुप्रीत्यर्थं] ब्राह्मणान् भोजयित्वा विष्णुर्मे प्रीयतामिति वदेत् । तत आचार्याय धेनूर्दद्यात् । ब्राह्म-

कर कहे—'विष्णुः मे प्रीयताम्' । तदनन्तर मण्डप से बाहर निकल कर प्रासाद के अभिमुख हो देवरूप का पादो पादशिला:—इनसे ध्यान कर आचार्य अपने कुण्ड में 'वास्तोष्पते' इस मन्त्र से एक सौ आठ बार घी या तिल से

हवन कर जो स्थापित देव हैं। उनके मन्त्रों से एक सौ आठ बार घी या तिल से हवन करे। पञ्चकुण्ड्यादिपक्ष में भी यह हवन आचार्यकुण्ड में ही है।

एभ्यो दक्षिणां दद्यात्। ततो मण्डपाद् बहिर्निर्गत्य प्रसादाभिमुखो भूत्वा तं देवरूपं ध्यायेत्। तथाहि—

ॐ पादौ पादशिलास्तस्य जंघापादाध्वमुच्यते। गर्भश्चैवोद ज्ञेयं कटिश्च कटिमेखला ॥१॥
स्तम्भाश्च बाहवो ज्ञेया घण्टाजिह्वाप्रकीर्तिता। दीपः प्राणोऽस्य विज्ञेया ह्यपानो जलनिर्गमः ॥२॥
ब्रह्मस्थान यदेतच्च तन्नाभिः परिकीर्तिता। हृत्पद्मपिण्डिका ज्ञेया प्रतिमा पुरुषः स्मृताः ॥३॥
पादचारस्त्वहङ्कारो ज्योतिस्तच्चक्षुरुच्यते। तदूर्ध्वं प्रकृतिस्तस्य प्रतिमात्मा स्मृतो बुधैः ॥४॥
तलकुम्भादधोद्वार तस्य प्रजननं स्मृतम्। शुकनासा भवेन्नासा गवाक्षः कर्ण उच्यते ॥५॥
कायपाली स्मृतः स्कन्धो ग्रीवाचामलसारिका। कलशस्तु शिरा ज्ञेयं मज्जादिप्रमरं हितम् ॥६॥
मेदश्चैव सुधां विद्यात्प्रलेपो मांस उच्यते। अस्थीनि च शिलास्तस्य स्नायुः कीलादयः स्मृता ॥७॥

फिर इन्द्रादि दश दिक्पालों को मण्डप के बाहर आकर त्रातारमिन्द्रम्—इत्यादि मन्त्रों से बलि देकर देवके समीप में आकर यथासम्भव सुवर्णादि देकर देवता को आत्मा का निवेदन कर प्रणाम करे। इसके बाद मण्डप के उत्तर तण्डुल

के अष्टक दलके ऊपर स्थित भद्रासन पर बैठे सपरिवार यजमान का सम्पातकलशजलों से अभिषेक करे। फिर

चक्षुषोःशिखरास्तस्य ध्वजाः केशाः प्रकीर्तिताः। एवं पुरुषरूपं ते ध्यात्वा च मनसा सुधीः ॥८॥
जगत्या सह प्रासाद सन्ध्यायां स्थापयेत्ततः। प्रसादं पूजयेत्पश्चाद्गन्धपुष्पध्वजादिभिः ॥९॥
सूत्रेण वेष्टयेद्देवे वासस्तत्परिकल्पयेत्। प्रसादमेवमभ्यर्च्य वाहनं चाग्रमण्डपे ॥१०॥ इति।
तत आचार्यः स्वकुण्डे 'ॐ वास्तोष्पते' इति मन्त्रेणाष्टोत्तरशतमाज्यतिलान्यतरद्रव्येण हुत्वा यावन्तः स्थाप्यदेवास्तन्मन्त्रेण चाष्टोत्तरशतसङ्ख्यया आज्येन तिलैर्वा जुहुयात् पञ्चकुण्ड्यादिपक्षेऽप्ययं होम आचार्यकुण्डे एव। ततः—'ॐत्रातारमिन्द्र०' इत्यादिदशमन्त्रैरिन्द्रादिभ्यो मण्डपाद्बहिरागस्य दिग्बलीन् दत्वा देवसमीपमागत्य यथासम्भवं सुवर्णादिकं दत्वा देवायात्मानं निवेद्य प्रणमेत्। अथ मण्डपादुत्तरतस्तण्डुलाष्टकदलोपरिस्थभद्रासनोपविष्टं सपरिवारं यजमानं सम्पात (शान्ति) कलशजलैरभिषिञ्चेयुः। ततो यजमानः आचार्य-मूर्तिप-ब्राह्मणस्थपत्यादीन्परितोषयेत्।

यजमान—आचार्य, मूर्तिप, ब्राह्मणस्थपति इत्यादियों को प्रसन्न करे।

प्र०

४४३

इसके बाद गुरु प्रासादके ईशानकोण या नैर्ऋत्यकोण में हस्तमात्रकी तीन वप्रया विना वप्रके चौसठपद का वास्तु

५० अथ गुरुः प्रासादान्तरीशान्यां नैर्ऋत्यां वा हस्तमितवेद्यां हस्तोच्छ्रितायां त्रिवप्रायामवप्रायां वा चतुःषष्टिपदं वास्तुपीठं कृत्वा, सपत्नीको यजमानः शुभासने प्राङ्मुख उपविश्य आचम्य

४४४ प्राणानायम्य देशकालौ सङ्कीर्त्य—अस्य वास्तोः शुभतासिद्ध्यर्थममुककर्माङ्गभूतं वास्तुदेवता-स्थापनपूजनं करिष्ये—इति सङ्कल्प्य "विशन्तु भूतले नागा" इत्यारभ्य पायसबलिदानान्तं मण्डपवास्तुवत्कुर्यात्। "सर्वेभ्यः काञ्चनं दद्याद् ब्रह्मणे गां पयस्विनीम्" इति 'विश्वकर्मप्रकाशो-प्रतिष्ठाकौमुद्युक्तेः। "शिखिने इदं सुवर्णं न मम" इत्यादि प्रकारेण सुवर्णबलिं आपवत्सान्तेभ्य दत्वा "ब्रह्मणे एषा पयस्विनी गौर्न मम" इति ब्रह्मणे गां दत्वा चरक्यादिभ्योऽपि सुवर्णं दद्यादिति। इदं कृताकृतं मयूखादावनुक्तत्वात्। ततः स्वस्वकुण्डे वायव्ये उत्तरे ईशान्यां वा संस्पातकलशस्थापनं विधिना कुर्यात्। (मूर्ति—मूर्तिपाद्यावाहनसमये वा इदं कलशस्थापनं कार्यम्) ततो ब्रह्मोपवेशनाद्याज्यभागान्तं कृत्वा यजमानो दक्षिणद्वारपश्चिमे उदङ्मुख उपविश्य ४४४

पीठ कर सपत्नीक यजमान वास्तुपूजन का संकल्पकर विशन्तु भूतले—यहाँ से प्रारंभकर पायसबलिदानान्त मण्डप-

वास्तुवत् करे। शिखिने इदं सुवर्णं न मम। इत्यादिप्रकार से सुवर्णबलि दे। कुशकण्डिका करे। तदनन्तर पवमानसूक्त

द्रव्यत्यागं कुर्यात्। "अस्मिन्कर्मणि इमानि उपकल्पितानि हवनीयद्रव्याणि या या यक्ष्यमाण देवतास्ताभ्यस्ताभ्यो मया परित्यक्तानि न मम। यथा दैवतानि सन्तु। ततो गणपत्याहुतिः। ततः—"पठध्वम्" इति द्वारपान्, "यजध्वम्" इति होतॄन्, "उत्कृष्टमन्त्रजाप्येन निष्ठध्वम्" इति जापकान् प्रेषयेत्। जापकैर्द्वारपालैश्च स्वस्वजपे क्रियमाणे होमः कार्यः। आदौ गणपत्याहुतिः। ततो वास्तुदेवताहोमः। ततो ग्रहस्थापनं ततो ग्रहहोम इति मयूखक्रमः। आधुनिकास्तु—ग्रहहोम कृत्वा वास्तुहोममिच्छन्ति तदा तेषां स्थापनमपि अग्निस्थापनोत्तरं वास्तोः प्रागेव कर्तव्यम्। ततः—"कृणुष्वपाजः प्र०" शत्रून् इति पञ्चमन्त्रात्मकेन रक्षोघ्नसूक्तेन, पुनन्तु मा पितरः सो० रयीणाम्" इति नवमन्त्रात्मकेन पावमानेन च सूक्तेन त्रिसूत्र्या प्रासादं संवेष्टय जलदुग्धयोः पृथगविच्छिन्नधाराद्वयं स्तनकुम्भीभ्यां दत्वा मण्डलमध्यमपदचतुष्टये सुरूपां पृथिवीं ध्यात्वा "पृथिव्यै नमः" इति सम्पूज्य "ॐसर्वदेवमयं वास्तु सर्वदेवमयं परम्" इति पठित्वा मात्स्यादौ वास्तु निक्षेप-स्यानुक्तत्वाद्विकल्पेन करणपक्षे पीठे पूजितां सौवर्णीं वृषवास्तुप्रतिमां दधि-दुर्वा-सप्तधान्य-शैवाल-

द्वारा त्रिसूत्री से प्रासाद का वेष्टन तथा जल-दुग्ध की धारा अलग अलग दे। फिर पृथ्वीका ध्यान कर सुवर्ण की वृष

वास्तु प्रतिमा बनाकर मट्टी के भाण्ड में स्थापन कर जानुमात्र गढे में पूजनपूर्वक स्थापन करे। फिर मट्टी से गढे

गन्धाक्षत-युतेऽपक्वमृद्भाण्डे संस्थाप्य तत्पिधाय प्रासादस्याग्नेये ईशानकोणादष्टमे आकाशपदे जानुमात्रं गर्तं खनित्वा "ॐनमो वरुणाय" इति जलमापूर्य गन्धपुष्पाणि प्रक्षिप्य मृद्भाण्डं तत्र निधाय पठेत्—"पूजितोऽसि मया वास्तो होमाद्यैरर्जनैः शुभैः। प्रसीद पाहि विश्वेश देहि प्रसादजं सुखम् १ वास्तुपुरुष नमस्तेऽस्तु भूशय्याभिरतप्रभो। मद्गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरु सर्वदा" इति दानमयूखे। यथा मेरुगिरेः शृङ्गं देवानामालयः सदा। तथा ब्रह्मादिदेवानां मम यज्ञे स्थिरो भव ३ भगवन्देवदेवेश ब्रह्मादिदेवतात्मक। तवार्चनं कृतं वास्तो प्रसादं कुरु मे प्रभो ४ प्रार्थयामीत्यहं देवं प्रासादस्याधिपस्तु यः। प्रायश्चित्तं प्रसङ्गेन प्रासादार्थे तु यत्कृतम् ५ मूलच्छेद तृणच्छेद-कृमि-कीटनिपातनम्। हवनं जलजीवानां भूमौ शस्त्रेण घातनम् ६ अनृतं भाषितं यच्च ।कश्चिद्वृक्षस्य पातनम्। एतत्सर्वं क्षमस्वैनो यन्मया दुष्कृतं कृतम् ७ प्रासादार्थं कृतं पापमज्ञानेनाप्यचेतसा। तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रासादं च शुभं कुरु ८ सशैलसागरां पृथ्वीं यथा वहसि मूर्द्धनि। तथा मां वह कल्याणसम्पत्सन्ततिभिः सह ९ इति ततः गर्तं मृदा पूरयेत्। मृद आधिक्ये शुभम्। गर्तोपरि भूमिं गोमयादिनोपलिप्य गन्धादिभिर्भूषयेत। इति प्रासादवास्तुपूजनम्।

को भर दे। फिर उस भूमि पर गोमय से लेपन कर पूजन करे।

५.० ४४६ प्र० ४४६

(शिखर का स्वरूप)
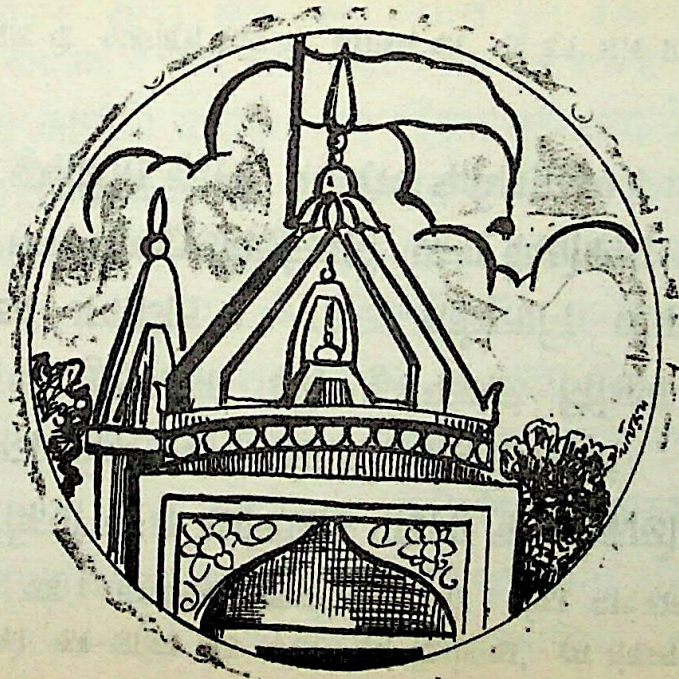
* अथ प्रसादोत्सर्गकर्म *

कर्ता—आचमनादि क्रिया को कर शान्ति पाठ पढ़कर 'इमं शिलेष्टका' इस संकल्प को कहकर देव को नमस्कार कर सर्वभूतेभ्यः—इस श्लोक को कहे। तदनन्तर ब्राह्मणभोजन करावे। फिर सायंकालीन बलिदान कर आचार्य के

कर्ता—आचमनादिक्रियां कृत्वा शान्तिपाठं पठित्वा च देशकालौ सङ्कीर्त्य—'इमं शिलेष्टकादार्वादिनिर्मितं बलभिजगतीप्रकारगोपुरपरिवारदेवतालयादिसंयुतं तत्तद्देवतालोकवाप्तिकामः कुलद्वयाग्रहायामुकदेवताप्रीतयेहमुत्सृजामि' इति कुशयवजलं निक्षिप्य देवं नत्वा ॐ सर्वभूतेभ्य उत्सृष्टः प्रसादोऽयं मयार्जितः। रमन्तु सर्वभूतानि छायासंश्रयणादिभिः इति। ततो ब्राह्मणान्भोजयेत्। ततः सायङ्कालीनबलिदानं कृत्वा वेदघोषपुराणपठनादिना आचार्ययुतो यजमानौ रात्रौ जागरणं कुर्यादिति देवस्य प्रसादस्य चाधिवासनम्। इति देवस्थापनपूर्वदिवसकृत्यम्।

सहित यजमान पुराण, वेद, आदि के पाठादिसे रात्रि में जागरण करे यह देव और प्रासाद का अधिवासन है। वह के देवस्थापन पहले दिन करे।

❀ अथ स्थापनदिवसकृत्यम् ❀

इसके बाद स्थापन मुहूर्तदिन में आचार्य जितने देवता स्थापित होंगे उनके मूलमन्त्रों से अष्टोत्तरशादि किसी पक्ष से घृतसे हवनकर मूर्तिप, लोकपालों के लिए पूर्वोक्त मन्त्रों से तिल आदि द्रव्य से अपने कुण्ड में और पञ्चकुण्डि

अथ स्थापनमुहूर्तदिने आचार्यो यावत्यः स्थाप्यदेवतास्तत्तन्मूलमन्त्रेणाष्टोत्तरशताष्टाविंशत्य-न्तरसंख्यया घृतेन हुत्वा मूर्तिप-लोकपालेभ्यः पूर्वोक्तैस्तत्तन्मन्त्रैश्च प्रत्येकमष्टोत्तरशताष्टाविंशत्यन्य-तरसंख्यया समित्तिलघृतान्यतमद्रव्येण स्वकुण्डे जुहुयात्। अयमधिवावासनोत्तरहोमः स्वकुण्डे एव पञ्चकुण्ड्यादिपक्षेऽपि। ते च मन्त्राः—ॐ स्योनापृथि० १ अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोर-तरेभ्यः। सर्वेभ्यः सर्वसर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः २ त्राता मि० ३ अग्निं दूतं० ४ तेजः पशूनाᳪं हविरिन्द्रियावंत्परिस्रुतापयंसासा घम्मधु। अश्विभ्यान्दुग्धम्भिषजासरस्वत्यासुता-सुताभ्याममृतःसोमऽइन्दुः ५ त्वन्नोऽअग्ने० ६ सुवीरोव्वीरान्प्रजनयन्परीह्यभिरायस्पोषेण यजमानम्॥ सञ्जग्मानोदिवापृथिव्याशुक्रः शुक्रशोचिषानिरस्तः शण्डः शुक्रस्याधिष्ठान-

पक्षमें भी हवन करे। वे मन्त्र ये हैं—स्योना पृथिवी, अघोरेभ्योऽथ, त्रातारमिन्द्रम्, अग्निं दूतम्, तेजः पशूनाम्, त्वन्नो अग्ने, सुवीरो वीरान्, उग्रश्च, यमाय त्वा, उदुत्यम्, इमा रुद्राय, असुन्वन्तम, आपो हि, नमो बभ्लूशाय, इमं

ब्रह्मशिलायां रत्नन्यासः
ईशानपूर्वयोर्मध्ये
पूर्व
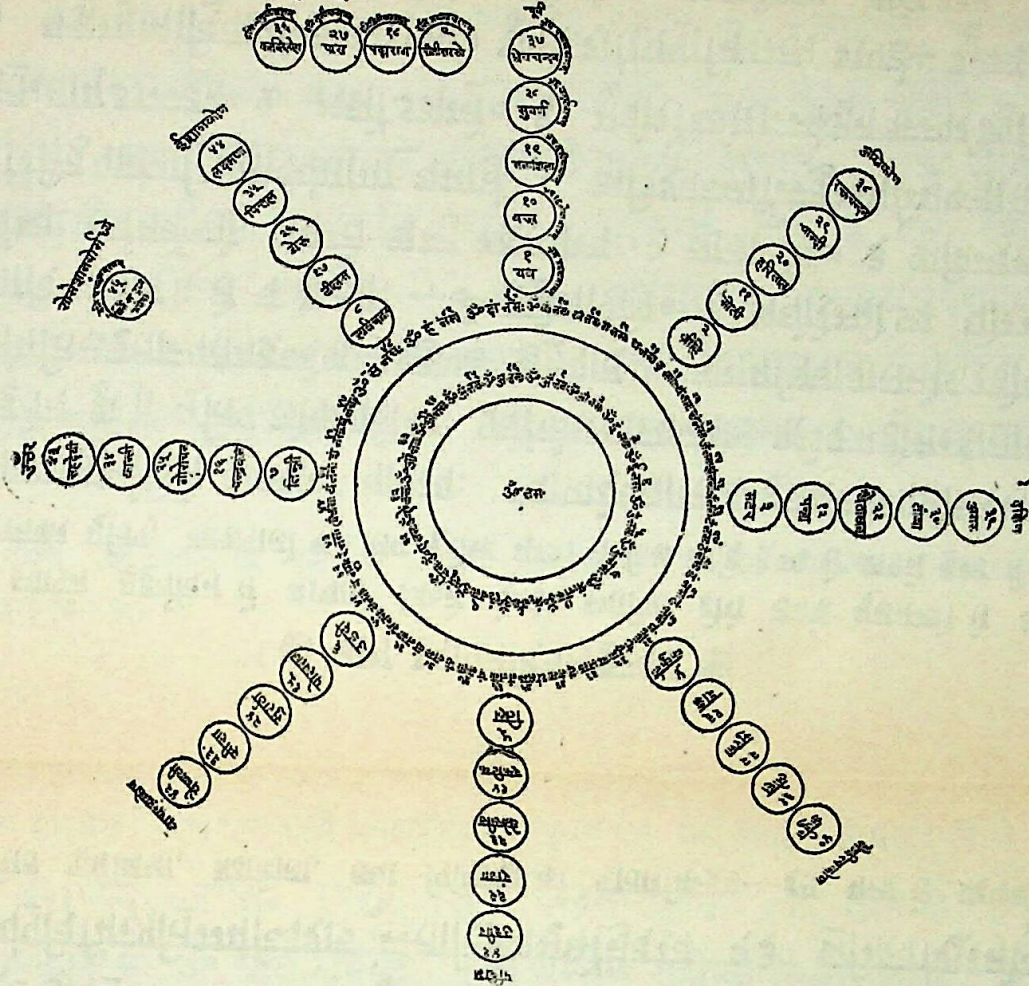
ने, तव वाय, आ नः, वयर्ठ० सोम, उग्रं लोहितेन, अभित्यम्, आदित्यं गर्भम्, मृगो न भीमः और अभित्वा।

मसि ७ उग्रश्श्च भी० ध्रमायत्वाङ्गिर० ९ उदुत्यञ्जा० १० इमारुद्राय० ११ असुन्न्वन्तम० १२ आपो हि० १३ नमोबब्भ्लुशायंव्व्याधिनेन्नानाम्पतंयेनमोनमो भवस्य हेत्यै जगंताम्पतंये नमो नमो रुद्राययाततायिनेक्षेत्राणाम्पतंयेनमोनमंःसूतायाहंन्त्यैव्वनानाम्पतंनमंः १४ इमम्मे वरुण० १५ तवंव्वायवृतस्पतेत्वष्टुर्ज्जामातरद्भुत। अवाछंस्यावृणीमहे १६ तमीशानम्० १७ आनोनियुद्भिः १८ व्वयर्ठ० सो० १९ उग्रंलोहितेन० २० अभित्यन्देवर्ठसवितामोण्योः कविक्रतुमर्च्चामिसत्यसंवर्ठ० रत्नधामभिप्रियम्मतिङ्कविम्। ऊर्ध्वायस्यामतिर्भाऽअदिद्युतत्सवीमनिहिरंण्ण्यपाणिरमिमीतसुक्रतुःकृपास्वः॥ प्रजाब्भ्यंस्त्वाप्प्रजास्त्वानुप्प्राणन्तुप्रजास्त्वमनुप्राणिहि २१ आदित्यङ्गर्ब्भम्पयंसासमंद्धिसहस्रंस्यप्प्रतिमांव्विश्श्वरूपम्॥ परिवृङ्धिहरंसामाभिमंर्ठस्थाः शतायुंषङ्कृणुहिचीयमानः २२ मृगोनभीमःकुचरोगिरिष्ठाःपरावतऽआजंगन्थापरंस्याः॥ सृकर्ठसर्ठशायंपविमिन्द्रतिग्ग्मंव्विशत्रून्तार्ढिव्विमृधोनुदस्व २३ अभित्वाशूरनोनुमोदुग्ग्धाऽ

तदनन्तर अधिवासित कूर्मशिला, ब्रह्मशिला, तथा पिण्डिका को त्रातारमिन्द्रम्—इस मन्त्र से ग्रहणकर विघ्नभात्रार्थ

अस्त्रायफट्—इस अस्त्रमन्त्रसे पुष्पोदकधारासे प्रसादगर्भका अभ्युक्षण कर महाँ इन्द्रः—से प्रसादगर्भ में अस्त्र से लिखकर

इवधेनवः ॥ ईशानमुस्यजगतः स्वर्द्दृशमीशानमिन्द्रतस्थुषः २४ ततोऽधिवासितां कूर्मशिलां ब्रह्मशिलां पिण्डिकां च 'ॐ त्रातारमिन्द्रं' इति मन्त्रेण गृहीत्वा विघ्नभावार्थं 'ॐ अस्त्राय फट्' इति अस्त्रमन्त्रेण पुष्पोदकधारया प्रसादगर्भमभ्युक्ष्य ॐ महाँ २ ऽइन्द्रोवऽओजंसापर्जन्न्योवृष्टि-माँऽइव ॥ स्तोमैर्व्वत्स्यस्यंव्ववृधे॥ उपयामगृहीतोसिमहेन्द्रायत्वेषतेयोनिर्म्महेन्द्रायत्वा ॥ इतिमन्त्रेण प्रासादगर्भे अस्त्रेणोल्लिख्य 'ॐ अस्त्राय फट्' इत्यभिमन्त्रितेन जलेन पुनः प्रासाद (द्वार) गर्भं (गर्भगारमध्यञ्चोत्तरसूत्रसंपातेन) संसाध्य प्रासादस्य मध्याद्यवेन यवार्द्धेन वा ईशानीमुत्तरां वा दिशमाश्रित्त स्नादिसंस्कृतां कूर्मशिलां प्रोक्ष्य मध्यं साधयित्वा (देवदृष्टिपूतं निर्णीय) तत्र 'ॐ' इतिप्रणवेण पञ्चरत्नानि तदुपरि 'ॐ' इति प्रणवेन कूर्मशिलां निधाय तन्मध्यच्छिद्रे सौवर्णं कूर्मं द्वाराभिमुखं निधाय तदुपरि पञ्चरत्नानि 'ॐ' इति प्रणवेन निधाय (३६।४५ गर्तयुतां वा) ॐ नमो व्यापिनि स्थिरेऽचले ध्रुवे 'ॐ श्रीं लं स्वाहा' इतिमन्त्रेण ब्रह्मशिलां निधाय अक्षतपुष्पैः

लिखकर फिर अस्त्राय फट्—से अभिमन्त्रित जलसे फिरसे प्रासाद द्वार गर्भ का (कूर्म) शिलाका प्रोक्षण कर प्रार्थना

आदिकर त्वनो—इस श्लोक से कर वर्णाध्वने नमः—इत्यादि से नमस्कार कर पुण्याहवाचनकर यागमण्डप में आकार आचार्य अपने ही कुण्डमें एक सौ आठ बार घी से स्थाप्य देवता का हवन करे।

(यथाशक्ति) संपूज्य प्रार्थयेत्—ॐ त्वमेव परमाशक्तिस्त्वमेवासनधारिका। शिवाज्ञया त्वया देवि स्थातव्यमिह सर्वदा ॥ इति सम्प्रार्थ्य 'ॐ वर्णाध्वने नमः १ ॐ पादाध्वने न० २ ॐ मन्त्राध्वने न० ३ ॐ भुवनाध्वने न० ४ ॐ तत्त्वाध्वने न० ५ ॐ सकलाध्वने न० ६ इति नमस्कारं कुर्वन् सकलमध्वानं ब्रह्मशिलारूढं ध्यात्वा पुण्याहवाचनं कुर्यात्। तद्यथा—'अस्य स्थाप्यदेवस्य पिण्डिकास्थानाख्यस्य कर्मणः पुन्याहं० कल्याणं० ऋद्धि०। स्वस्ति भ०। ततो यागमण्डपमागत्य आचार्यः स्वकुण्डे स्थाप्यदेवस्य देवयोर्देवानां वा मन्त्रेण अष्टोत्तरशतमाज्याहुतीर्जुहुयात्। (अयं होमोऽन्यकुण्डेषु न कार्यः पञ्च कुण्ड्यादिपक्षे)।

अथ सश्वभ्रब्रह्मशिलापक्षे ब्रह्मशिलायां सहम्ना हस्तेन रत्नान्यासं कुर्यात्। तद्यथा—हस्तेन शिलां स्पृष्ट्वा मध्ये—ॐनमः १ तद्बाह्ये—ॐ अँ नमः १ ॐ आं नमः २ ॐ इं नमः ३ ॐ ईं नमः ४ ॐ उं नमः ५ ॐ ऊं नमः ६ ॐ ऋं नमः ७ ॐ ॠं नमः ८ ॐ लृं नमः ६

इसके बाद सुवर्णहस्तसे रत्नन्यास करे। फिर पूर्वादिछिद्रों में यवादि औषधियों का प्रक्षेप कर यवपिष्टसे पूरण

करे। देवमन्त्रों से शिवादिपिण्डिकाओं का अभिमन्त्रण करे।

ॐ लॄं नमः १० ॐ एं नमः ११ ॐ ऐं नमः नमः १२ ॐ ओं नमः १३ ॐ औं नमः १४ ॐ अं नमः १५ ॐ अः नमः १६ इति षोडशस्वरान्विन्यसेत्।

तेषां परितो व्यञ्जनानि विन्यसेत्—ॐ कं नमः ॐ खं नमः २ ॐ गं नमः ३ ॐ घं नमः ४ ॐ ङं नमः ५ ॐ चं नमः ६ ॐ छं नमः ७ ॐ जं नमः ८ ॐ झं नमः ९ ॐ ञं नमः १० ॐ टं नमः ११ ॐ ठं नमः १२ ॐ डं नमः ॐ १३ ॐ ढं नमः १४ ॐ णं नमः १५ ॐ तं नमः १६ ॐ थं नमः १७ ॐ दं नमः १८ ॐ धं नमः १९ ॐ नं नमः २० ॐ पं नमः २१ ॐ फं नमः २२ ॐ बं नमः २३ ॐ भं नमः २४ ॐ मं नमः २५ ॐ यं नमः २६ ॐ रं नमः २७ ॐ लं नमः २८ ॐ वं नमः २९ ॐ शं नमः ३० ॐ षं नमः ३१ ॐ सं नमः ३२ ॐ हं नमः ३३ ॐ क्षं नमः ३४।

प्र०
४५५

ततो बाह्यपरिधौ तदन्तश्चतुर्षु परिधिषु च पूर्वादितोऽष्टदिक्षु पूर्वेशानमध्ये च क्रमेण-नवसु छिद्रेषु—पूर्वे यव, वज्र, मनःशिला, सुवर्ण, श्वेतचन्दन। आग्नेय—व्रीहि, मौक्तिक, हरिताल, रौप्य, रक्तचन्दन। दक्षिणे—निष्पाव, वैडूर्य, अञ्जन, ताम्र, अगरु। नैर्ऋत्ये—प्रियङ्गु, शङ्ख, श्यामाञ्जन, आयस, अर्जुन। पश्चिमे—तिल, स्फटिक, कौसीस, त्रपु, उशीर। वायव्ये—माष, पुष्पराग, सौराष्ट्री, सीस, वैष्णवी। उत्तरे—नीवार, चन्द्रकान्त, गोरोचना, कांस्य, सहदेवी। ईशाने—शालि, इन्द्रनील, गैरिक, आरकूट, लक्ष्मणा। पूर्वेशानमध्ये-सिद्धार्थकान्, पद्मरागान्, पारदान्, तीक्ष्णलोहानि प्रथमावरणभू। द्वितीयाव० तृतीयाव० चतुर्थाव पञ्चमावरणम् (अत्रबीजानामभावे यवान्, रत्नानामभावे—वज्रं, धातूनामभावे हरितालम्, ताम्राद्यभावे सुवर्णम्, औषधीनामभावे सहदेवीं न्यसेत्) एवं न्यस्तानां पदार्थानां ॐ त्रातारमि० १ ॐ त्वन्नो अ० २ ॐ यमाय त्वा० ३ ॐ असुन्वन्त० ४ ॐ तत्त्वा या० ५ ॐ आनो नि० ६ ॐ व्वयꣳ सो० ७ ॐ तमीशान० ८ ॐ अस्मे रुद्रा० ९ ॐ स्योनापृ० १० इति दिक्पालमन्त्रैरालम्भनं कुर्यात्। तच्छिद्राणि यवपिष्टादिना पूरयेत्। ततो ब्रह्मशिलोपरि कूर्मशिलोपर्यैव वा पूर्वपश्चिममुखे प्रसादे उत्तरप्रणालीं, दक्षिणोत्तरमुखे प्रसादे

पूर्वप्रणालीं ॐ ध्रुवासिध्रुवा ऽस्यजमानोस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात् । घृतेनद्यावापृथिवी-पूऽर्य्यथामिन्द्रस्यच्छदिरसि विश्वजनस्यच्छाया ।। इति मन्त्रेण निधाय देवपत्नीलिङ्गकमन्त्रेण पिण्डिकामभिमन्त्रयेत् । तत्र शिवापिण्डिकायाः । ॐ आपो हि ष्ठा० ॐ अम्बे अ० । ॐ जात-वेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहातिवेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरिता-त्यग्निः ।। एषामन्यतमो मन्त्रः । 'ॐश्रीश्च ते०' इति विष्णुप्रतिष्ठामन्त्रः । ॐ तत्सवितु० । इति ब्रह्मणः पिण्डि० । ॐ अम्बे अ० १ ॐ उषस्तच्चित्रमाभरास्मभ्यंवाजिनीवति । येनतोकञ्च तनयञ्चधामहे ।। इति सूर्यपि० । ॐ पावकानःसरस्वतीवाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञंवष्टुधियावसुः ।। इति गणेशपिण्डि० । ॐ अम्बे अ० देवीपि० । अन्येषां सर्वेषां पिण्डिकायाः ॐ जात-वेदसे सुनवाम सोममरातीयतो नि दहातिवेदः । स नः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरिता-त्यग्निः ।। इति मन्त्रः ।

❀ अथ पिण्डिकायां तत्त्वन्यासः ❀

ॐ आत्मतत्त्वाय नमः ॐ आत्मतत्त्वाधिपतये क्रियाशक्त्यै नमः १ ॐ शिवतत्त्वाय नमः

फिर पिण्डका में तत्त्वन्यास करे।

शिवतत्त्वाधिपतये इच्छाशक्त्यै नमः २ ॐ विद्यातत्त्वाय नमः विद्यातत्त्वाधिपतये ज्ञानशक्त्यै नमः ३ इति।

❀ अथ पिण्डिकायां मूर्तिप-लोकेशन्यासः ❀

ॐ पृथिवीमूर्त्तये नमः ॐ इन्द्राय नमः १ ॐ अग्निमूर्तये नमः ॐ अग्निमूर्त्यधिपतये पशुपतये नमः ॐ अग्नये नमः २ ॐ यजमानमूर्तये नमः ॐ यजमानमूर्त्यधिपतये उग्राय नमः ॐ यमाय नमः ३ ॐ सूर्यमूर्तये नमः ॐ सूर्यमूर्त्यधिपतये रुद्राय नमः ॐ निर्ऋतये नमः ४ ॐ जलमूर्तये नमः ॐ जलमूर्त्यधिपतये भवाय नमः ॐ वरुणाय नमः ५ ॐ वायुमूर्तये नमः ॐ वायुमूर्त्यधिपतये ईशानाय नमः ॐ वायवे नमः ६ ॐ सोममूर्तये नमः ॐ सोममूर्त्यधिपतये महादेवाय नमः ॐ कुबेराय नमः ७ ॐ आकाशमूर्तये नमः ॐ आकाशमूर्त्यधिपतये भीमाय नमः ॐ ईशानाय नमः—इति।

फिर पिण्डिका में मूर्तिप—लोकेशका न्यास करे।

तदनन्तर-आधारशक्त्यै नमः—इत्यादिको कहकर गन्धाक्षतपुष्पों से पूजनकर प्रार्थना करे—सर्वदेवमयीशाने इत्यादि से। फिर पिण्डिकागर्त में पञ्चरत्न तथा नवरत्न छोड़ दे या पैंतालिस पूर्वोक्त गर्तों में रत्नादिका प्रक्षेपकर पारदको

सर्वदेवप्रतिष्ठासु मूर्तिपास्त्वेत एव हि, इतिमात्स्यादेतदेव तस्य मूर्तिपाः सर्वत्रेत्युक्तं प्राक्। ततः—ॐ आधारशक्त्यै नमः १ ॐ अनन्तासनतत्त्वेभ्यो नमः २ ॐ आसनशक्तिभ्यो नमः ३ इत्युक्त्वा गन्धाक्षतपुष्पैः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—ॐ सर्वदेवमयीशाने त्रैलोक्याह्लादकारिणि। त्वां प्रतिष्ठापयाम्यत्र मन्दिरे विश्वनिर्मिते। यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावदेषा वसुन्धरा। तावत्त्वं देवदेवेशि मन्दिरेऽस्मिन्स्थिरा भव। पुत्रानायुष्मतो लक्ष्मीमचलामजरामृताम्। अभयं सर्वभूतेभ्यः कर्तुर्नित्यं विधेहि भो। विजयं नृपतेः सर्वलोकानां क्षेममेव च। सुभिक्षं सर्ववस्तूनां कुरु देवि नमो नमः॥ ततः पिण्डिकागर्ते पञ्चरत्नानि नवरत्नानि पञ्चचत्वारिंशद्वा पूर्वोक्तानि रत्नादीनि निक्षिप्य पारदं च निक्षिप्य गुग्गुलरसादिना रत्नानि स्थिरीकृत्य मधुना पायसेन च श्वभ्रमनुलिप्य वस्त्रेणाच्छाद्य

छोड़कर गुग्गुल रस आदि से रत्नोंको स्थिरकर सहत और पायस से सफेद अनुलेपनकर 'कवचाय हुम्'-इस मंत्रसे अवगुण्ठनकर 'अस्त्राय फट्' से संरक्षणकर 'मनो जूतिः'—से प्रतिष्ठा करे। फिर दर्भ समुदायसे पञ्चगव्यसे प्रासादका अभ्युक्षण कर प्रासाद के बाहर पूर्वादिक्रमसे इन्द्रादि लोकपालों के लिए बली उनके मन्त्रों से देकर आचमन करे।

"ॐ कवचाय हुम्" इति मन्त्रेणावगुण्ठ्य (अवगुण्ठनमुद्रेयमभितो भ्रामिता सती) "ॐ अस्त्राय फट्" इति मन्त्रेण संरक्ष्य 'ॐ मनो जूतिर्जु॰" इति प्रतिष्ठापयेत्। ततो दर्भपिञ्जुलैः पञ्चगव्येन प्रासादमभ्युक्ष्य प्रासादाद् बहिः प्रागादिक्रमेण इन्द्रादिलोकपालेभ्यो माषभक्तबलीन् तत्तन्मन्त्रै-र्दत्वाऽऽचामेत्। इति पिण्डिकास्थापनम्।
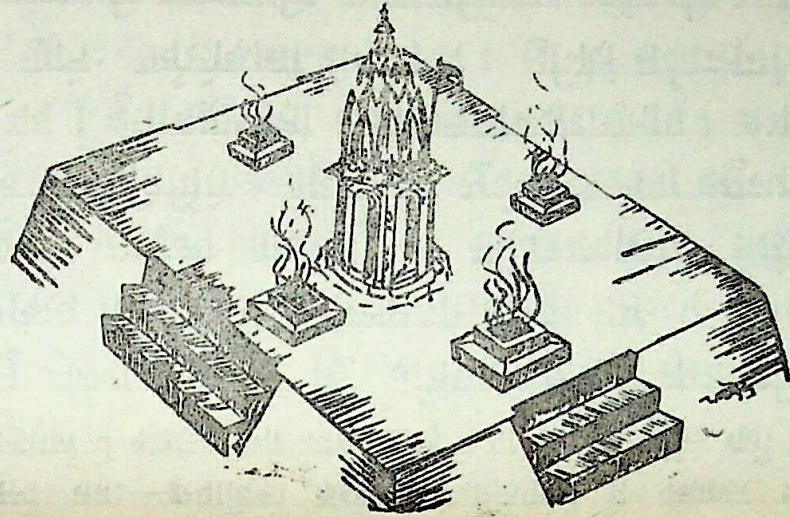
* अथ प्रासादबहिरष्टदिक्षु स्थण्डिलादिविधानम् *

तदनन्तर प्रसाद के बाहर आठों दिशाओं में एक-एक हाथ के आठ स्थण्डिलों का निर्माणकर ईशानादि भागों में आठ कलशों का स्थापनकर पञ्चभूसंस्कार पूर्वक अग्नियोंका प्रणयनादिकर प्रत्येक स्थण्डिल में पलाश समिधा से अष्टोत्तरसहस्रादि किसी पक्ष से मूल मंत्र द्वारा हवन करे और नारायणाय विद्महे—इस विष्णुगायत्री से घी से अष्टोत्तर

ततः प्रसादाद्बहिरष्टदिक्षु हस्तमितानि अष्टौ स्थण्डिलानि कृत्वा तत्तत्स्थण्डिलानामीशानभागेषु अष्टौ कलशान्मन्त्रवत्संस्थाप्य पञ्चभूसंस्कारान्कृत्वा अग्नीन् प्रणीय ब्रह्मोपवेशाद्याज्यभागान्ते प्रतिस्थण्डिलं पलाशसमिधामष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतं वा मूलमन्त्रेण हुत्वा "ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् इति विष्णुगायत्र्या च आज्येन अष्टोत्तरशतमष्टाविंशत्यष्टौ वा हुत्वा आचार्योऽष्टदिक्संस्थेभ्यः कुम्भेभ्यः पात्रे तोयमुद्धृत्य मूलमन्त्रेण शतकृत्वोऽभिमन्त्र्य प्रतिमासन्निधौ गत्वा "ॐ सर्वतीर्थमयमिदं जलम्" इति ध्यायन् देवस्य

शत, आठ या अठाइस बार हवनकर आचार्य स्थापित आठों कलशों से जलको ग्रहण एकमात्र में कर मूल मंत्र से सौ बार अभिमन्त्रणकर प्रतिमाके समीप में जाकर 'ॐ सर्वतीर्थमयमिदं जलम्'—ऐसा ध्यान करते हुए देवता के शिर पर अभिषेक करे ।

तदनन्तर 'ॐ नरसिंह उग्ररूप' इस मन्त्र से देवताका दिग्बन्धनकर मूर्तियों से साथ प्रबोध करावे। 'ॐ प्रबुध्यस्व महाभाग'—यह विष्णुका प्रबोधनका मन्त्र है। इसीतरह देवतान्तर में उन-उनके मन्त्रसे प्रबोधन करावे। तदनन्तर जल, क्षीर, कुशाग्र, तिल, चावल, यव, पीलीसरसों और पुष्पको शंखमें कर शंखमुद्रासे शंख से अर्घ्य देकर 'रथे तिष्ठन्' मूर्द्धिन अभिषिञ्चेत्। ततः—"ॐ नरसिंह उग्ररूप ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल हुँ फट्" इति मन्त्रेण देवस्य दिग्बन्धं कृत्वा मूर्तिपैः सह प्रबोधयेत्—ॐ प्रबुध्यस्व महाभाग देवदेव जगत्पते। मेघश्याम गदापाणे प्रबुद्धः कमलेक्षण। प्रबुद्धभूधरानन्त वासुदेव नमोऽस्तु ते॥ इति विष्णोः प्रबोधनमन्त्रः। एवं देवतान्तरे तत्तन्मन्त्रेण प्रबोधयेत् इति। ततः—जल-क्षीर-कुशाग्र-तिल-तण्डुल-यव-सिद्धार्थक-पुष्पाणि शङ्खे कृत्वा शङ्खमुद्रया शङ्खेनार्घ्यं दत्वा "ॐ रथे तिष्ठंन्नयतिव्वाजिनंः॥ पुरोयत्रयत्रकामयंतेसुषारथिः॥ अभीशूंनाम्महिमानम्पनायतमनंःपश्चादनुयच्छन्तिरश्मयंः॥ इति रथे उपवेश्य पुरतो गुरुः पृष्ठतो यजमानः पार्श्वतो मूर्तिपाः "ॐ आ नो भद्राः" इतिशान्ति-

इस मन्त्रसे रथमें बैठाकर आगे गुरु पीछे यजमान पार्श्वमें मूर्तियोंको 'आ नो भद्राः' इस शांतिपाठ से भ्रमण कराकर प्रासाद को प्रदक्षिणा कराकर रथ से उतारकर प्रसाद के दरवाजोंपर प्रासाद के द्वार के सम्मुख पीठ देवतास्थापन कराकर अर्घ्य देकर प्रासाद में प्रवेशकर पिण्डिका के समीप में रख वह यजमान देवता को पिण्डिका में स्थापन करे।

पायस आदि से पिण्डिकाकी शुद्धिकर सुवर्णके पद्मको श्वभ्रमें रखकर शुभमुहुर्त समय के समीप में आनेपर ईश्वरकी चिंता करते हुए यव या यवार्ध या उत्तराश्रित सुवर्णादि शलाकान्तरित मूर्ति या लिंगको पिण्डिका में स्थिर करे। वज्र

पाठेन परिभ्राम्य प्रासादं प्रदक्षिणीकृत्य रथादवतार्य प्रासादद्वारि प्रासादद्वारसंमुखे पीठे देवं संस्थाप्य अर्घ्यं दत्वा प्रासादं प्रवेश्य पिण्डिकासमीपे निधाय स यजमानो देशिको देवं पिण्डिकायां स्थापयेत्। पायसादिना पिण्डिकां परिमार्ज्य सौवर्णं पद्मं श्वभ्रे निधाय सुमुहूर्तसमये सन्निहिते आगते ईश्वरं विचिन्तयन् यव यवार्द्धं वोत्तराश्रितं वा सुवर्णादिशलाकान्तरितां मूर्तिं लिङ्गं वा पिण्डिकायां स्थिरी कुर्यात्। वज्रलेपादिना दृढां कुर्यात्। ततः-"ॐ मनो जूतिर्जुषता०" इति मन्त्रं पठित्वा ॐ लोकानुग्रहहेत्वर्थं स्थिरो भव सुखाय नः। सान्निध्यं कुरु देवेश प्रत्यक्षं परिपालय॥ प्रधानपुरुषो यावद्यावच्चन्द्रदिवाकरौ। तावत्त्वं मनया शक्त्या युक्तोऽत्रैव स्थिरो भव॥ इत्युक्त्वा-ॐ ध्रुवासिध्रुवोयंयजमानोस्मिन्नायतनेप्रजयापशुभिर्भूयात्। घृतेनद्यावापृथिवीपूर्य्येथामिन्द्रस्य च्छदिरसिव्विश्श्वजनस्यच्छाया॥ ॐ आत्वाहार्षमन्तरभूद्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः। व्विशस्त्वा

लेपादि से दृढी करे। फिर 'मनो जूतिः'-इस मंत्रको पढ़कर 'लोकानुग्रहहेत्वर्थम्'-इनको कहकर ध्रुवासि ध्रुवोऽयम्-और आत्वाहार्षम् इन दो मंत्रोंको पढ़कर 'स्थिरो भव शाश्वतो भव' यह कहे। तदनन्तर पिण्डका लिङ्गान्तर सीसा वजलेपा-

प्र० ४६३

दियों से दृढ़ करे। फिर न चालन करे।

सर्व्वांव्वाञ्छन्तुमात्वद्द्राष्ट्रमधिभ्रशत्॥ इति मन्त्रौ पठित्वा "ॐ स्थिरो भव शाश्वतो भव" इति वदेत्। ततः—पिण्डिकालिङ्गान्तरं सीसकवज्रलेपादिभिर्दृढं पूरयित्वा पुनर्न चालयेत्।

(अत्रैव जीवन्यासः कार्यः स च प्रागेव न्यासप्रकरणे उक्तः। "जीवन्यासं ततः कुर्यात्स्थापिते तु जगत्पतौ" इति पूर्वोदाहृतवचनात्। अद्यत्वे तु तत्रैव क्रियते नेदानीम्)।

❀ अथ प्राणप्रतिष्ठा ❀

ततो देवस्य मूर्ध्नि हृदये वा स्पृष्ट्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—सा यथा—'अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामाथर्वाणि छन्दांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रौं कीलकं प्राणप्रतिष्ठायां विनियोगः। (अत्र कमलाकरे विशेषः—ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः—शिरसि १ ॐ ऋग्यजुःसामछन्दो नमः—मुखे २ ॐ प्राणाख्यदेवतायै नमः—हृदि ३ ॐ आं बीजाय नमः—गुह्ये ४ ॐ क्रौं शक्त्यै नमः—पादयोः ५

प्राणप्रतिष्ठा विधि कहते हैं। देवता के शिर या हृदयका स्पर्शकर प्राण-प्रतिष्ठा करे। अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य—

इस विनियोगको करे। यहाँ पर कमलाकर के मत से विशेष है—ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः—इत्यादि से शिर

ॐ अं कं खं गं घं ङं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः १ ॐ इं चं छं जं झं ञं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं—शिरसे स्वाहा २ ॐ उं टं ठं डं ढं णं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ॐ शिखायै वषट् ३ ॐ एं तं थं दं धं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम् ४ ॐ पं फं बं भं मं ओं वचनादानविहरणोत्सर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट् ५ ॐ यं लं वं शं षं सं हं क्षं मनोबुध्यहङ्कारचित्तविज्ञानात्मने अः—अस्त्राय फट् ६ एवमात्मनि देवे च न्यासं कुर्यात् ॥

ततः—देवं स्पृष्ट्वा जपेत्—ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं देवस्य इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं शं षं सं हं सः देवस्य सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखेन सुचिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

मुख, हृदय, गुह्य, पाद, इत्यादि से न्यास करे। तदनन्तर देवका स्पर्शकर जप करे। 'ॐ आं ह्रीं क्रों—इत्यादिको पढ़े।

फिर ध्रुवासि, आत्वाहार्षम् तथा ध्रुवासि धरुणा—इनको जपकर देवताको सजीव ध्यानकर विश्वतश्चक्षुः—इससे देवता के

ततः—ॐ ध्रुवासिध्रुवोयंयजमानोस्मिन्नायतनेप्रजयापशुभिर्भूयात् । घृतेनद्यावापृथिवीपूर्य्येथामिन्द्रस्यच्छदिरसि विश्वजनस्यच्छाया ॥ आत्वाहार्षमन्तरभूर्द्ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः ॥ विशस्त्वासर्व्वावाञ्छन्तुमात्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत् ॥ ॐ ध्रुवासिधरुणास्तृताविश्वकर्मणा ॥ मात्वासमुद्र उद्वधीन्मासुपर्णोव्यथमानापृथिवीन्दृंह ॥ इति जपित्वा देवं सजीवं ध्यात्वा ॐ विश्वतश्च० इति देवस्य मूर्ध्नि हस्तं निधाय परदेवं ध्यात्वा—तत्तदेवानां प्रतिष्ठाकान् मात्स्योक्तान् जपेत् ॥

ॐ मनोमेतर्प्पयतव्वाचम्मेतर्प्पयतप्प्राणम्मेतर्प्पयतचक्षुर्म्मेतर्प्पयतश्श्रोत्रम्मेतर्प्पयतात्मानम्मेतर्प्पतप्रजाम्मेतर्प्पयतपशून्मेतर्प्पयतगणान्मेतर्प्पयतगणामेलाव्वितृषन् ॥ ऐन्द्रः प्प्राणोऽअङ्गेअङ्गेनिदीध्यदैन्द्रऽउदानोऽअङ्गेऽअङ्गे निधीतः । देवंत्वष्टर्भूरितेसः संमेतसलक्ष्मायद्विषुरूपम्भवाति ॥ देवत्राघन्तमवसेसखायोनुत्वामातापितरोमदन्तु ॥ व्वाचन्ते शुन्धामि प्प्राणन्ते-

शिरपर हाथ रखकर जप करे—मनो मे तर्पयत, ऐन्द्रः प्राणः, वाचं ते, वाचं ते, मनसा, अपां पेरुः, सन्ते, प्राणया मे, प्राणं मे,

प्राणाय मे, प्राणाय स्वाहा, अयं पुरः, अयं दक्षिणा, अयं पश्चात्, इयमुपरि इत्यादि प्राणमन्त्रोंका या प्राणसूक्तोंका
शुन्धामिचक्षुंस्तेशुन्धामिश्रोत्रंन्तेशुन्धामिनाभिन्तेशुन्धामिमेढ्रन्ते शुन्धामिपायुन्तेशुन्धामिचरित्राँस्ते शुन्धामि ।। मनस्त ऽआप्यायतां व्वाक्त ऽआप्यायताम्प्राणस्त ऽआप्यायताञ्चक्षुस्त ऽआप्यायतांछंश्रोत्रन्त ऽआप्यायताम् ।। यत्तेक्क्रूरं यदास्थितन्तत्त ऽआप्यायतान्निष्ट्यायतान्तत्ते शुद्ध्यतुशमहोब्भ्यः ।। ओषधेत्त्रायस्वधिते मैनं हिंसीः ।। अपाम्पेरुस्यापोदेवीःस्वदन्तु स्वात्तञ्चित्सद्देवहविः । सन्ते प्प्राणो व्वातेनगच्छताछंसमङ्गानियजत्त्रैः संय्यज्ञपतिराशिषा ।। सन्तेमनोमनं सासम्प्राणः प्प्राणेन गच्छताम् । रेडस्यग्निष्ट्वाश्रीणात्वापस्त्वासमरिणन्वातस्यत्वा-द्ध्राज्यैपूष्णोरछंह्यूर्ध्वा ऽऊष्मणोव्व्यथिषत्प्रयुतन्द्वेषः ।। प्राणपामे ऽअपानपाश्चक्षुष्पाः श्रोत्रपाश्चमे । व्वाचो मे व्विश्वभेषजोमनसो सिव्विलायकः ।। प्राणश्चमेपानश्चमेव्व्यानश्चमे सुश्चमेचित्तञ्चम ऽआधीतञ्चमेव्वाक्चमेमनश्चमेचक्षुश्चमेश्रोत्रञ्चमेदक्षश्चमेबलञ्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ।। प्प्राणम्मेपाह्यपानम्मेपाहिव्व्यानम्मेपाहिचक्षुर्म्म ऽउर्व्व्याव्विभाहिश्रोत्रम्मेश्श्लोकय । अपःपिन्वौष-
जप करे ।

प्र०

४६८

धीर्ज्जिन्वदद्विपादंव चतुंष्पाहि दिवोव्वृष्टिमेरंय ॥ प्राणायं मे व्वर्चोदा व्वर्च्चंसे पवस्व व्यानायं मे व्वर्च्चोंदा व्वर्च्चंसे पवस्वोदानायं मे व्वर्च्चोंदा व्वर्च्चंसे पवस्व व्वाचे मे व्वर्च्चोंदा व्वर्च्चंसे पवस्व क्रतूदक्षांभ्या म्मे व्वर्च्चोंदा व्वार्च्चंसे पवस्व श्रोत्रांय मे व्वर्च्चोंदा व्वर्च्चंसे पवस्व चक्षुंर्भ्याम्मे व्वर्च्चोंदसौ वर्च्चंसे पवेथाम् ॥ प्राणाय स्वाहांपानाय स्वाहां व्यानाय स्वाहा चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्राय स्वाहां व्वाचे स्वाहा मनंसे स्वाहा ॥ अयम्पुरो भुवस्तस्यं प्राणो भौवायनो व्वसन्तः प्राणायनो गायत्री व्वासन्ती गायत्र्यै गायत्रङ्गायत्रादुपांछंशुरुपांछशोस्त्रिवृत्त्रिवृतों रथन्तरं व्वसिष्ठ ऽऋषिः प्रजापंतिगृहीतया त्वया प्राणङ्गृह्णामि प्रजाभ्यः । अयन्दक्षिणा व्विश्वकर्म्मा तस्य मनो व्वैश्वकर्म्मणङ्ग्रीष्मो मानसस्त्रिष्टुब्ग्रैष्मी त्रिष्टुभः स्वारछं स्वारादन्तर्यामोन्तर्यामात्पञ्चदशः पञ्चदशाद्बृहद्भरद्वाज ऋषिः प्रजापंतिगृहीतया त्वया मनो गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ अयम्पश्चाद्विश्वव्यचास्तस्य चक्षुर्व्वैश्वव्यचसंव्वर्षाश्चाक्षुष्यो जगंती व्वार्षी जगंत्या ऽऋक्संममृक्संमाच्छुक्रः शुक्रात्संप्तदशः संप्तदशाद्वैरूपञ्जमदग्निर्ऋषिः प्रजापंतिगृहीतया व्व चक्षुर्गृह्णामि प्रजाभ्यः ॥ इदमुत्तरात्स्वस्तस्य श्रोत्रंछ सौवछ शरच्छ्रौत्र्यनुष्टुप्शारद्यनुष्टुभ ऐडमैडान्मन्थी मन्थिनं ऽएकविछंश ऽएकविछंशाद्वैराजं व्व

प्र०

४६८

तदनन्तर विष्णु का—तद्विष्णोः, रुद्र का नमस्ते, ब्रह्म का— ब्रह्मयज्ञानम्, सूर्य का—आ कृष्णे, गणपति का— गणानां त्वा,

श्श्वामित्र्ऽऋषिं ÷ प्प्रजापतिगृहीतयात्वयाश्रोत्त्रंङ् गृह्णामिप्प्रिजाब्भ्यं ÷ ॥ इयमुपरिमितिस्तस्यै

व्वाङ्मात्याहेमन्न्तो व्वाच्च्यः पङ्क्क्तिहैमन्न्तीपङ्क्त्यनिधनंवन्निधनंवतऽआग्ग्रयणऽआग्ग्रयणात्त्रिण-

वत्त्रयस्त्रिशौ शौत्त्रिणवत्त्रयस्त्रिंशा शाब्भ्यां छं शाक्करखतेव्विश्श्वकर्म्मऽ ऋषिं÷प्प्रजापतिगृहीत-

याव्वाचंङ्गृह्णामिप्प्रजाब्भ्योंलोकन्ता ऽइंन्द्रम् ॥ इत्यादिप्राणमन्त्रान् प्राणसूक्तं वा जपेत् । ततः—

विष्णोः—ॐ तद्विष्णोंः परमंपदं सदा पश्यन्ति सूरयं ÷ ॥ दिवीवचक्षुरातंतम् ॥ रुद्रस्य—

ॐ नमस्ते० । ब्रह्मणः—ॐब्रह्मयज्ञा० । सूर्यस्य—ॐ आकृष्णेन० । गणपतेः—ॐगणाना-

न्त्वा गण० । रामस्य—ॐ प्रतद्विष्णुंस्तवतेव्वीर्य्येणमृगोनभीमःकुचरोगिरिष्ठाः । यस्योरुषुंत्रिषुव्वि-

क्रमंणेष्व्वाधक्षियन्तिभुवंनानिव्विश्श्वा ॥ लक्ष्मणः—ॐ इदंव्विष्णुर्व्विच० । गौर्याः—ॐअम्बेऽ-

अम्बि० । लक्ष्म्याः—ॐश्रीश्चते ल० । नरस्य—ॐ व्विष्णोर्नुकंव्वीर्य्याणिप्रवोचंयःपा पर्थिवानि

व्विममेरजांछंसि ॥ योऽअस्कंभा दुतरंसधस्थंव्विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायोव्विष्णवेत्वा ॥ नारायण-

राम का-प्रतद्विष्णुः लक्ष्मण का-इदं विष्णु, गौरी का-अम्बे अम्बिके, लक्ष्मी का-श्रीश्च, नर का-विष्णोर्नुकम्, नारायण का

त्रिष्णोरराटम्, उद्धव का-तद्विप्रासः, नारद का-सप्तऋषयः, डरुड का-सुपर्णोऽसि, कृष्ण का-कृष्णोसि, सरस्वती का-पावकानः सरस्वती, हनुमान्का-आतिथ्यरूपम्, फिर देवता के हृदयको स्पर्श करता हुआ जप करें। विष्णुका पुरुषसूक्त, रुद्रका-

प्र०

स्य—ॐविष्णोरराटम०। उद्धवस्य—ॐतद्विप्रासोविपन्न्यवो जागृवाछंसः समिन्धते। विष्णोर्यत्परमम्पदम्॥ नारदस्य—ॐ सप्तऽऋषयः प्रतिहिताः शरीरेसप्तरक्षन्तिसदमप्प्रमादम्॥ सप्तापः स्वपतोलोकमीयुस्तत्त्रंजागृतोऽअस्वप्नजौ सत्त्रसदौ च देवौ॥ गरुडस्य—ॐसुपर्णोऽसिगरुत्मान्पृष्ठेपृथिव्याः सीद। भासान्तरिक्षमापृणज्योतिषादिवमुत्तंभानतेजसादिशऽउद्दृंह॥ राधायाः—ॐ अम्बेऽअम्बिके०॥ कृष्णस्य—ॐकृष्णोस्याखरेष्ठोऽग्नयेत्वाजुष्टम्प्रोक्षामिवेदिरसिबर्हिषेत्वाजुष्टाम्प्रोक्षामिबर्हिरसिस्रुग्भ्यस्त्वाजुष्टम्प्रोक्षामि॥ सरस्वत्याः—ॐ पावकानः सर०। हनुमतः—ॐ आतिथ्यरूपम्मासरम्महावीरस्य नग्नहुः॥ रूपमुपसदामेतत्तिस्रोरात्रीः सुरासुता॥ ततः—देवस्य हृदयं स्पृशन् जपेत्। विष्णोः—पुरुषसूक्तम्। रुद्रस्य—रुद्रसूक्तम्। ब्रह्मणः—ब्रह्मसूक्तम्। रवेः—सूर्यसूक्तम्। एवमन्येषां देवानां तत्तद्दैवताकं सूक्तं जपेत्। सूक्ताभावे तु तत्तद्देवप्रकाश-

४७०

रुद्रसूक्त, ब्रह्माका-ब्रह्मसूक्त, रविका-सूर्यसूक्त,। इसप्रकार अन्य देवताओं के सूक्तका जप करे। सूक्त के अभाव में तो

उन-उन देवताओं के प्रकाश करनेवाले मन्त्रों का ही जप करे। तदनन्तर ॐ भूः ॐ भुवः, इस इस मन्त्र का जप करे।
पिण्डिकामन्त्र होम कहते हैं। तदनन्तर पूर्वोक्त कहे हुए पिण्डिका मन्त्रों से, वाहन मन्त्रों से और परिवार देवता मन्त्रों से प्रत्येक के लिए अठाइस बार तिलों से आचार्य अपने कुण्ड में हवनकर जितने स्थापित देवता है उनका उनके

कान् मन्त्रानेव जपेत्। ततः—'ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः ॐ जनः ॐ तप ॐ सत्यं ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपोज्योतिरसोमृतं ब्रह्म-भूर्भुवः स्वरोम्। इति जपेत्।

❀ अथ पिण्डिकामन्त्रहोमः ❀

ततः पूर्वोक्तः पिण्डिकामन्त्रैः वाहनमन्त्रः परिवारदेवतामन्त्रैश्च प्रत्येकमष्टाविंशतिसङ्ख्यया तिलैराचार्यः स्वकुण्डे हुत्वा यावत्यः स्थाप्यदेवतास्तत्तन्मन्त्रेण च त्येकमष्टोत्तरशतं चरुणाऽऽचार्यः स्वकुण्डे जुहुयात्। पञ्चकुण्डीनवकुण्डीपक्षे ऽप्ययं होम आचार्यकुण्डे एव। अयं होमः प्रासादा-धिवासनाङ्गः।

मन्त्रों से प्रत्येकको अष्टोत्तरशत बार चरु से आचार्य अपने कुण्ड में हवन करे। पंचकुण्डी और नवकुण्डी में भी यह हवन आचार्यकुण्ड में ही होता है। यह प्रासादाधिवासनांग है।

❀ अथ वाहनमन्त्रहोमः ❀

अब वाहनमन्त्र होम कहते हैं। गरुड़ का-सुपर्णोऽसि, नन्दी का-आशुः शिशानः, मूषक का-एष ते रुद्र, सिंह का-खड्गो-

विष्णोर्गरुडः—ॐ सुपर्णोऽसिगुरुत्मान्न्पृष्ठे पृथिव्याः सीद । भासान्तरिक्षमापृण ज्ज्योतिषादिवमुत्तंभानतेजसा दिश ऽउर्दृह ह ॥ महादेवस्य नन्दो—ॐ आशुः शिशानो० गणपते राखुः—ॐ एष ते रुद्रभा० । देव्याः सिंहः—ॐ खड्गोवैश्वदेवः श्वाकृष्णः कर्णोगर्दभस्तरक्षुस्तेरक्षसामिन्द्रायसूकरःसिंहो मारुतःकृकलासःपिप्पकाशकुनिस्तेशरव्यायै विश्वेषान्देवानाम्पृषतः ॥ सूर्यस्याश्वरथः—ॐ सूर्यरश्मिर्हरिकेशःपुरस्तात्सविता ज्ज्योतिरुदयाँ२ऽ अजस्रम् । तस्यपूषाप्रसवेयातिविद्वान्त्सम्पश्यन्विश्वाभुवनानिगोपाः ॥ भैरवस्य कुक्कुरः—ॐ खड्गोवैश्वदे० । एवमन्येषां वाहनानि तत्तद्देवतापरत्वेन योज्यानि एभिर्मन्त्रैर्वा होमः ।

वैश्वदेवः, रथ का-सूर्यरश्मि, कुक्कुर का-खड्गो वैश्वदेवः, इसप्रकार अन्यों के वाहनमन्त्रों का उन-उन देवता परत्वेन से जोड़ना चाहिए ।

* अथ रुद्रपरिवारहोमः *

इसके बाद रुद्र के परिवार देवताओंका नाममन्त्रसे या वैदिकमन्त्रसे हवन करे।

अथ रुद्रस्य परिवारदेवानां होमः वैदिकैर्नाममन्त्रैर्वा—१ ॐ नन्दिने स्वाहा ॐ आशुः शिशानो० २ ॐ महाकालाय० ॐ नमस्ते रुद्रम० ३ ॐ वृषभाय० ॐ आशु शिशानो० ४ ॐ भृङ्गिऋषये० ॐ अवरुद्रम० ५ ॐ स्कन्दाय० ॐ यदक्रन्दः प्रथ० ६ ॐ उमायै० ॐ अम्बेऽ अम्बिके० ७ ॐ विनायकाय० ॐ गणानान्त्वा० ८ ॐ विष्णवे स्वा० ॐ इदं विष्णुर्विच० ९ ॐ ब्रह्मणे० ॐ ब्रह्मयज्ञानम्० १० ॐ जयन्ताय० ॐ मर्माणि ते० ११ ॐ इन्द्राय० ॐ त्रातारमिन्द्र० १२ ॐ अग्नये० ॐ त्वन्नोऽ अग्ने० १३ ॐ यमाय० ॐ सुगन्नुपन्थां० १४ ॐ निर्ऋतये० ॐ असुन्वन्तमय० १५ ॐ वरुणाय० ॐ तत्वा यामि० १६ ॐ वायवे० ॐ आ नो नियु० १७ ॐ सोमाय० ॐ वयठं० सोम० १८ ॐ ईशानाय० ॐ तमीशानं ज० १९ ॐ अप्सरोगणेभ्यः० ॐ भुज्युः सुपर्णो० २० ॐ गन्धर्वाप्सरोभ्यः० ॐ ऋताषाडृत० २१ ॐ गुह्यकेभ्यः ॐ यदक्रन्दः० २२ ॐ विद्याधरेभ्यः० ॐ देवानां भद्रा ।

* अथ विष्णुपरिवारदेवताविचारः *

विष्णु आदि परिवार देवता की कल्पना करे ।

विष्णोर्ब्रह्मादयश्चचतुर्दशपरिवारदेवताः ब्रह्मणो विष्ण्वादयश्चतुर्दशपरिवारदेवताः शक्ति-विनायकयोरपि । शिवस्यैव परिवारदेवताश्चतुर्विंशतिः । एवमन्येषां परिवारकल्पनं कार्यम् ।

❀ अथ आयुधहोमः— ❀

तत्र सर्वदेवप्रतिष्ठायाम्—ॐ वज्राय स्वाहा १ ॐ शक्तये० २ ॐ दण्डाय ३ ॐ खड्गाय० ४ ॐ पाशाय० ५ ॐ अङ्कुशाय० ६ ॐ गदायै० ७ ॐ त्रिशूलाय० इत्यष्टौ आयुधानि ।

अथ देवं प्रार्थयेत्—ॐ नमस्ते त्यक्तसङ्गाय शान्ताय परमात्मने । ज्ञानविज्ञानरूपाय ब्रह्मतेजोऽनुशालिने १ गुणातिक्रान्तरूपाय पुरुषाय महात्मने । अव्यक्ताय पुराणाय विष्णो सन्नि-

अब आयुधहोम कहते हैं । सब देवताओंको प्रतिष्ठामें—वज्र, शक्ति, दण्ड, खड्ग, पाश, अंकुश, गदा और त्रिशूल आठ आयुध हैं । अनन्तर देवताकी प्रार्थना नमस्ते व्यक्तसङ्गाय—आदि से प्रार्थना करे ।

हितो भव ॥ भगवन् देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् । त्वया व्याप्तमिदं सर्वं जगत्स्थावरजङ्ग-
मम् । त्वमिन्द्रः पावकश्चैव यमो निर्ऋतिरेव च । वरुणोऽथानिलः सोम ईशानः प्रभुरव्ययः ४
येन रूपेण भगवान् त्वया व्याप्तं चराचरम् । तेन रूपेण देवेश अर्चायां सन्निधो भव ५ सर्व-
मन्त्रादिसंयुक्तो लोकानुग्रहकाम्यया । अत्राचार्यो महादेव (महाविष्णो) । भव सन्निहितः सदा ॥
सूर्याचन्द्रमसौ यावद्यावत्तिष्ठति मेदिनी । तावत्त्वयाऽत्र देवेश स्थातव्यं स्वेच्छया विभो ॥ याव-
च्चन्द्रावती सूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत्त्वयात्र देवेश स्थेयं सर्वानुकम्पया ॥

अथाचार्यः स्थापितस्य प्रधानस्य परिवारदेवताश्चतुर्थ्यन्तेन नाम्ना स्मरेत् । 'ॐनन्दिने नमः'
इत्यादिप्रयोगेण तत्रैवाक्षतपुञ्जेषु आवाहयेद्वा । ॐ नन्दिने नमः नन्दिनमावाह० इत्यादि प्रयोगेण ।
अथ शिवस्य परिवारदेवताद्वाविंशतिः—ॐनन्दिने नमः १ ॐ महाकालाय० २ ॐ वृषभाय० ३
ॐ भृङ्गिऋषये० ४ ॐ स्कन्दाय० ५ ॐ उमायै० ६ ॐ विनायकाय० ७ ॐ विष्णवे० ८

इसके बाद प्रासादके बाहर इन्द्रादियोंको अक्षतपुञ्जों पर आवाहन कर पूजन करे । प्रासादके बाहर अक्षत पुञ्जोंपर

वाहनों का आवाहनकर पूजन करे। उसमें—विष्णुके गरुडका आगनऽइन्द्र—इस मन्त्रसे, गणपतिको—मूषकका वर्षाहूत्र्य तुना—

ॐ ब्रह्मणे० ॐ जयन्ताय० १० ॐ इन्द्राय० ११ ॐ अग्नये० १२ ॐ यमाय० १३ ॐ निर्ऋतये० १४ ॐ वरुणाय० १५ ॐ वायवे० १६ ॐ सोमाय० १७ ॐ ईशानाय० १८ ॐ अप्सरोगणेभ्यो नमः १९ ॐ गन्धर्वाप्सरोभ्यो नमः २० ॐ गुह्यकेभ्यो नमः २१ ॐ विद्याधरेभ्यो नमः २२ इति।

❀ अथ वाहनपूजनक्रमः ❀

अथ प्रार्थयेत्—ॐ लोकानुग्रहहेत्वर्थं स्थिरो भव सुखासनः। सान्निध्यं हि सदा देव प्रत्यहं परिकल्पय १ महाभूतपूजा विरामोऽस्मिन् यजमानः समृद्ध्यताम्। संपालय सतां राष्ट्रं सर्वोपद्रववर्जितम् २ क्षेमेण वृद्धिमतुलां सुखमक्षय्यमश्नुताम्। इति। अथ प्रसादस्य बहिः इन्द्रादीन् अक्षतपुञ्जेषु वाहनानि आवाह्य प्रतिष्ठाप्य पूजयेत्। ततो बहिर्द्वारदेशे अक्षत पुञ्जेषु वाहनानि आवाह्य पूजयेत् [उद्योते तु—पाषाणादिकृतस्यैव वाहनस्यस्थापनमुक्तमतस्तथैव वा

इससे, देवी के सिंहका खड्गो वैश्वानरदेवः—से, महादेवके वृषभका आशुः शिशानः-से, सूर्यके अश्वरथकावातरंहं०—से, भैरवके

कुक्कुरका—खड्गो वैश्वदेवः । इसीप्रकार अन्योंके वाहनोंको कल्पना करे । जैसे—ब्रह्माका हंस ।

कार्यम्] । तत्र विष्णोर्गरुडः—ॐ अग्न ऽइन्द्र वरुण मित्र देवाः शर्द्धः प्रयन्त मारुतोत विष्णो । उभानासत्या रुद्रो ऽअधग्नाः पूषा भगः सरस्वती जुषन्त ॥ गणपतेराखुः—ॐ वर्षाहूर्ऋतूनामाखुः कशो मान्थालस्ते पितॄणाम्बलायाजगरो वसूनां कपिञ्जलः कपोत ऽउलूकः शशस्ते निर्ऋत्यै वरुणायारण्यो मेषः ॥ देव्याः सिंहः—ॐ खड्गो वैश्वदेवः श्वा कृष्णः कर्णो गर्दभस्तरक्षुस्ते रक्षसामिन्द्राय सूकरः सिंहो मारुतः कृकलासः पिप्पका शकुनिस्ते शरव्यायै विश्वेषान्देवानाम्पृषतः ॥ महादेवस्य ऋषभः—ॐ आशुः शिशानो० ४ । सूर्यस्याश्वरथः—ॐ वातंरंहा भव वाजिन्युज्यमान ऽइन्द्रस्येव दक्षिणः श्रियैधि ॥ युञ्जन्तु त्वा मरुतो विश्ववेदस ऽआते त्वष्टा पत्सु जवन्दधातु ॥ भैरवस्य कुक्कुरः—ॐ खड्गो वै० ६ एवमन्येषां वाहनानि तत्तद्देवतापरत्वेन योज्यानि । यथा—ब्रह्मणो हंसः ।

* अथ मात्स्योक्तपूजनप्रकारः *

देवताका संस्काररूप पूजा करे। आदि में आवाहन 'यस्य सिंहा रथे युक्ता' इत्यादि इससे अर्घ्य देकर पाद्यादि दे।

"देवस्य संस्काररूपां पूजां करिष्ये" तत्रादावावाहनम्। तत्र शिवस्यावाहने पञ्चमन्त्राः। देवतान्तरावाहने—तु चतुर्थपञ्चमावेव।

यस्य सिंहा रथे युक्ता व्याघ्राभूतास्तथोरगाः। ऋषयो लोकपालाश्च देवस्कन्दस्तथा वृषः॥ प्रिया गणा मातरश्च सोमो विष्णुः पितामहः। नागा यक्षाः सगन्धर्वा ये च दिव्या नभश्चराः॥ तमहं त्र्यक्षमीशानं शिवं रुद्रमुमापतिम्। आवाहयामि सगणं सपत्नीकं वृषध्वजम्॥ (इत आरभ्यागच्छेत्यादि स्वाहान्तौ मन्त्रौ ऊहेन सर्वसाधारणौ। ऊहश्च रुद्रपद-सोमपदयोः स्थाने तत्तद्देवता पदप्रयोगः)।

आगच्छ भगवन् रुद्रानुग्रहाय शिवो भव। शाश्वतो भव पूजां मे गृहाण त्वं नमो नमः॥ स्वागतमनुस्वागतं भगवते नमो नमः। सोमाय सगणाय सपरिवाराय प्रतिगृह्णातु भगवान्मन्त्र-

तदनन्तर यज्ञाग्रतः, ततो विराट्, सहस्रशीर्षा, अभित्वा, पुरुष एव, त्रिपादूर्ध्व, यनेदम्, नतांवान, इन आठ मन्त्रोंको

प्र०
४७८

प्रतिपर्याय क्रमसे जपकर जलसे देवका पैर स्पर्श करे। यह प्रथम पर्याय है। फिर आठ मन्त्रोंको जपकर जलसे देवताके नाभीका स्पर्श करे—यह दूसरा पर्याय है। फिर उ आठों मन्त्रोंको जपकर देवता का जलसे वक्षस्पर्श करे—यह तीसरा पर्याय

पूतमिदमर्घ्यम् आचमनीयम् आसनं ब्रह्मणाऽभिहितं नमो नमः स्वाहा ॥ इत्यर्घं दत्त्वा पाद्याचमनीयासनानि दत्वा पञ्चामृतैः दधि–दुग्ध–मधु–शर्कराख्यैः समन्त्रैर्मध्ये जलयुतैः स्नापयेत्। [ततः—ॐ यज्जाग्रतो दूर० १ ॐ ततो विरा० २ ॐ सहस्रशीर्षा० ३। ॐ अभित्वाशूरनोनुमोदुग्ग्धाऽइवधेनवः ॥ ईशानमस्यजगतः स्वर्द्दृशमीशानमिन्द्र तस्त्थुषः ४ ॐ पुरुषऽएव० ५ ॐ त्रिपादूर्ध्वं० ६ ॐ येनेदं भूतं ७ ॐ नत्वा वाँ अन्न्योदिव्व्योनपार्थिवोनजातोनजनिष्यते ॥ अश्श्वायन्तौमघवन्निन्द्रव्वाजिनोगव्व्यन्तंस्त्वाहवामहे ८ इत्यष्टौ मन्त्रान् प्रतिपर्यायं क्रमेण जपित्वा जलेन देवस्य पादौ स्पृशेदित प्रथमः पर्यायः। अथ पुनरष्टौ मन्त्रान् जपित्वा जलेन देवस्य नाभिं स्पृशेदिति द्वितीयपर्यायः। अथ पुनरष्टौ मन्त्रान् जपित्वा देवस्य जलेन वक्षःस्थिलं स्पृशेदिति तृतीयः पर्यायः। अथ पुनरष्टौ मन्त्रान् जपित्वा देवस्य शिरो जलेन स्पृशेदिति चतुर्थः पर्यायः]।

है। फिर आठ मन्त्रोंका जपकर देवताके शिरका जलसे स्पर्श करे चतुर्थ पर्याय है।

प्र०
४७१

इसके बाद पुरुषसूक्त आदिद्वारा षोडशोपचारसे संकल्पपूर्वक पूजन करे। फिर शिवके विश्वेश्वरादि सोलह नामों से

प्र०

अथ पुरुषसूक्तादिना षोडशोपचारैः (यजमानो देशकालौ संकीर्त्य—मम चतुर्विध-पुरुषार्थसिद्धिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं श्रीअमुकेश्वरपूजनं) करिष्ये। (करयोः। पादयोः। जान्वोः। कट्योर्नाभौ। तत्तद्देवन्यासालाभेऽमुकेश्वराय नमो हृदयाय नम इत्यादीनिसरणो।) अथ कलशशङ्खघण्टापूजनम्। अपवित्रः प० शुचिरित्यात्मान पूजनसामग्रीञ्च प्रोक्षेत्। ॐ ध्याये नित्यं महेशं०। 'ॐ सहस्रशीर्षा' इतिपाठमात्रम् आवाहनस्य कृतत्वात्। या ते रुद्र०। सिंहाङ्कितं स्वर्णपीठं नानारत्नैः सुशोभनम्। अनेकवर्णसंयुक्तमासनं प्रतिगृह्यताम्। श्रीअमुकेश्वराय नमः आसनं सम०। यामिषुं गि०। त्रियतरङ्गिणीतोयकल्लोलविमलं जलम्। मन्दारकुसुमोपेतं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्॥ अमुकेश्वराय० पाद्यं स०। शिवेन च०। अर्घ्यं गृहाण भगवन् गन्धपुष्पाक्षतैः सह। करुणाकर हे देव अर्घ्यं गृह्ण नमोऽस्तु ते॥ अमुके० अर्घ्यं सम०। अध्यवोच०। पाटलोशीरकर्पूर सुरभिस्वादुशीतलम्। तोयमाचमनीयार्थं गृह्यतां ते नमो नमः। अमुकेश्व०

४८०

पूजन करे। फिर विष्णवादि नामोंसे पूजन करे।

आचनीयं सम० । असौ यस्तौ यस्ता० । गंगा कृष्णा गौतमी च कावेरीं सरयू तथा । रेवा च तुङ्गभद्रा च स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ अमुके० स्नानं स० । अत्रैव मधुपर्कस्नानं पञ्चामृतस्नानं सुगन्धोदक स्नानं तदङ्गपूजनं देवसूक्तेनाभिषेकश्च । असौ यो वसर्प० । सर्वभूषादिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे । मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ॥ अमु० वस्त्रं सम० । 'अत्र पार्वतीपूजने विशेषस्तद्यथा—कञ्चुकीपट्टवस्त्रोत्वाशुक्ताभिश्च विराजिता । परिधानाय दास्यामि गृहाण परमेश्वरि ॥ कञ्चुकी सम० । हरिद्रां सम० । कुङ्कुमं सम० । ॐ वृत्रस्यासि कनीनकश्चक्षुर्दाऽअसि चक्षुर्मे देहि ॥ इति कज्जलं सम० । नारारत्नसमुद्भूतं नानामणिविभूषितम् । कण्ठसूत्रं मया दत्तं गृहाण परमेश्वरि ॥ कण्ठसूत्रं सम० । काचित्कश्चित्रवर्णैश्च कङ्कणैः सुविराजतैः । करभूषाः प्रदास्यामि गृहाण परमेश्वरि ॥ करभूषणं सम० । मस्तकाभरणं देवि सिन्दूरं नागसम्भयम् । वाञ्छितार्थप्रदे देवि आभरणं प्रतिगृह्यताम् ॥ सर्वाभरणं सम० । अहिरिव भो० । नानापरिमलद्रव्याणि सम० । कस्तूर्यादिसम० । नमोऽस्तु नील० । नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् । उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥ यज्ञोपवीतं सम० । प्रमुञ्च ध० । श्रीखण्डं चन्दनं दि० । भस्म सम० ।

विश्वेश्वर, महादेव, त्र्यम्बक, त्रिपुरुष, त्रिपुरान्तक, त्रिकाग्निकाल, कालाग्निरुद्र, नीलकण्ठ, सर्वेश्वर सदाशिव, वामदेव, ज्येष्ठ, श्रेष्ठ, रुद्र, काल, कलविरण, बलविकरण बल, बलप्रमथन और सर्वभूतदमन ये शिवके नाम हैं।

प्र० विज्यन्धनुः क० । अक्षतान् सम० । नमो बिल्मि० । माल्यादि० । त्रिदलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं चापि त्र्यायुषम् । त्रिजन्मपापसंहारं बिल्वपत्रं शिवार्पणम् ॥ अत्राङ्गपूजा । तत्र द्रव्याणि—उदकैर्बिल्वपत्रैर्वा पुष्पैश्च तुलसीदलैः । तिलाक्षतैर्यजन् यस्तु जीवनमुक्तो न संशयः ॥

शिवस्य—ॐ विश्वेश्वरायनमः १ महादेवाय० २ त्र्यम्बकाय० ३ त्रिपुणाय० ४ त्रिपुरान्तकाय० ५ त्रिकाग्निकालाय० ६ कालाग्निरुद्रा० ७ नीलकण्ठाय० ८ सर्वेश्वराय० ९ सदाशिवाय० १० वामदेवाय० ११ ज्येष्ठाय० १२ श्रेष्ठाय० १३ रुद्राय० १४ कालाय० १५ कलविकरणाय० १६ बलविकरणाय० १७ बलाय० १८ जलप्रमथनाय० १९ सर्वभूतदमनाय० २० ।

विष्णोः—ॐ विष्णवे नमः १ जनार्दनाय० २ पद्मनाभाय० ३ प्रजापतये० ४ चक्रधराय० ५ त्रिविक्रमाय० ६ नारायणाय० ७ श्रीधराय० ८ गोविन्दाय० ९ मधुसूदनाय० १०

विष्णु, जनार्दन, पद्मनाभ, प्रजापति, चक्रधर, त्रिविक्रिम, नारायण, श्रीधर, गोविन्द, मधुसूदन, नारसिंह, जलशायी, वराह, रघुनन्दन, वामन और माधव ये विष्णु के नाम है।

सुमुख, एकदन्त, कपिल, गजकर्ण, लम्बोदर, विकट, विघ्ननाशन, विनायक, धूम्रकेतु, गणाध्यक्ष, भालचन्द्र और गजानन, ये गणपति के नाम हैं।

नारसिंहाय० ११ जलशायिने० १२ वाराहाय० १३ रघुनन्दनाय० १४ वामनाय० १५ माधवाय० १६।

गणपतेः——ॐ सुमुखाय नमः १ एकदन्ताय० २ कपिलाय० ३ गजकर्णाय० ४ लम्बोदराय० ५ विकटाय० ६ विघ्ननाशाय० ७ विनायकाय० ८ धूम्रकेतवे० ९ गणाध्यक्षाय० १० भालचन्द्राय० ११ गजाननाय० १२।

सूर्यस्य——ॐ आदित्याय नमः १ दिवाकराय० २ भास्कराय० ३ प्रभाकराय० ४ सहस्रांशवे० ५ त्रिलोचनाय०६ हरिदश्वाय० ७ विभावसवे ८ दिनकृतये० ९ द्वादशात्मकाय० १० त्रयीमूर्तये० ११ सूर्याय० १२।

आदित्य, दिवाकर, भास्कर, प्रभाकर, सहस्रांशु, त्रिलोचन, हरिदश्व, विभावसु, दिनकृत, द्वादशात्मक, त्रयीमूर्ति और सूर्य ये सूर्य के नाम हैं।

प्र० ४८३

जगद्रूपा, स्वर्णमालिनी, रजतस्रजा, स्वर्णगृहा, स्वर्णप्रकारा, पद्मवासिनी, पद्महस्ता, पद्मप्रिया, मुक्तालंकारा, सूर्या, चन्द्रा, बिल्वप्रिया, ऐश्वरी, भुक्ति, मुक्ति, विभूति, ऋद्धि, समृद्धि, पुष्टि, तुष्टि, धनदा, धनेश्वरी, श्रद्धा, भोगिनी,

प०

देव्याः—जगद्रूपायै० १ स्वर्णमालिन्यै० २ रजतस्रजायै० ३ स्वर्णगृहायै० ४ स्वर्णप्राकारायै० ५ पद्मवासिन्यै० ६ पद्महस्तायै० ७ पद्मप्रियायै० ८ मुक्तालङ्कारायै० ९ सूर्यायै० १० चन्द्रायै० ११ बिल्वप्रियायै० १२ ऐश्वर्यै० १३ भुक्त्यै० १४ मुक्त्यै० १५ विभूत्यै० १६ ऋध्यै० १७ समृध्यै० १८ पुष्ट्यै० १९ तुष्ट्यै० २० धनदायै० २१ धनेश्वर्यै० २२ श्रद्धायै० २३ भोगिन्यै० २४ भोगदायै० २५ धात्र्यै० २६ विधात्र्यै० २७ महालक्ष्म्यै० २८ या ते हेतिः। वनस्पतिरसो०। परि ते धन्व०॥ साज्यं च वर्तिसं०। अवतत्यधनु०॥ नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु। शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च॥ आहारो भक्ष्यभोज्यञ्च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्॥ नमस्तऽ आयुधा०। इदं फलं मया दे०। मा नो महान्तमु०।

प्र०

भोगदा, धात्री, विधात्री और महालक्ष्मी, ये देवी के नाम हैं।

या ते हेतिः—आदि से नैवेद्यादि देकर पुष्पाञ्जलि—राजाधिराजाय—से कर 'नमः सर्वहितार्थाय से प्रणाम कर

आवाहनं न जानामि-इन श्लोकों द्वारा क्षमाप्रार्थना करे।

प्र०

४८५

दक्षिणां सम० । कर्पूरगौरं करुणा० । मा नस्तोके तन० । मालतीमल्लिकापुष्पैर्नागचम्पकसंयुतैः । पुष्पाञ्जलिं गृहाणेमं पादाम्बुजयुगार्पितम् ।। राजाधिराजाय प्र० । सद्यास्या० । यानि कानि च पा० । नमः सर्वहितार्थाय जगदुद्धारहेतवे । साष्टांगोऽयं प्रणामोऽस्तु प्रयत्नेन मया कृतः ।। नमोऽस्त्वनन्ताय । आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् ।। पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ।। ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यावद्विधिरनुष्ठितः । ससर्वस्त्वत्प्रसादेन समग्रो भगवन्मम ।। ज्ञानतो ऽज्ञानतो वापि भगवन् यत्कृतं मया । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादात्सदाशिव ।। इति ।

पूजां कृत्वा प्रार्थयेत् । तत्रादौ शिवस्थापनायां प्रार्थना मन्त्राः—ॐ भगवन् देव देवेश धर्मकामार्थमोक्षद । विद्याविद्येश्वरै रुद्रैर्गणैश्शैलोकपालकैः ।। देवदानवगन्धर्वैर्यक्षैश्चैव स किन्नरैः । अस्मिल्लिंगे महादेव सर्वदा वस वै प्रभो ।। पुंसामनुग्रहार्थाय पृथिव्यां स्वेच्छया प्रभो । परावरेण

प्र०

४८५

तदनन्तर पूजाकर प्रार्थना 'भगवन् देव देवेश' इन श्लोकों से करे।

भावेन स्थातव्यं सर्वदा त्वया । सर्वविघ्नहरः पुंसां सर्वदुःखहरः सदा । सर्वदा यजमानस्य इच्छा सम्पत्करो भग ॥ नमस्ते सर्वधर्माय सन्तोषविजितात्मने । ज्ञानविज्ञानतृप्ताय ब्रह्मतेजोऽभिशालिने ॥ नमस्ते शुद्धदेहाय तुष्टाय महात्मने । स्थापक नां मूर्तिपानां शिल्पिनां च विभो सदा ॥ ग्रामदेशनृपाणां च शान्तिर्भवतु सर्वदा । पूजकाराधकानां च भक्तानां भक्तवत्सल ॥ सर्वेषां च जगन्नाथ इच्छासिद्धिप्रदो भव । चन्द्रार्कावनिपर्यन्तं लिङ्गेऽस्मिन्परमेश्वर ॥ स्थातव्यमुमया सार्द्धं सर्वलोकानुकम्पया । यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत्तिष्ठति मेदिनी ॥ तावत्त्वयाऽत्र देवेश स्थातव्यं स्वेच्छया विभो । ज्ञानतोऽज्ञानतो वाऽपि यावान्विधिरनुष्ठितः ॥ सर्वस्त्वत्प्रसादेन समग्रो भवतान्मम । ज्ञानतोऽज्ञानतो वाऽपि शास्त्रोक्तं न कृतं हि यत् ॥ तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादात् महेश्वर । (जनार्दन) इति । अनेन यथाज्ञानेन यथाशक्तिकृतपूजनेन श्रीपरमेश्वरः प्रीयतामिति वदेत् ।

श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(देवताका नामकरण, देवताके उद्देश्यसे पूजनसामग्रीदान, शान्त्यादि होम, बलिदान और पूर्णाहुत्यादिकार्य कथन)

श्रीदौलतराम- गौड़ वेदाचार्य

प्र० ४८७

प्र०

४८८

* अथ देवनामकरणम् *

इसके बाद आचार्य—देवताका नामकरण करे। उसमें सतिसँभवमें पुण्याहवाचन करे।

अथचार्यः कर्तृनामयुतं देवस्य नाम कुर्यात्सर्वदा व्यवहारार्थम्। तत्र शिवस्य–अमुकेश्वर। एवं नाम कृत्वा ब्राह्मणान् प्रार्थयेत्—'अस्य देवस्य अमुकेश्वर इति नाम सुप्रतिष्ठितमस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु। 'सुप्रतिष्ठितमस्तु' इति ब्राह्मणाः। ततः पुण्याहं वाचयेदिति केचित् पद्धतिकाराः। करणपक्षे—'अस्य श्रीवैद्यनादेश्वरदेवस्य (अमुकेश्वरस्य) कृतैतन्नामकरणकर्मणः पुण्याहं भव०। कल्याणं०। ऋद्धिं०। श्रीरस्त्विति०। इति ब्रूयात्। ततः—कृतैतत् नामकरणकरणसाद्गुण्यार्थं पुण्याहवाचकेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो मनसोद्दिष्टां दक्षिणां दद्यात्। इति।

* अथ देवोद्देशेन पूजनसामग्रीदानम् *

ततः देवस्य करिष्यमाणनित्यपूजोपकरणानि ताम्रकलशम्, शङ्खम्, धूपदीपनैवेद्यपात्राणि, पुष्पपात्रम्, ताम्बूलपात्रम्, वस्त्रम्, छत्रम्, दर्पणम्, पादुके, मुकुटम्, ग्रैवेयकम्, करचरणभूषणादिकं

देवताको उद्देश्य कर ताम्रकलश, शंख, धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्प, तांबूलादि पात्रोंको, वस्त्र, छत्र, सीसा, खडाउँ,

प्र०

४८८

मुकुट, प्रतिदिन भोगके लिए ग्रामक्षेत्र द्रव्यादि विविध वस्तुओंका दान करे।

प्र०

नित्यपूजोत्सवभोगरागाद्यर्थं ग्रामक्षेत्रद्रव्यादिकं घण्टां, व्यजनं, उपधानादिसामग्रीसहितां शय्यां च देवोद्देशेनोत्सृजेत्।

४८६

❀ अथ शान्त्यादिहोमबलिदानम् ❀

तत आचार्यः सर्वशान्त्यर्थमघोरमन्त्रेणाष्टोत्तरशतमाज्येन जुहुयात्। पञ्चकुण्डोपक्षे नवकुण्डोपक्षे प्रतिकुण्डमाचार्योऽष्टोत्तरशतमाज्येन जुहुयात्। नात्र विभागः विभागोक्त्यभावात्। आचार्यकर्तृकोऽयं होमः ततः प्रातराचार्यं इत्यारभ्य तस्याधिकारात्। इदमपि नैमित्तिकमेव शान्त्यर्थत्वात्। ततः कर्मविपर्यासाद्यर्थमनादिष्टप्रायश्चित्तं प्रतिकुण्डं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य निरुप्याज्यं प्रतिकुण्डे अधिश्रित्य स्रुचं-स्रुवं च प्रतप्य संमृज्योद्वास्योत्पूयावेक्ष्य चतुर्गृहीतं गृहीत्वा समित्प्रक्षेपपूर्विका नवाहुतीर्जुहुयात्। ताश्च—ॐ भूः स्वाहा—इदमग्नये न मम १ ॐ भुवः स्वाहा—इदं वायवे० २ ॐ स्वः० इदं सूर्याय० ३ ॐ त्वन्नोऽअग्ने० इदमग्नीवरुणाभ्यां न

प्र०

४८६

तदनन्तर—आचार्य—सब शान्तिके लिए 'अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यः—इससे एक सो आठबार घी से हवन करे फिर

नवाहुति प्रतिकुण्डमें करे। बलिदान करे। क्षेत्रपाल बलि करे।

मम ४ ॐ सत्वन्नो अ० इदमग्नीवरु० ५ ॐ अयाश्चाग्ने० इदमग्नये अयसे० ६ ॐ ये ते शतं वरु० इदं वरुणाय० ७ ॐ उदुत्तमं व० वरुणायादित्यायादितये न मम ८ ॐ प्रजापतये स्वाहा- इदं प्रजापतये नम ९ इति।

अथ स्विष्टकृतं नवाहुतीश्च सर्वकुण्डेषु हुत्वा यजमानः बलिदानं कुर्यात्। अस्य कृतस्य कर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं सदीपमाषभक्तबलिदानं पायसबलिदानं वा करिष्ये—इतिसङ्कल्पः। वास्तुदेवानां पूर्वं बलिर्न कृतश्चेदत्र कुर्यात्। वस्तुतस्तु वास्तुदेवताभ्योऽत्रैव बलिदानं युक्तम्, पूर्वं मयूखादावनुक्तत्वात्। स चेत्थम्—'शिखिने एव पायसबलिर्नमः। इत्येवं तत्तन्नाम्ना बलि दद्यात्। यद्वा-शिख्यादिवास्तुदेवताभ्यो नमः' अमुं पायसबलि समर्पयामि। भो! वास्तुदेवता पायसबलिं गृह्णीत मम सकुटुम्बस्य आयुःकर्त्र्यः क्षेमकर्त्र्यः पुष्टिकर्त्र्यः तुष्टिकर्त्र्यः वरदा भवत। अनेन बलिदानेन वास्तुदेवताः प्रीयन्ताम्। ततः—'वास्तोष्पत्यन्तेभ्यः सूर्यादिग्रहेभ्यो नमः' पायसबलिं सम०। भो! भो! वास्तोष्पत्यन्ताः सूर्यादिग्रहाः पायसबलिं गृह्णीत मम यज०। अनेन बलिदानेन वास्तोष्पत्यन्ताः सूर्यादिग्रहाः प्रीयन्ताम्।

प्र०

४६१

सतिसम्भवे ब्रह्मादिमण्डलदेवताभ्यो नमः। योगिनीभ्यो नमः। क्षेत्रपालेभ्यो नमः। माषभक्तबलिं सम०। भा! भा! ब्रह्मादिमं० भो! भो! योगिनीदेवताः भो! भो! क्षेत्रपालदेवता मम सकुटुम्बस्य आयुः क० अनेन ब०। ततः अग्रायतनस्य मण्डपस्य वा समन्तात् दिक्पालेभ्यो बलिं दद्यात्—अद्यपुण्यतिथौ 'अस्य सप्रासादवास्तुग्रहवैद्यानाथदेव (बद्रीनाथ) देवप्रतिष्ठाकर्मणः साङ्गतासिद्धयर्थं क्षेत्रपालादिप्रीत्यर्थं भूतप्रेतपिशाचादिनिवृत्यर्थं च सर्वाभौतिकबलिप्रदानं करिष्ये' इति सङ्कल्प्य शुद्धभूमौ सूर्यादौ महाबलिं कुङ्कुमादिचर्चितं कृत्वा 'ॐ सर्वभूतेभ्यो नमः। ॐ क्षेत्रपालादिभ्यो नमः। इत्यावाहनपूर्वकं गन्धादिपूजनं कृत्वा साक्षतं जलं गृहीत्वा प्रार्थयेत्—'ॐ अधश्चैव तु ये लोका असुराश्चैव पन्नगाः। सपत्नीपरिवाराश्च परिगृह्णन्तु मे बलिम् ॥ ईशानोत्तरयोर्मध्ये क्षेत्रपालो महाबलः। भीमनामा महादंष्ट्रः स च गृह्णातु मे बलिम् ॥ ये केचित्त्विह लोकेषु आगता बलिकाङ्क्षिणः। तेभ्यो बलिं प्रयच्छामि नमस्कृत्य पुनः पुनः ॥ ॐ नहिस्पशमविदन्नन्यमस्माद्वैश्वानरात्पुरऽएतारमग्नेः। एमेनमवृधन्नमृताऽ अमर्त्त्यं वैश्वानरङ्क्षैत्रजित्याय देवाः ॥ वेतालादिपरिवारयुतक्षेत्रपालादिसर्वभूतेभ्यः साङ्गेभ्यः सपरि-

प्र०

४६१

वारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिभ्यः भूतप्रेतपिशाचराक्षसशाकिनीडाकिनीसहितेभ्य इमं बलिं सम० । भो ! भो ! क्षेत्रपालादयः अमुं बलिं गृह्णीत मम सकुटुम्बस्य आयुःकर्तारः क्षेमकर्तारः शान्तिक० पुष्टिक० तुष्टिक० निर्विघ्नक० वरदा भवत । अनेन सार्वभौतिकबलिप्रदानेन क्षेत्रपालादयः प्रीयन्ताम् । ततः—ॐ बलिं गृह्णन्त्विमं देवा आदित्या वसवस्तथा । मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः १ असुरा यातुधानाश्च पिशाचोरगरक्षसाः । शाकिन्यो यक्षवेताला योगिन्यः पूतनाः शिवा २ जृम्भकाः सिद्धगन्धर्वा नागाविद्याधरा नगाः । दिक्पाला लोकपालाश्च ये च विघ्नविनायकाः ३ जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माद्याश्च महर्षयः । मा विघ्नं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ४ सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूतप्रेताः सुखावहाः ।। इति पठित्वा बलिं शूद्रेण दुर्ब्राह्मणेन वा पृष्ठतोऽनवेक्षमाणेन (निर्ऋतिदेशे वा) मण्डपप्रासादप्रादक्षिण्येन चतुष्पथे हारयेत् ।

❀ अथ पूर्णाहुतिकर्म ❀

फिर—पूर्णाहुतिको करे—मृडनामवाली अग्निमें पूर्णाहुतिका होम करता हूँ । स्रुचिपात्र में घी भरकर माला,

ततः प्रक्षालितपाणिपाद आचम्य पूर्णाहुतिं कुर्यात् । पञ्चकुण्ड्यादिपक्षे सर्वे पूर्णाहुतिं

पुष्प, वस्त्र, दक्षिणा आदि से पूजन कर समुद्रादूर्मिः—इत्यादि मन्त्रसे यजमान खड़ा होकर पूर्णाहुति करे। ब्राह्मण,

ॐ स्रुचश्च मेति सम्पूज्य कुर्युः। 'अद्य पुण्यतिथौ सप्रासादशिवादिप्रतिष्ठाकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं मृडनामाग्नौ पूर्णाहुतिं होष्ये' इति सङ्कल्प्य आचार्यः स्रुचि द्वादशवारमाज्यं गृहीत्वा वस्त्रचन्दन-मालाक्षताहिरण्यादियुतं नारिकेलादिफलं स्रुगुपरि निधाय यजमानान्वारब्धस्तिष्ठन् पूर्णाहुतिं जुहुयात्। तत्र मन्त्राः—ॐ समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ२। ऽउदारदुपाꣳशुनासममृतत्वमानट्॥ घृतस्य नामगुह्यं यदस्ति जिह्वादेवानाममृतस्य नाभिः॥१॥ व्वयन्नाम प्रब्रवामा घृतस्यास्मिन्यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपब्ब्रह्मा शृणवच्छस्यमानञ्चतुःशृङ्गोवमीद्गौरऽएतत्॥२॥ चत्वारिशृङ्गा त्त्रयोऽअस्य पादाद्द्वेशीर्षे सप्तहस्तासोऽअस्य॥ त्रिधाबद्धोवृषभोरोरवीति महोदेवोमर्त्याँ२॥ ऽआविवेश॥३॥ त्रिधाहितम्पणिभिर्गुह्यमानङ्गविदेवासोघृतमन्वविन्दन्। इन्द्रऽएकꣳ सूर्यऽएकञ्जजानव्वेनादेकꣳ स्वधयानिष्टतक्षुः॥४॥ एताऽअर्षन्तिहृद्यात्समुद्राच्छतव्रजारिपुणानावचक्षे। घृतस्यधाराऽअभिचाकशीमि हिरण्ययोव्वेतसोमध्यऽआसाम्॥५॥ सम्यक्स्रवन्तिसरितोनधेनाऽअन्तर्हृदामनसापू-

ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद आदि का क्रमसे सति संभवमें बैठकर पाठ करें।

यमानाः । एते ऽअर्षन्त्यूर्म्मयो घृतस्य मृगा ऽइव क्षिपणोरीषमाणाः ॥६॥ सिन्धोरिव प्राध्वने शूघनासो
व्वातप्रमियः पतयन्ति यह्वाः ॥ घृतस्य धारा ऽअरुषो न व्वाजी काष्ठा भिन्दन्नूर्म्मिभिः पिन्वमानः ॥७॥
अभिप्रवन्त समनेव योषाः कल्याण्यः स्मयमानासो ऽअग्निम् ॥ घृतस्य धाराः समिधो नसन्त ता जुषाणो
हर्य्यति जातवेदाः ॥८॥ कन्या ऽइव व्वहतुमेतवा ऽउ ऽअञ्ज्यञ्जाना ऽअभिचाकशीमि । यत्र सोमः सूय-
ते यत्र यज्ञो घृतस्य धारा ऽअभि तत्पवन्ते ॥९॥ अभ्यर्षत सुष्टुतिङ्गव्यमाजिमस्मासु भद्रा द्रविणानि धत्त ।
इमं यज्ञन्नयत देवता नो घृतस्य धारा मधुमत्पवन्ते ॥१०॥ धामन्ते व्विश्वम्भुवनमधि श्रितमन्तः समुद्रे
हृद्यन्तरायुषि ॥ अपामनीके समिथे य ऽआभृतस्तमश्याम मधुमन्त ऽऊर्म्मिम् ॥११॥ मूर्द्धानन्दिवो ऽ-
अरतिम्पृथिव्या व्वैश्वानरमृत ऽआजातमग्निम् । कविँ सम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्ना पात्रञ्जन-
यन्त देवाः ॥१२॥ पुनस्त्वादित्या रुद्रा व्वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो व्वसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वन्त-
न्वं व्वर्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥१३॥ पूर्णा दर्व्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत ॥ व्वस्नेव व्वि-
क्क्रीणावहा ऽइषमूर्ज्जँ शतक्रतो स्वाहा ॥१४॥ इदमग्नये वैश्वानराय वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे
सप्तवते ऽग्नये ऽद्भ्यश्च न मम ।

* अथ वसोर्द्धाराहोमः *

वह यजमान आचार्य कुण्डमें अधिकफल की प्राप्ति के लिए सब कुण्डोंमें वसोर्धारा होम करे। स्रुचि में घी भर

स चाचार्यकुण्डे, अधिकफलावाप्तये सर्वकुण्डेषु वा। तत्रायं प्रकारः—वह्नेरुपरि स्तम्भद्वय-विधृतामौदुम्बरीं ऋज्वीमकोटरां बाहुप्रमाणां यजमानमात्रीं वा आर्द्रां स्रुचं पूर्वाग्रां निधाय तदुपरि शृंखलादिधृतेन निर्मलघृतपूरितेन ताम्रादिपात्रेणाधोयवमात्रच्छिद्रेणाज्यं विमुञ्चता स्रुक्प्रणालिकया निर्गच्छदग्रे सुवर्णजिह्वातोऽधोनिपतन्तीं सन्ततां धारामग्नौ पातयेत्। तस्माच्च पतन्त्यां मन्त्रान् श्रावयेत्—ॐ समास्त्वाग्नऽऋतवोव्वर्द्धयन्तु संव्वत्सराऽऋषयोयानि सत्या। सन्दिव्येनदीदिहिरोचनेनव्विश्वाऽआभाहिप्प्रदिशश्चतस्रः ॥ १ ॥ सञ्चेध्यस्वाग्नेप्रचबोधयैनमुच्चंतिष्ठमहतेसौभगाय। माचरिषदुपसत्तातेऽअग्नेब्रह्माणस्तयशसः सन्तु मान्ये ॥ २ ॥ त्वामग्नेव्वृणतेब्राह्मणाऽइमे शिवोऽअग्नेसंव्वरणे भवानः। सपत्नहानोऽअभिमातिजिच्चस्वेगयेजागृह्यप्रयुच्छन् ॥ ३ ॥ इहैवाग्नेऽअधिधारयारयिम्मात्वानिकन्पूर्व्वचितोनिकारिणः॥ क्षत्रमग्नेसुयममस्तुतुभ्यमुपसत्ताव्वर्द्धनान्तेऽअनिष्टृतः ॥४॥ क्षत्रेणाग्नेस्वायुःसꣳरभस्वमित्त्रेणाग्नेमित्त्रधेयेयतस्व। सजातानाम्मध्यमस्था-

कर सोने की जिह्वा लगाकर पूजनकर अग्निमें घृतकी यवमात्र छिद्रसे धारा छोड़ते समय 'समास्त्वा' आदि मन्त्रों से,

ऽएधिराज्ञामग्नेव्विहव्योदीदिहि ॥५॥ अतिनिहोअतिस्त्रिधोत्त्यचित्तिमत्यरातिमग्ने । व्विश्वाह्यग्ने- दुरितासहस्वाथास्म्मब्भ्यंसहवीराछंरयिन्दाः ॥६॥ अनाधृष्ष्योजातवेदाऽअनिष्टृतोव्विराडग्नेक्षत्त्र- भृद्दीदिहीह । व्विश्श्वाऽआशाःप्रमुञ्चन्मानुषीर्भियः शिवेभिरद्यपरिपाहि नो व्वृधे ॥७॥ बृहस्पते सवितर्बोधयैनः सःशितञ्चित्सन्तराँ सः शिशाधि । व्वर्द्धयैनम्महतेसौभगायव्विश्श्वऽएनमनु- मदन्तुदेवाः ॥८॥ अमुत्त्रभूयादधयद्यमस्यबृहस्पतेऽअभिशस्तेरमुञ्चः । प्रत्यौहतामश्विनामृत्यु- मस्म्माद्देवानामग्नेभिषजाशचीभिः ॥९॥ ॐ व्विष्ष्णोर्न्नुकंव्वीर्य्याणिप्रवोचं यः पार्थिवानिव्विम- मेरजाछंसि । योऽअस्कभायदुत्तरः सधस्थंव्विचक्रमाणस्त्रेधोरुगायोव्विष्ष्णवेत्त्वा ॥१०॥ दिवोवा- व्विष्ष्णऽउतवापृथिव्व्यामहोवाव्विष्ष्णऽउरोरन्तरिक्षात् ॥ उभाहिहस्ताव्वसुनापृणस्वाप्रयच्छ दक्षिणादोतसव्व्याद्विष्ष्णवेत्त्वा ॥ ११ ॥ प्रतद्विष्ष्णुस्तवतेव्वीर्य्येणमृगोनभीमःकुचरोगिरिष्ठाः ॥ यस्योरुषुत्त्रिषुव्विक्क्रमणेष्ष्वधिक्षियन्ति भुवनानिव्विश्श्वा ॥ १२ ॥ व्विष्ष्णोरराटमसिव्विष्ष्णोः श्नप्त्रेस्थोव्विष्ष्णोः स्यूरसिव्विष्ष्णोर्द्ध्रुवोसि । व्वैष्ष्णवमसिव्विष्ष्णवेत्त्वा ॥ १३ ॥ देवस्यत्वा

और सप्त ते अग्ने—इत्यादि मन्त्रों से वसोर्धारा का कार्य करे।

सवितुः प्रसवे ऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । आददे नार्यसीदमहꣳ रक्षसां ग्रीवा ऽअपिकृन्तामि । बृहन्नसि बृहद्द्रवा बृहतीमिन्द्राय व्वाचं व्वद ॥ १४ ॥ आप्यायस्व समेतु ते व्विश्वतः सोम व्वृष्ण्यम् । भवा व्वाजस्य सङ्गथे ॥ १५ ॥ सन्ते पयाꣳसि समु यन्तु व्वाजाः संव्वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः । आप्यायमानो ऽअमृताय सोम दिवि श्रवाꣳस्युत्तमानि धिष्व ॥ १६ ॥ आप्यायस्व मदिन्तम सोम व्विश्वेभिरꣳशुभिः । भवा नः सप्रथस्तमः सखा व्वृधे ॥ १७ ॥ सप्त ते ऽअग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्त ऽऋषयः सप्त धाम प्रियाणि । सप्त होत्राः सप्तधा त्वा यजन्ति सप्त योनीरापृणस्व घृतेन स्वाहा ॥ १ ॥ शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्माँश्च । शुक्रश्च ऽऋतपाश्चात्यꣳहाः ॥ २ ॥ ईदृङ् चान्यादृङ् च सदृङ् च प्रतिसदृङ् च । मितश्च सम्मितश्च सभराः ॥ ३ ॥ ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च । धर्ता च व्विधर्ता च व्विधारयः ॥ ४ ॥ ऋतजिच्च सत्यजिच्च सेनजिच्च सुषेणश्च । अन्तिमित्रश्च दूरे ऽअमित्रश्च गणः ॥ ५ ॥ ईदृक्षास ऽएतादृक्षास ऊ षु णः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षास ऽएतन । मितासश्च सम्मितासो नो ऽअद्य सभरसो मरुतो यज्ञे ऽअस्मिन् ॥ ६ ॥ स्वतवाँश्च प्रघासी च सान्त-

प्र० ४६७

प्र० ४६७

पनश्चगृहमेधीच । क्रीडीचशाकीचौज्जेषि ॥७॥ इन्द्रन्दैवीर्व्विशोमरुतोनुवर्त्मानोभवन्यथेन्द्रंदैवी-
र्व्विशोमरुतोऽनुवर्त्मानोभवन् ॥ एवमिमं यजमानन्दैवीश्चविशोमानुषीश्चानुवर्त्मानोभवन्तु ॥८॥
इमꣳस्तनमूर्ज्जस्वन्तन्धयापाम्प्रपीनमग्नेसरिरस्यमध्ये । उत्सञ्जुषस्वमधुमन्तमर्व्वन्त्समुद्रियꣳ
सदनमाविशस्व ॥९॥ घृतम्मिमिक्षेघृतमस्ययोनिर्घृतेश्रितोघृतम्वस्यधाम । अनुष्वधमावहमादय-
स्वस्वाहाकृतंवृषभवक्षिहव्यम् ॥१०॥ व्वसोः पवित्रमसि शतधारं व्वसोः पवित्रमसिसहस्रधारम् ॥
देवस्त्वा सविता पुनातु व्वसोःपवित्रेणशतधारेणसुप्वाकामधुक्षः स्वाहा ॥११॥ इदमग्नये वैश्वानराय
न मम । इति ।

❋ अथाग्निप्रदक्षिणादिकर्म ❋

ततोऽग्निं प्रदक्षिणीकृत्य स्तुतिं कुर्यात्—ॐ नमः सोमाय शान्ताय सगुणायादिहेतवे ।
निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर ॥ १ ॥ नमामि त्वां विरूपाक्ष नीलग्रीव नमोऽस्तु ते ।
त्रिनेत्राय नमस्तुभ्यमुमादेहार्द्धधारिणे ॥२॥ त्रिशूलधारिणे तुभ्यं भूतानां पतये नमः । पिनाकिने

तदनन्तर अग्निकी प्रदक्षिणाकर पश्चिमदिशा की तरफ बैठकर 'नमः सोमाय—इत्यादि पौराणिक श्लोकों से

स्तुति करे ।

नमस्तुभ्यं नमो मीढुष्टमाय च ॥३॥ नमामि त्वां महाभूतपतये त्वां नमाम्यहम् । स्वयं भिक्षान्न भोक्ता च भक्तानां राज्यदायक ॥४॥ सूर्यरूप समासाद्य देहिनां देहदायक । यतीनां मुक्तिदस्त्वं च भूतानां वापि मुक्तिदः ॥ ५ ॥ राजसेन स्वयं ब्रह्मा सात्त्विकेन स्वयं हरिः । तामसेन स्वयं रुद्रस्त्रितयं त्वयि संस्थितम् ॥६॥ त्वं माता त्वं पिता हि त्वं बन्धुस्त्वं च मे सखा । त्वं विद्याद्रविणं त्वं वै त्वं च सर्वं मम प्रभो ॥ ७ ॥ नमो विरञ्चि विश्वेश भेदेन परमात्मने । निसर्गस्थितिसंहार-व्यापिने परमात्मने ॥ ८ ॥ न्यूनातिरिक्तं यत्कर्म जपहोमार्चनादिकम् । कृतमज्ञानतो देव तन्मम क्षन्तुमर्हसि ॥ ९ ॥ अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोहमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥ १० ॥ अपराधसहस्राणां सहस्रमयुतं तथा । अर्बुदं चाप्यसंख्येयं करुणाब्धे क्षमस्व मे ॥११॥ यश्चापराधं कृतवानज्ञानात्पुरुषोत्तम । भक्तस्य मम देवेश त्वं सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥१२॥ अज्ञानादल्पशक्तित्वादालस्याद्दुष्टचेतसः । यन्न्यूनमतिरिक्तं वा तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ १३ ॥ विश्वेश्वर विरूपाक्ष विश्वरूप सदा शिव । शरणं भवभूतेश करुणाकरशङ्कर ॥१४॥ हरशम्भो महादेव

प्र० ४६६

त्र्यायुषं जमदग्नेः—इस मन्त्रसे आचार्य सपरिवार यजमान यज्ञीयकुण्डकी भस्म श्रद्धा से अपने शरीर के अङ्गोंमें लगवाकर प्रोक्षणीस्थहुतशेषघृतका प्राशन या आघ्राण कर आचमन करे। प्रणीतापात्र के जलसे मार्जन करे।

विश्वेशामरवल्लभ। शिवशङ्करसर्वात्मन्नीलकण्ठ नमोऽस्तुते॥ १५॥ मृत्युञ्जय महारुद्र सर्वेश शशिशेखर। चन्द्रचूड महादेव पार्वतीश नमोऽस्तु ते॥ १६॥ मृत्युञ्जयाय रुद्राय नीलकण्ठाय शम्भवे। अमृतेशाय शर्वाय महादेवाय ते नमः॥ १७॥ रुद्रहोमो जपो वापि यन्न्यूनो वाप्यधिकोऽपि वा। सम्पूर्णस्त्वत्प्रसादेन भूयाद् भूतिविभूषण॥ १८॥

* अथ भस्मधारणदक्षिणादानादिकथनम् *

ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः—इति ललाटे। ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्—इति ग्रीवायाम्। ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्—इति दक्षिणांसे। ॐ तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम्—इति हृदि। संस्रवप्राशनम् अवघ्राणं वा द्विराचमनम्। पवित्राभ्यां प्रणीतोदकेन मार्जनम्। अग्नौ पवित्रप्रतिपत्तिः। ब्रह्मणे पूर्णपात्रदानम्—प्रतिष्ठाहोमकर्मणः साङ्गत्वसिद्धये मयाऽऽचरितस्यामुकदेवस्येदं पूर्णपात्रं सदक्षिणां ब्रह्मणे तुभ्यं

अग्निमें पवित्री का प्रक्षेप करे। ब्रह्माको पूर्णपात्र दक्षिणा सहित दे। ब्रह्मा 'द्यौस्त्वा ददातु' इस मन्त्रसे ग्रहण करे।

तदनन्तर अग्निके पीछे अर्थात्—पश्चिमभागके प्रणीतापात्रको उलट दे ।

संप्रददे । 'ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु' इति मन्त्रेण पूर्णपात्रं ब्रह्मा गृह्णीयात् । ततोऽग्नेः पश्चात् प्रणीताविमोकः । 'ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् । उपयमनकुशैर्मार्जयेत् । उपयमनकुशानामग्नौ प्रक्षेपः । श्रेयोदानम्—आचार्यः सङ्कल्पं कुर्यात्—'अमुकदेवप्रतिष्ठाकर्मणो यजमानाय श्रेयोदानं करिष्ये' ॐ शिवा आपः सन्तु । ॐ सौमनस्यमस्तु । ॐ अक्षतं चारिष्टं चास्तु । इति यजमान-हस्ते जलादिदत्त्वा साक्षतफलजलं गृहीत्वा 'भवन्नियोगेन मया अस्मिन्सप्रसादशिवाद्यमुकदेवप्रतिष्ठा—कर्मणि मूर्तिपैः सह कृतं यदाचार्यादिकर्म एभिर्ब्राह्मणैः सह तदुत्पन्नं श्रेयस्तदमुना साक्षतजलेन पूगीफलेन तुभ्यमहं संप्रददे । इति यजमानहस्ते क्षिपेत् । तेन श्रेयसा त्वं श्रेयोवान् भव । 'भवामि' इति यजमानः । ततः स्थापितदेवनामुत्तरपूजां कृत्वा कृतस्य प्रतिष्ठाकर्मणः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्तये

'ॐ आपः शिवाः' इससे उपयमनकुशों से मार्जन करे । कुशाओंको अग्निमें प्रक्षेप करे । श्रेयोदान सतिसंभव में आचार्यादि ब्राह्मण करे । आचार्यादि ब्राह्मणों की दक्षिणा का संकल्प करे । आचार्य ब्राह्मणों का पूजन करे । आचार्य

की प्रार्थना—भगवन् सर्वधर्मज्ञ—इत्यादि से करे। ब्रह्माको बैलका निष्क्रय तथा सदस्यको घोड़े का निष्क्रय देकर च आचार्यादिभ्यो महर्त्विग्भ्य सूक्तपाठकेभ्यो मन्त्रजापकेभ्यो हवनकर्तृभ्योऽन्येभ्यो देवयजनमागतेभ्यश्च दक्षिणां दातुमहमुत्सृज्ये। इत्येक एव सङ्कल्पोऽनुष्ठेयः।

'अद्य पुण्यतिथौ आचार्यादीन् पूजयिष्ये' इति सङ्कल्प्य आचार्यं पद्मगर्भे चतुरस्रे पीठे उपवेश्य पाद्यार्घ्याचमनीयवासोयुगगन्धाक्षतपुष्पभूषणाद्यैरलङ्कृत्य देशकालौ सङ्कीर्त्य—'कृतैतत्सप्रासादविष्णुप्रतिष्ठायाः साङ्गतासिद्ध्यर्थं तत्सम्पूर्णफलप्राप्त्यर्थं च ग्रामाश्वदासीदासछत्रचामरवितानरयानासनशय्यावस्त्राद्युपेतं (वस्त्रादिनिष्क्रयोपेतं वा) गोसहस्रं तदर्धं वा वृषभैकादशकं पञ्च वा एकां गां सालङ्कारां वा अमुकगोत्रायामुकशर्मणे आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे। अथाचार्यं प्रार्थयेत्—भगवन् सर्वधर्मज्ञ शिव (विष्णु) शास्त्रविशारद। अनादिजन्मसन्ताने ह्यप्रमेये भवार्णवे। अद्य मे ह्युत्तमं जन्म अद्य मे सफलं धनम्। अद्य मे जननोच्छित्तिरद्य मे परमं पदम्। मोचितोऽहं त्वया नाथ दुश्छेद्याद् भवबन्धनात्। मुक्तोऽहं सर्वसंसारात्प्रपन्नोऽहं तवान्तिके। ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यन्न्यूनं यत्कृतं मया। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादात् क्षमस्व मे॥ अथ

सर्वोंसे प्रार्थना करे । उसके बाद सब ऋत्विक् गण व्यास बाल्मीक–इत्यादि से आशीर्वाद दें । फिर यजमान देव के समीप

प्र०

५०२

आचार्य आशिषं दद्यात्—समस्तजगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारकः । शिवः (विष्णुः) सानुचरस्तुभ्यं सर्वदा सर्वकामदः ॥ द्रव्यहीनं तु यत्किञ्चिद्विधिहीनं तु यद्भवेत् । तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु प्रासादात्कारणस्य तु । मूर्तिपानां स्थापकस्य वर्गिनां शिल्पिनां तथा । सराष्ट्रपार्थिवानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥ पुत्रभृत्यकलत्रैश्च स्वमित्रबलवाहनैः । कारणस्य प्रसादेन सर्वलोकेश्वरो भव ॥ ततः ब्रह्मणेऽनड्डुन्निष्क्रयं सदास्यायाश्वनिष्क्रयं दत्त्वा पूजनपूर्वकं सर्वेभ्यो दक्षिणां दद्यात् । ततः सर्वान् प्रार्थयेत्—वाक्संपूर्णं मनः पूर्णं कार्यंपूर्णं कृतं मम । सम्पूर्णस्य प्रसादेन सम्पूर्णं मे मनोरथाः ॥ अथ सर्वे ऋत्विज आशिषं दद्युः—'व्यासवाल्मीकवचनात्पराशरवशिष्ठयोः । गर्गगोतमधौम्यात्रिवसिष्ठाङ्गिरसां तथा । वचनान्नारदादीनां पूर्णं भवतु ते कृतम् ॥ ततः यजमानो देवान्तिकमागत्य—'ॐ जितं ते पुण्डरीकाक्ष जितं ते विश्वभावन । सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुषपूर्वज ॥ विधिच्छिद्रं तु यत्किञ्चित्तदाच्छिद्रं प्रजायताम् । राज्ञः कर्तुः प्रजानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥ इति नमेत् ।

प्र०

५०२

में जाकर 'जितं ते' इन श्लोकों से प्रणाम करे ।

प्र० ५०४

❋ अथाभिषेककर्म ❋

घृत ब्राह्मण स्थापित सब कलशों से थोड़ा थोड़ा जल लेकर सकुटुम्ब सपत्नीक यजमान का देवस्य त्वा—इत्यादि

उदङ्मुखा (प्रत्यङ्मुखा) ऋत्विजः स्थापितेभ्यः सर्वेभ्यः कलशेभ्यः किञ्चिदुदकं पात्रान्तरे आदाय सकुटुम्बं यजमानं तद्वामत उपविष्टां पत्नीं चाभिषिञ्चेयुः—

ॐ देवस्यं त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रियै दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ १ ॥ देवस्यंत्वासवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्याम् । सरस्वत्यैवाचोयन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥ २ ॥ देवस्यंत्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येनतेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि सरस्वत्यै भैषज्येनवीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामीन्द्रस्येन्द्रियेणबलायश्रियैयशसेऽभिषिञ्चामि ॥ ३ ॥

ॐ भगप्रणेतर्भगसत्यराधोभगेमान्धियमुदवाददन्नः । भगप्रनोजनयगोभिरश्वैर्भगप्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ ॐ इदमापः प्रवहतावद्यञ्चमलञ्चयत् । यच्चाभिदुद्रोहानृतं यच्चशेपेऽअभीरुणम् ।

मन्त्रों से कलशों से निकाले हुए जलों से अभिषेक करे । इसप्रकार अभिषिक्त यजमान आदि महानदी आदि में

प्र० ५०४

अवभृथबुद्धि से मंगलस्नान करे। अभिषेक वस्त्रोंको आचार्यके लिए यजमान दे। अभिषेक करने वाले ब्राह्मणोंको

आपो मातरस्मादेनसः पवमानश्च मुञ्चतु ॥ ॐ शिरो मे श्रीर्यशो मुखन्त्विषिः केशाश्च श्मश्रूणि। राजा मे प्राणोऽअमृतꣳसम्म्राट्चक्षुर्व्विराट्श्रोत्त्रम् ॥ जिह्वा मे भद्रं व्वाङ्महो मनो मन्न्युः स्वराड्भामः। मोदाः प्रमोदाऽअङ्गुलीरङ्गानि मित्त्रम्मे सहः ॥ बाहू मे बलमिन्द्रियꣳहस्तौ मे कर्म्म व्वीर्य्यम्। आत्त्मा क्षत्त्रमुरो मम ॥ पृष्टीर्म्मे राष्ट्रमुदरमꣳसौ ग्रीवाश्च श्रोणी। ऊरूऽअरत्त्नी जानुनी व्विशो मेऽङ्गानि सर्व्वतः ॥ नाभिर्म्मे चित्तं व्विज्ञानम्पायुर्म्मेऽपचितिर्भसत्। आनन्दनन्दावाण्डौ मे भगः सौभाग्ग्यम्पसः। जङ्घाभ्याम्पद्भ्यान्धर्म्मोऽस्मि व्विशि राजा प्रतिष्ठितः ॥ प्रति क्षत्त्रे प्रतितिष्ठामि राष्ट्रे प्रत्यश्वेषु प्रतितिष्ठामि गोषु। प्रत्यङ्गेषु प्रतितिष्ठाम्म्यात्त्मन्न्प्रति प्राणेषु प्रतितिष्ठामि पुष्टे प्रति द्यावापृथिव्व्योः प्रतितिष्ठामि यज्ञे ॥ त्त्रया देवाऽएकादश त्त्रयस्त्रिꣳशाः सुराधसः। बृहस्पतिपुरोहिता देवस्य सवितुः सवे। देवा देवैरवन्तु मा ॥ प्रथमा द्वितीयैर्द्वितीयास्तृतीयैस्तृतीयाः सत्त्येन सत्त्यं यज्ञेन यज्ञो यजुर्भिर्य्यजूꣳषि सामभिः सामान्न्यृग्भिर्ऋचः पुरोनुवाक्याभिः पुरोनुवा-

दक्षिणा दे।

क्याबाज्ज्याभिर्य्याज्ज्यान्वषट्कारैर्व्वषट्कारा ऽआहुतिभिराहुतयोमेकामान्त्समर्द्धयन्तुभूःस्वाहा ॥

एवमभिषिक्ता यजमानादाय: महानद्यादौ अवभृथबुद्धया मङ्गलस्नानं कुर्युः। अभिषेकवस्त्राण्याचार्याय दद्याद्यजमानः। कृताभिषेककर्मणः साङ्गताफलसिद्धये अभिषेककर्तृभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां ददे

❁ अथ दक्षिणादानादिकथन ❁

अस्य विष्ण्वादिदेवप्रतिष्ठाकर्मणः सम्पूर्णतासिद्धये यथोत्पन्नेनान्नेन यथाकालं नानागोत्रान् अमुकशर्मणः विष्ण्वादिप्रतिष्ठाकर्मणि यथासंख्यासङ्ख्याकान् ब्राह्मणान् भोजयिष्ये।

कृतस्य सनवग्रहमखप्रतिष्ठाकर्मणः इमानि ग्रहवास्तुयोगिनीक्षेत्रपालप्रधानपीठानि सदक्षिणानि यज्ञपात्राणि यज्ञोपकरणानि च आचार्याय सम्प्रददे। कृतैतत्—सनवग्रहमखप्रतिष्ठाकर्मणः—इमं मण्डपं ध्वजापताकाद्युपस्करयुतमाचार्याय संप्रददे। कृतस्य मण्डपदानस्य साङ्गतासिद्धये यथाशक्तिद्रव्यमाचार्याय संप्रददे।

ब्राह्मणभोजन संकल्प करे। आचार्यको पीठादिदान करे। अग्नि आदि देवताका विसर्जन करे। प्रार्थना करे।

प्रतिपत्तिरूपत्वान्नात्र सङ्कल्पवाक्यमिति बहवः । नवग्रहप्रीतये यथाशक्तिसुवर्णमाचार्याय संप्रददे । इमां सोपस्करां शय्यामाचार्याय तुभ्यं संप्रददे । अन्यदपि दातुमुपकल्पितमिष्टं वस्तु दद्यात् ।

प्र०

विधिच्छिद्रं तु यत्कञ्चित्तदाच्छिद्रं प्रजायताम् । राज्ञः कर्तुः प्रजानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥ आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर ॥ यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् । इष्टकामसमृध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥ गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थाने परमेश्वर । यत्र ब्रह्मादयो देवास्तत्र गच्छ हुताशन ॥

५०७

ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पतेदेवयन्तंस्त्वेमहे ॥ उप॑ यन्तुमरुतं॑सुदानंवऽइन्द्रं प्राशुर्भवाशचा ॥ त्वयंहिहित्वाप्रयतिय॒ज्ञेऽअस्मिन्नग्नेहोतारमवृणीमहीह ॥ ऋधंगयाऽऋधंगताशंमिष्ठाः प्रजानन्न्य॒ज्ञमुपंयाहिविद्वान्त्स्वाहा ॥ अनुंवीरैरनुंपुष्ष्यास्मगोभिरन्न्वश्श्वैरनुकव्वौणपुष्टैः ॥ अनुद्विपदानुचतुंष्पदा व्वयन्न्देवानोयऽमृंतुथानंयन्तु ॥ यज्ञंयज्ञङ्गच्छय॒ज्ञपंतिङ्गच्छस्वांयोनिङ्गच्छस्वाहा ॥ एषतें यज्ञोयज्ञपतेसहसूंक्तवाकः सर्ववीरस्तञ्जुंषस्वस्वाहा ॥

५०७

कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुध्यात्मना वाऽनुसृतः स्वभावात् । करोमि यद्यत्सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि ॥ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना ॥ अपुत्राः पुत्रिणः सन्तु पुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः । निर्धनाः सधना सन्तु जीवन्तु शरदां शतम् ॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिरेव च । हूयते च पुनर्द्वाभ्यां तस्मै यज्ञात्मने नमः ॥ अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम । तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष त्वं परमेश्वर ॥ गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च । आगता सुखसम्पत्तिः पुण्योऽहं तव दर्शनात् ॥ अपराध-सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥ अपराधसहस्राणि सहस्रमयुतं तथा । अर्बुदं चाप्यसङ्ख्येयं करुणाब्धे क्षमस्व मे ॥ अज्ञानादल्पसक्तित्वादालस्याद् दुष्टचेतसः । यन्न्यूनमातिरिक्तं वा तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि । पापोऽहं पापकर्माऽहं पापात्मा पापसम्भवः । त्राहि मां पुण्डरीकाक्ष सर्वपापहरो हरिः ॥ अज्ञानात् विस्मृतेर्भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् । विपरीतं तु तत्सर्वं क्षमस्व परमेश्वर ॥ जपच्छिद्रं तपच्छिद्रं यच्छिद्रं शान्तिकर्मणि । सर्वं भवतु मेऽच्छिद्रं ब्राह्मणानां प्रसादतः ॥ काले वर्षतु पर्जन्यः पृथिवी सस्यशालिनी । देशोऽयं क्षोभरहितो ब्राह्मणाः

प्र० ५०९

सन्तु निर्भयाः ॥ सर्वे च सुखिनः सन्तु सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चित् दुःखमाप्नुयात् ॥ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ यस्य स्मृत्या च नमोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐ विष्णवे नमः ३ इति ।

❋ अथ प्रासादे महाध्वजारोपणम् ❋

स च प्रासादसमः तदर्धं तदर्धं वा दैर्घ्ये, षोडशभागेन तदर्धेन तदर्धेन वा विस्तृतोमूले । ध्वजदण्डस्तु चतुर्दशहस्तो नवहस्तो वा देवेन सहैवाधिवासनोऽयं ध्वजः । गन्धाद्यैः पूजयित्वा प्रसादसमीपमानीय तस्मिन् ध्वजे शैवं पाशुपतं महास्त्रं विन्यसेदेभिर्मन्त्रैः—सूर्यकोटिसहस्राभं प्रलयाम्बुदनिस्वनम् । प्रदीप्तदसशनप्राणं प्रकाशं मुखकन्दरम् ॥ त्र्यक्षं तडिल्लताजिह्वं प्रदिप्तश्मश्रु-मूर्द्धजम् । सर्वोपवीतं शूलासिशक्तिमुद्गरधारिणम् ॥ चतुर्हस्तं चतुर्वक्त्रं सूर्यचन्द्रार्धशेखरम् । देवदानवदैत्यानां दर्पितानां विनाशनम् ॥ (अत्र ध्वजे देवतालिङ्गसूचनाय विष्णोर्ध्वजे—

प्रसाद में महाध्वजारोपण करे । जो जिसका वाहन है उसका ध्यान करे । शान्तिरस्तु—इत्यादि श्लोक पढ़े ।

प्र० ५०९

गरुडम् । शिवस्य—वृषभम्, ब्रह्मणो हंसम्, सूर्यस्याश्वरथं, दुर्गायाः—सिंह, गौर्याः—गोधां, गणेशस्य—मूषकं, भैरवस्य—कुक्कुरम्, वायोर्मृगं, सरस्वत्याः—हंसमित्यादि। यस्य यद्वाहनं तत् सौवर्णं राजतं वा तस्य मध्येऽधिवास्य सम्पूज्य बन्धनीयम्। (अधिवासश्च देवेन सहैव कार्यः) अथ तं ध्वजं प्रसादपृष्ठे नैर्ऋतभागे मारुते वा ईशाने वा सशिखरप्रसादपञ्चमांशेन चतुर्थेन तृतीयेन वा ध्वजस्तम्भधारं कृत्वा तत्रारोपयित्वाऽनुमन्त्रयेदेभिर्मन्त्रैः—शान्तिरस्तु शिवश्चास्तु स्थानस्याय शुभं तथा। प्राणिनः सुखिनः सन्तु राजा च विजयी भवेत्॥ यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च तावदत्र स्थिरो भव। दुरितं यत्समस्तानां सत् क्रियायै धुनोतु सः। प्रजाहानिश्च दुर्भिक्षं माभूज्जगति सर्वदा। त्वत्प्रसादाच्च तत्सर्वं शुभं भवतु वो नमः॥ इति ध्वजारोपणम्।

* अथ वासुदेवकृतप्रतिष्ठारत्नमालोक्तसंक्षिप्तचतुर्थीकर्मप्रयोगः *

देशकालौ संकीर्त्य—प्रतिष्ठाङ्गत्वेन विहितममुकदेवस्य चतुर्थीकर्म करिष्ये इति सङ्कल्प्य—प्रथमेऽहनि कुङ्कुमेन देवं लेपयित्वा पूजयेत्। द्वितीयदिने—हरिद्राकिद्धार्थचूर्णेन। तृतीयदिने पिष्टसितचन्दनचूर्णेन। चतुर्थदिने—मनःशिलाप्रियङ्गुचूर्णेन। पञ्चमे—कृष्णाञ्जनतिलचूर्णेन। षष्ठे—

२०

२१०

२०

२१०

रक्तचन्दनपद्मकेसरचूर्णेन। सप्तमे—गोरोचननागकेसरचूर्णेन। इतित्रिविक्रम्याम्। सर्वलेपनद्रव्ये कपिलाघृतमिश्रणं कर्तव्यम्। ततः चन्दनपुष्पधूपदीपनैवेद्यं समर्च्य आचार्यः स्वकुण्डे देवमन्त्रेणाष्टविंशतिवारमाज्यं हुत्वा देवसमीपमागत्य—ॐ मुञ्चन्तुमाशपथ्यादथोव्वरुण्यादुत। अथोयमस्य पड्वीशात्सव्वस्मादेवकिल्बिषात्॥ इतिकौतुकसूत्रं प्रतिमुच्य (बध्वा) पुनः पूजयेत्। दक्षिणादिकं च दद्यात्। इति।

* अथ शिवप्रतिष्ठायां विस्तृतचतुर्थीकर्मप्रयोगः—*

यस्मिन्दिने देवः स्थापितस्ततो द्वितीये चतुर्थे वाऽहनि कर्ता अद्य पुण्यतिथौ अमुकदेवप्रतिष्ठाङ्गभूतं चतुर्थीकर्म करिष्ये। अथ प्राग्वत् एवाचार्यो मूर्तिपयजमानद्वारपालादिभिः सह—अविसर्जितंमण्डपं पश्चिमद्वारेण प्रविश्य वेद्याः प्रादक्षिण्येन गत्वा स्वकुण्डे शिवदैवत्यं चरुं श्रपयित्वा पञ्चभिर्ब्राह्ममन्त्रैः पञ्चभिरङ्गमन्त्रैश्च प्रतिमन्त्रं शतं शतमिति सहस्रमाहुतीस्तेनैन चरुणा अकृतविसर्जनेऽग्नौ जुहुयात्। तत्र ब्रह्ममन्त्राः पञ्च—ईशानः सर्व० १ ॐ तत्पुरुषाय० २ ॐ अघोरेभ्योऽथ० ३ ॐ वामदेवाय० ४ ॐ सद्योजातं प्र० ५ इति।

प्र० ५११

अथाङ्गमन्त्राः पञ्च—ॐ अरभ्यः संभृ० १ ॐ वेदाह मे० २ ॐ प्रजापति० ३ ॐ यो देवे० ४ ॐ रूचं ब्रा० ५ तत ऋत्विजोऽपि घृतेन तिलैर्वा स्वस्वकुण्डेषु पूर्वोक्तैर्दशभिर्मन्त्रैः प्रतिमन्त्रं दश दशेति शतं हुत्वा 'ॐ अम्बेऽ अम्बिके' दशदशवारं जुहुयुरिति ।

अथान्यदेवतायाश्चतुर्थीकर्मप्रयोगः—

यो देवः स्थापितो भवति तद्दैवत्यं चरुं श्रपयित्वा तद्देवमन्त्रेण तद्देवपत्नीलिङ्गकमन्त्रेण च प्रतिमन्त्रं पञ्चशतं सहस्रहोमं कुर्यादाचार्यः । एवमृत्विजोऽपि स्वस्वकुण्डे देवमन्त्र-पत्नीमन्त्राभ्यां शतं शतं जुहुयुः । अत्र प्रतिमन्त्रं पञ्चाशदाहुतयः । देवमन्त्राः—ॐ इदं विष्णु-रित्यादयः पत्नीमन्त्रास्तु—ॐ श्रीश्चत इत्यादयः । इतिशिवातिरिक्तदेवताविषयकं चतुर्थीकर्म मयूखोक्तमिति । केवलप्रासादप्रतिष्ठाङ्गचतुर्थीकर्माणि वास्तोष्पतिदैवत्यश्चरुरन्यत्समानम् । होमस्तु आचार्यकुण्डे सहस्रसङ्ख्यः । ऋत्विक्कुण्डहोमलोप एवेति । चतुर्थीकर्माशक्तौ महास्नानमितिमात्स्ये त्रैविक्रम्यां च उभयोः समुच्चय इतिमयूखकाराः । अतो मयूखानुसारिभिश्चचतुर्थी महास्नानं च कार्यम् । महास्नानप्रयोगस्तु गुरुश्चेति मयूखे उक्तः ।

तत्र तद्दिनेऽपि सर्वं कर्म समाप्य अग्निविसर्जनात्पूर्वं कार्यमित्येकः पक्षः। वसोर्द्धाराहोमान्ते संस्रवप्राशनपूर्णपात्रविमोकादितः पूर्वं कार्यमितिद्वितीयः पक्षः। स्विष्टकृदादिहोमादिहोमात्पूर्वं कार्यमितितृतीयः पक्षः। अग्न्यन्तरे कार्यमिति चतुर्थ पक्षः। तत्र प्रथमपक्षे ब्रह्मोपवेशनाद्याज्यभागान्तं पुनः कार्यम्। अयमेव पक्षो मयूखादिसकलनिबन्धाभिमतः। अतोऽयमेवपक्षः श्रेष्ठतमः। पुनर्ब्रह्मोपवेशनादिकुशकण्डिकाकरणाशक्तौ सौकर्यार्थं द्वितीयः पक्षो ग्राह्यः। तत्र प्रणीताप्रोक्षणीपात्रादेरविमोकेन प्रणीतादीनां वर्तमानतया कुशकण्डिकाऽभावप्रयुक्तलाघवात्। न च द्वितीयपक्षे स्विष्टकृतो नवाहुतीनां च निवृत्ततया तदनन्तरं कथं चतुर्थीकर्म होम इतिवाच्यम्। स्विष्टकृदाहुतेः प्रधानाहुतिपूर्वकतया अङ्गत्वेन विहितहोमस्य स्विष्टकृदनन्तरमपि करणे क्षत्यभावात्। अत एव दर्शपूर्णमासादौ स्विष्टकृद्होमानन्तरमनुयाजादयो विहिताः। स्मार्ताधानादावपि स्विष्टकृद्होमानन्तरमयास्याग्न इति मन्त्रेण होमो विहितं इति दिक्। एवं तृतीयचतुर्थपक्षावपि यथासंभवं कार्याविति।

❀ आशीर्वादकथनम् ❀

श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात् पवमानं महीयते । धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसंवत्सरं दीर्घमायुः ॥ मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः । शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ॥

❀ देवताओं की गायत्री कथन ❀

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि । तन्नो रुद्रः प्रचोदयात् ॥ ॐ नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि । तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् । ॐ भास्कराय विद्महे प्रभाकराय धीमहि । तन्नो भानुः प्रचोदयात् ॥ ॐ एकदन्ताय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि । तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ॥ ॐ गणाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि ॥ तन्नो गौरी प्रचोदयात् ॥ हरिवक्त्राय विद्महे रुद्रवक्त्राय धीमहि । तन्नो नन्दी प्रचोदयात् ॥ ॐ महाम्बिकायै विद्महे कर्मसिद्ध्यै च धीमहि । तन्नो लक्ष्मीः प्रचोदयात् ॥ ॐ वैनतेयाय विद्महे स्वर्णपक्षाय धीमहि । तन्नो गरुडः प्रचोदयात् ॥ अञ्जनीसुताय विद्महे वायुपुत्राय धीमहि । तन्नो हनुमत्प्रचोदयात् ॥

ॐ दाशरथाय विद्महे सीतावल्लभाय धीमहि। तन्नो रामः प्रचोदयात् ॥ ॐ जनकात्मजायै विद्महे रामप्रियायै धीमहि ॥ तन्नः सीता प्रचोदयात् ॥ ॐ दाशरथाय विद्महे उर्मिल्ला-वल्लभाय धीमहि। तन्नो लक्ष्मणः प्रचोदयात् ॥ ॐ दाशरथाय विद्महे माण्डवीवल्लभाय धीमहि ॥ तन्नो भरतः प्रचोदयात् ॥ ॐ दाशरथाय विद्महे श्रुतिकीर्तिवल्लभाय धीमहि। तन्नः शत्रुघ्नः प्रचोदयात्। ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि। तन्नः कृष्णः प्रचोदयात् ॥ वृषभान्वात्मजायै विद्महे कृष्णवल्लभायै धीमहि। तन्नो राधा प्रचोदयात् ॥ ॐ वज्रनखाय विद्महे तीक्ष्णदंष्ट्राय धीमहि। तन्नो नारसिंहः प्रचोदयात् ॥ चतुर्मुखाय विद्महे पद्मासनाय धीमहि। तन्नो ब्रह्मा प्रचोदयात् ॥ ॐ महासेनाय विद्महे वाग्विशुद्धाय धीमहि। तन्नः स्कन्दः प्रचोदयात् ॥

* चलप्रतिष्ठाप्रयोगः *

दीर्घायुर्लक्ष्मीसर्वकामसमृद्ध्यक्षय्यसुखकामः अस्यां मूर्तौ लिङ्गे वा देवकलासान्निध्यार्थं अमुकदेवमूर्तिचलप्रतिष्ठां करिष्ये। इति संकल्प्य ग्रहशान्तिप्रयोगानुसारेण गणेशादि पूजनं समाप्य प्रधानमन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्रमष्टोत्तरशतमष्टाविंशति वा आहुतिं कृत्वा स्वागतं देवदेवेश विश्वरूप

प्र० ५१५

नमोऽस्तु ते । शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिकर्म सहस्व ताम् ॥ स्नानपीठे देवं निधाय पूर्ववत् महा-
स्नानादिकं समाप्य न्यासादिकं च कृत्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्म-
विष्णुरुद्रा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि क्रियामयवपुः प्राणाख्या देवता आं बीजं क्रौं शक्तिः
प्राणप्रतिष्ठायां विनियोगः । ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः शिरसि । ऋग्यजुःसामछन्दाभ्यो नमः
मुखे । प्राणाख्यदेवतायै नमो हृदि । आं बीजाय नमः गुह्ये । क्रौं शक्तये नमः पादयोः । ॐ कं खं
गं घं ङं अं पृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः । ॐ चं छं जं झं ञं इं शब्दस्पर्श-
रूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा । ॐ टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं शिखायै
वषट् । ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपादपायूपस्थात्मने ऐं कवचाय हुम् । ॐ पं फं बं भं मं
ॐ वचनादानगतिविसर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अं
मनोबुद्ध्यहङ्कारचित्तात्मने अः अस्त्राय फट् । एवमात्मनि देवे च कृत्वा देवं स्पृष्ट्वा जपेत् ।
ॐ आं ह्रीं० देवस्य जीव इह स्थितः । ॐ आं ह्रीं क्रौं० देवस्य सर्वेन्द्रियाणि । ॐ आं ह्रीं क्रौं०
देवस्य वाङ्मनश्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । प्रतिमायाः

लिङ्गस्य वा हृद्यङ्गुष्ठं दत्वा जपेत् ॥ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणा क्षरन्तु च । अस्यै देवत्व-मर्चायै मामहेति च कश्चन ॥ ॐ स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः । प्राकृतं त्वमदृष्ट्वा मां बालवत्परिपालय । धर्मार्थकामसिद्ध्यर्थं स्थिरो भव शिवाय नः सान्निध्यं तु महादेवस्यार्चायां परिकल्पय । यावच्चन्द्रावनीसूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः ॥ तावत्त्वयाऽत्र देवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया ॥ भगवन् देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् । येन रूपेण भगवन् त्वया व्याप्तं चराऽचरम् । तेन रूपेण देवेश अर्चायां सन्निधो भव ॥ इति नमेत् । ततः स्विष्टकृदादिकर्म समाप्य आचार्याय दक्षिणादिकं दद्यात । इति चलप्रतिष्ठा ।

* अथ जीर्णोद्धारविधिः *

अमुकगोत्रः अमुकशर्माऽहम् ईश्वरप्रीतिकामो जीर्णादिदोषदुष्टलिङ्गस्य प्रतिमाया वा जीर्णोद्धारं करिष्ये—इति संकल्प्य गणेशादिपूजनं पूर्ववत् समाप्य प्रार्थयेत्——जीर्णभग्नमिदं देव सर्वदोषावहं नृणाम् । अस्योद्धारे कृते शान्तिः शास्त्रेऽस्मिन् कथिता त्वया ॥ जीर्णोद्धारविधानं च नृपराष्ट्रवि-वर्द्धनम् । तत्राधिष्ठितं देवं प्रोद्धरामि तवाज्ञया । इति देवस्य जीर्णदोषं श्रावयित्वा लिङ्गं

प्रार्थयेत्—लिङ्गरूपं समागत्य येनेदं समधिष्ठितम् । या यास्त्वं सम्मितं स्थानं सन्त्याज्यैव शिवाज्ञया ॥
अत्र स्थाने च या विद्या सर्वविद्येश्वरैर्युता । शिवेन सह सन्तिष्ठेति मन्त्रितजलेनाऽभिषिच्य
विसर्जयेत् । शिल्पिस्तुतः शिवं साङ्गं विसृज्य सौवर्णखनित्रेण खात्वा लिङ्गमादाय रथमारोप्य
वामदेवाय नमः— इति नद्यादौ क्षिपेत् ॥ प्रतिमां तु प्रणवेन क्षिपेत् । दारुजं तु मधुनाऽभ्यज्य
अघोरेण दहेत् । पुनः पूर्ववत् मूर्तिं स्थापयेत् । प्रासादजीर्णे प्रासादं मन्त्रवत् खड्गेन छूरिकया
वा संयोज्य नूतनप्रासादसिद्धिपर्यन्तं खड्गादिकमर्चयित्वा प्रासादे सिद्धे खड्गादिमन्त्रान् यथा-
स्थानं प्रतिष्ठाकाले न्यस्य यजमानमभिषिच्य लिङ्गं प्रतिमां वा तत्रैव संस्थाप्य स्थिरीकृत्य
यथोपचारैः सम्पूज्य प्रार्थयेत्—भगवन् भूतभव्येश लोकनाथ जगत्पते । जीर्णलिङ्गसमुद्धारः
कृतस्ते चाज्ञया मया ॥ अग्निना दारुजं दग्धं क्षिप्तं शैलादिकं जले । प्रायश्चित्ताय देवेश
अघोरास्त्रेण तर्पितम् ॥ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यथोक्तं न कृतं यदि । तत्सर्वं पूर्णमेवाऽस्तु
त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ कर्तुराज्ञः प्रजानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा । अस्माकं शिल्पिनां चैव सुप्रीतो
भव सर्वदा ॥ ततः पूजास्विष्टादिकं समाप्य आचार्यादिभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दक्षिणां दत्त्वा भोजयेत् ।

अथ बौधायनोक्ता राधाकृष्णप्रतिष्ठा

मम सर्वपापक्षयार्थं दीर्घायुर्विपुलपुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्नसन्ततिवृद्धिस्थिरलक्ष्मीकीर्तिलाभशत्रुपराजयसर्वपापनिरसन-सकलसुखधर्मार्थकाममोक्षप्राप्तिद्वारा श्रीराधाकृष्णप्रीत्यर्थं सनवग्रहमखम-प्रासादराधाकृष्णमूर्त्योः स्थिरप्रतिष्ठां चलप्रतिष्ठां वा करिष्ये। इति संकल्प्य ग्रहप्रयोगानुसारेण पूजनं समाप्य जलाधिवास–देवस्नपनादिकं च समाप्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—अस्य प्राणप्रतिष्ठा-मन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋऽयजुःसामाथर्वाणि छन्दांसि क्रियामयवपुःप्राणाख्या देवता राधा-कृष्णयोः प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः राधा-कृष्णयोः प्राणा इह प्राणाः। ॐ आं ह्रीं० राधाकृष्णयोः जीव इह स्थितः। आं ह्रीं० राधा-कृष्णयोः सर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं ह्रीं० क्रों यं० राधाकृष्णयोः वाङ्मन-स्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वा-घ्राणप्राणाः इहागत्य स्वस्तये सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। देवस्य मूर्ध्नि हस्तं निधाय गायत्रीं जपेत्। ॐ देवकीनन्दनाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि॥ तन्नः कृष्णः प्रचोदयात्॥ अतसी-पुष्पसङ्काशं शङ्ख-चक्र-गदाधरम्॥ संस्थापयामि देवेशं देवो भूत्वा जनार्दनम्॥ ततः पुरुष-

सूक्तेन देवमभिमन्त्र्य राधिकाया मूर्ध्नि हस्तं निधाय ॐ समुद्धृतायै विद्महे विष्णुनैकेन धीमहि । तन्नो राधा प्रचोदयात् ।। आवाहन—आवाहयामि देवेशं श्रीराधावल्लभं हरिम् । देवकीतनयं कृष्णं श्रीकृष्णं प्रकृतेः परम् । आसनम्—राजाधिराजेन्द्रं कृष्णं चन्द्रादित्ययदूद्भवम् । इदं सिंहासनं तुभ्यं दास्यामि स्वीकुरु प्रभो । त्रैलोक्यपावनस्त्वं हि राधया सहितो हरे । पाद्यं गृहाण देवेश नमो राजीवलोचन । पाद्यं स० । परिपूर्ण परानन्द ब्रह्मादिदेवतात्मक । गृहाणाऽर्घ्यं मया दत्तं तीर्थवारिसमन्वितम् ।। अर्घ्यं स० । वासुदेवाय कृष्णाय तत्त्वज्ञानस्वरूपिणे । मधुपर्कं प्रदास्यामि दीनानाथाय ते नमः ।। मधुपर्कं स० । नमः शुद्धाय बुद्धाय सत्याय ज्ञानरूपिणे । गृहाणाऽऽचमनं नाथ सर्वलोकैकनायक । आचमनं स० । पञ्चामृतं मयाऽऽनीतं० पयो० पञ्चामृतस्नानं स० । ब्रह्माण्डोदरमध्यस्थं तीर्थैश्च यदुनन्दन । स्नापयिष्याम्यहं भक्त्या स्वकरेण जनार्दन ॥ स्नानं स० । शीतवातोष्णसंत्राणं पीताम्बरमिदं हरे । संगृहाण जगन्नाथ कृष्णचन्द्र नमोऽस्तु ते ।। वस्त्रं स० । श्रीकृष्णाच्युत यज्ञेश श्रीधरानन्दराधन । ब्रह्मसूत्रं सोत्तरीयं गृहाण यदुनायक ।। कृष्णाय नमः उपवीतं उत्तरीयं च स० । किरीट-हार-

केयूर-वंशी-कुण्डल-मेखलाः । ग्रीवेयकौस्तुभोहार-रत्नकङ्कण नूपुरौ ।। एवमादीनि सर्वाणि भूषणानि सुरोत्तम । अहं दास्यामि सद्भक्त्या संगृहाण जनार्दन ।। अलङ्करणं स० । कुङ्कुमाऽगरु-कर्पूर-कस्तूरीमिश्रचन्दनम् । तुभ्यं दास्यामि विश्वेश राधया सहितो हरे ।। गन्धं स० । तुलसी-कुन्द-मन्दार जाति-पुन्नाग-चम्पकैः । कदम्ब-कर-वीरैश्च कुङ्कुमैः शतपत्रकैः । नीलाम्बुजैर्बिल्वदलैः पुष्पमाल्यैश्च केशव ।। पूजयिष्याम्यहं भक्त्या संगृहाण जनार्दन ।। पुष्पमालां स० । अथाङ्ग-पूजा—ॐ कृष्णाय नमः पादौ पूजयामि । ॐ राधाबल्लभाय० गुल्फौ पू० । ॐ केशवाय० जानुनी पू० । ॐ पद्मनाभाय० नाभिं पू० । ॐ परमात्मने० हृदयं पू० । ॐ श्रीकण्ठाय० कण्ठं पू० । ॐ सर्वास्त्रधारिणे० बाहु पू० । ॐ यदूद्भवाय० मुखं पू० । ॐ वाचस्पतये० ऊरू पू० । ॐ विश्वरूपाय० जङ्घे पू० । ॐ माधवाय० कटिं पू० । ॐ विश्वमूर्तये० मेढ्रं पू० । ॐ विश्वेशाय० जिह्वां पू० । ॐ दामोदराय० दन्तान् पू० । ॐ गोपीनाथाय० ललाटं पू० । ॐ ज्ञानगम्याय० शिरः पू० । ॐ सर्वात्मने० सर्वाङ्गं पू० । वनस्पतिरसो० धूपं स० । ज्योतिषां पतये तुभ्यं नमः कृष्णाय वेधसे । गृहाण दीपकं विष्णो त्रैलोक्यतिमिरापह ।।

प्र० ५२१

दीपं स० । उद्दिव्यान्नममृतं रसैः षड्भिः समन्वितम् । श्रीकृष्ण सत्यभामेश नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ नैवेद्यं स० । पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लैः० ताम्बूलं० स० । दक्षिणां स० । प्रार्थना—स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात् त्वमिहाऽऽगतः । प्राकृतिं त्वामहं दृष्ट्वा बालवत्परिपालय ॥ धर्मार्थकाम-सिध्यर्थं सर्वेषां च शुभासिनः । सान्निध्यं तु सदा कृष्ण स्वार्चायां परिकल्पय । यावच्चन्द्रावनी-सूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत् कृपास्तु देवेश स्वयं भक्त्याऽनुकम्पया ॥ भगवन् सर्वदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् । येन रूपेण भगवन् त्वया व्याप्तं चराऽचरम् । तेन रूपेण देवेश स्वर्चायां सन्निधो भव ॥ इति नमेत् । ततः तर्पणं कुर्यात्——ॐ केशवं तर्पयामि । ॐ माधवं तर्प० । ॐ गोविन्दं तर्प० । ॐ नारायणं तर्प० । ॐ विष्णुं तर्प० । ॐ मधुसूदनं तर्प० । ॐ त्रिवक्रमं तर्प० । ॐ वामनं तर्प० । ॐ श्रीधरं तर्प० । ॐ हृषीकेशं तर्प० । ॐ पद्मनाभं तर्प० । ॐ दामोदरं तर्प० । ॐ सङ्कर्षणं तर्प० । ततः पूर्णाहुत्यादिकर्म समाप्य कर्मेश्वरार्पणं कुर्यात् । इति ।

* अथ हनुमत्प्रतिष्ठाविधिः *

देशकालौ सङ्कीर्त्य गोत्रः शर्माऽहं मम समस्तपापक्षयपूर्वक-ऐश्वर्यायुरारोग्याभिवृद्धिद्वारा

प्र० ५२३

परमेश्वरप्रीतये च अस्यां हनुमत्मूर्तौ देवत्वसंसिद्धये सप्रासादवास्तुसनवग्रहमखहनुमत्प्रतिष्ठां करिष्ये। इति संकल्य पूजनादि समाप्य जलाधिवास-महास्नानादिकं च कृत्वा प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्---अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं क्रौं कीलकं ह्रीं सौं शक्ति प्राणाख्यदेवता प्रतिष्ठापने विनियोगः।

ॐ आँ ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः देवस्य प्राणाः। ॐ आँ ह्रीं० देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं ह्रीं देवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राण इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। ततः--हनुमते नमः। अञ्जनीसूनवे नमः वायुपुत्राय नमः महाबलाय नमः। रामेष्टाय नमः। फाल्गुनसखाय नमः। पिङ्गाक्षाय नमः। अमितविक्रमाय नमः। उदधिक्रमणाय नमः। सीताशोकविनाशाय नमः। लक्ष्मणप्राणदात्रे नमः। दशग्रीवदर्पहन्त्रे नमः। एतैर्द्वादशनामभिः षोडशोपचारैः सम्पूज्य प्रणम्य क्षमापयेत्--हनुमानञ्जनीसूनुर्वायुपुत्रो महाबलः। रामेष्टः फाल्गुनसखः पिङ्गाक्षोऽमितविक्रमः॥ उदधिक्रमणश्चैव सीताशोकविनाशकः। लक्ष्मणप्राणदाता च दशग्रीवस्य दर्पहा॥ स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः। सान्निध्यं सर्वदा देव हनुमन् परि-

प्र० ५२३

कल्पय ॥ यावच्चन्द्रावनीसूर्यातिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत्त्वयाऽत्र स्थातव्यं स्वेच्छाभक्त्यानुकम्पया ॥ ततो देवस्य दक्षिणिकर्णे त्वं दास हनुमानसि इति नामकरणम् । ततः हवनादिकं समाप्य विसर्जनं कुर्यात् । इति हनुमत्प्रतिष्ठा ।

* अथ वापीकूपतडागप्रतिष्ठाप्रयोगः *

देशकालौ सङ्कीर्त्य गोत्रः शर्माऽहं मम इह जन्मनि जन्मान्तरे वा कायिकादिनिखिलपापक्षयार्थं रुद्रालयगमनपूर्वकवैष्णवपदप्राप्तिकामः अमुकजलाशयोत्सर्गकर्माऽहं करिष्ये । इति संकल्प्य गणेशादिपूजनकर्म समाप्य वारुणमण्डलमध्यस्थे पद्मे ग्रहान् पूजयेत् । एतत्सर्वं पूर्ववत् ज्ञेयम् । ततो ग्रहपूजनानन्तरं मण्डलमध्ये ताम्रकलशं संस्थाप्य तस्योपरि वरुणप्रतिमामग्न्युत्तारणपूर्वकं संस्थाप्य सम्पूज्य तस्याऽग्रे सौवर्णकूर्ममकरराजतमत्स्यडुडुभताम्रमयं कुलीरमण्डूकलोहमयं ।शिशुमारयुतां सुवर्णपात्रीन्—ॐ इमं मे वरुणेति मन्त्रेण स्थापयेत् । कुशकण्डिकादिकं विधाय शान्तिकलशं संस्थाप्य प्रार्थयेत्—नमस्ते विश्वरूपाय नमो विष्णो अपांपते । सान्निध्यं कुरु मे देव समुद्रादिह शान्तये ॥ कूपप्रतिष्ठायां तु—अत्र कूपस्य चतुर्दिक्षु धान्योपरि सितवस्त्र-

युक्तान् कलशान् स्थापयेत्। ततः कुण्डे ग्रहादिहोमं प्रधानहोमं च कृत्वा पूर्णाहुत्यादिकं समापयेत्।

❀ अथ शुभमुहूर्ते यूपस्थानम् ❀

आचार्यः मण्डपात् पूर्वतः पादत्रयमितां भूमिं त्यक्त्वा तत्र यूपस्थापनं करोति। कूपात् पूर्वतः ईशान्यां वा। तत्र पालाशकाष्ठस्य पुरुषाकृति पुरुषसमं यूपं कृत्वा अरत्निमात्रं खातं कृत्वा यूपं स्थिरीकृत्य स्तुतिं कुर्यात्—यूपस्त्वं निर्मितः पूर्वं यज्ञभागः सुरेश्वरः। स्तुतः कूपस्य रक्षार्थं पूजां पुष्पबलिं तथा॥ गृहीत्वा सुस्थिरो भूत्वा यजमानोद ँ कुरु। ततो यूपं हरिद्रातैला-भ्यक्तं कृत्वा स्नापयित्वा घृतेनाभ्युज्य पुष्पमालादिनाऽभ्यर्च्य सर्षप-गोरोचन-गुग्गुल-दूर्वा-निम्ब-पत्राणि एतेषां पोटलिकां कृत्वा ॐ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यꣳ शतानीकायसुमनस्यमानाः। तन्म ऽआबध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्यथासम्। इति बद्ध्वा ॐ युवासुवासाः परिवीत ऽआगात्स ऽउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीरासः कवय ऽउन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः॥ इति मन्त्रान्ते वस्त्रेणाऽऽवेष्ट्य ॐ यूपव्रस्का ऽउतयेयूपवाहाश्चषालँ यऽेअश्वयूपाय तक्षति॥ ये चार्वते पचनꣳसम्भरन्त्युतोतेषामभिगूर्तिर्न ऽइन्वतु॥ इति मन्त्रेण यूपमालभ्य यजमानः यूपोपरि

अभिषेकं कुर्यात्— ॐ असंख्याता सहस्राणि० । ॐ इमं मे वरुण श्रुधी० । ॐ एका च मे० । ॐ चतस्रश्च मे । ॐ ये तीर्थानि० ।

❀ अथ यूपन्यासः ❀

यूपशिरसि—ब्रह्मणे नमः । चक्षुषोः—शशिभास्कराभ्यां नमः । हार्दे-केशवाय नमः । नाभौ—अग्नये नमः । ऊर्वोः—कट्यां-गुह्ये-एकादशरुद्रेभ्यो नमः । जङ्घयोः—मेरुपर्वताय नमः । पादयोः—नागेभ्यो नमः । ॐ अर्थेतस्स्थराष्ट्र दाराराष्ट्रमेंदत्तस्वाहाऽर्थेतस्स्थराष्ट्रदाराष्ट्रममुष्मैदत्तौजस्वतीस्थ-राष्ट्रदाराष्ट्रं मेंदत्तस्वाहौजस्वतीस्थराष्ट्रदाराष्ट्रममुष्मैदत्तापः परिवाहिणीस्थराष्ट्रदाराष्ट्रंमेंदत्तस्वाहापः परिवाहिणीस्थराष्ट्रदाराष्ट्रममुष्मैदत्तापांपतिरसिराष्ट्रदाराष्ट्रंमेंदेहिस्वाहाऽपांपतिरसिराष्ट्रदाराष्ट्रममु-ष्मैदेह्यपांगर्भोऽसिराष्ट्रदाराष्ट्रमेंदेहिस्वाहाऽपाङ्गर्भोऽसिराष्ट्रदाराष्ट्रममुष्मैदेहि ॥ इति शिखायाम् ।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुतविश्वतोमुखोविश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात् सम्बाहुभ्यांधमतिसम्पतत्रैर्द्यावाभूमी-जनयन्देवऽएकः ॥ इति चक्षुषोः । ॐ खड्गोवैश्वदेवः श्वाकृष्णःकर्णोगर्दभस्तरक्षस्तेरथंसामिन्द्रायसूकरः सिंहोमारुतःकृकलासःपिप्पकाशकुनिस्तेशरव्यायै विश्वेषां देवानांपृषतः ॥ इति नासिका-

याम् । ॐ अग्निं दूतं० इति मुखे । ॐ नीलग्रीवः शितिकण्ठा दिवं रु० इति ग्रीवायाम् । ॐ बाहूमेबलमिन्द्रियꣳहस्तौमेकर्म्मवीर्य्यम् ॥ आत्माक्षत्रमुरोमम ॥ इति बाह्वोः । ॐ हृदेत्वा मनसेत्वा दिवे त्वासूर्य्याय त्वा ॥ ऊर्ध्वमिममध्वरंदिविदेवेषुहोत्रायच्छ ॥ इति हृदये । ॐ समुद्राद्‌ूर्म्मिर्मधुमाँ२ऽ॥ उदारदुपाꣳशुनासममृतत्वमानट् ॥ घृतस्यनामगुह्यं यदस्तिजिह्वादेवानाममृतस्यनाभिः ॥ इति उदरे । ॐ वाममद्यसवितुर्व्वाममुश्वोदिवेदिवेव्वाममस्मभ्यꣳसावीः ॥ वामस्यहि क्षयस्यदेवभूरेरयाधियाव्वामभाजः स्याम ॥ इति कटिद्वयोः । ॐ नाभिर्मेचित्तं विज्ञानंपायुर्मे ऽपचितिर्भसत् ॥ आनन्दनन्दावाण्डौमेभगः सौभाग्यपसः ॥ जङ्घाभ्यां पद्भ्यांधर्म्मोऽस्मिव्विशिराजाप्रतिष्ठितः ॥ इति जङ्घयोः । ॐ आयङ्गौः—इति पादयोः एवं यूपन्यासं कृत्वा पञ्चोपचारैः सम्पूज्य बलिं दद्यात्—एह्येहि धर्मध्वज यज्ञनाथ त्रयीमयो वेदशरीर यूप । विधातु देवाध्वरयज्ञरक्षां बलिं गृहाण भगवन्नमस्ते ॥ यूपाय एष बलिर्न मम । ततः प्रार्थना—त्वां प्रार्थये ह्यहं यूपं लोकानां शान्तिदायक । सर्वपापविशुद्ध्यर्थं जगदानन्दकारक ॥ देहि मेऽनुग्रहं यूप प्रसादं कुरु सुप्रभो । मूलच्छेदेन यत्पापं भूमिघातेन पातकम् ॥ अदुष्टयूपघातोत्थं यूप पापं

प्र०

५२७

प्र०

५२७

व्यपोहतु । यद्बाल्ये यच्च कौमारे यत्पापं वार्द्धके कृतम् ।। तत्सर्वं मम देवेश यूप पापं व्यपोहतु । यन्निशायां तथा प्रातर्यन्मध्याह्नाऽपराह्णयोः ।। सन्ध्ययोश्च कृतं पापं कर्मणा मनसा गिरा । तत्सर्वं मम देवेश यूप पापं व्यपोहतु ।। येन केन निमित्तेन कर्ता पापं तु कारयेत् । तस्य पापेन नो लिप्तो यो यूपस्पर्शकृन्नरः ।। इति सम्प्रार्थ्य ॐ या ऽओषधीः पूर्वा जाता० इति पुष्पमालां परिधाय यूपं प्रदक्षिणीकृत्य यूपमालिङ्ग्य पुत्रपौत्रादियुक्तो नमस्कुर्यात् । इति यूपपूजनविधिः ।

बृहत्पाराशरे पालाशो ब्राह्मणस्योक्तो नैयग्रोधस्तु भूभुजः । बैल्वो वैश्यस्य यूपः स्याच्छूद्रस्यौदुम्बरः स्मृतः ।। शिरःप्रमाणो विप्रस्य आकण्ठं क्षत्रियस्य च । उरःप्रमाणो वैश्यस्य शूद्रस्य नाभिमात्रतः ।। ततो यजमानः सुलग्ने जलाशयजले कनकशृङ्गादिभूषितां गां यथाशक्ति सम्ज्पूय ॐ इरावती धेनुमती हि भूतꣳ सूयवसिनी मनवे दशस्या । व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्त्थ पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा ।। इति मन्त्रेणावतारयेत् । वापीकूपोत्सर्गे तु त्रिरुपरि भ्रामयेत् । तरन्तीं तामनुमन्त्रयेत्—ॐ इदं सलिलं पवित्रं कुरुष्व शुद्धाः पूता अमृताः सन्तु नित्यम् । मां तारयन्ती कुरु तीर्थाभिषेकं लोकाल्लोक तरते तीर्यते च ।। ततो गुरुणान्वारब्धस्त-

प्र०
५२८

त्पुच्छे संलग्ना जले गच्छन्नेव मन्त्रद्वयं पठेत् । ॐ समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ० ॥ ॐ ये वामी रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु ॥ येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥ ततो जल एवैशान्यामुत्तराभिमुख्या गोः पुच्छं गृहीत्वा जले स्थित्वा यजमानो यवकुशादिभिर्देवमनुष्यपितृतर्पणं स्वशाखोक्तं कुर्यात्—सव्येन प्राङ्मुखो ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम् । कण्ठीकृत्वोदङ्मुखो सनकादयो मनुष्याः तृप्यन्ताम् । अपसव्येन दक्षिणाभिमुखो कव्यवाडनलादयः दिव्यपितरस्तृप्यन्ताम् । पिता पितामहश्चैव तथैव प्रपितामहः । स्वस्वपत्नीसमेताश्च प्रीयन्तां जलतर्पणात् ॥ मातामहस्तत्पिता च प्रमातामहकादयः । स्वस्वपत्नीसमेताश्च प्रीयन्तां जलतर्पणात् ॥ अजातदन्ता ये केचिद्ये च गर्भे व्यवस्थिताः । तेषामुद्धरणार्थाय तडागोदकतर्पणात् ॥ पितृव्यकाश्च येऽस्माकं भ्रातरश्च सहोदराः । गुरवो मातुलाः पुत्रा आचार्य-सखिबान्धवाः ॥ तेषां पुत्राश्च पत्न्यश्च श्वशुरा ये सपुत्रकाः । एतेषां क्रीडनार्थाय तडागोदकतर्पणम् ॥ बन्धुवर्गाश्च ये केचित् गोत्रनामविवर्जिताः । स्वगोत्रा परगोत्रा वा तेभ्यश्चेदं तिलोदकम् ॥ उद्बन्धने मृता ये च सिंहव्याघ्रहताश्च ये । दंष्ट्रिभिः शृङ्गिभिश्चैव तेभ्यश्चैव तिलोदकम् ॥ असुरा देवतान्याश्च मातरश्चण्डिका तथा । दिक्पाला लोक-

पालाश्च ग्रहदेवाधिदेवताः ।। तेषामुद्धरणार्थाय तडागोदकतर्पणम् । अग्निदग्धाश्च ये केचिन्नाग्नि-
दग्धास्तथापरे ।। विद्युच्चौरहता ये च तेभ्योऽपीदं तिलोदकम् । रौरवे चान्धतामिस्रे कुम्भीपाके
च ये गताः ।। अनेकयातनासंस्थाः प्रेतलोकेषु ये गताः । पच्यन्ते संयमन्यां ये नीता ये यम-
किङ्करैः ।। असिपत्रवने घोरे तेभ्योऽपीदं तिलोदकम् । विश्वेदेवास्तथा साध्या आदित्याश्च मरुद्गणाः ।।
क्षेत्रपीठोपपीठानि नद्यश्चैव ससागराः । पाताले नागपत्न्यश्च नगाश्चैव सपर्वताः ।। पिशाचा गुह्यकाः
प्रेता गणा गन्धर्वराक्षसाः । पृथिव्यापश्च तेजश्च वायुराकाशमेव च ।। ते सर्वे तृप्तिमायान्तु तडागोदक-
तर्पणात् । आब्रह्मणो ये पितृवंशजाता मातुस्तथा वंशभवा मदीयाः । वंशद्वयेऽस्मिन् मम दासभूता
भृत्यास्तथैवाऽऽश्रितसेवकाश्च ।। मित्राणि सख्युः पशवश्च वृक्षाः पृष्टाश्च स्पृष्टाश्च कृतोपकाराः ।
जन्मान्तरे ये मम सङ्गताश्च तेभ्यस्तडागोदकमेतदस्तु ।। वापी-कूपयोस्तु तडागपदस्थाने तत्तत्पद-
प्रक्षेपः । ततस्तर्पणान्ते यजमानः पुच्छग्रहणयुक्त ॐ आपोऽअस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो
घृतप्वः पुनन्तु ।। विश्वꣳ हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूतऽएमि ।। इति पठन्नीशान्यां
उत्तीर्य ॐ सूयवसाद्भगवती हि भूया ऽअथो वयं भगवन्तः स्याम । अद्धि तृणमघ्न्ये विश्वदानीं

प्र० ५३१

पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती ॥ (ऋ. १।१६४।४०) इत्यनेन जलान्निष्कास्य ईशान्यां दिशि स्थापयेत्। ततो यजमानः गां सम्पूज्य सामवेदिने ब्राह्मणाय प्रतिपादयेत्। ततः कुङ्कमाक्तेन त्रिवृता सूत्रेण जलाशयं वेष्टयित्वा तत्समीपे उपविशेत्। आचार्यः पूर्वासादितां कूर्ममकरादियुतां हेमपात्रीं दध्यक्षतमहानदीजलयुतामादयोदङ्मुखैश्चतुर्भिर्ऋत्विग्भिः सह स्वयं प्राङ्मुखः स्थित्वाऽगाधे जले सौवर्णौ कूर्ममकरौ प्रागाग्नेयभागयोः। प्रत्यङ्मुखौ राजतौ मत्स्य-डुण्डुभौ दक्षिण-नैर्ऋत्यभागयोः। उदङ्मुखौ ताम्रौ कुलीर-मण्डूकौ पश्चिमवायव्ययोः। प्राङ्मुखौ आयसं शिशुमारं उत्तरदक्षिणाभिमुखं वारुणैर्मन्त्रैः प्रक्षिपेत्—ॐ शन्नो देवी०ः ॥ ॐ आपो हि ष्ठा० ॥ उदङ्मुखस्तां सुवर्णपात्रीं न्युब्जी कुर्यात्। जलाशयोत्सर्गं कुर्यात्—गोत्रः शर्माऽहं मम सर्वपापक्षयपूर्वकरुद्रालयगमनानन्तरबहुकल्पकालावधिकद्युलोकभोगानुभवपूर्वकपरार्द्धद्वयकालावच्छिन्नमहस्तपःप्रभृतिलोकगमनादि-हतल्लोकभोगोत्तरकालसद्योगबलप्राप्यवैष्णवपदप्राप्तिकामोऽहमिमं तडागादिजलाशयं वरुणदेवताकं स्नान-पानाऽवगाहनाद्यर्थं सर्वेभ्यो भूतेभ्यो उत्सृज्ये—इत्युक्त्वा जलाशयं निरीक्ष्य जलं भूमौ निक्षिपेत्। मन्त्रद्वयं जपेत्—सर्वभूतेभ्य उत्सृष्टं मयैतज्जलमूर्जितम्। रमन्तां सर्वभूतानि

स्नानपानाऽवगाहनैः ॥ सामान्यं सर्वभूतेभ्यो मया दत्तमिदं जलम् । रमन्तां सर्वभूतानि स्नानपानाऽवगाहनैः ॥ ततो मण्डपमागत्य प्रागादिष्विन्द्रादिभ्यो दधिमाषभक्तबलिं दद्यात् ।

अथाचारः तडागे नागयष्ट्यारोपणम् तत्र गुरुरष्टसु चूतपत्रेष्वनन्त-वासुकि-तक्षक-कर्कोटक-पद्म-कुलिकानां नामानि प्रत्येकं लिखित्वा प्राक्स्थापितजलकलशे प्रक्षिप्याऽऽलोड्य तत्र वरुणं पूजयित्वा एकं चूतपत्रमाकृष्य तत्पत्रलिखितनामानं नागं तीर्थजलाप्लुतायां यज्ञियवृक्षोद्भवायां जलाशयाल्पत्वाद्यनुसारतो द्वादश-पञ्चदश-विंशत्यन्यतमाऽरत्निमितायां यष्ट्यां अमुकनाग इहा-गच्छ इह तिष्ठेत्यावाह्य स्थापयित्वा अनेन नागेनाऽस्य जलाशयस्य रक्षा कार्या—इति जनेभ्यः श्रावयित्वा तं नागं यष्टौ अमुकनागाय नम इति पूजयेत् । ततो यष्टिसम्बन्धिवर्तुलमस्तकोपरि लोहमयं त्रिशूलं चक्रं वा आरोपयन्ति । ततो जलमध्ये प्रागेव यष्ट्यर्थकृतखातसमीपे अर्चितां-यष्टिं नयेत् । ततः खाते दधि मध्वक्षतकुशतीर्थजलपञ्चरत्नानि प्रक्षिप्य ॐ ऊर्द्ध्वऽऊषुणऽऊतये-तिष्ठादेवोनसविता ॥ ऊर्द्ध्वोव्वाजस्यसनिताबदञ्जिभिर्व्वाघद्भिर्व्विह्वयामहे ॐ स्थिरोभवव्वीड्वङ्ग-ऽआशुर्भव व्वाज्यर्वन् ॥ पृथुर्भवसुषदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहनः ॥ इति मन्त्रद्वयेन स्थिरकरणं । इदं

यष्ट्यारोपणं कूपवाप्योर्न कर्तव्यम् इति नागयष्टिरोपणम् ॥ ततो यजमानो गङ्गादितीर्थजलं जलाशये क्षिपेत् । ततः प्राङ् मुखोपविश्य पठेत्—कुरुक्षेत्रं गयां गङ्गां प्रभासं पुष्कराणि च । एतानि पञ्च तीर्थानि तडागे निवसन्तु मे ॥ वितस्ता कौशिकी सिन्धुः सरयू च सरस्वती । एतानि पञ्च तडागे निवसन्तु मे ॥ दशार्णा मुरला सिंधु रथावती दृषद्वती । एतानि पञ्च तीर्थानि तडागे निवसन्तु मे ॥ यमुना नर्मदा रेवा चन्द्रभागा च वेदिका । एतानि पुण्यतीर्थानि तडागे निवसन्तु मे ॥ गोमती वाङ् मती शोणो गण्डकी सागरस्तथा । एतानि पञ्च तीर्थानि तडागे निवसन्तु मे ॥ इति जलं स्पृष्ट्वा ॐ आपो हिष्ठेति तृचं जपन्नविच्छिन्नदुग्धधारया जलाशयं त्रिः प्रदक्षिणीकृत्य एकं ब्राह्मणं यथेष्टदुग्धं पाययेत् । ततः पूर्णाहुत्यादि कर्मसमापयेत् । इति ।

❁ आरामोत्सर्गप्रयोगः ❁

मम समस्तपापक्षयाऽतीताऽनागत-पितृकुलतारणकामो भगवत्प्रीतिकामो वा आरामोत्सर्गं करिष्ये । आचार्यः चतुरस्रपीठिकामध्ये कृतवालान् सर्वौषध्युदकैः सिक्त्वां पिष्टान्तकैः पुष्प-मालाभिर्वासोभिश्चाऽलङ् कृत्य सुवर्णसूच्या प्रतिवृक्षस्कन्धसमीपे कर्णवेधं तदुपरिप्रदेशे सुवर्ण-शलाकया नेत्राञ्जनं कृत्वा गुग्गुलधूपं दत्त्वा मूलबद्धचतुरस्रवेदिकोपरि सप्तधान्यं प्रक्षिप्य तस्योपरि

जलापूर्णान् घटान् सोपस्कारान् प्रतिवृक्षसमीपे स्थापयेत्। प्रतिवृक्षे कर्णाशक्तौ वृक्षाष्टके कलश-स्थापनं कर्तव्यमित्याहुः। ततोऽग्निस्थापनान्ते आचार्यः मध्यवेद्यां षोडशारे सूर्याद्यालोकपालान्ता देवता जलाशयोत्सर्गवत् संस्थाप्य प्रतिवृक्षं सप्ताऽष्टौ वेति कृतसंख्याकानि स्वर्णफलानि वेद्यां कूर्ममकारादिपात्रीस्थाने—ॐ व्वनस्पते व्वीड्वङ्गो हि भूया ऽअस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः॥ गोभिः सन्नद्धो ऽअसि व्वीडयं स्वास्थाता ते जयतु जेत्वानि॥ इत्यासादयेत्। तत्रैव ब्रह्माणं शिवं विष्णुं विनायकं कमलामम्बिकां भूतग्रामं च संस्थाप्य सर्वान् पूजयेत्। ततः सर्वेभ्यो बलीन् दद्यात्। अग्निस्थापनात्प्राच्यां पादत्रयं भुवं त्यक्त्वा जलाशयोत्सर्गवद्यूपं निखनेत्। ततः कुशकण्डिकां विधाय ग्रहादिहोमं समाप्य प्रधानहोमं कुर्यात् ॐ व्वनस्पते इति मन्त्रेणाष्टोत्तर सहस्रमष्टोत्तरशतं आज्येन जुहुयात्। ततो पूर्णाहुत्यादिकं समाप्य। इदमारामं यथा-संख्य-अश्वत्थादियुतान् वृक्षान् वनस्पतिदैवतान् स्वीयपापक्षय-पूर्वकपितृमातृकुलद्वयतारणकामः श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सर्वसत्त्वेभ्योऽहं उत्सृजे। ततो मन्त्रद्वयं पठेत्—सर्वभूतेभ्य उत्सृष्टं मयैतद्वन-मूर्जितम्। रमन्तां सर्वभूतानि स्थितिं भक्षोत्सवादिभिः। सामान्यं सर्वभूतेभ्यो मया दत्तमिदं वनम्। रमन्तां सर्वभूतानि स्थितिं भक्षोत्सवादिभिः॥ आरामोत्सर्गप्रयोगः।

देशकालौ स्मृत्वा—गोत्रः शर्मा (वर्मा, गुप्तः,) 'अस्मिन् विष्णुप्रतिष्ठाकर्मणि सूर्यमण्डलान्तर्वर्तिनारायणपूजां करिष्ये । तदङ्गत्वेन आसनविधिं विघ्नोत्सारणं दिग्बन्धं शिखाबन्धं सर्वतोभद्रदेवतास्तथापनं तत्र कलशस्थापनं यन्त्रविलेखनमधः पीठादौ विष्ण्वादिप्रतिमास्थापनम्, मण्डपादिध्यानं द्वारपालपूजां स्वशरीरे पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्तन्यासं, पूजाकलशार्चनमधः शङ्खार्चनं घण्टार्चनं भूम्यर्चा पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्ताभ्यां स्वशरीरे मार्जनम् अघमर्षणम् उपस्थानं स्वात्मनि भगवत्पूजां पाद्यार्घ्याचमनीयमधुपर्कद्रव्याद्यभिमन्त्रणं पूजाद्रव्यापकरणं पीठपूजामग्न्युत्तारणम् आवाहनं प्रतिष्ठापनं देवशरीरे पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्तयोर्न्यासम्, आसनाद्यर्पणं पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्ताभ्यां मूर्त्यभिषेकं जलादेवं बहिर्निष्कास्य यन्त्रे सम्प्रवेशनं वस्त्राभरणापवीतापवस्त्रगन्धाक्षतपुष्पमालातुलसीदलार्पणं गन्धाक्षतपुष्पैरावरणपूजां धूपादिपुष्पाञ्जल्यन्तपूजनं न्याससहितं पुरुषसूक्तलक्ष्मीसूक्तयोर्जपं द्वादशाक्षरमन्त्रजपं प्रसादोदकपानं प्रसादनैवेद्यभक्षणं 'जितं त' इति स्तवनं च करिष्ये । ततो गणेशं सम्पूज्य—ॐ 'पृथ्वि त्वया' इति पठित्वा ॐ अनन्तासनाय नमः १ ॐ विमलासनाय नमः २ ॐ परमसुखासनाय नमः ३ इति आसनं सम्पूज्य 'ॐ तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्तदहनोपम । भैरवाय नमस्तुभ्यमनुज्ञां दातुमर्हसि ॥ इति भैरवाज्ञां गृहीत्वा—'ॐ ये भूतानाम्' इति छोटिकया दिग्बन्धनं कृत्वा 'ॐ भैरवाय नमः' इति वामपादेन भूमिं त्रिः सन्ताड्य 'ॐ ऊर्ध्वकेशि विरूपाक्षि०' इति शिखां बद्ध्वा सर्वतोभद्रपीठे ब्रह्मादिदेवानावाह्य सम्पूज्य मध्ये कलशं संस्थाप्य तत्र सुवर्णरजतताम्राद्यन्यतमपात्रे पट्टवस्त्रे वा विष्णुयन्त्रमालिखेत्—विष्णोरष्टगन्धेन चन्दनेन वा मध्ये एकं बिन्दुं कृत्वा,

ततस्त्रिकोणं विरच्य, ततः षट्कोणमष्टारं दशारं द्वादशारं चतुर्दशारं, षोडशारं चेति क्रमेण कृत्वा परितो रेखात्रयं दिक्षु द्वारयुतं कुर्यात् । एवं यन्त्रमालिख्य तत्पुरतः पीठादौ हैमीं विष्णुप्रतिमां चन्दनेन विलिख्य तथैव लक्ष्मीप्रतिमां गरुडप्रतिमां च प्रत्यङ्मुखीः संस्थाप्य स्वर्णमयं चतुर्द्वारं विमलं सुशोभितं मण्डपं ध्यात्वा तत्र नानारत्नखचितं मुक्ताद्यलङ्कृतं सिंहासनं स्मरेत् । ततः पूर्वद्वारे—ॐ भद्राय नमः । ॐ सुभद्राय नमः । ॐ गङ्गायै नमः । ॐ यमुनायै नमः । दक्षिणद्वारे—ॐ बलाय नमः । ॐ प्रबलाय नमः । ॐ चिच्छत्यै नमः । ॐ आनन्दायै नमः । पश्चिमद्वारे—ॐ चण्डाय नमः । ॐ प्रचण्डाय नमः । ॐ गौर्यै नमः । ॐ श्रियै नमः । उत्तरद्वारे—ॐ जयाय नमः । ॐ विजयाय नमः । ॐ शङ्खाय नमः । ॐ पद्मनिधये नमः । इति द्वारपालान् सम्पूज्य स्वशरीरे न्यासं कुर्यात् । तद्यथा—सहस्रशीर्षेति पुरुषसूक्तस्य षोडशर्चस्य नारायणऋषिः अनुष्टुप्छन्दः अन्त्यायास्त्रिष्टुप्छन्दः जगद्बीजं पुरुषो देवता न्यासे विनियोगः । ॐ सहस्रशीर्षा० वामकरे १ ॐ पुरुष एव० दक्षिणकरे २ ॐ एतावानस्य० वामपादे ३ ॐ त्रिपादूर्ध्व० दक्षिणपादे ४ ॐ ततो विराट्० वामजानौ ५ ॐ तस्माद्यज्ञात्० दक्षिणजानौ ६ ॐ तस्माद्य० सर्वहुतऋ० वामकट्याम् ७ ॐ तस्मादश्वा० दक्षिणकट्याम् ८ ॐ तं यज्ञं० नाभौ ९ ॐ यत्पुरुषं० हृदये १० ॐ ब्राह्मणोऽस्य० कण्ठे ११ ॐ चन्द्रमा-मनसो० वामबाहौ १२ ॐ नाभ्याऽआसी० दक्षिणबाहौ १३ ॐ यत्पुरुषेण० मुखे १४ ॐ सप्तास्या० नेत्रयोः १५ ॐ यज्ञेन यज्ञ० मूर्ध्नि १६ । ततः पञ्चाङ्गन्यासान् कुर्यात्—ॐ चन्द्रमा मनसो० हृदयाय नमः १ ॐ नाभ्याऽ आसी० शिरसे स्वाहा २ यत्पुरुषेण० शिखायै वषट् ३ सप्तास्या० कवचाय हुम् ४ यज्ञेन० अस्त्राय फट् एवं न्यासद्वयं कृत्वा लक्ष्मीसूक्तेन न्यासद्वयं कुर्यात् । हिरण्यवर्णां० वामकरे १ तां म आवह० दक्षिकरे २ अश्वपूर्वाम्० वामपादे ३ कांसो-

प्र० ५३६

स्मितां० दक्षिणपादे ४ चन्द्रां प्रभासां० वामजानौ ५ आदित्यवर्णे० दक्षिणजानौ ६ उपैतुमा० वामकट्याम् ७ क्षुपित्पासा० दक्षिणकट्याम् ८ गन्धाद्वारां० नाभौ ९ मनसः काम० हृदये १० कर्दमे न० कण्ठे ११ आपः सृजन्तु० वामबाहौ १२ आर्द्रां पुष्करिणीं० दक्षिणबाहौ १३ आर्द्रां यस्करिं० मुखे १४ ताम् आवह० नेत्रयोः १५ यः शुचिः प्रयतो० १६ मूर्ध्नि। पञ्चाङ्गन्यासः—आपः सृजन्तु० हृदयाय नमः १ आर्द्रां पुष्करिणीः—शिरसे स्वाहा २ आर्द्रां यष्करिणीं० शिखायै वषट् ३ ताम् आवह० कवचाय हुम् ४ यः शुचि० अस्त्रायफट् ५ एवं न्यासद्वयं कृत्वा पूजाकलशार्चनं कुर्यात्—स्ववामभागे पूजाकलशं संस्थाप्य तत्र 'ॐ इमम्मे वरुण इति मन्त्रेण वरुणं सम्पूज्य गायत्र्या दशवारमभिमन्त्र्य 'ॐ गङ्गे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धुकावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु॥ सर्वे समुद्राः सरितः तीर्थानि जलदानदाः। आयान्तु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः॥ इति तीर्थान्यावाह्य 'ॐ कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे० इति विष्ण्वादीनामावाहयेत्—ॐ विष्णवे नमः १ ॐ रुद्राय नमः २ ॐ ब्रह्मणे नमः ३ ॐ मातृगणेभ्यो नमः ४ ॐ सागरेभ्यो नमः ५ ॐ सप्तद्वीपवसुन्धरायै नमः ६ ॐ ऋग्वेदाय नमः ७ ॐ यजुर्वेदाय नमः ८ ॐ सामवेदाय नमः ९ ॐ अथर्ववेदाय नमः १० ॐ वेदाङ्गेभ्यो नमः ११ ॐ पुष्ट्यै नमः १२ ॐ शान्त्यै नमः १३ ॐ गायत्र्यै नमः १४ ॐ सावित्र्यै नमः १५ ॐ सरस्वत्यै नमः १६ इत्यावाह्य सम्पूजयेत्। ततः—शङ्खं बहिरन्तश्च प्रक्षाल्य कलशोदकेन प्रपूर्य त्रिपादिकायां निधाय 'ॐ त्रिपादूर्ध्व' इत्यादिमन्त्रेण गन्धादिभिः सम्पूज्य ॐ पुरा त्वं सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे। निर्मितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते॥ गर्भा देवादिनारीणां विशीर्यन्ते सहस्रशः। तव नादेन पाताले पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते॥ इति संप्रार्थ्य 'पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय

धीमहि । तन्नः शङ्खः प्रचोदयात् ॥ इत्यष्टवारमभिमन्त्र्य देववामपार्श्वे निदध्यात् । ततः स्ववामत आधारे घण्टां प्रक्षाल्य निधाय 'ॐ घण्टायै नमः' इति सम्पूज्य—'आगमनार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम् । कुरु घण्टेरवं तत्र देवताह्वानलाञ्छनम् ॥ इति निनाद्य स्थापयेत् । ततः—शङ्खोदकेन पूजाद्रव्याणि आत्मानं भूमिं च प्रोक्षेत् । ततः—ॐ स्योनापृथिवीति मन्त्रेण भूमिं संपूजयेत् । ततो मार्जयेत्—पुरुषसूक्तस्य षोडर्चस्य नारायणऋषिः अनुष्टुप्छन्दः पुरुषोदेवता अन्त्यया-त्रिष्टुप्छन्दः मार्जने अघमर्षणे उपस्थाने च विनियोगः । ततः कुशैः शङ्खजलेन प्रतिमन्त्रं स्वमूर्ध्नि मार्जयेत् । 'ॐ सहस्रशी० दशाङ्गुलं मार्जयामि १ पुरुषसूक्तं सर्वं पठित्वा अघमर्षणं कृत्वा तज्जलं वामतः प्रस्तरोपरि क्षिपेत् । तत उत्थाय ऊर्ध्वबाहुः पुरुषसूक्तेनादित्यमुपतिष्ठेत् । ततः स्वात्मनि पुरुषसूक्तेन विष्णुंसंपूजयेत् । ततः पाद्यपात्रं निधाय तत्र गन्धपुष्पाक्षतश्यामाकदूर्वाविष्णुकान्तातुलसीर्दत्त्वा तदुत्तरतोऽर्घपात्रं निधाय तत्र गन्धपुष्पयवकुशाग्रतिलकौरसर्षपदूर्वातुलसीः प्रक्षिप्य, तदुत्तरत आचमनीयपात्रे एलालवङ्गकर्पूरकङ्कोलजातीफलोशीराणि प्रक्षिप्य पात्रत्रयेऽपि जलमापूर्य दधिमधुसर्पींषि मधुपर्कपात्रे दत्त्वा गायत्र्या पाद्यद्रव्याणि प्रणवेनार्घ्यम्, व्याहृतिभिराचमनीयम्, गायत्र्या मधुपर्कमभिमन्त्र्य गन्धपुष्पवस्त्राभरणादिपूजाद्रव्याणि गायत्र्याऽभिमृशेत् । ततो नवकोष्ठां भूमिं संपाद्य पूर्वादितो मध्ये च दुग्धदधिघृतमधुशर्करेति पञ्चामृतपात्राणि निधाय विदिक्षु सुगन्धितैलामलकचूर्णसुगन्धिपिष्टोष्णोदकानि विन्यस्य स्थापनक्रमेण नवसु पात्रेषु सद्रव्येषु नव देवताः पूजयेत्—ॐ विद्यायै नमः १ ॐ अविद्यायै नमः २ ॐ प्रकृत्यै नमः ३ ॐ मायायै नमः ४ ॐ तेजस्विन्यै नमः ५ ॐ प्रबोधिन्यै नमः ६ ॐ सत्वाय नमः ७ ॐ रजसे नमः ८ ॐ तमसे नमः ९ इति सम्पूज्य गायत्र्याऽभिमृशेत् । ततः पीठपूजां सुवर्णरजतताम्रादिपात्रलिखिते यन्त्रे कलशोपरिस्थिते कुर्यात्—गन्धाक्षतपुष्पैः पीठोपरि मध्ये—ॐ आधारशक्तये नमः १

प्र० ५३८

ॐ प्रकृत्यै नमः २ ॐ कूर्माय नमः ३ ॐ अनन्ताय नमः ४ ॐ वाराहाय नमः ५ ॐ पृथिव्यै नमः ६ ॐ क्षीरनिधये नमः ७ श्वेतद्वीपाय नमः ८ ॐ रत्नोज्ज्वलितसुवर्णमण्डपाय नमः ९ ॐ कल्पवृक्षाय नमः १० ॐ स्वर्णवेदिकायै नमः ११ ॐ सिंहासनाय नमः १२ इति संपूज्य पीठदक्षिणे—ॐगुरुभ्यो नमः १ वामे—ॐ दुर्गायै नमः २ ॐ विघ्नेशाय नमः ३ ॐ क्षेत्रपालाय नमः ४ अग्रे—ॐ गरुडाय नमः १ ईशान्याम् ॐ विष्वक्सेनाय नमः २ पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकायै नमः ३ ॐ द्वादशकलात्मने सूर्यमण्डलाय नमः ४ ॐ षोडशकलात्मने सोममण्डलाय नमः ५ ॐ दशकलात्मने वह्निमण्डलाय नमः ६ ॐ शक्तिमण्डलाय नमः ७ ॐ ब्रह्मणे नमः ८ ॐ विष्णवे नमः ९ ॐ ईशानाय नमः १० ॐ कुबेराय नमः ११ ॐ ऋग्वेदाय नमः १२ ॐ यजुर्वेदाय नमः १३ ॐ सामवेदाय नमः १४ ॐ अथर्ववेदाय नमः १५ ॐ आं आत्मने नमः १६ ॐ अं अन्तरात्मने नमः १७ ॐ पं परमात्मने नमः १८ ॐ ह्रीं ज्ञानात्मने नमः १९ ॐ कृताय नमः २० ॐ त्रेताय नमः २१ ॐ द्वापराय नमः २२ ॐ कलये नमः २३ ॐ सं सत्वाय नमः २४ ॐ रं रजसे नमः २५ ॐ तं तमसे नमः २६ ॐ अणिम्ने नमः २७ ॐ गरिम्णे नमः २८ ॐ लघिम्ने नमः २९ ॐ महिम्ने ३० ॐ प्राप्त्यै नमः ३१ ॐ प्राकाम्यै नमः ३२ ॐ ईशित्वायै नमः ३३ ॐ वशित्वायै नमः ३४ ततः पूर्वादिपत्रेषु—ॐविमलायै नमः १ ॐ उत्कर्षिण्यै नमः २ ॐ ज्ञानायै नमः ३ ॐ क्रियायै नमः ४ ॐ योगायै नमः ५ ॐ प्रह्वायै नमः ६ ॐ सत्यायै नमः ७ ॐ ईशानायै नमः ८ पुनर्मध्ये अनुग्रहायै नमः १ ततः—'ॐ मनो जूतिर्जु०' इति मन्त्रेण 'पीठदेवता सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु' आवाहितपीठदेवताभ्यो नमः इति षोडशोपचारैः सम्पूज्य हस्ते पुष्पाणि

प्र० २३९

गृहीत्वा 'ॐ नमोभगवते विष्णवे सर्वभूतात्मने वासुदेवाय योगपीठात्मने—इति कर्णिकायां पुष्पाञ्जलिं दद्यात्। 'सत्यज्ञानानन्दरूपं परं धामैव सकलं पीठम्' इति सञ्चिन्तयेत्। इति पीठपूजा।

अथ अग्न्युत्तारणम्

समुद्रस्य त्वां इत्यनुवाकेन पुरुषसूक्तेन चाभिषेकं कुर्यात्। ततो जलादेवं बहिर्निष्कास्य यन्त्रोपरि विन्यस्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्। अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषयः ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं श्रीविष्ण्वादिदेवताप्रीत्यर्थे प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः। ब्रह्मविष्णुमहेश्वरेभ्यो ऋषिभ्यो नमः शिरसि। ऋग्यजुःसामच्छन्दोभ्यो नमो मुखे। प्राणशक्तिदेवतायै नमः हृदये। आं बीजाय नमः गुह्ये। उदकोस्पर्शः। ह्रीं शक्तये नमः। पादयोः। क्रों कीलकाय नमः नाभौ। प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः सर्वाङ्गे। ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः। ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं कनिष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रां हृदयाय नमः। ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा। ॐ ह्रूं शिखायै वषट्। ह्रैं कवचाय हुम्। ॐ ह्रौं नेत्रत्रयाय वौषट्। ॐ ह्रः अस्त्राय फट्। अथ ध्यानं—"रक्ताम्भोधिस्थपोतोल्लसदरुणसरोजाधिरूढा कराब्जैः पाशं कोदण्डमिक्षूद्भवमथगुणमप्यङ्कुशं पञ्चबाणान्। बिभ्राणाऽसृक्कपालं त्रिनयनलसिता पीनवक्षोरुहाढ्या देवी बालार्कवर्णा भवतु शुभकरी प्राणविद्या परा नः॥ इति ध्यात्वा मानसोपचारैः संपूजयेत्——लं पृथिव्यात्मकं प्राणशक्त्यै गन्धं परिकल्पयामि नमः। हं आकाशात्मकं प्राणशक्त्यै पुष्पं परिकल्पयामि नमः। यं वाय्वात्मकं प्राणशक्त्यै धूपं परिकल्पयामि नमः। रं अग्न्यात्मकं प्राणशक्त्यै दीपं परिकल्पयामि नमः। वं अमृतात्मकं प्राणशक्त्यै नैवेद्यं परिकल्पयामि नमः। शं शक्त्यात्मकं प्राणशक्त्यै ताम्बूलादिसर्वोपचारान् परिकल्प-

यामि नमः इति संपूज्य प्रतिमाया उपरि हस्तं निधाय प्राणप्रतिष्ठाबीजानि पठेत् । तद्यथा—'ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं शं षं सं हं क्षं हं सः विष्णोः जीव इह स्थितः । ॐ आं ह्रीं क्रों य० सः विष्णोः सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनः श्रोत्रत्वक्चक्षुजिह्वा-घ्राणप्राणपादपायूपस्था इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । ततः पञ्चदशसंस्कारसिद्ध्यर्थं पञ्चदशवारं प्रणवं जपेत् । ततो लक्ष्मीमूर्तेरपि एवं क्रमेण प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । ततो गरुडस्याप्यनेनेव विधिना प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । ततो यन्त्रोपरि मध्यकर्णिकायां विष्णुप्रतिमां तद्वामतो लक्ष्मीप्रतिमां पुरतो गरुडप्रतिमां स्थापयेत् । प्रतिमायाम्—शङ्खचक्रगदापद्मधारिणं वनमालिनम् । लक्ष्म्यधिष्ठितवामाङ्गं स्तनयोर्न्यस्तपाणिनम् ॥ लक्ष्मीमालिङ्ग्य हस्तेन स्थितं मदनसुन्दरम् । पद्मपत्र-विशालाक्षं पीतकौशेयवाससम् ॥ केयूरभूषितकरं स्फुरन्मकरकुण्डलम् । किरीटनं महोरस्कं कौस्तुभोद्भासिवक्षसम् ॥ देवदेवं प्रसन्नास्यं जगत्कारमव्ययम् । सर्वान्तर्यामिणं साक्षात्साक्षिणं सर्वदेहिनाम् ॥ इति ध्यायन् पुष्पाञ्जलिं मूर्तौ क्षिपेत् । अथावाहनं कुर्यात्—सहस्रशीर्षेति षोडशर्चस्य पुरुषसूक्तस्य नारायणऋषिः अनुष्टुप्छन्दः अन्त्यायास्त्रिष्टुप्छन्दः पुरुषोदेवता हिरण्यवर्णामितिपञ्चदशर्चस्य आनन्दकर्मचिक्लीतेन्दिरासुता ऋषयः श्रीरग्निर्देवता आद्यास्तिस्रोऽनुष्टुभो कांसोऽस्मितामिति बृहती उत्तरयोस्त्रिष्टुप् अष्टावनुष्टुभोऽन्त्या प्रस्तारपङ्क्तिः लक्ष्मीनारायणपूजने विनियोगः । सुपर्णोऽसीत्यस्य श्यावाश्वऋषिः कृसिच्छन्दो गरुत्मान् देवता गरुडपूजने विनियोगः । ध्यानम्—वैकुण्ठे कमनीयरत्नखचिते कल्पद्रुमूले स्थितं नीलेन्दीवर-कान्तिसुन्दरतनुं लक्ष्म्या समालिङ्गितम् । गङ्गानीरतरङ्गभूषितपदद्वन्द्वकृपासागरं कोटीरीकृतबर्हिपिच्छमनिशं लक्ष्मीपतिं भावये ॥ महाविष्णवेनमः ध्यायामि । आवाहनम्—मायासमेतं शशिना प्रभं त्वामावाहये पूजनमन्दिरेऽस्मिन् । विलोक्य भक्तिं मम किङ्करस्य लक्ष्मीपते सन्निधिमाश्रयस्व । महाविष्णवे नमः आवाहयामि । आसनम्—स्फुरत्प्रभं काञ्चनपूरपूरितं शशाङ्कभा-

इति कर्णिकायां पुष्पाञ्जलिं दद्यात् । 'सत्यज्ञाना-

प्र० ५४२

बिन्दुसमेतमेतत् । हृत्पद्मतुल्यं विधिवन्मयाऽऽहृतं लक्ष्मीपते तुभ्यमिदं वरासनम् ।। महाविष्णवे नमः आसनं समर्पयामि । पाद्यम्—औदुम्बरे सुन्दरभाजनेऽमले रेखाङ्किते पद्मदलानुकारिणि । संस्थापितं पादसुखावहं शुभं मयार्पितं पाद्यमिदं गृहाण । महाविष्णवे० नमः पादयोः पाद्यं समर्पयामि । अर्घ्यम्—पूर्वस्थापितशंखमादाय तन्मध्ये गन्धपुष्पतिलश्यामाकदूर्वाकुशविष्णुकान्तातुलसीदलानि प्रक्षिप्य—'पाटीरपूरितमनेकविधैः शुभैश्च दूर्वादलैश्च परिभूषितमेतमीश । लक्ष्मीपते ननु गृहाण करार्घमेहि भक्ताश्च पूरय निकामसकामकामैः ।। महाविष्णवे नमः हस्तयोरर्घ्यं सम० । आचमनम्—आनीतमाचमनवारि परं पुनीतं नाथ त्वदर्थमिदमस्ति दयानिधान । लक्ष्मीश भक्तजनमोदविधानदक्ष आचम्य पूरय च भक्तजनाभिलाषम् ।। महाविष्णवे नमः अर्घ्याङ्गमाचमनीयं सम० । पञ्चामृतम्—दध्ना घृतेन पयसा मधुनाम्बुमिश्रं गंगोदकेन तुलसीसहितेन रम्यम् । पञ्चामृतं त्रिभुवनाधिपदेहशुद्ध्यै स्नानार्हमेतदतिपूततमं गृहाण ।। महाविष्णवे नमः पञ्चामृतस्नानं स० । शुद्धोदकम्—एतत्तमालदलनीलकलिन्दजाया आनीतमम्बु नितरां तव मोदकारि । हे वैनतेय भुजसंस्थितलक्ष्म्यधीश निर्णेजनाय दयया भगवन् गृहाण ।। महाविष्णवे० पञ्चामृतस्नानान्ते शुद्धोदकस्नानं सम० । ततः—पुरुषसूक्तेनाभिषेकं कुर्यात् । वस्त्रम्-युवासुवासा इति मन्त्रपूर्वकं तडित्प्रभं नूतनमम्बरं विभो । हिरण्मयैस्तन्तुततैर्विमिश्रितं दशासु लक्ष्मीधव ते समर्पितम् ।। महाविष्णवे नमः वस्त्रमुपवस्त्रं च सम० । ॐ तद्विष्णोः परमं पदꣳ० सदा पश्यन्ति सूरयः । दिवीव चक्षुराततम् ।। आभरणानि च सम० । यज्ञोपवीतम्—प्रजापतेरेव समं गृहीतजन्मातिपूतं द्विजचिह्नभूतम् । यज्ञोपवीतं भवदर्थमीश सम्पादितं धारय मोदयास्मान् ।। महाविष्णवे नमः यज्ञोपवीतं सम० । यज्ञोपवीतान्ते आचमनीयं स० । गन्धम्—पाटीरसम्भूतमभूतपूर्वसौगन्ध्यसम्बन्धुरमेतदीश । लक्ष्मीपते चन्दनचर्चनं ते

प्र० ५४२

मोदाय मालेऽर्पितमस्तु वस्तु ।। महाविष्णवे नमः । कनिष्ठामूलगताङ्गुष्ठयोगेन गन्धमुद्रां प्रदर्श्य अनामिकया गन्धानुलेपनं समर्पयामि १० पुष्पम्—बहुविधं कमलावर सुन्दरं समुचितं मकरन्दसमन्वितम् । विकसितं कुसुमं विनिवेदितं कुरु सदा सफलं नयनाञ्चलैः ।। महाविष्णवे० तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन पुष्पमालां सम० । ॐ केशवाय नमः १ ॐ नारायणाय नमः २ ॐ माधवाय नमः ३ ॐ गोविन्दाय नमः ४ ॐ विष्णवे नमः ५ ॐ मधुसूदनाय नमः ६ ॐ त्रिविक्रमाय नमः ७ ॐ वामनाय नमः ८ ॐ श्रीधराय नमः ९ ॐ हृषीकेशाय नमः १० ॐ पद्मनाभाय नमः ११ ॐ दामोदराय नमः १२ ॐ सङ्कर्षणाय नमः १३ ॐ वासुदेवाय नमः १४ ॐ अनिरुद्धाय नमः १५ ॐ पुरुषोत्तमाय नमः १६ ॐ अधोक्षजाय नमः १७ ॐ नारसिंहाय नमः १८ ॐ अच्युताय नमः १९ ॐ जनार्दनाय नमः २० ॐ उपेन्द्राय नमः २१ ॐ हरये नमः २२ ॐ कृष्णाय नमः २३ ॐ प्रणवाय नमः २४ इति चतुर्विंशतिमन्त्रैः क्रमेण सम्पूज्य तुलसीदलं च प्रक्षिपेत् । एवं महालक्ष्मीमपि पूजयेत्—ध्यानम्—'या सा पद्मासनस्था विपुलकटितटी पद्मपत्रायताक्षी गम्भीरावर्तनाभिः स्तनभरनमिता शुभ्रवस्त्रोत्तरीया । लक्ष्मीर्दिव्यैर्गजेन्द्रैर्मणिगणखचितैः स्नापिता हेमकुम्भैर्नित्यं सा पद्महस्ता मम वसतु गृहे सर्वमाङ्गल्ययुक्ता ।। महालक्ष्म्यै नमः ध्यानं स० । इन्द्रादिदेव गणमौलिकिरीटकोटिरत्नाङ्कुरैः सततरञ्जिपादपीठम् । दुःखाभिभूतजनदुर्गतिनाशिनीं त्वामावाहयामि कृपया भव सन्मुखीना ।। महालक्ष्मै नमः महालक्ष्मीमावा० मुक्ताप्रवालमणिलोहितपद्मराग कान्त्युल्लसद्रुचिररत्नमयं सुरम्यम् । राजीवपत्रनयने दयया सुपीठमेनं गृहाण कमले विनिवेदितं मे ।। महालक्ष्म्यै नमः आसनं सम० । सन्तापनोदनपरं बहुभक्तिभावचित्तेन हेमकलशे विहितं पवित्रे । त्वत्पादपद्मयुगले विनिवेदितं मे पाद्यं गृहाण जगदीश्वरि लोकवन्द्ये ।। महालक्ष्म्यै नमः पादयोः पाद्यं सम० । भ्राजिष्णुहाटकवि-

प्र० ५४३

प्र० ५४४

निर्मितपाद्मध्ये संस्थापितं कुसुमगन्धसुवासितं च। भक्त्योपनीतमचिरेण सुरम्यमेमर्घ्यं गृहाण कमले पतितस्य लक्ष्मि। महालक्ष्म्यै नमः हस्तयोऽर्घ्यं सम०। समस्तदुःखौघविनाशदक्षं सुगन्धितं फुल्लसुशस्तपुष्पैः। अये गृहाणाचमनं सुवन्द्ये निवेदनं भक्तियुतः करोमि॥ महालक्ष्म्यै० अर्घाङ्गमाचमनीयं सम०। मार्गश्रमापहमतीवसुगन्धयुक्तं पञ्चामृतस्नपनमम्ब रमे सुरम्यम्। दारिद्र्यदुःखभयहारिणि मामकीनमङ्गीकुरु। करुणां कुरु मे सुपूज्ये॥ महालक्ष्म्यै नमः पञ्चामृत-स्नानं सम०। काश्मीरचूर्णमृगनाभिविमिश्रितेन पूतेन हेमकलशस्थसुशीतलेन। तीर्थोदकेन शिशुना विनिवेदितेन स्नानं विधेहि सफलं कुरु मे श्रमं च॥ महालक्ष्म्यै नमः शुद्धोदकस्नानं स०। ततः लक्ष्मीसूक्तेन अभिषेकं कृत्वा सुजातो० महालक्ष्म्यै० वस्त्रमुपवस्त्रं च सम०। 'अम्बेऽम्बिके' इति आभरणानि च समर्पयामि। प्रत्यूषमार्तण्डमयूखतुल्यं सुगन्धयुक्तं मृगनाभिचूर्णैः। माणिक्यपात्रस्थितमञ्जुकान्ति च मम देवी गृहाण कुङ्कुमम्॥ महालक्ष्म्यै नमः गन्धमुद्रां प्रदर्श्य अनामिकया गन्धं सम०। कनिष्ठामूलगताङ्गुष्ठयोगेन—ॐ महालक्ष्म्यै नमः तर्जन्यङ्गुष्ठयोगेन पुष्पाणि सम०।

अथ गरुडपूजनम्—

पृष्ठेनैव त्रिभुवनपतिं श्रीसमेतं दधानः प्रत्यूहानमथ समुदयं धूनयन् पक्षघातैः। देशं यज्ञोपरिचितमिमं प्रार्थितोऽभ्येतु धीमान् सौवर्णोऽसौ वसतु च भवेत्पूजनं यावदत्र॥ गरुडाय नमः गरुडमावाह०। तार्क्ष्य त्वदर्थमिदमासनमम्बुजा-मूर्णामयैर्विरचिते शुभतन्तुजालैः। शिल्पिगृहान्तवमुपाहृतमस्ति रम्यं हे वैनतेय समुपाविश पक्षिराज॥ ॐ गरुडाय० आसनं सम०। पाद्यं जलं मलविधूननकर्मदक्षमारक्षितं नवलभाजनके पुरस्ते। आनन्दवर्धन गरुत्मदधीश देव संधावयस्य चरणौ शरणायमानो॥ गरुडाय नमः पादयोः पाद्यं सम०। दूर्वादलक्रमुकपुष्पसमेत एष द्रव्यार्चितोर्घ इहनाथ पुरः सरन्ते।

प्र०

५४५

विष्णुयन्त्रम्

पूर्व

प्रद्युम्नाय नमः

उपेन्द्राय नमः

नारसिंहाय नमः

अधोक्षजाय नमः

हरये नमः

श्रीकृष्ण परमा-

त्मने नम

प्र०

५४५
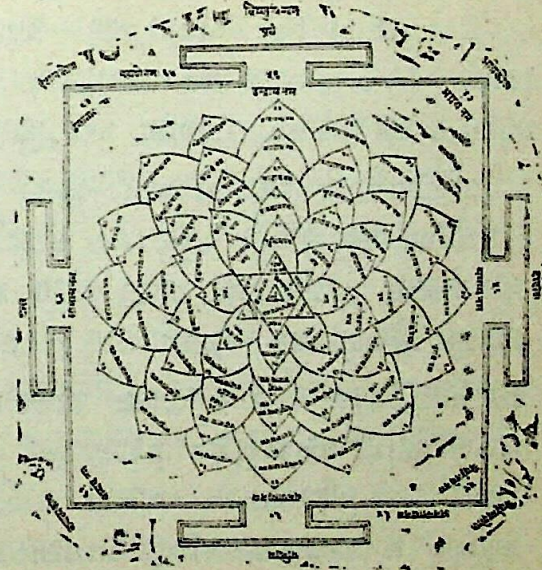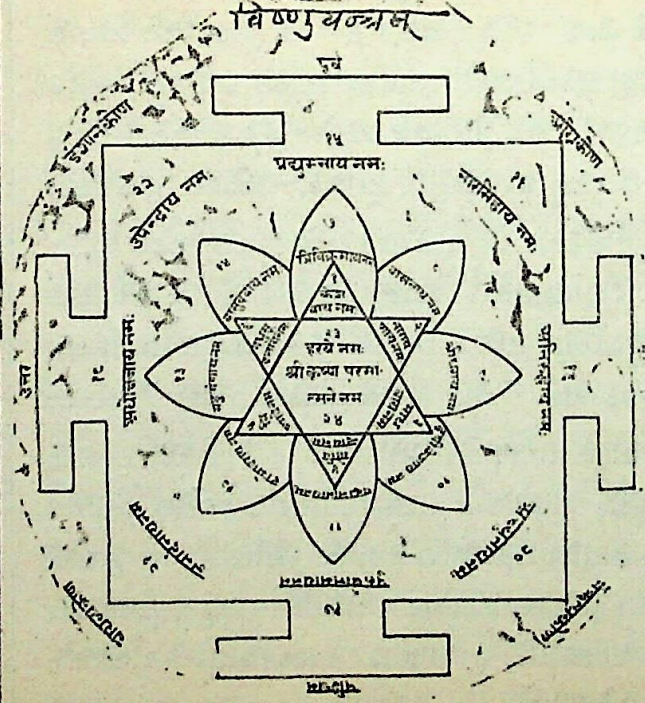
संस्थापितः पतगनायक भक्तरक्षन् रक्षां विधेहि कुरु स्वीकृतिगोचरं च ।। गरुडाय नमः हस्तयोरर्घ्यं सम० । गाङ्गं समाहृतमिदं शुभकारिवारि स्नानाय ते कुलकनाय च पन्नगारे । भक्त्यार्पितं ननु गृहाण शरीरशुद्ध्यै स्नानं समाचर सदाचमनं विधेहि ।। गरुडाय० अर्घाङ्गमाचमनीयं सम० । गव्यं पयो दधि सिता मधु विष्णुक्रान्ता गङ्गोदकं च परिमेल्य-मुदावहं ते । पञ्चामृतं कृतमिदं पतगावतंस स्नानेन पावय विधूनय पक्षसङ्घम् ।। गरुडाय० पञ्चामृतस्नानं सम० । ततो निर्माल्यं विसृज्य समान्यार्घोदकेन सुवर्णोसीति मन्त्रेण अभिषेकं कुर्यात् । ततो जलाद्देवं बहिर्निष्कास्य वस्त्रेण प्रोच्छ्य पूजापीठे निवेशयेत् । वासाऽस्ति पट्टमिदमाभरणायमानं चामीकरोत्खचितप्रान्ततट नवीनम् । भक्त्योपनीतमुपनीय दयां स्वचित्ते हे वैनतेय परिधेहि मुदं च देहि ।। गरुडाय० वस्त्रमुपवस्त्रं च सम० । यद् ब्रह्मणैव सममाविरभूद् द्विजानां चिन्हायमानमतिपूतसमं त्रिलोक्यम् । आनीतमेतदुपवीतमनन्तवाह स्वीकृत्य मोदय चिराय पतत्रिपाल ।। गरुडाय नमः यज्ञोपवीपं स० । पिष्ट जलैर्मलयजं शुभगन्धयुक्तैः कश्मीरजेन लसितं बहुशीतलं च । अङ्गेषु तेऽद्य विनिवेदिनमङ्गभक्तान् नम्रान् पुनीहि दयया स्वरता गरुत्मन् ।। गरुडायन नमः गन्धं सम० । बिन्दौ—नारायणाय नमः नारायणपूजयामि १ पञ्चोपचारैः सम्पूज्य—'दयाब्धे त्राहिसंसारसर्पान्मां शरणागतम् । भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम् ।। इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । २—त्रिकोणे—बलाय नमः बलं पू० १ प्रबलाय नमः प्रबलं पू० २ महाबलाय नमः महाबलं पू० ३ दयाब्धे त्राहि संसार इति द्वितीयावरणार्चनम् इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । ३- षट्कोणेषु—विष्वक्सेनाय नमः विष्वक्सेनं पू० १ चण्डाय नमः चण्डं पू० २ प्रचण्डय नमः प्रचण्डं पू० ३ जयाय नमः जयं पू० ४ विजयाय नमः विजयं पू० ५ ॐ ध्रुवाय नमः ध्रुवं पू० ६ । ॐ दयाब्धे त्राहि० तृतीयावरणार्चनम् इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । ४ अष्टपत्रेषु—ॐ ध्रुवाय नमः

प्र०
५४६

ध्रुवं पू० १ ॐ अध्वराय नमः अध्वरं पू० २ ॐ सोमाय नमः सोमं पू० ३ ॐ आपाय नमः आपं पू० ॐ ४ अनिलाय नमः अनिलं पू० ५ ॐ अनलाय नमः अनलं पू० ६ ॐ प्रत्यूषाय नमः प्रत्यूषं पू० ७ ॐ प्रभासाय नमः प्रभासं पू० ८ दयाब्धे० चतुर्थावरणार्चनमिति पुष्पाञ्जलिः। दशपत्रेषु—मत्स्याय नमः मत्स्यं पू० १ कूर्माय नमः कूर्मं पू० २ वाराहाय नमः वराहं पू० ३ नारसिंहाय नमः नारसिंहं पू० ४ वामनाय नमः वामनं पू० ५ परशुरामाय नमः परशुरामं पू० ६ रामाय नमः रामं पू० ७ कृष्णाय नमः कृष्ण पू० ८ बुद्धाय नमः बुद्धं पू० ९ कल्किने नमः कल्किनं पू० १० दयाब्धे त्राहि० पञ्चमावरणार्चनम् । पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । द्वादशपत्रेषु—नन्दाय नमः नन्दं पू० १ सुनन्दाय नमः सुनन्दं पू० २ महानन्दाय नमः महानन्दं पू० ३ विमलनन्दाय नमः विमलनन्दं पू० ४ अतिनन्दाय नमः अतिनन्दं पू० ५ सुधीवनन्दाय नमः सुधीवनन्दं पू० ६ शत्रुविमर्दनन्दनाय नमः शत्रुविर्दननन्दं पू० ७ मित्रविवर्द्धननन्दनाय नमः मित्रविवर्द्धननन्दं पू० ८ घोषनन्दनाय नमः घोषनन्दनं पू० ९ शोषनन्दनाय नमः शोषनन्दनं पू० १० जीवनन्दनाय नमः जीवनन्दनं पू० ११ परमजीवनन्दनाय नमः परमजीवनन्दनं पू० १२ दयाब्धेत्राहि० षष्ठावरणार्चनम् । पुष्पाञ्जलिः । चतुर्दशपत्रेषु—नारदाय नमः नारदं पू० १ पराशराय नमः पराशरं पू० २ व्यासाय नमः व्यासं पू० ३ शुकाय नमः शुकं पू० ४ वाल्मीकिने नमः वाल्मीकिनं० पू० ५ वसिष्ठाय नमः वसिष्ठं पू० ६ शंवराय नमः शंवरं पू० ७ देवलाय नमः देवलं पू० ८ पर्वताय नमः पर्वतं पू० ९ दुर्वाससे नमः दुर्वाससं पू० १० जाबालये नमः जाबालिं पू० ११ जमदग्नये नमः जमदग्निं पू० १२ विश्वामित्राय नमः विश्वामित्रं पू० १३ भागुरये नमः भागुरिं पू० १४ दयाब्धे० सप्तमावरणार्चनम् । पुष्पांजलिः । षोडशपत्रेषु—कपिलाय नमः कपिलं पू० १ याज्ञवल्क्याय नमः याज्ञवल्क्यं पू० २ दाल्भ्याय नमः

दाल्भ्यं पू० ३ शौनकाय नमः शौनकं पू० ४ मार्कण्डेयाय नमः मार्कण्डेयं पू० ५ भृगवे नमः भृगुं पू० ६ गौतमाय नमः गौतमं पू० ७ गालवाय नमः गालवं पू० ८ शाण्डिल्याय नमः शाण्डिल्यं पू० ९ भरद्वाजाय नमः भरद्वाजं पू० १० मौद्गल्याय नमः मौद्गल्यं पू० ११ वेदवाहनाय नमः वेदवाहनं पू० ११ बृहदश्वाय नमः बृहदश्वं पू० १३ जैमिनये नमः जैमिनिं पू० १४ अगस्त्याय नमः अगस्त्यं पू० १५ श्वेतनन्दनाय नमः श्वेतनन्दनं पू० १६ दयाब्धे त्राहि० अष्टमावरणार्चनमिति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् । ९—भूगृहे पूर्वादितः—इन्द्राय नमः इन्द्रं पू० १ अग्नये नमः अग्निं पू० २ यमाय नमः यमं पू० ३ निर्ऋतये नमः निर्ऋतिं पू० ४ वरुणाय नमः वरुणं पू० ५ वायवे नमः वायुं पू० ६ सोमाय नमः सोमं पू० ७ ईशानाय नमः ईशानं पू० ८ ब्रह्मणे ब्रह्माणं पू० ९ अनन्ताय नमः अनन्तं पू० १० दयाब्धे त्राहि० नवमावरणार्चनम् इति पुण्याञ्जलिं क्षिपेत् । इत्यावरणदेवता सम्पूज्य धूपादि दद्यात्—सौरभ्यमानन्दकरं यदीयं यदीयधूपोऽपि विधूतधूमः । एषोऽस्ति धूपो ज्वलते पुरस्ते मोदावहो माधव जिघ्र जिघ्र ।। महाविष्णवे नमः तर्जनीमूलाङ्गुष्ठयोगेन धूपमुद्रां प्रदर्श्य धूपमाघ्राप० सद्वर्तिसंपूरित एष दीप आलोककारी तमसां विदारी । प्रज्वालितः स्नेहमये सुपात्रे लक्ष्मीपते चन्द्रमसं गृहाण महाविष्णवे नमः मध्यमाङ्गुष्ठयोगेन दीपमुद्रां प्रदर्श्य दीपं दर्श० । हस्तप्रक्षालनम् । व्यतीतयामं नवनीतमेतद् द्राक्षादिरम्भासितशर्करा च । निधाय रम्ये कनकस्यपात्रे दत्तं तु नैवेद्यमिदं गृहाण ।। अनामामूलयोरङ्गुष्ठयोगेन नैवेद्यमुद्रां प्रदर्श्य ग्रासमुद्राः प्रदर्शयेत्—अङ्गुष्ठप्रदेशिनीमध्यमाभिः—प्राणाय स्वाहा । अङ्गुष्ठमध्यमानामिकाभिः ॐअपानाय स्वाहा । अङ्गुष्ठानामिकाकनिष्ठाभिः—व्यानाय स्वाहा । कनिष्ठातर्जन्यङ्गुष्ठैः—समानाय स्वाहा । साङ्गुष्ठाभिः सर्वाभिः—उदानाय स्वाहा । इति प्रदर्श्य मध्ये पानीयं समर्पयामि । उत्तरापोशनं सम० । करोद्वर्तनार्थे चन्दनानुलेपनं सम० । महाविष्णवे नमः नैवेद्यं

प्र०

५४८

प्र०

५४८

प्र० नि०। कर्पूरदेवकुसुमक्रमुकैलिकाभिः संपूरितायतिसुधानुवयासुपूरम्। ताम्बूलिकां सुरजनेन निपत्रणीया कृत्वाऽऽनन भवतु मङ्गलमोददाता ॥ ऋतुफलानि सम०। संवासितं नवलकेतकवारिपूरैः पात्रे घृतश्च रजतोत्सवचिते त्वदग्रे। पानीयमम्बुसमुपाहृतमेतदाश पीत्वा निभालय दृशासततं स्वभक्तान्। आचमनीयं सम०। पूगीसुधैलाघनसारदेव पुष्पैरुपेतं मुखमण्डनं यत्। विहारहार्यं नवरङ्गगर्भं गृहाण ताम्बूलमिदं मदर्पितम् ॥ महाविष्णवे नमः ताम्बूलं सम०। महाविष्णवे नमः दक्षिणाद्रव्यं स०। त्वद्देहसंस्थानि जगन्ति देव त्वद्रोमकूपेषु च देवसङ्घाः। प्रदक्षिणं दक्षधियोऽत एव कुर्वन्ति पापौघविनाशनाय ॥ महाविष्णवे० प्रदक्षिणां स०। चराचरं व्याप्तमिदं त्वयैव तवैव भासास्तिजगत्सभासम्। त्वय्येव पुष्पाञ्जलिरर्पितेयं मोदाय लोकस्य तवापि चास्तु। महाविष्णवे नमः पुष्पांजलिं सम०। एवं लक्ष्मीदेवीमपि धूपादिकं दद्यात्—नानाविधौषधविमिश्रितगन्धयुक्तं श्रीदेवतामनुजदानवसौख्यदं च। सौगन्ध्ययुक्तमतुलं जलजाधिवासं धूपं गृहाण कृपया विनिवेदितं च ॥ महालक्ष्म्यै० धूपमाघ्रापयामि। कर्पूरमिश्रितघृतैः परिपूर्णकष्ठं ध्वान्तो-घनाशकरणं जगदेकवन्द्ये। देदीप्यमानमतुलं स्वदृशा प्रभाभोरङ्गीकुरुष्व कृपया मम दीपमेनम् ॥ महालक्ष्म्यै दीपं दर्श०। माणिक्यपात्रपरिवेपितलेह्यचोष्यपेयादिवस्तुसहितं विविधवस्तुपकरम्। नानाविधानपरिवर्तितस्वादुगन्धं नैवेद्यमेतदुररी कुरु सेवकस्य ॥ महालक्ष्म्यै नमः नैवेद्यं नि०। एलालवङ्गघनसारसुगन्धरम्यं पूगासुखण्डयुतमास्यसुखप्रदं च। ताम्बूलपत्रदल-वर्तितवीटकं मे मातर्गृहाण कृपया करुणार्द्रचित्ते ॥ महालक्ष्म्यै नमः ताम्बूलं स०। ब्रह्माण्डमध्यागतवस्तु तवैव देवि किं दक्षिणां तव कृते प्रददामि मातः। तवापि भक्तिपरिपूरितचेतसाहमेनां ददामि सफलां कुरु दृष्टिपातैः ॥ महालक्ष्म्यै नमः दक्षिणां स०। स्वकीयपाणोरुहणाऽऽदरेण वहन्तमत्यन्तसुगन्धिपुण्यम्। त्वदङ्घ्रियुग्म कलितं मयेमं पुष्पांजलिं स्वीकुरु

मामकीनम् ॥ महालक्ष्म्यै नमः पुष्पाञ्जलिं स० । ततः–श्रीगरुडदेवस्याग्रे धूपादिकं दद्यात्–धूपेन शुद्धमृदुगन्धमयेन सर्वं स्थानं सुपूर्णमधुना सुखदं समन्तात् । तुष्टा च सर्वजनता त्वमपीहदेव तुष्टो भवामृतमयं च कुरु प्रसादम् ॥ गरुडाय नमः धूपमा० । दीपैः समुज्ज्वल शिखैरभितः प्रकाशवृष्टिर्नु देव रचितेयमिह त्वदर्चा । पूर्णप्रसन्नमनसा हसितान्तरात्मन् श्रीजानिवाहन रमस्व विनाम्य दोषान् ॥ गरुडाय नमः दीपं दर्श० । द्राक्षेक्षुखण्डनवदाडिममातुलुङ्गान्येतानि देव मधुराणि समाहृतानि । श्रद्धामयेन मनसा कृपया गृहाण कामैर्निकायमथपूरयभक्तसङ्घम् ॥ गरुडाय० नैवेद्यं नि० । सौवर्णनिष्क्रयतया विपुलप्रतिष्ठां पूर्तिप्रदां सकलसाधनकर्मणाश्च । चन्द्राधिदैवतमयीं रजतप्रणीतां भक्त्याऽर्पये पतगनायक-दक्षिणान्ते ॥ गरुडाय नमः दक्षिणां स० । इत्थं त्वदर्चनमिदं विहितं सयत्नं पक्षीन्द्रमाधवपदप्रुपाविताङ्ग । न्यूनाधिक-त्वपरिहाणसमर्थनीयां पुष्पाञ्जलिं प्रणतिभिः सहितां गृहाण ॥ गरुडाय नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

प्र० ५५०

* प्रतिष्ठा सामग्री *

१) रोली
)५० मौली
धूपवत्ती वण्डल ५
पान छुट्टा रोज २५
सुपारी किलो ४
नारियल जलवाले ३१
गरिगोला १५
बदाम किलो १
किसमिस कीलो १
छोवारा कीलो १
पिस्ता आधा कीलो
अखरोट कीलो २
मिश्री कीलों ५
चिरोंजी कीलो २

५) केसर
५) कस्तूरी
४) अगर
४) तगर
१) हरा रंग
१) काला रंग
१) पीला रंग
१) आसमानी रंग
१) लाल रंग
लवंग ५० ग्राम
इलायची ,,
जावित्री ,,
जायफल १५० ग्राम
३) अतर खस सीसी २

२) अतर गुलाब सीसी १
ऋतुफल रोज १५
पेड़ा २५० ग्राम रोज
बतासा २५० ग्राम रोज
२) मोती चूर के लड्डू
)५० रूई
२) कपूर
यज्ञोपवीत वण्डल ३
)५० सिन्दूर
उड़दी किलो १
पत्तल
पुरवा
कसोरा

५५१

दूध, दही
सहत
चीनी
घृत
गोमूत्र
गोबर
मक्खन
कुशा
पञ्चपल्लव
आम के पत्ते
गूलर के पत्ते
पाकर के पत्ते
बड़ के पत्ते
जामुन के पत्ते
शमी के पत्ते
कदम्ब के पत्ते

सेमर के पत्ते
पञ्चपल्लव की छाल
)५० मेंहदी की बुकनी
)२५ पीली सरसों
)५० हल्दी पीसी
१) आटा पीसा
)२५ सतुवा
१) यव का आटा
)२५ चावल का आटा
)२५ मसूर का आटा
)२५ आँवले का चूर्ण
गेहूँ कीलो १५
चना कीलो १०
हरे मूंग कीलो १०
)२५ यक्षकर्दम धूप
गुलावजल सीसी १

केवड़ाजल सीसी १
सुरोदक
नारियल जल
शान्त्युदक
क्षारोदक
तीर्थजल
सफेद पुष्पोदक
गोश्रृङ्गोदक
मेघजल
फलोदक
नवरत्नोदक
सुवर्णोदक
शाल्मलि जल
जम्बूजल
नागवल्ली जल
पलाश जल

प्र०
५५२

होरसा १

सफेद चन्दन का मुट्ठा १

लाल चन्दन का मुट्ठा १

अग्नि होत्र भस्म

नवरत्न की पुड़िया ५

पञ्चरत्न की पुड़िया ५

सुवर्ण, हीरा, नीलम, पोखराज और मोती।

सर्वौषधी—वच, कूट, जटामासी आंबाहल्दी, दारुहल्दी, मुरा, शिलाजीत, चन्दन का चूरा, चम्पा तथा नागरमोथा।

सप्तमृत्तिका—हाथी, घोड़े, दीमक, संगम, तलाव, गोशाला और चार रास्ते वाली मिट्टी।

सतधान्य—यव, गेहूँ, धान, तिल, ककुनी, साँवा और चना।

नवग्रहकी लकड़ी—मदार, पलाश, खैर, अपामार्ग, पीपल, गूलर, शमी की लकड़ी, दूर्वा और कुश।

)२५ हरताल

)२५ मैनशिला

सुरमा

)२५ पारा

)२५ कांक्षीवरिका

)२५ कौसीस

)१२ गेरू

)१२ खस

)२५ वैष्णवी

)५० सहदेवी

)२५ लक्ष्मणा

)२५ ब्राह्मी

)१२ सोंठ

शमी

)२५ शतावरी

)१२ गुरुची

)१२ सौराष्ट्री

)१२ अर्जुन

)१२ आँवला

)५० त्रिरोचन

सेवार

)१२ हरताल

मोती ३

पन्ना २

मटर

)१२ ककुनी

शंख १

प्र० ५५४

लोहा, उशीर, स्फटिक
सुराठी, सुवर्ण, चाँदी
ताँबा, सीसा, राँगा
कौवा ठोठी, शंखपुष्पी
सोमलता, घीकुवार
साठी चावल
पद्मराज, बिल्वफल १०
बैरफल १५, चन्द्रकान्त
तिन्नी, पीतल, ब्रह्मशिला १
कूर्मशिला १, लोहे का काँटा १०
तीन तागका सूत,
ऊन का सूत,
हवन के लिए—
तिल, यव, चावल
कमलगट्टा कीलो १
बिल्वपत्र कीलो १
१) भोजपत्र, पञ्चमेवा
)२५ धान का लावा

अन्नाधिवास के लिये (चावल)
पुष्पाधिवास के लिए—अनेक तरह के ग्राह्य पुष्प।
धूपादिवास के लिए—धूप
मिष्टान्नाधिवास के लिए—अनेक तरह की मिठाई, पुरी, साग, कचौरी, चटनी, अचार आदि।
शर्कराधिवास के लिए—चीनी गुड़ आदि।
वस्त्राधिवास के लिए—बहुमूल्य पहनने और ओढ़ने के वस्त्र।
घृताधिवास के लिए-पर्याप्त घृत
गन्धाधिवास के लिए—पर्याप्त चन्दन सुगन्धित।
फलाधिवास के लिए-अनेक तरह के फल बदाम आदि।
ओषध्याधिवास-औषधी लता आदि
मट्टी के मय ढकने के कलश-१००
सहस्त्रछिद्रकलश ताँबा या पीतल १

मन्दिर स्नान कलश—१००
दियरी
मट्टीकी नांद या पीतल की नांद
जलाधिवास के लिये
देवताओं के लिए मन्दिर में—
पञ्चपात्र २, आचमनी २, तष्टा २
अर्घा २, चरणपादुका १
पंखा १, चँवर १
आसन गलीचेका २
कुशा का आसन १
सीसा २, घंटा १
जलपात्र १, थाली २
लोटा २, गिलास ३
कटोरी ११
ताम्बूल सामग्री—
वस्त्र पहनने और ओढ़ने के,
आभूषण, होरसा १
चन्दन लाल १ और सफेद,
अतर, छत्र, मुकुट

प्र० ५५४

शय्या और वस्त्र रोज के काम के
पुष्पाहार ५, मिठाई फल
घड़ी १, शंख १, त्रिपाई १
आरती बड़ी १ छोटी १, घंटा १
पुण्याहवाचन कमण्डलु मय ढक्कन सहित
मण्डप प्रवेश ताँबे का कलश १
वेदियों के कलश ५
प्रधानवेदी का कलश ताँबे का १
कांसे की थाली ३
कांसेका कटोरा बड़ा हवनार्थ
परात १, लोटा ५, गिलास ५
छायापात्र कटोरी २
बहुगुना खीर बनने के लिए १
कडछी १, सडसी १
लोहे का तार गज ३५
अभिषेक पात्र पीतलका १
निद्राकलश ताँबेका १
पूर्णपात्र कलश ताँबेका १

मण्डप धारा के लिए—
कमण्डलु पीतल का १
कमण्डलु ताँबे का १
बालटी २
सुवर्ण की मूर्ति—प्रधान विष्णु की और लक्ष्मीकी या शंकर और पार्वती की।
वास्तु १, योगिनी १, ग्रहों और क्षेत्रपाल की मूर्ति १ सोने की
सुवर्ण जिह्वा १
सोने की शलाका २
सुवर्ण खण्ड १००
चाँदी का सिंहासन १
चाँदी छत्र १
चाँदी का पञ्चपात्र १
चाँदी की आचमनी १
सोने का नाग १
चाँदी की ताली १
चाँदी की रकेबी

गरुड़ीप्रतिमा चाँदी की १
नदीकी प्रतिमा चाँदी की १
अरणी १, अधरार्णी १
प्रणीता १, प्रोक्षणी १
स्रुचि १, नारियल जटा
स्रुवा १, पंखा १
कम्बल १ काले रंगका नहीं
मृगचर्म १
हवन की लकड़ी
गोंयठा
रस्सी मोटी मन्थनके लिए गज १५
मलमल का थान १
काला थान १
हरा थान १
पीला थान १
लाल थान १
चढ़ाने के वस्त्र—
प्रधान देवता को—रेशमी धोती और रेशमी डुपट्टा

प्र० ५५५

देवी को--रेशमी साड़ी, रेशमी चुनरी, ओढनी, चोली, सोहाग पिटारी।

नथ—आसूषण आदि

चढ़ाने की धाती ११

अंगोछा ११

आभ्युदयिक में आठ धोती आठ अंगोछा

पूर्णाहुति में २ धोती

वसोर्धारा २ धोती

शय्याका सामान जिसपर भगवान् शयन प्रतिष्ठा के पूर्व करेंगे–

पलंग निवार का १

चाँदनी, रजाई, गद्दा, सुजनी, तकिया, डुपट्टा, दुशाला ऊनी,

धोती, मसहरी, चौकी, पीढ़ा।

आर्यके पहनने के वस्त्र पीताम्बर

ओढना पीला या रेशमी

जनानी धोती

रसोई के बर्तन

छाता, जूता

आसन गलीचेदार

लालटेन

सब प्रकार का अन्न

आभूषण सुवर्ण के

वरणसामान (ऋत्विजों के लिये)

धोती, अंगोछा

डुपट्टा, गंजी, कंबल

लोटा, गिलास

यज्ञोपवीत, पञ्चपात्र

आचमनी, तष्टा

अर्घा, गोमुखी

रुद्राक्षमाला

सोने की अंगूठी

मधुपर्क कटोरी

खड़ाऊँ, छाता

कुशासन कंबलासन

ब्राह्मणों के लिए जाड़े में स्वीटर ऊनी

आचार्य और ब्रह्माको विशेष वस्तु होगी—

धोती रेशमी

अंगोछा, सूती डुपट्टा

शेष वस्तु पूर्ववत् रहेगी

स्कन्द पुराणोक्त रुद्र यन्त्रम्
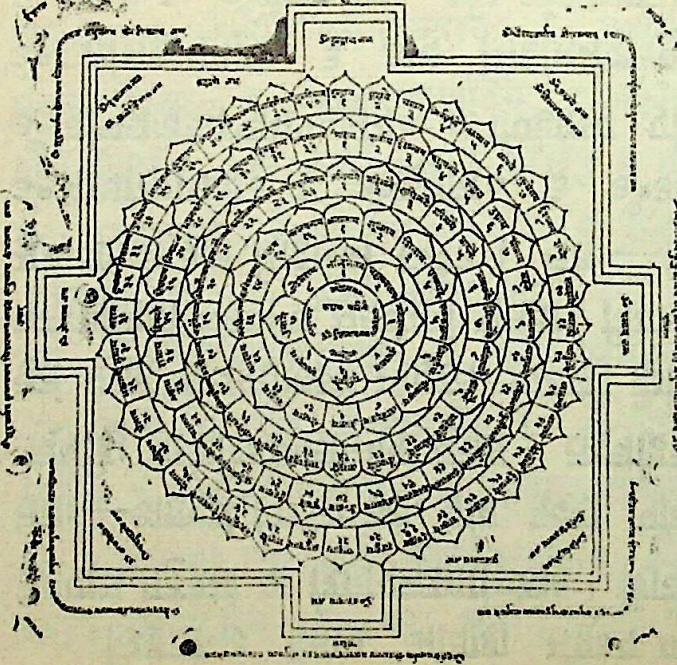
श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णवः

(आभ्यन्तरपरिशिष्ट)

(श्रीशिव-पार्वती-नन्दीपूजन)

श्रीदौलतराम गौड़ वेदाचार्य

लिङ्गतोभद्रे देवान् आवाह्य संपूज्य मध्ये कलशं संस्थाप्य तत्र सुवर्णरजतताम्राद्यन्यतमपात्रे पट्टवस्त्रे वा शिवयन्त्रमालिखेत्। शिवस्य अष्टगन्धेन चन्दनेन वा मध्ये एवं बिन्दुं कृत्वा, ततः—अष्टपत्रं विरच्य ततः बहिः प्रदेशे षोडशारं वृत्तं, तद्बहिः चतुर्विंशतिपत्रात्मकं वृत्तम्, तद्बहिः चत्त्वारिंशत्पत्रात्मकं वृत्तम्, तद्बहिचतुरस्रं चतुर्द्वारं सत्व-रज-तमादियुक्तं बहिर्नागसमावृतं भूगृहं यन्त्रमालिख्य स्वपुरतः पीठादौ हैमीं शिवप्रतिमां चन्दनेन विलिख्य तथैव पार्वतीप्रतिमां नन्दीप्रतिमां संस्थाप्य सुवर्णमयं चतुर्द्वारं विमलं सुशोभितं मण्डपं ध्यात्वा तत्र नानारत्नखचितं मुक्ताद्यलङ्कृतं सिंहासनं स्मरेत्। ततः—पीठपूजा। पीठस्याधोभागे ॐ मूलप्रकृत्यै नमः १ ॐआधारशक्तये० २ ॐकूर्माय० ३ ॐअनन्ताय० ४ ॐवाराहाय० ५ ॐपृथिव्यै० ६ ॐविचित्रदिव्यरत्नमण्डपाय० ७ मण्डपस्य परितः—ॐकल्पवृक्षेभ्यो० १ ॐसुवर्णवेदिकायै० २ ॐरत्नसिंहासनाय० ३ अथ सिंहासनपादेषु—ॐधर्माय०—इत्याग्नेय्याम् १ ॐज्ञानाय० इति नैर्ऋत्याम् २ ॐवैराग्याय०—इति वायव्याम् ३ ॐ ऐश्वर्याय० इति ऐशान्याम् ४ गात्रेषु—ॐअधर्माय० इति प्राच्याम् १ ॐअज्ञानाय० इति दक्षिणस्याम् २ ॐअवैराग्याय० इति

प्र०

प्रतीच्याम् ३ ॐ अनैश्वर्याय० इत्युदीच्याम् ४ सिंहासनोपरि ॐ तल्पाकारायानन्ता० १ ॐ पद्माय० २ ॐ आनन्दमयकन्दाय० ३ ॐ संविन्नालाय० ४ ॐ प्रकृतिमयपत्रेभ्यो० ५ ॐ विकारमयकेशरेभ्यो० ६ ॐ पञ्चाशद्वर्णादयः कर्णिकायै० ७ अथ पद्मदलकेसरकर्णिकासु—ॐ सं सत्वाय० इति दलेषु १ ॐ रं रजसे० इति केसरेषु २ ॐ तं तमसे० इति कर्णिकासु ३ एवं सर्वत्र। ॐ अं द्वादशकलात्मनेऽर्कमण्डलाय० १ ॐ इं षोडशकलात्मने सोममण्डलाय० २ ॐ मं दशकलात्मनेऽग्निमण्डलाय० ३ ॐ अं ब्रह्मणे० ४ ॐ उं विष्णवे० ५ ॐ मं महेश्वराय० ६ ॐ अं आत्मने नमः ७ ॐ उं अन्तरात्मने० ८ ॐ मं परमात्मने० ९ ॐ ज्ञानात्मने० १० इति सर्वपद्मार्चनम्। अथ पद्मपूर्वादिपत्रेषु—ॐ कामायै० १ ॐ ज्येष्ठायै० २ ॐ रौद्र्यै० ३ ॐ काल्यै० ४ ॐ कलविकरण्यै० ५ ॐ बलविकरण्यै० ६ ॐ बलप्रमथिन्यै० ७ ॐ सर्वभूतदमन्यै० ८ इत्यष्टौ शक्तीः संपूज्य ॐ मनोन्मन्यै नमः—इति कर्णिकायाम् १ ॐ नमो भगवते रुद्राय सकलगुणात्मशक्तियुक्तायानन्ताय योगपीठानन्दरूपं परं धामैव सकलं पीठम्—इति चिन्तयेत्। इति पीठपूजा। ततो मूर्तिं पात्रे विधाय अग्न्युत्तारणं कुर्यात्। ॐ समुद्रस्य त्वावकयाग्नेपरिव्ययामसि। पावकोऽअस्मभ्यं

शिवोभव ॥ हिमस्यत्वाजरायुणाग्नेपरिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्यꣳशिवोभव ॥ उपज्ज्यन्नुपवेत-
सेवतरनदीष्वा । अग्नेपित्तमपामसिमण्डूकिताभिरागहिसेमन्नोयज्ञम्पावकवर्णꣳशिवङ्कृधि ॥ अपा-
मिदन्न्ययनꣳसमुद्रस्यनिवेशनम् ॥ अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳ शिवोभव ॥
प्राणदाऽअपानदाव्यानदावर्चोदावरिवोदाः ॥ अन्न्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तुहेतयः पावकोऽअस्मभ्यꣳ
शिवोभव ॥ इति प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामन्त्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वराऋषयः
ऋग्यजुःसामानि छन्दांसि प्राणशक्तिर्देवता आं बीजं ह्रीं शक्तिः क्रों कीलकं शिवादिदेवता प्रीत्यर्थं
प्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः । प्रतिमाया उपरि हस्तं निधाय प्राणप्रतिष्ठाबीजानि पठेत्—ॐ आँ ह्रीं
क्रों यँ रँ लँ वँ शँ यँ सँ हँ क्षँ हँ सः शिवस्य प्राणा इह प्राणाः । ॐ आँ ह्रीं क्रों य० शिवस्य
जीव इह स्थितः । ॐ आँ ह्रीं क्रों यं० शिवस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राण-
पाणिपादपायूपस्थानि इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा । ततः पञ्चदशसंस्कारसिध्यर्थं पञ्चदश-
वारं प्रणवं जपेत् । ततः पार्वतीमूर्तेरपि एवं क्रमेण प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । ततः नन्दीश्वरस्याप्य-
नेनैव विधिना प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । ततो यन्त्रोपरि मध्यकर्णिकायां शिवप्रतिमां तद्वामतो पार्वती-
प्रतिमां पुरतः नन्दीप्रतिमां स्थापयेत् । प्रतिमायाम्—

५०

२६०

५०

५६०

आवाहन—आयाहि हे चन्द्र कलाशिरोमणे गङ्गाधार त्र्यम्बक भूतिभूषण । सान्निध्यम-
त्रास्तु जगन्निवास पूजां ग्रहीतुं विधिवन्मयार्पितम् ।। शुचिप्रदेशे शुचिकौशमासनं मृगत्वमाच्छ-
न्नमथापि वास्तृतम् । मन्त्रेण दत्तं विधिवद् गृहीत्वा योगासनारूढ सुखं समास्यताम् ॥ पाद्यजल-
यत्पादयुग्मं विरजः पवित्रं ध्यातं सदा यत् परतत्त्वदर्शिभिः । तत्क्षालनायामरवन्द्यमन्त्रतो दत्तं
मया पाद्यमिदं गृहाण ॥ अर्घ्य—धवलचन्दनपुष्पकुशैर्युतं कदलीपुष्पदले निहितं शुभम् । तव पुरः
शिवमन्त्रसमर्पितं तदिदमर्घ्यपयः प्रतिगृह्यताम् ॥ अर्घ्याञ्जल—श्रुतिदृगोष्ठपुटद्वयनासिका हृदय-
नाभिशिरोभुजशोधनम् । त्रिपथगाधार ! मन्त्रसमर्पितं तदिदमाचमनं प्रतिगृह्यताम् ॥ [दुग्धस्नान—
गोक्षीरस्नानं देवेश ! गोक्षीरेण मय कृतम् । स्नपनं देवदेवेश गृहाण परमेश्वर ॥ दधिस्नान—
दध्ना चैव महादेव स्नपनं क्रियतेऽधुना । गृहाण श्रद्धया दत्तं तव प्रीत्यर्थमेव च ॥ घृतस्नान—
सर्पिषा च मया देव स्नपनं क्रियतेऽधुना । गृहाण श्रद्धया दत्तं तव प्रीत्यर्थमेव च ॥ मधुस्नान—
इदं मधु मया दत्तं तव प्रीत्यर्थमेव च । गृहाण त्वं हि देवेश मम शान्तिप्रदो भव ॥ शर्करा-
स्नान—सितया देवदेवेश स्नपनं क्रियतेऽधुना ॥ गृहाण श्रद्धया दत्तां सुप्रसन्नो भव प्रभो ॥]

प्र० ५६१ ५० ५६१

दूध, दही सेमर के पत्ते कंवड़ाजल सीसी ?

पंचामृत–दीने त्वया वा विहितानुकम्पा संख्यायतां क्रामति सा न संख्याम्। विभो ! मयाङ्गी कुरु भव्यरूप ! पञ्चामृतस्नानमिदं विशुद्धम् ॥ शुद्धोदकजल–आनन्दकन्दे सुरवृन्दवंद्ये पादारविन्दे किमु कल्पयामि। मन्दाकिनीभङ्गमरीचिमालं तोयं मुदा केवलमर्पयामि ॥ मधुपर्क— सर्वकालुष्यहीनाय परिपूर्णसुखात्मने। मधुपर्कं सुदेवेश कल्पयामि प्रसीद मे ॥ सुगन्धतैलादि– स्नेहं स्नेहेन मे गृह्ण लोकनाथ महायशः। सर्वलोकेश शुद्धात्मन् ददामि स्नेहमुत्तमम् ॥ ततः यवगोधूम–तिल–सर्षपबिल्वचूर्णैः कृत्वा तप्तोदकेन देवं स्नापयेत्। साङ्गोपाङ्गस्नान— परमानन्दबोधाब्धिनिमग्ननिजमूर्तये। साङ्गोपाङ्गमिदं स्नानं कल्पयामि प्रसीद मे ॥ वस्त्र— ब्रह्माण्डमेतत दययाप्यखण्डं सम्पन्नमेभिर्वसनैस्तनोषि। तस्मै प्रदेयः किमु वस्त्रखण्डः तथापि भावोऽस्तु परीक्षणाय ॥ यज्ञोपवीत—आलिङ्ग्य ते यस्य शताग्रभाग पूता विमुक्ता वपुषोऽधमास्ते। यज्ञोपवीतं किमुतस्य पूत्यै दीयेत भक्तस्तु समर्थनाय ॥ उपवस्त्र–श्रद्धातुरीर्यत्र मनस्तु सूत्रं भक्तिं च वेमामतितानयुग्मम्। हल्कौलिको मे विमलोत्तरीयं तनोभि तत्ते तनुकल्पवल्याम् ॥ आभूषण–स्वभावसुन्दराङ्गाय नानाशक्त्याश्रयाय ते। भूषणानि विचित्राणि कल्पयामि प्रसीद

मे ।। गन्ध—आनन्दगन्धं विकिरन्ति यत्र वृन्दारकाः पृच्छति तत्र को माम् । मयामि हे नाथ ! हृदोपनीतं द्रव्यं सुगन्धं विमलं गृहाण ।। भस्म—यदङ्गसंसर्गकृतावरेण्यं मौलौ निजे सङ्गमयन्ति देवाः । देहे सदैवाहितविश्वभारे सारे जगत्या वितनोति भस्म ।। अक्षत—पुष्पाक्षतानक्षतपुण्यराशिरादाय तुभ्यं समुपस्थितोऽस्मि । एतर्हि लज्जानतमस्तकोऽस्मि द्रुतं गृहीत्वा कुरु मां कृतार्थम् ।। पुष्पादि—आसेचनं कोमलपादयुग्मं कृते कठोरः क सुमोपहारः । धाष्ट्र्योद्भवं मे त्वपराधमेनं क्षमस्व दीनस्य नु दीनबन्धो ।। ॐ सर्वगाय नमः—अर्कपुष्पं समर्पयामि १ ॐ सर्वदेवाय नमः—करवीरपुष्पं सम० ३ ॐ गुह्यगुह्याय नमः—विल्वपत्रं सं० ४ ॐ सोमाय नमः—द्रोणपुष्पं स० ५ ॐ भूतनाथाय नमः—अपामार्गं० ६ ॐ भावाय नमः कुशपुष्पं० ७ ॐ भावाय नमः शमीपत्रं स० ८ ॐ सर्वगुह्याय नमः नीलोत्पलं सं० ६ ॐ वेदगुह्याय नमः पद्मपुष्पं १० ॐ सर्वगुह्याय नमः धत्तूरं स० ११ ॐ सोमाय नमः शमीपुष्पं १२ ॐ कटङ्काय नमः नीलमुत्पलं स० १३ ॐ महादेवाय नमः बकपुष्पं० १४ ॐ सूक्ष्मिणे नमः कदम्बं स० १५ । बिल्वपत्र—ॐ रुद्राय नमः १ ॐ हरये नमः २ ॐ भवाय नमः ३ ॐ शिवाय नमः ४ ॐ

सर्वलोकेश्वराय नमः ५ ॐ महेश्वराय नमः ६ ॐ ईशानाय नमः ७ ॐ मखेशाय नमः ८ ॐ पशूनां पतये नमः ९ । त्रिनलं त्रिगुणाकारं त्रिनेत्रं च त्रयायुधम् । त्रिजन्मपापसंहारमेक-बिल्वं शिवार्पणम् ॥ तुलसबिल्वनिर्गुण्डीजंबीरामलकं तथा । पञ्चबिल्वमिति ख्यातमेकबिल्वं शिवार्पणम् ॥ बिल्वपत्रं सुवर्णस्य त्रिमूलाकारमेव च । मयार्पितं तु तच्छंभो गृहाण परमेश्वर ॥ परिमलद्रव्य—यत्तैः सुरभ्यातिशयैर्विषयैरकारि चेतोहरं परिकरं निकरं च यस्य । श्रद्धानतेन शिरसारभसा विकीर्णं द्रव्यं मुदा परिमलं विमलं गृहाण ॥ अङ्गपूजन—ॐ शिवाय नमः पादौ पूजयामि । शम्भवे नमः जानुनी पूज० । शूलपाणये नमः गुल्फौ पू० । शशिशेखराय नमः कटीं पूज० । स्वयंभुवे नमः गुह्यं पू० । उदकोपस्पर्शः । वामदेवाय नमः उदरं पू० । शूलपाणये नमः गुल्फौ पू० । सर्वतोमुखाय नमः पार्श्वौ पू० । स्थाणवे नमः स्तनौ पू० । नीललोहिताय नम : मुखं पू० । शशिभूषणाय नमः मुकुटं पू० । रुद्राय नमः कर्णौ पूज० । सदाशिवाय नमः शिरः पूज० । महादेवाय नमः जङ्घे पूज० । पिनाकिने नमः ऊरू पूज० । स्वयंभुवे नमः नाभिं पू० । विरूपाक्षाय नमः कण्ठं पूज० । शङ्कराय नमः नेत्रे पूज० । शर्वाय नमः ललाटं पूजा० । महेश्वराय नमः सर्वाङ्गं पूज० ।

प्र० २६४

ॐ नमो भगवते रुद्राय इति दशाक्षरमन्त्रेण कर्णिकायां गन्धादिना रुद्रपूजनम्। ततस्त-
द्बहिः वृत्तमध्ये–ॐ सद्योजाताय नमः–इति प्राच्याम् १ ॐ वामदेवाय नमः–इति दक्षिणस्याम्
२ ॐ अघोराय नमः–इति प्रतीच्याम् ३ ॐ तत्पुरुषाय नमः इति उदीच्याम् ४ ॐ ईशानाय
नमः–इति मध्ये ५ तद्बहिरष्टदलेषु प्रागादिक्रमेण–ॐ नन्दिने नमः १ ॐ महाकालाय नमः
२ ॐ गणेशाय नमः ३ ॐ वृषभाय नमः ४ ॐ भृङ्गिणे नमः ५ ॐ स्कन्दाय नमः ६ ॐ उमायै
नमः ७ ॐ चण्डेश्वराय नमः ८ इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य दयाब्धे त्राहि संसारसर्पान्मां शरणा-
गतम्। भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्। तद्बहिः षोडशदलेषु प्रागादिक्रमेण–ॐ अन-
न्ताय नमः १ ॐ सूक्ष्माय नमः २ ॐ शिवाय नमः ३ ॐ एकपदे नमः ४ ॐ एकरुद्राय नमः
५ ॐ त्रिमूर्तये नमः ६ ॐ श्रीकण्ठाय नमः ७ ॐ वामदेवाय नमः ८ ॐ ज्येष्ठाय नमः ९ ॐ
श्रेष्ठाय नमः १० ॐ रुद्राय नमः ११ ॐ कालाय नमः १२ ॐ कलविकरणाय नमः १३
ॐ बलविकरणाय नमः १४ ॐ बलाय नमः १५ ॐ बलप्रमथनाय नमः १६ इति पञ्चोपचारैः
सम्पूजयेत्। ॐ दयाब्धे त्राहि संसारसर्पान्मां शरणागतम्। भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीया-

प्र०

वरणार्चनम् ॥ तद्बहिः चतुर्विंशतिदले प्रागादिक्रमेण—ॐ अणिमायै नमः १ ॐ महिमायै नमः २ ॐ लघिमायै नमः ३ ॐ गरिमायै नमः ४ ॐ प्रा[illegible] नमः ५ ॐ प्राकाम्यै नमः ६ ॐ ईशित्वायै नमः ७ ॐ वशित्वायै नमः ८ ॐ ब्रह्माण्यै नमः ९ ॐ माहेश्वर्यै नमः १० ॐ कौमार्यै नमः ११ ॐ वैष्णव्यै नमः १२ ॐ वाराह्यै नमः १३ ॐ माहेन्द्र्यै नमः १४ ॐ चामुण्डायै नमः १५ ॐ चण्डिकायै नमः १६ ॐ असिताङ्गभैरवाय नमः १७ ॐ रुरुभैरवाय नमः १८ ॐ चण्डभैरवाय नमः १९ ॐ क्रोधभैरवाय नमः २० ॐ उन्मत्तभैरवाय नमः २१ ॐ कालभैरवाय नमः २२ ॐ भीषणभैरवाय नमः २३ ॐ संहारभैरवाय नमः २४ इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य ॐ दयाब्धे त्राहि संसारसर्पान्मां शरणागतम्। भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम् ॥ इति तृतीयावरणम्। तद्बहिः द्वात्रिंशद्दलेषु—प्रागादिक्रमेण—ॐ भवाय नमः १ ॐ शर्वाय नमः २ ॐ ईशानाय नमः ३ ॐ पशुपतये नमः ४ ॐ रुद्राय नमः ५ उग्राय नमः ६ ॐ भीमाय नमः ७ ॐ महते नमः ८ ॐ अनन्ताय नमः ९ ॐ वासुकये नमः १० ॐ तक्षकाय नमः ११ ॐ कुलीरकाय नमः १२ ॐ कर्कोटकाय नमः १३ ॐ शङ्खपालाय नमः १४ ॐ कम्बलाय नमः

५६६

१५ ॐ अश्वतराय नमः १६ ॐ वैन्याय नमः १७ ॐ पृथवे नमः १८ ॐ हैहयाय नमः १९ ॐ अर्जुनाय नमः २० ॐ शाकुन्तलेयाय नमः २१ ॐ भरताय नमः २२ ॐ नलाय नमः २३ ॐ रामाय नमः २४ ॐ हिमवते नमः २५ ॐ निषधाय नमः २६ ॐ विन्ध्याय नमः २७ ॐ माल्यवते नमः २८ ॐ पारिजाताय नमः २९ ॐ मलयाय नमः ३० ॐ हेमकूटाय नमः ३१ ॐ गन्धमादनाय नमः ३२ इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य ॐ दयाब्धे त्राहि संसारसर्पान्मां शरणागतम् । भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चम् ।। तद्बहिः चत्वारिंशद्दलेषु प्रागादि-क्रमेण—ॐ इन्द्राय नमः १ ॐ अग्नये नमः २ ॐ यमाय नमः ३ ॐ निर्ऋतये नमः ४ ॐ वरुणाय नमः ५ ॐ वायवे नमः ६ कुबेराय नमः ७ ॐ ईशानाय नमः ८ ॐ शच्यै नमः ९ ॐ स्वाहायै नमः १० ॐ वाराह्यै नमः ११ ॐ खड्गिन्यै नमः १२ ॐ वारुण्यै नमः १३ ॐ वायव्यै नमः १४ ॐ कौबेर्यै नमः १५ ॐ ईशान्यै नमः १६ ॐ वज्राय नमः १७ ॐ शक्तये नमः १८ ॐ दण्डाय नमः १९ ॐ खड्गाय नमः २० ॐ पाशाय नमः २१ ॐ अङ्कुशाय नमः २२ ॐ गदायै नमः २३ ॐ त्रिशूलाय नमः २४ ॐ ऐरावताय नमः २५ ॐ मेषाय

नमः २६ ॐ महिषाय नमः २७ ॐ श्वेताय नमः २८ ॐ मकराय नमः २९ ॐ मृगाय नमः ३० ॐ नराय नमः ३१ ॐ वृषभाय नमः ३२ ॐ ऐरावताय नमः ३३ ॐ पुण्डरीकाय नमः ३४ ॐ वामनाय नमः ३५ ॐ कुमुदाय नमः ३६ ॐ अञ्जनाय नमः ३७ ॐ पुष्पदन्ताय नमः ३८ ॐ सार्वभौमाय नमः ३९ ॐ सुप्रतीकाय नमः ४० इति पञ्चोपचारैः सम्पूज्य—दयाब्धे त्राहि संसारसर्पान्मां शरणागतम्। भक्त्या समर्पये तुभ्यं पञ्चमावरणार्चनम्। ततः पञ्चमाद्बहिर्भूगृहान्तः प्रागादिक्रमेण—ॐ इन्द्राय नमः १ ॐ अग्नये नमः २ ॐ यमाय नमः ३ ॐ निर्ऋतये नमः ४ ॐ वरुणाय नमः ५ ॐ वायवे नमः ६ ॐ कुबेराय नमः ७ ॐ ईशानाय नमः ८ ॐ विरूपाक्षाय नमः इत्याग्नेय्याम् १ ॐ विश्वरूपाय नमः इति नैर्ऋत्याम् २ ॐ पशुपतये नमः इति इति वायव्याम् ३ ॐ ऊर्ध्वलिङ्गाय नमः—इत्यैशान्याम्। अथ भूगृहाद्बहिः—ॐ विप्रवर्णाय श्वेतरूपाय सहस्रफणामण्डलसंयुताय शेषाय नमः इति पूर्वस्याम् १ ॐ वैश्यवर्णाय नीलरूपाय पञ्चाशत्फणामण्डलभूषितायोत्तुङ्गकायाय तक्षकाय नमः इत्याग्नेय्याम् २ ॐ विप्रवर्णाय कुङ्कुमाभाषाय सहस्रफणामण्डलसंयुक्तायानन्ताय नमः इति दक्षिणस्याम् ३ ॐ क्षत्रियवर्णाय पीतरूपाय

सप्तशतफणामण्डलसंयुक्तायोत्तुङ्गकायाय वासुकये नमः—इति नैर्ऋत्याम् ४ ॐ क्षत्रियवर्णाय पीतरूपाय सप्तशतफणामण्डलसंयुक्ताय शङ्खपालाय नमः—इति प्रतीच्याम् ५ ॐ वैश्यवर्णाय नीलरूपाय पञ्चाशत्फणामण्डलसंयुक्तायोत्तुङ्गकायाय महापद्माय नमः—इति वायव्याम् ६ ॐ शूद्रवर्णाय कृष्णरूपाय त्रिंशत्फणामण्डलसंयुक्ताय कम्बलाय नमः--इत्युदीच्याम् ७ ॐ शूद्रवर्णाय श्वेतरूपाय त्रिंशत्फणामण्डलसंयुक्ताय कर्कोटकाय नमः--इत्यैशान्याम् ।

धूप—कालागुरोश्च घृतमिश्रितगुग्गुलस्य धूपो मया विरचितो भवतः पुरस्तात् । आजिघ्र तं शुचिमनोहरगन्धचूर्णं तूर्णं विनाशय महेश्वर मोहजालम् ॥ दीपक—अज्ञानगाढाञ्जनसङ्कुलायां विद्याप्रदीपं तनुपे जगत्याम् । तस्मै प्रदेयः किमसौ तथापि भक्त्यार्पितं दीपमिमं गृहाण ॥ नैवेद्य—आहृत्य चाहृत्य मनोभिरागैरितस्ततोऽशान्तमनाः सुरेश । नैवेद्यमेतद् भवते निवेद्य जातोऽस्मि सद्यो विशदान्तरात्मा ॥ अचमनीयजल—एतावता नन्वनुमेय चेतः प्रेमातिगस्त्वं करुणोऽसि तस्मात् । प्रतिगृहीतुं प्रणयिप्रियन्त्वामभ्यर्थये चाचमनीयवारि ॥ तांबूल—लोकं समस्तं दयया समेतः पातीह यो विश्वगुरो विभो त्वम् । पूगैः फलैः सम्मिलितं तदेतत्ताम्बूलपत्रं दयया

गृहाण ॥ दक्षिणा—आतन्वसे त्वं करुणां जगत्यामिमां ददत्ते वत लज्जितोऽस्मि। मय्येव तावत्करुणां वितन्यता भो दक्षिणानेकलयाशु नाथ ॥ प्रदक्षिणा—प्रवर्तिता दक्षिणतोथ वामे या दक्षिणैवास्ति सदा शिवस्य। पदे पदे तीर्थफलप्रदात्री प्रदक्षिणां ते परितः करोमि ॥ पुष्पाञ्जलि—आनन्द-सौदर्न्यमयेत्वयेऽस्मिन् अमन्दगन्धे सुरवृन्दवन्द्ये। दीनाश्रये श्रीचरणारविन्दे पुष्पाञ्जलिं ते परितः क्षिपामि ॥ आरती—दीपं हो परमं शंभो घृतप्रज्वलितं मया। दत्तं गृहाण देवेश मम ज्ञानप्रदो भव ॥ पञ्चदीपादि की आरती—दीपावलि मया दत्ता गृहाण परमेश्वर। आरार्तिकप्रदानेन मम तेजः प्रदो भव ॥ स्तुति—नमामि शम्भुं पुरुषं पुराणं नमामि सर्वज्ञमपारभावम्। नमामि रुद्रं प्रभुमक्षयं तं नमामि शर्वं शिरसा नमामि ॥

※ अथ पार्वतीपूजा ※

आवाहन—सितांशुपादैः पिहितांशुकाम्यां शिवान्तिके प्रीतिपरां विलोकैः।
शुचिस्मितां धूतरजोविकारां वन्दे भवोद्बोधविकासपूर्णाम् ॥

प्र० २७१

आसन—कुटीरके मेऽस्ति न हेमपीठं न रत्नवार्तापि श्रुता कदाचित् ।
तथापि भक्तेन सुखोपनीतं गृहाण पीठं कुशकाण्डकं मे ॥

पाद्य—सुशीतलं गन्धवहातिपूतं तिक्तं विशेषौषधिसन्निधाने ।
सरोजपुञ्जार्चितमत्र मातर्गृहाण पाद्यं विधिनोपपन्नम् ॥

अर्घ्य—श्रीचन्द्रमन्दारककेशराक्तं कर्पूरकञ्जादिभिराप्तगन्धम् ।
भागीरथीपुण्यप्रवाहसारैरावर्जितं स्वीकुरु देवि मेऽर्घ्यम् ॥

आचमनीयजल—न स्वादनामोदपरं तथालं जलाविलं वाचमनीयमेतत् ।
विचिन्त्य मद्भावतया विविक्तं गृहाण मातः सततं प्रसीद ॥

पञ्चामृत—गोदुग्धदध्यादिपवित्रपथ्यैर्विनिमितं प्रीतिकरं मुनीनाम ।
पञ्चामृतं देवि मयोपनीतं गृहाण देवासुरव्रातवन्द्ये ॥

मधुपर्क—क्षौद्रेण दध्ना च घृतेन तुल्यं सम्मेलितं राजतकंशिकायाम् ।
यथासुखं मे जगदम्बिके त्वं गृहाण सर्वं मधुपर्कमेतत् ॥

प्र६ २७१

पृ० ५७२

स्नान—गन्धातिमन्दीकृतषट्पदेन हिमाम्भसा प्रीतिपरेण सम्यक् ।
मयोपनीतेन जलेन शुद्धं मुदाम्बिके स्नानमदो विधेहि ॥

वस्त्र—उपासकव्याधिविनाशशीले ! शैलेशकन्ये ! धुतदैन्यधन्ये ! ।
अम्बाम्बरं क्वात्र तवोपयुक्तं तथापि देहेऽलमदो निधेहि ॥

उपवस्त्र—सदर्जितं स्निग्धमदो विचित्रं तवैव योन्यं विशदं विरक्तम् ।
नवोपवस्त्रं रुचिरं विविक्तमाधेहि दीनं नु दयार्द्रचित्ते ॥

गन्ध—यथोचितं वन्यमहोषधीनां मूलैः प्रकाण्डैश्च विनिर्मितं यत् ।
तदद्य पूजादिविधौ त्वदीये गन्धं भवानीह समर्पयामि ॥

कुङ्कुम—सत्कुङ्कुमं गन्धमयं भवानि ! चन्द्रेण संमृज्य निवेश्य पत्रे ।
मयार्पितं पूतमदः सहर्षं स्वीकृत्य सौख्यं हि विधेहि मातः ॥

सिन्दूर—उदितारुणसंकाशं जपाकुसुमसन्निभम् । सीमन्तभूषणार्थाय सिन्दूरं देवि गृह्यताम् ॥

अक्षत—देवोपभोग्यं विधिहृद्यदेहं धान्येषु मान्यं लघुसात्विकं तम् ।
मातर्मुनीनां वचनैः प्रसिद्धं गृहाण मे तण्डुलशालिमुख्यम् ॥

कज्जल—यदञ्जनं त्रैककुन्दं नेत्रसौन्दर्यसाधनम् । चक्षुषोः कज्जलं धेहि देवि स्वर्णशलाकया ॥

आभूषणादि—दिव्यानि ताडपत्राणि विचित्राणि शुभानि च । कण्ठाभरणयुक्तानि पार्वति प्रति-
गृह्यताम् ॥ पुष्प—बन्धूककह्लारकसिन्धुवारैश्चित्रं जपामल्लिकयातिहृद्यम् । पुटं च सत्पुष्पमयं भवानि
गृहाण मन्दारसुगन्धशीले ! ॥ सेवन्तिकावकुलचम्पकपाटलाब्जैः पुन्नागजातिकरवीररसाल-
पुष्पैः । विल्वप्रवालतुलसीदलमालतीभिस्त्वां पूजयामि जगदीश्वरि मे प्रसीद ॥ अंगपूजा—ॐ उमायै
नमः पादौ पूजयामि । गौर्यै० गुल्फौ पू० । पार्वत्यै० जानुनी पू० । जगद्धात्र्यै० जंघे पू० ।
जगत्प्रतिष्ठायै० ऊरू पू० । शान्तिरूपिण्यै० कटीं पू० । हरायै० गुह्यं पू० । माहेश्वर्यै० नाभिं
पू० । शाम्भवायै० हृदयं पू० । देव्यै० कण्ठं पू० । वागेश्वर्यै० स्कन्धौ पू० । सुप्रियायै बाहू पू० ।
शिवायै१ मुखं पू० । कमलासनायै नासिकां पू० । पशुपतिप्रियायै० नेत्रे पू० । सिद्धेश्वर्यै० कर्णौ
पू० । गङ्गायै० ललाटं पू० । महालावण्यायै० शिरः पू० । सच्चिदानन्दरूपिण्यै० सर्वाङ्गं पू० ।

प्र०

५७४

पत्रपूजा—अशोकायै नमः अशोकपत्रं समर्पयामि । जगद्धात्र्यै० धात्रीपत्रं स० । माहेश्वर्यै० दूर्वापत्रं स० । विशोकायै० करवीरपत्रं स० । कपालधारिण्यै० कदम्बपत्रं स० । पार्वत्यै० ब्राह्मीपत्रं स० । धूर्जटायै० धत्तूरपत्रं स० । त्रिपुरान्तकायै० अपामार्गं स० । विश्वरूपिण्यै० सोवन्तिकापत्रं स० । कौमार्यै० वेणुपत्रं स० । महामायै० देवदारुपत्रं स० । सर्वेश्वर्यै० नानाविधपत्राणि स० । उमायै० बिल्वपत्रं स० । गौर्यै० आम्रपत्रं स० । पार्वत्यै० मालतीपत्रं स० । काल्यै० चम्पकपत्रं स० । रुद्राण्यै० बदरीपत्रं स० । चण्डिकायै० तुलसीपत्रं स० । ईश्वर्यै० मुनिपत्रं स० । शिवायै० दाडिमीपत्रं स० । धात्र्यै० जातीपत्रं स० । मृडान्यै० मरुबकपत्रं स० । गिरिजायै० बकुलपत्रं स० । अम्बिकायै० निम्बपत्रं स० । पुष्पपूजा—चतुर्वर्गप्रदायै नमः चम्पकपुष्पं समर्पयामि । बुद्धिप्रियायै० पुन्नागपुष्पं स० । कौमार्यै० करवीरपुष्पं स० । कुमार्यै० वकुलपुष्पं स० । धनदायै० धत्तूरपुष्पं स० । शांभवायै० शतपत्रपुष्पं स० । चामुण्डायै० पद्मपुष्पं स० । जगद्धात्र्यै० जपापुष्पं स० । माहेश्वर्यै० मल्लिकापुष्पं स० । मेरुमन्दारवासिन्यै० बेलापुष्पं स० । नामपूजा— उमायै नमः १ कात्यायन्यै० २ गौर्यै० ३

प्र०

५७४

काल्यै० ४ हिमवत्यै० ५ शिवायै० ६ भवान्यै० ७ रुद्राण्यै० ८ सर्वमङ्गलायै० ९ अपर्णायै० १० पार्वत्यै० ११ दुर्गायै० १२ मृडायै० १३ चामुण्डायै० १४ कौबेर्यै० १५ भगवत्यै० १६ सरस्वत्यै० १७ शारदायै० १८ वागीश्वर्यै० १९ चण्डिकायै० २० आर्यायै० २१ दाक्षायण्यै० २२ गिरिजायै० २३ मेनकात्मजायै० २४ पद्मिन्यै० २५ पद्माकरवासिन्यै० २६ महिषमर्दिन्यै० २७ सिंहवाहिन्यै० २८ शक्तिदायै० २९ ललितायै० ३० ।

धूप—कृशानुकाये विनिवेशितं मे धूपं सगन्धं कुसुमार्जितं यत् । निवेदितं भावतयातिहृद्यं भवानि ! प्रीत्यर्थमदो गृहाण ।। दीपक—घृतेन भिन्नं विधिनोपपन्नं शुद्धान्नचूर्णेन प्रसन्नदेहम् । दीपं शिवे ! दीप्ततरं विनिद्रं स्वीकृत्य क्षेमं सततं तनुष्व ।। नैवेद्य—इष्टं त्वदीयं मधुरं यथावत् समर्पितं प्रेमजलेन साकम् । मनोरमं पूतमिदं सगन्धमम्बालिके स्वीकुरु कान्तवर्णम् ।। ताम्बूल—हे हेमपीठाङ्कितपादपद्मे ! सिंहाधिरूढ शिवशक्तिरूते ! । मयार्पितं भक्तिरसेन भूयस्ताम्बूलमेतद् गिरिजे ! गृहाण ।। दक्षिणा—त्वदीयमेतत्सकलं धनं मे कुबेरपूज्यासि शिवे ! चिराय । सव्रीडमन्दोऽस्मि ददामि वा किं सुदक्षिणां देवि तथा गृहाण ।। नीराजन—भक्तार्तिविध्वंसन-

प्र०
५७५

दक्षिणे ते वेदोपदिष्टां शिवदानशीलाम् । सुरासुराकल्पितपूर्वचर्यां नीराजनां तेऽद्य करोमि मातः । पुष्पाञ्जलि—कार्पण्यदोषोपहतोऽस्मि मातर्धनं न तेऽलं यदि वा ददामि । गौराङ्गशोभे कृपयाशु तुष्टे ! पुष्पाञ्जलिं मेऽद्य मुदा गृहाण ॥ प्रदक्षिणा—रुद्राणि ! रुद्रैरपि वन्दनीये ! समुद्र-गम्भीरविचारमुद्रे ! । पदे पदे पापविनाशशीलां प्रदक्षिणां ते सततं तनोमि ।

अथ नन्दीपूजनम्

आवाहन—देवेशवाहनमहं शुभशृङ्गभृङ्गि देवैः सुरेशप्रमुखैरतिपूजितं त्वाम् ।
माहेशपादयुगलेन सुपूतपृष्ठमावाहयामि सुतरां भव संमुखो मे ॥

आसन—अयि विभो वृषराज ककुद्मयुक् यदपि नार्हमिदं प्रियमासनम् ।
तदपि नन्दकनाथ निरीक्ष्य मे समुचितं प्रियमासनमास्यताम् ॥

अर्घ्य—जलजनालमृणालदलादिभिः सुसुरभिं मधुरं मधुनान्वितम् ।
प्रियकरं प्रियमर्घ्यमिदं सदा प्रिय ददामि सुरेश्वरवाहन ॥

प्र० ५७६

आचमनीयजल—कर्पूरचन्दनद्रवैरतिवासितं यदेलालवङ्गलवलीमृगनाभिपूतम् ।
चण्डीशवाहन ! शुभं दुरितापहारि दत्तं गृहाण प्रियमाचमनं मयेदम् ।।

पञ्चामृत—दुग्धेन गन्धमधुमिश्रितमोदकेन शीतेन गाङ्गसलिलादिसमन्वितेन ।
सज्जीकृतं सविधिवत्समलङ्कृतं तत् पञ्चामृतं प्रिय ! गृहाण प्रभो ! मदीयम् ।।

स्नान—काश्मीरजेन घनसारसुवासितेन पुष्पादिचन्दनद्रवैश्च मनोहरेण ।
एलालवङ्गलवलीविमलोदकेन स्नानं कुरुष्व वृषराज निवेदितेन ।।

वस्त्र—वैदूर्यरत्ननिकरैरतिभासितानि कौशेयतन्तुविहितानि शुभानि तानि ।
देवैः सुरेशप्रमुखैरपि याचितानि वासांसि तानि वृषराज ! निवेदयामि ।।

यज्ञोपवीत—देवेशदेव वृषराज सुरेशवन्द्य ! किं दे ददामि जगदीश्वर ! लोकवन्द्य ! ।
भक्तिं सदैव मम देव विचिन्त्य चित्ते यज्ञोपवीतमुररीकुरु देव देव ! ।।

उपवस्त्र—अयि देव ! विदेहि दयां दयनीयं दयया गृहाण माम् ! ।
करुणाकर ! हेवृषाधिप उपवस्त्रं दयितं गृहाण ।।

प्र० ५७७ ४९

प्र० ५७७

गन्ध—कस्तूरिकुङ्कुमसुगन्धसुगन्धितं तमेलालवङ्गघनसारसुवासितं च ।
देवर्षिदेवमुनिभिश्च सुपूजितं तं गन्धं गृहाण वृषराज ! मया प्रदत्तम् ॥

अक्षत—देवराज वृषराज सदाऽहं श्रीप्रदं तवपदं प्रणमामि ।
नाथ मे प्रिय गृहाण सपूजामक्षतान्विबुधवृन्दप्रशस्यान् ॥

पुष्पादि—एलालवङ्गलवलीदलशोभितानि चम्पाकदम्बवकुलैः समलङ्कृतानि ।
पुष्पाणि देव ! कदलीदलसम्भृतानि दत्तानितानि विमलानि मया गृहाण ॥

परिमलद्रव्य—देवेन्द्रदेव ऋषिभिश्च सुपूजितं त्वां गौरीशगौरपदपङ्कजमण्डितं त्वाम् ।
एलादिगन्धपरिपूरितचूर्णकेन त्वां लेपयामि वृषराज ! विलेपनेन ॥

धूप—एलादिगन्धसहितेन मनोहरेण पिष्टातकादिभिरहो परिवर्धितेन । चन्द्रादिचन्दनद्रवैरति-शोभितेन धूपेन ते प्रिय ! करोमि शुभां सपर्याम् ॥ दीपक—प्रभो ! पाहि दीनं सदा मानहीनं स्वभक्तं सदा भक्तिमन्तं सुदीनम् । दयानाथ दैवीं दयां मे विधेहि सुदीपं सदा मे त्वमङ्गीकुरुष्व ॥

नैवेद्य—आज्येन गन्धसुरसादिमनोहरेण मिष्टान्नमिश्रितमनोहरमोदकेन । सज्जीकृतं सर्वविधिवत्सम-

प्र० ५७८

लङ्कृतं तं नैवेद्यमङ्ग ! वृषराज ! निवेदयामि ॥ ताम्बूल—गौरीशपादवहनेन सुचारुपृष्ठं देवैश्च किन्नरगणैः समुपासितं तम् । गौरीगिरीशपदपङ्कजमण्डितं तं ताम्बूलदानविधिना प्रियमर्चयामि ॥ दक्षिणा—ये वदन्ति खलु ते महिमानं ते मुदैव न मृषा प्रलपन्ति । नाथ किं तव करोमि सपर्यां दक्षिणां प्रिय गृहाण मदीयाम् ॥ पुष्पाञ्जलि—हे नाथ ! हे प्रियविभो ! सुरराजवन्द्यवृन्दारकैरपि सुरेन्द्र विनन्दितं तम् । श्रीवृक्षपत्रपुटमण्डपमण्डितं तं पुष्पांञ्जलिं प्रिय गृहाण सदा मदीयम् ॥

(श्रीगणेशप्रतिष्ठापूजा)

सर्वतोभद्रमण्डले ब्रह्मादिदेवान् संस्थाप्य मध्ये कलशस्थापनविधिना कलशं संस्थापयेत् । कलशोपरि यन्त्रं स्थापयित्वा—मध्ये विन्दुं, ततस्त्रिकोणं, षट्कोणमष्टदलं चतुरस्रात्मकं भूगृहं च रक्तचन्दनेन कृत्वा श्रीगणेशस्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात्—ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः श्रीगणेशस्य प्राणाः इह प्राणाः । ॐ आं ह्रीं० श्रीगणेशस्य जीव इह स्थितः । ॐ आं ह्रीं क्रों० श्रीगणेशस्य सर्वेन्द्रियाणि वाङ्मनस्त्वक्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थ इहैवागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

प्र०
५७९

पीठपूजा—ॐ प्रकृत्यै नमः। श्वेतद्वीपाय नमः। रत्नोज्ज्वलितस्वर्णमण्डपाय नमः। कल्पवृक्षाय नमः। स्वर्णवेदिकायै नमः। सिंहासनाय नमः। पादेषु—आग्नेयादिक्रमेण—अधर्माय नमः। अज्ञानाय नमः। अवैराग्याय नमः। अनैश्वर्याय नमः। कर्णिकायाम्—अनन्ताय नमः। पद्माय नमः। आनन्दकन्दाय नमः। संविन्नालाय नमः। प्रकृतिमयपत्रेभ्यो नमः। विकारमयपत्रेभ्यो नमः। पञ्चाशद्वर्णाढ्यकर्णिकायै नमः। सूर्यमण्डलाय नमः। चन्द्रमण्डलाय नमः। अग्निमण्डलाय नमः। सत्त्वाय नमः। रजसे नमः। तमसे नमः। आत्मने नमः। अन्तरात्मने नमः। ज्ञानात्मने नमः। मायातत्त्वाय नमः। कलातत्त्वाय नमः। विद्यातत्त्वाय नमः। परतत्त्वाय नमः। ततः पूर्वादिक्रमेण—तीव्रायै नमः। ज्वालिन्यै नमः। नन्दायै नमः। भोगदायै नमः। कामरूपिण्यै नमः। उग्रायै नमः। तेजोवत्यै नमः। सत्यायै नमः। मध्ये—विघ्नविनाशिन्यै नमः। सर्वशक्तिकमलासनाय नमः। इति पुष्पाञ्जलिं कर्णिकायां दत्त्वा ॐ सत्यज्ञानानन्तानन्दरूपं परं धामैव सकलं पीठमिति चिन्तयेत्।

प्र० ५८०

प्र० ५८१

ध्यानं—चतुर्भुजं पाशधरं गणेशं तथाऽङ्कुशं दन्तयुधं त्वमेवम्। त्रिनेत्रयुक्तं त्वभयङ्करं तं ध्यायाम्यहं चैकरदं गजास्यम्। आवाहन—एह्येहि विघ्नेश्वर विघ्नशान्त्यै पाशाङ्कुशाब्जान् वरदं दधान। सर्पाक्षसूत्रावरमन्दमूर्ते रक्षाध्वरं नो भगवन्नमस्ते॥ स्थिरीकरण—लम्बोदर श्रीसुरवन्द्य-देव सिंहारिवक्त्रारुणपद्मपीठे। सुवर्णरत्नोज्ज्वलदिव्यरूपे स्थिरो भव त्वं मम यज्ञसिद्ध्यै॥ पाद्य—सुवर्णपात्रे कुसुमान्विते च गङ्गाजलेनाक्षतगन्धयुक्तम्। भक्त्याऽर्पितं देव गृहाण पाद्यं प्रसन्नविघ्नाधिपते नमोऽस्तु॥ अर्घ्य—उमासुतेशात्मज देवदेव विघ्नेश विघ्नादिनिवारणाय। दत्तं मयाऽर्घं तव चात्मतुष्ट्यै गृहाण भूयो भगवन्नमस्ते॥ आचमनीय—सरिज्जलं माल्यसुवासितं च नानारसैः पूर्णकृतं तथैव। निवेदयाम्यध्वरविघ्नशान्त्यै प्रसीद विघ्नाधिपते नमोऽस्तु॥ पञ्चामृत—तोयैश्च दुग्धदधिमाक्षिकसर्पिराद्य सीतायुतैः कनककुम्भधृतैः समन्त्रैः। कर्पूरकेसर-सुगन्धिभिर्विघ्नराज स्नानार्थमर्पितमिदं विधिवद् गृहाण॥ शुद्धोदक—गङ्गाकलिङ्गेषु सिता च रेवा तथा नदात्सप्त समुद्रयुक्तात्। आकृष्य सारं च सुवासितं च स्नानं गणेशाय निवेदयामि॥ वस्त्र—अमौ विशुद्धे तु गृहाण वस्त्रे ह्यनर्घ्यमौले मनसा मया ते। दत्ते परिधाय निजात्मदेहं

प्र० ५८१

ताभ्यां मयूरेश जनांश्च पालय ॥ यज्ञोपवीत—यज्ञोपवीतं त्रिगुणीकृतं यत् सुवर्णसूत्रैस्तदुमासुताय । निवेदये ते सुखकारि देव नागेशसूत्रान्वितदाममूर्ते । चन्दन—कर्पूरयुक्तं शशिरोचनेन कस्तूरिका चन्द्रलेपनाद्यैः । युक्तं तथा केसरकुङ्कुमाद्यैर्गन्धं गणेशाय निवेदयामि ॥ अक्षत—घृतेन वै कुङ्कुमेन रक्तान् सुतण्डुलांस्ते परिकल्पयामि । भाले गणाध्यक्ष गृहाण पाहि भक्तान् सुभक्तप्रिय दीनबन्धो ॥ पुष्पमाला—जात्यादिपुष्पग्रथितानि देव पुन्नागपुष्पाणि सुगन्धितानि । विनायकेशात्मजनागवक्त्र गृहाण माल्यानि मयाऽर्पितानि ॥

ॐ सुमुखाय नमः जातीपुष्पं समर्पयामि । एकदन्ताय० शतपत्रं स० । गजकर्णाय० चम्पकपुष्पं स० । विकटाय० केतकीपुष्पं स० । विघ्ननाशिने० बकुलपुष्पं स० । भालचन्द्राय० चम्पकपुष्पं स० । धूम्रकेतवे० पुन्नागपुष्पं स० । गणाध्यक्षाय० धतूरपुष्पं स० । भालचन्द्राय० मातुलिङ्गपुष्पं स० । पत्नीहिताय० विष्णुक्रान्तापुष्पं स० । ईशपुत्राय० बकुलपुष्पं स० । सर्वसिद्धिप्रदाय० गोकर्णिकापुष्पं स० । मूषकवाहनाय० कुमुदपुष्पं स० । कुमारगुरवे० तगरपुष्पं स० । दीर्घशुण्डाय० सुगन्धिराजपुष्पं स० । ईभवक्त्राय० अगस्तपुष्पं स० ।

प्र० ५८२

संकटनाशनाय० पाटलीपुष्पं स० । कपिलाय० मालतीपुष्पं स० । अघहन्त्रे० पारिजातपु० स० । द्वैमातुराय० मल्लिकापु० स० । गिरिजात्मजाय० कर्णिकापु० । दीर्घदन्ताय० कुमुदपु० स० । स्थूलकर्णाय० मुनिपु० । सुरेश्वराय० कुरण्टकपुष्पं स० । गणाधिपाय० यूथिका-पु० स० । पत्रार्पणम्—सुमुखाय नमः मालतीपत्रं समर्पयामि । गणाधिपाय० भृंगराजपत्रं० । उमापुत्राय० बिल्वपत्रं० । गजाननाय० श्वेतदूर्वापत्रं० । लम्बोदराय० बदरीप० । हरसूनवे० धतूरपत्रं० । गजवक्त्राय० वनतुलसी० । गुहाग्रजाय० अपामार्गपत्रं० । एकदन्ताय० बृहतीपत्रं० । इभवक्त्राय० शमीपत्रं० । विकटाय० करवीरपत्रं० । विनायकाय० अश्वत्थपत्रं० । विनायकाय० अश्मन्तकपत्रं० । वटवे० दाडिमीपत्रं० । सुराग्रजाय० मरुपत्रं० । कपिलाय० अर्कपत्रं० । अर्भकाय० अर्जुनपत्रं० । पत्नीहिताय० विष्णुक्रान्तापत्रं० । सुराधिपतये० देवदारु-पत्रं० । भालचन्द्राय० अगरुपत्रं० । हेरम्बाय० दूर्वां स० । शूर्पकर्णाय० जातीपत्रं० । सुरनाथाय० मधुपत्रं० । एकदन्ताय० केतकीपत्रं समर्पयामि ।

विन्दौ—महागणपतये नमः । त्रिकोणे—गौरीगौरीपतिभ्यां नमः । रति-रतिपतिभ्यां नमः । मही-

प्र०

५८३

प्र०

वाराहाभ्यां नमः। इति प्रथमावरणार्चनम्। षडस्त्रेषु—ऋद्धिमोदाभ्यां०। समृद्धिप्रमोदाभ्यां नमः। कान्तिसुमुखाभ्यां०। मदनावतीप्रदुर्मुखाभ्यां०। देवाभद्रविघ्नाभ्यां०। द्राविणीविघ्नकर्तृभ्यां०। दक्षपार्श्वे—वसुधाराशंखनिधिभ्यां०। वामपार्श्वे—वसुमतीपद्मनिधिभ्यां०। इति द्वितीयावरणार्चनम्। षडस्रसन्धिषट्केषु—गां हृदयाय नमः। गीं शिरसे स्वाहा। गूं शिखायै वषट्। गैं कवचाय हुम्। गौं नेत्रत्रयाय वौषट्। गः अस्त्राय फट्। इति तृतीयावरणार्चनम्। अष्टपत्रेषु—ब्राह्म्यै नमः। माहेश्वर्यै०। कौमार्यै० वैष्णव्यै०। वाराह्यै०। माहेश्वर्यै०। चामुण्डाय०। महालक्ष्म्यै०। इति चतुर्थावरणार्चनम्। चतुरस्ररेखायाम्—इन्द्राय०। अग्नये०। यमाय०। निर्ऋतये०। वरुणाय०। वायवे०। सोमाय०। ईशानाय०। ब्रह्मणे०। अनन्ताय०। पुनः—वज्राय०। शक्तये०। दण्डाय०। खड्गाय०। पाशाय०। ध्वजाय०। शंखाय०। त्रिशूलाय०। इति पञ्चमावरणार्चनम्।

अङ्गपूजा—गणेश्वराय नमः पादौ पूजयामि। विघ्नराजाय० जानुनी पू०। आखुवाहनाय० ऊरू पू०। हेरम्बाय० कटिं पू०। कामारिसूनवे० नाभिं पू०। लम्बोदराय० उदरं

पू० । गौरीसुताय० स्तनौ पू० । गणनाथाय० हृदयं पू० । स्थूलकण्ठाय० कण्ठं पू० । स्कन्दाग्रजाय० स्कन्धौ पू० । पाशहस्ताय० हस्तौ पू० । गजवक्त्राय० वक्त्रं पू० । विघ्नहर्त्रे० ललाटं पू० । सर्वैश्वर्याय० शिरः पू० गणाधिपाय० सर्वाङ्गं पू० ।

गन्धाक्षतपुष्पैः—नामपूजा-गजाननाय नमः । विघ्नराजाय० । लम्बोदराय० शिवात्मजाय० । वक्रतुण्डाय० । शूर्पकर्णाय० । कुब्जाय० । विनायकाय० । विघ्ननाशिने नमः । विकटाय० । वामनाय० । सर्वार्तिनाशिने० । भगवते० । विघ्नहर्त्रे० । धूम्रकेतवे० । सर्वदेवाधिदेवाय० । एकदन्ताय० । कृष्णपिङ्गाय० । भालचन्द्राय० । गणेश्वराय० । गणपाय० । (ततः हरिताः श्वेतवर्णा वा पञ्च त्रिपत्रसंयुताः । दूर्वाङ्कुरा मया दत्ता एकविंशतिसंमिताः ॥) गणाधिपाय० दुर्वाङ्कुरान् स० । उमापुत्राय० । अभयप्रदाय० । एकदन्ताय० । मूषकवाहनाय० । विनायकाय० । विघ्ननाशाय० । विकटाय० । मोदकप्रियाय० विघ्नविध्वंसकर्त्रे० । विश्ववन्द्याय० । अमरेशाय० । गणकर्णाय० । नागयज्ञोपवीतिने० । भालचन्द्राय० । विद्याधिपाय० । विद्याप्रदाय० ।

पुनरपि पत्रार्पणम्—सुमुखाय० मालतीपत्रं समर्पयामि । गणाधिपाय० भृंगराजपत्रं स० । उमापुत्राय० बिल्वपत्रं स० । गजाननाय० श्वेतदूर्वापत्रं स० । लम्बोदराय० बदरीपत्रं स० । हरसूनवे० धत्तूरपत्रं स० । गुहाग्रजाय० अपामार्गपत्रं स० । एकदन्ताय० बृहतीपत्रं स० । गजाननाय० शमीपत्रं स० । विकटाय० करवीरपत्रं स० । विनायकाय० अश्वत्थपत्रं स० । विघ्नहर्त्रे० अश्मन्तकपत्रं स० । वटवे० दाडिमीपत्रं स० । सुराग्रजाय० मरुपत्रं स० । कपिलाय० अर्कपत्रं स० । अभयदाय० अर्जुनपत्रं स० । पत्नीहिताय० विष्णुक्रान्तापत्रं स० । सुराधिपतये० देवदारुपत्रं स० । भालचन्द्राय० अगरुपत्रं स० । हेरम्बाय० चम्पकपत्रं स० । शूर्पकर्णाय० जातीपत्रं स० । सुरनाथाय० मधुपत्रं स० । एकदन्ताय० केतकीपत्रं स० ।

दुर्वा—दूर्वाङ्कुरान् वै मनसा प्रदत्तांस्त्रिपञ्चपत्रैर्युक्तांश्च स्निग्धान् । गृहाण विघ्नेश्वर सङ्ख्यया त्वं हीनांश्च सर्वोपरि वक्रतुण्ड ॥ सौभाग्य-द्रव्य—शुभां हरिद्रामबिरं गुलालं सिन्दूरकं ते परिकल्पयामि । सुवासितं वस्तुसुवासभूतैर्गृहाण ब्रह्मेश्वर शोभनार्थम् ॥ धूप—दशाङ्गधूपं रुचिरं सुगन्धं मनोहरं चन्दनदारुकाद्यैः । गृहाण सौरभ्यकरं परेश सिद्धया च बुद्धया सह

भक्तपाल ॥ दीपः—साज्यं सुवर्त्या युतमग्नियुक्तं घोरान्धकारप्रशमं च देव। गृहाण दीपं सुरसिद्धसेव्य क्षमस्व सेव्यैकवरप्रदान ॥ नैवेद्य—लेह्यं च चोष्यं रसषट्कयुक्तं मनोहरं मोदकवासितं च। कर्पूरखण्डैर्भगवन् गणेश गृहाण नैवेद्यमिदं नमस्ते ॥ ताम्बूल—पूगीफलैर्नागलतादलैश्च लवङ्गकर्पूरसुवासितं च। एलायुतं विघ्नहर प्रसीद गृहाण ताम्बूलमिदं नमस्ते ॥ दक्षिणा—हिरण्यगर्भस्थमिदं हिरण्यं ज्योतिःस्वरूपं सकलं सुरेशम्। गृहाण विघ्नेश मयाऽर्पितं च भक्त्या चलत्कर्ण तव प्रसीद ॥ नीराजन—शशाङ्कसूर्याग्निसमप्रकाशं दीपैः सुदीपैः फणिरत्नवद्भिः। नीराजनं हेमरतः स्वमूर्ते प्रसीद विघ्नाधिपते नमोऽस्तु ॥ विशेषार्घ्य—पुष्पाक्षताचन्दननारिकेलं फलेन ताम्रेण मनोरमाऽर्घ्यम्। भक्त्या सुरेशाय च खर्जुरेकं फलं गणेशाय निवदेयामि ॥

गणेशपुराणे-अ०८८—गुरोराज्ञां गृहीत्वा च पूजाद्रव्याणि प्रोक्षयेत्। उपचारैः षोडशभिः पूजयेद् गणनायकम् ॥ काञ्चनं राजतं वापि स्वस्वशक्त्या विनिर्मितम्। एकविंशतिपक्वान्नैरेकविंशतिसंख्यकैः ॥ गजाननाय देवाय नैवेद्यं परिकल्पयेत्। एकविंशतिमुद्रास्तु दक्षिणार्थं निवेदयेत् ॥ सौवर्णी राजतीर्वापि वित्तशाठ्यविवर्जितः। एकविंशतिदूर्वाश्च श्वेता वा हरिता अपि ॥ ब्राह्मणान् वेदविदुषः पूजयेदेकविंशतिम्। भोजयेत्तादृशान्नेन तावद्दानानि दापयेत् ॥ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि। तन्नो दन्तिः प्रचोदयात् ॥

प्राणप्रतिष्ठा—ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हं सः गायत्र्याः प्राणा इह प्राणाः। ॐ आँ ह्रीं क्रों० गायत्र्याः जीव इहस्थितः। ॐ आं ह्रीं क्रों० वाङ्मनश्चक्षुश्श्रोत्रघ्राणपाणिपाद-पायूपस्थ इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा। पीठपूजा—मं मण्डूकाय नमः १ कालाग्नि-रुद्राय० २ आधारशक्त्यै० ३ कूर्माय० ४ धरायै० ५ अमृतसागराय० ६ श्वेतद्वीपाय० ७ कल्पवृक्षेभ्यो० ८ मणिहर्म्याय० ९ हेमपीठाय० १० आग्नेयादिकोणेषु—प्रभूताय नमः १ विमलाय० २ साराय० ३ समाराध्याय० ४ मध्ये—परमसुखाय० १ अनन्ताय० २ पद्माय० ३ आनन्दमयकन्दाय० ४ संविन्नालाय० ५ विकारमयकेसरेभ्यो० ६ प्रकृत्यात्मकपत्रेभ्यो० ७ पञ्चाशद्वर्णकर्णिकायै० ८ इन्दुमण्डलाय० ९ वह्निमण्डलाय० १० सूर्यमण्डलाय० ११ स्वपुरतः—आरभ्याष्टदिक्षु मध्ये च पीठशक्तिपूजनम्—रां दीप्त्यै नमः १ रीं सूक्ष्मायै० २ रुं जयायै० ३ रैं भद्रायै० ४ रैं विभूत्यै० ५ रों विमलायै० ६ रौं अमोघायै० ७ रं विद्युतायै० ८ रः सर्वतोमुख्यै० ९ ध्यान—ओङ्कारमध्यनिलयां कमलायताक्षीं पञ्चाननां बहुविधाऽऽयुधचारुहस्ताम्।

तत्त्वार्थवर्णमयविग्रहभासमानां ध्यायामि तां निगममातरमादिशक्तिम् ॥ आवाहन—आवाहयामि भवतीं भवतीव्रतापानिर्वापणैकनिपुणे ! द्विजवृन्दवन्द्ये । आयाहि देवि नवरत्नविभासमाने सिंहासने ननु निधेहि पदाब्जयुग्मम् ॥ पाद्य—गाङ्गेन निर्मितमिदं पयसा सदूर्वागन्धाक्षतं समुदितामितमन्त्रपूतम् । गायत्रि ! पादसरसीरुहयोर्भवत्याः पाद्यं महेश्वरि ! मुदा परिकल्पयामि ॥ अर्घ्य—गन्धाक्षतादिसहितं विविधैः प्रसूनैरुल्लासितं कनकरत्नपरिष्कृतं च । सावित्रि ! पाणिकमले विमले भवत्या अर्घ्यं पवित्रमिदमम्ब ! समर्पयामि ॥ आचमन—गङ्गाजलेन शुचिनाऽऽचमनं विधेहि मातः ! पुरारिशिरसा परिलालितेन । अभ्यङ्गसेवनविधानमथाऽनुगृह्य स्नानाय देवि ! वरदे ! मयि सम्प्रसीद ॥ स्नान—गङ्गाकलिन्दतनयेन्दुसमुद्भवादि प्राज्यप्रभावतटिनीगणतोयपूर्णैः । हैमैर्घटैर्मृगमदादिसुगन्धिभिस्ते स्नानं परात्परतरे विनिवर्तयामि ॥ वस्त्रोपवस्त्र—बालार्कमण्डलनिवासिनि ! मन्दहासे ! गायत्रि ! योगिजनमानससराजहंसि । वस्त्रोपवस्त्रयुगलं सह भूषणौघैः स्वीकृत्य पाहि पमेश्वरि ! नः प्रणम्रान् ॥ गन्ध—काश्मीरनीरमिलितं घनसारशीतं कस्तूरिकासुरभितभ्रमरावलीढम् । सर्वाङ्गलेपनसुखं मलयोद्भवं ते मातः समर्प्य परमं प्रमदं भजामि ॥

५०

प्र०

पुष्प—नानाभिधानि सुरभीणि मनोहराणि गुञ्जन्मधुव्रतकुलैः परिवारितानि। सम्फुल्लपाटलिसरोज-
मुखानि मातः! पुष्पाणि ते चरणयोरहमर्पयामि। आवरणपूजा—बिन्दौ—श्रीगायत्रीदेव्यै नमः १
अभीष्टसिद्धिं मे० प्रथमावरणार्चनम्॥ त्रिकोणे—स्वाग्रत आरभ्य कोणत्रये प्रादक्षिण्येन—
भगवत्यै नमः १ सावित्र्यै० २ सरस्वत्यै० ३ कोणान्तराले—कल्पितवह्निवारुणेशानदिक्षु—
ब्रह्मणे नमः १ विष्णवे० २ रुद्राय० ३ अभीष्टसिद्धिं मे देहि शरणागतवत्सले। भक्त्या
समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्॥ ततः कर्णिकायाम्—आदित्याय नमः १ परिधौ—चतुर्दिक्षु-
भास्कराय नमः १ रवये नमः २ प्रभायै० नमः ३ सन्ध्यायै० नमः ४ इति तृतीयावरणार्चनम्।
अग्न्यादिकोणेषु—ब्रह्मणे हृदयाय नमः १ विष्णवे शिरसे स्वाहा २ रुद्राय शिखायै० वषट् ३
ईश्वराय कवचाय हुम् ४ ततः देव्याः पुरतः—सदाशिवाय नेत्रत्रयाय वौषट् १ ततः पुरत
आरभ्य केसरचतुर्दिक्षु सर्वात्मने अस्त्राय फट्। अभीष्ट० चतुर्थी०। अष्टदलेषु—प्रह्लादिन्यै
नमः १ प्रभायै० २ नित्यायै० ३ विश्वम्भरायै० ४ विलासिन्यै० ५ प्रभावत्यै० ६ जरायै० ७
शान्त्यै० ८ इति० पञ्चमावर०। ततः पुरत आरभ्य दलेष्वेव—कान्त्यायै नमः १ दुर्गायै० २

सरस्वत्यै० ३ विश्वरूपायै० ४ विशालायै० ५ ईशायै० ६ व्यापिन्यै० ७ विमलायै० ८ इति षष्ठावरणा० । ततः पुरतः दलेष्वेव—तमोपहारिण्यै नमः १ सूक्ष्मायै० २ विश्वयोन्यै० ३ जयायै० ४ पद्मालयायै० ५ परायै० ६ शोभनायै० ७ भद्ररूपायै० ८ इति सप्तमावर० । ततः पुरत आरभ्य दलाग्रेषु—ब्राह्म्यै नमः १ माहेश्वर्यै नमः २ कौमार्यै० ३ वैष्णव्यै० ४ वाराह्यै० ५ इन्द्राण्यै० ६ चामुण्डायै० ७ अरुणायै० ८ (पद्मपादाचार्यमते—महालक्ष्मीं सम्पूज्य पुरतोरुणमर्चयेत् ।) इति अष्टमा० । ततो बहिः—चतुर्दिक्षु—चन्द्राय नमः १ बुधाय० २ बृहस्पतये० ३ शुक्राय० ४ आग्नेयादिकोणेषु—भौमाय नमः १ शनये नमः २ राहवे नमः ३ केतवे नमः ४ इति नवमा० । पूर्वादिदिक्षु—चतुरस्र—इन्द्राय नमः १ अग्नये० २ यमाय० ३ निर्ऋतये० ४ वरुणाय० ५ वायवे० ६ सोमाय० ८ ईशानाय० ८ अनन्ताय० ९ ब्रह्मणे १० । इति दशमा० । पुनस्तत्रैव वज्राय नमः १ शक्तये० २ दण्डाय० ३ खड्गाय० ४ पाशाय० ५ अङ्कुशाय० ६ गदायै० ७ त्रिशूलाय० ८ चक्राय० ९ पद्माय नमः १० सौभाग्यद्रव्य—

सौभाग्यलक्षणमिदं परमं सतीनां सिन्दूरकुङ्कुममुखं वरवस्तुजातम् । स्वीकृत्य सर्वसुरसेवितपादपद्मे

प्र०
५९१

प्र०

५६२

सौभाग्यमुज्ज्वलतरं कृपया प्रयच्छ ।। धूप—धूपं दशाङ्गपरिमेदुरभासमन्तादाविर्भवत्परिमलाकुलितान्तरालम् । देवि ! प्रसीद सदये रविमण्डलस्थे ! सद्यो गृहाण वरराजतपात्रसंस्थम् ।। दीप—अन्तर्बहिस्तिमिरवारणकारणं च सद्वर्तिपञ्चकयुतं घृतपूरपूतम् । ज्योतिर्मयि ! त्रिभुवनाऽवनचारुशीले ! गायत्रि ! दीपमिममम्ब ! समर्पयामि ।। सौवर्णपात्रविहितं विविधप्रभेदं पञ्चप्रकारमपि षड्रससंयुतं च । आस्वाद्यमम्ब ! पुरतस्तव देवमातर्नैवेद्यमद्य मधुरं समुपाहरामि ।। ताम्बूल—एलोल्लसत्परिमलं वदनाम्बुजातबालातपायितमुदारसुगन्धसारम् । ताम्बूलमम्ब ! करुणावरुणालये ते मातर्गृहाण पुरतः परिकल्पयामि । दक्षिणा—मातर्द्विजेन्द्रकुलवन्दितपादपद्मे ! भक्त्या भवत्करसरोरुहयोर्वितीर्णाम् । पूजाविधानमहितां नवरत्नरूपां तां दक्षिणां निखिलदेवनुते ! गृहाण ।। प्रदक्षिणा—प्रदक्षिणीकृत्य वपुस्त्वदीयं ज्योतिर्मयं मातरुदारभावे । कृतार्थयामि च्युतपापजालं निजं शरीरं जगदम्ब ! सद्यः ।। नमस्कार—सरसिजनयने ! विरञ्चिविष्णुप्रमुखसुरेन्द्रनिषेविताङ्घ्रिपद्मे ! । सकलनिगममूलबीजभूते ! जय जय देवि ! नमो नमस्ते ।। पुष्पाञ्जलि—स्फुरत्परिमलाकुलभ्रमरगुञ्जनान्मञ्जुलो मरन्दभरमेदुरो मलयजाऽवली-

प्र०

५६२

ढान्तरः । सभक्ति तव पादयोर्यमिहार्प्यते मानसाऽनुरागरसमन्थरं विकसितप्रसूनाञ्जलिः ॥

(अग्निपूजनम्)

ध्यान—देवाग्रगण्योऽस्यनल ! त्वमेव विश्वावसो ! विश्वविषादहारिन् । पूतात्मभिर्ध्यातम-शेषकार्ये वन्दे प्रभुं वायुसखं विशालम् । अवाहन—प्रवर्धमानस्य मलस्यहारी वनस्य वंशेषु दवानलस्त्वम् । विवर्धमानौर्व ! समुद्रसान्द्रे सानन्दमायाहि मदर्थमत्र ॥ आसन महार्हसिंहासन-मच्छशोभं शुभाषितैर्भाषितमङ्कमस्ति । कल्याणकारिन् ! मुदितेन चैतद् गृहाण चित्तेन कृपीट-योने ॥ पाद्य—अनेकतीर्थोपहृताः किलापश्चानीय सानन्दमिह स्थितास्ताः तासां समुत्पादि-तमद्य पाद्यं गृहाण देवेश ! जगन्निवास ! ॥ अर्घ्यं—जलजचम्पकपुष्पचयान्वितं रुचिरमर्घ्यमनर्घ्य-करस्थितम् । प्रतिगृहाण धनञ्जय ! सादरं सकलसारमयं हि यदुत्तमम् ॥ आचमनीयजल—मदनवर्ष्म-विनाशक ! पावक ! द्विजमुखे सुखसद्मनि वासक ! । प्रतिगृहाण सपुष्पसमन्वितं ललितमा-चमनं सुखपूर्वकम् ॥ मधुपर्क—अधिकतामधियाति सितस्य यः स मधुपर्क इतः समुपस्थितः । दिनकरस्य श्रमस्य विनाशकः प्रतिगृहाण प्रियं समुपागतम् ॥ पञ्चामृत—सौवर्णपात्रधृतप्रीति-

विवर्धनेन पञ्चामृतेन मधुना पयसा घृतेन । मिश्रीकृतेन सितया शुभया च दध्ना वह्निर्दधातु
हृदये करुणामयेऽस्मिन् ।। शुद्धोदकजल—श्रीमल्लिकादिकुसुमैश्च सुवासितेन स्नानीयचूर्णसकलेन
विराजितेन । स्नानं कुरुष्व रुचिरेण जलेन तेन प्रेम्णा ममार्तिकृपणस्य प्रियोन्नतिः स्यात् ।।
वस्त्र—ब्रह्माण्डमेतद्दययाऽप्यखण्डं सम्पन्नमेभिर्वसनैस्तनोषि । तस्मै प्रदेयः किमु वस्त्रखण्ड-
स्तथाऽपि भावोऽस्तु परीक्षणाय ।। यज्ञोपवीत—आलिङ्ग्यते यस्य शताग्रभावं पूता विमुक्ता-
वपुषऽधमास्ते । यज्ञोपवीतं किमु तस्य पूर्त्यै दीयेत भक्तेस्तु समर्थनाय ।। उत्तरीयवस्त्र—श्रद्धातुरो
यत्र मनस्तु सूत्रं भक्तिं च वेमामतिमानयुग्मम् । हृत्कौलिको मे विमलोत्तरीयं तनोमि तत्ते
तनुकल्पवल्ल्याम् ।। गन्ध—अमन्दगन्धं विकिरन्ति यत्र वृन्दारकाः पृच्छति तत्र को माम् । मयाऽपि
हेनाथ सदीपनीतं द्रव्यं सुगन्धं विमलं गृहाण ।। अक्षत—पुष्पाक्षतानक्षतपुण्यराशिरादाय तुभ्यं
समुपस्थितोऽस्मि । एतर्हि लज्जानतमस्तकोऽस्मि द्रुतं गृहीत्वा कुरु मां कृतार्थम् ।। पुष्प—आसेचनं
पेलवपादयुग्मं कृते कठोरः कुसुमोपहारः । धाष्टर्योद्भवं मेऽत्यपराधमेनं क्षमस्व दीनस्य कुदीन-
बन्धो ।। रक्तचूर्ण—प्रत्यूषकालनिसृतस्य रवेः समानं धूपादिकेन गुरुणाऽपि सुवासितं च ।

प्र० ५९४

श्रीरक्तचूर्णमधिकेन मयाहृतेन प्रीत्या गृहाण हुतभुक् ! परिपालकस्त्वम् ।। धूप—लवङ्गपाटीरज-चूर्णसंयुतं मनुष्यदेवा सुरसौख्यशालिनम् । सद्यः सुगन्धीकृतहर्म्यकोष्ठकं धूपं गृहाणेश सुवासितं तथा ।। दीप—गाढान्धकारस्य महान्तमेनं शत्रुं तथा ज्ञानविशुद्धदेवम् । सद्वर्ति-कर्पूरयुतं प्रदीपं गृहाण देवेश उषर्बुधस्त्वम् ।। नैवेद्य—माणिक्यपात्रे विधिवत्प्रसारितं देवार्हमे-तत्प्रियक्षीरभोजनम् । गृहाण नैवेद्यमिदं सुरोचितं ददामि तुभ्यं मनसा हविर्भुजे ।। ताम्बूल—एला-लवङ्गनिचयैरधिकं सुयुक्तं तूर्णं मया सुविहितं सकलं तदेतत् । ताम्बूलपत्रमधुना भवतः पुरस्ता-दङ्गीकुरुष्व प्रियदेव दयाधिराज ।।

❀ अथ हनुमत्पूजा ❀

आवाहन—श्रीरामचरणाम्भोजयुगलस्थितमानसम् । आवाहयामि वरदं हनूमन्तमभीष्टदम् ।।

ध्यान—कर्णिकारसुवर्णाभं वर्णनीयं गुणोत्तमम् । अर्णवोल्लङ्घनोद्युक्तं तूर्णं ध्यायामि मारुतिम् ।।

आसन—नवरत्नमयं दिव्यं चतुरस्रमनूत्तमम् । सौवर्णमासनं तुभ्यं कल्पये कपिनायक ।।

पाद्य—सुवर्णकलशानीतं जलं सुष्ठु सुवासितम् । पादयोः पाद्यमनघ प्रतिगृहाण प्रसीद मे ॥
अर्घ्य—कुसुमाक्षतसंमिश्रं गृह्यतां कपिपुङ्गव । दास्यामि तेऽञ्जनीपुत्र त्वमर्घ्यं रत्नसंयुतम् ॥
आचमनीयजल—महाराक्षसदर्पघ्न सुराधिपसुरपूजित । वीरध्वज दयासिन्धो गृहाणाचमनीयकम् ॥
पञ्चामृत—मध्वाज्यक्षीरदधिभिः सगुडैर्मन्त्रसंयुतैः । पञ्चामृतैः पृथक् स्नानैः सिञ्चामि त्वां
कपीश्वर ॥ शुद्धोदकस्नान—सुवर्णकलशानीतैर्गङ्गादिसरिदुद्भवैः । शुद्धोदकैः कपीश त्वमभिषिञ्चामि
कपीश्वर ॥ कटिसूत्र—ग्रथितां नवभीरत्नैर्मेखलां त्रिगुणीकृताम् । मौञ्जां मौञ्जीमयीं पीतां गृहाण
पवनात्मज ॥ कौपीन—कटिसूत्रं गृहाणेदं कौपीनं ब्रह्मचारिणः । कौशेयं कपिशार्दूल हरिद्रक्तं
सुमङ्गलम् ॥ उत्तरीयवस्त्र—पीताम्बर सुवर्णाभमुत्तरीयार्थमेव च । दास्यामि जानकीप्राणत्राणकारण
गृह्यताम् ॥ यज्ञोपवीत—श्रौतस्मार्तादिकर्तॄणां साङ्गोपाङ्गफलप्रदम् । यज्ञोपवीतमनघं धारयानिल-
नन्दन ॥ गन्ध—दिव्यकर्पूरसंयुक्तं मृगनाभिसमन्वितम् । सकुङ्कुमं पीतगन्धं ललाटे धारय
प्रभो ॥ अक्षत—नीलोत्पलैः कोकनदैः कह्लारैः कमलैरपि । कुमुदैः पुण्डरीकैर्वा पूजयामि
कपीश्वर ॥ मल्लिकाजातिपुष्पैश्च पाटलैः कुटजैरपि । केतकीबकुलैश्चूतैः पुन्नागैः पर्णकेसरैः ॥

चम्पकैः शतपत्रैश्च करवीरैर्मनोहरैः। पूजये त्वां कपिश्रेष्ठ सबिल्वैस्तुलसीदलैः॥ सुवर्णादिपुष्प—वायुपुत्र नमस्तुभ्यं सपुष्पं सौवर्णकं प्रियम्। पूजयिष्यामि ते मूर्ध्नि नवरत्नसमुज्ज्वलम्॥ आवरणपूजा—बिन्दौ—ॐ हनुमते नमः। षट्कोणे—रामभक्ताय० १ महातेजसे० २ कपिराजाय० ३ महाबलाय० ४ द्रोणाद्रिहारकाय० ५ मेरुपीठकार्चनकारकाय० ६ अष्टदले—सुग्रीवाय० १ अङ्गदाय०। नीलाय० २ जाम्बवते० ३ नलाय० ४ सुषेणाय० ५ द्विविदाय० ६ महारोगविनाशिने० ७ रक्षोघ्नाय० ८ दशदले—विषघ्नाय० १ दिव्यायुधाय० २ व्याधिघ्नाय० ३ चौरघ्नाय० ४ कालरूपाय० ५ महापापहारिणे० ६ भयघ्नाय० ७ ऐरावताय० ८ पुण्डरीकाय० ९ वामनाय० १० द्वादशदले—कुमुदाय० १ अञ्जनाय० २ पुष्पदन्ताय० ३ सार्वभौमाय० ४ सुप्रतीकाय० ५ लक्ष्मणाय० ६ केशरिणे० ७ पवनाय० ८ लङ्काविदारकाय० ९ प्लवगेश्वराय० १० श्रीरामकिङ्कराय० ११ हरीश्वराय० १२। चतुर्दशदले—रुद्रप्रियाय० १ पिङ्गललोचनाय० २ सुरार्चिताय० कपीश्वराय० ३ मुद्रापहारिणे० ४ लङ्काविभञ्जनाय० ५ रामदूताय० ६ अनिलात्मजाय० ७ महाप्रज्ञाय० ८ शिवप्रियाय० ९

प्र० ५६७

प्र०

५६८

लङ्काप्रासादभञ्जनाय० १० कपिश्रेष्ठाय० ११ महाबलाय० १२ अचलोद्धारकाय० १३ भास्करसन्निभाय० १४। षोडशदले—मारुतसूनवे०। अमितविक्रमाय० १ पिङ्गाक्षाय० २ श्यामलाङ्गाय० ३ वानरवीराय० ४ सुग्रीवसख्यकारिणे० ५ सीताशोकविनाशकाय० ६ राममुद्राधराय० ७ भक्ताय० ८ रावणान्तकुलच्छेदकारिणे० ९ मेघनादध्वंसकारिणे० १० वायुपुत्राय० १२ आकाशोदरगामिने० १३ लङ्काप्रासादभञ्जिने० १४ दीर्घलाङ्गूलधारिणे० १५ ब्रह्मपाशनिवारिणे० १६ अङ्गपूजा—ॐ हनुमते नमः पादौ पूजयामि। सुग्रीवसखाय० गुल्फौ०। अङ्गदमित्राय० जंघे०। रामदासाय० उरू०। अक्षघ्नाय० कटिं०। लङ्कादहनाय० पुच्छं०। राममणिप्रदाय० नाभिं०। सागरोल्लङ्घनाय० मध्यं०। लङ्कामर्दनाय० केशावलिं०। सञ्जीवनीहर्त्रे० स्तनौ०। सौमित्रिप्राणदाय० वक्षःस्थलं०। कुण्ठितदशवदनाय० कण्ठं०। रामाभिषेककारिणे० हस्तौ०। मन्त्ररचितरामायणाय० वक्त्रं०। प्रसन्नवदनाय० वदनकपोलौ०। पिङ्गलनेत्राय० नेत्रे०। श्रुतिपारगाय० श्रुतिं०। उर्ध्वपुण्ड्रधारिणे० ललाटं०। मणिकण्ठमालिने० शिरः०। सर्वाभीष्टप्रदाय० सर्वाङ्गं पू०। धूप—सदशाङ्गं शुभं दिव्यं सगुग्गुलमनुत्तमम्।

प्र०

५६८

साध्यं परिमलोद्भूतं धूपं स्वीकुरु पावने ॥ दीपक—घृतपूरितमुज्वालं सितसूर्यसमप्रभम् । अतुलं तव दास्यामि व्रतपूर्त्यै सुदीपकम् ॥ नैवेद्य—स शाकापूपसूपाद्यपायसानि च यत्नतः । स क्षीरदधिसाज्यं च सापूपं घृतपाचितम् ॥ जलम्—गोदावरीजलं शुद्धं स्वर्णपात्राहृतं प्रियम् । पानीयं पावनोद्भूतं स्वीकुरु त्वं दयानिधे ॥ उत्तरापोशन—आपोशनं नमस्तेऽस्तु पापराशितृणानलम् । कृष्णावेणीजलेनैव कुरुष्व पवनात्मज ॥ ताम्बूल—ताम्बूलमनघ स्वामिन् प्रयत्नेन प्रकल्पितम् । अवलोकय नित्यं ते पुरतो रचितं मया ॥ प्रदक्षिणा—यानिकानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि वै । तानि सर्वाणि नश्यन्ति प्रदक्षिणपदे पदे ॥

प्रार्थना—नमो हनुमते तुभ्यं नमो मारुतसूनवे । नमः श्रीरामभक्ताय श्यामश्यामाय ते नमः ॥ सीताशोकविनाशाय राममुद्राधराय च । रावणादिकुलोच्छेदकारिणे ते नमो नमः ॥ मेघनादवरध्वंसकारिणे भयकारिणे । वायुपुत्राय वीराय आकाशोदरगामिने ॥ वनपालशिरश्छेत्रे

लङ्काप्रासादभञ्जिने । अपराधसहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वर ॥ अपराधो भवत्येव सेवकस्य पदे पदे । कोऽपरः क्षमतां लोके केवलं स्वामिनं विना ॥ भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलम्बनम् । त्वयि जातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो ॥ यदुक्तं भक्ति भावेन पत्रं पुष्पं जलं जलम् । निवेदितं च नैवेद्यं गृहाण मामनुकम्पय ॥ इति पठित्वा देवस्य दक्षिणकरे पूजार्पणजलं दद्यात् ।

* अथ सूर्यपूजनप्रयोगः *

कर्ता पवित्रदिने कुशाद्यासनोपरि उपविश्य गणेशादिपूजनं कृत्वा सर्वतोभद्रपीठे गौरीतिलके वा ब्रह्मादिदेवानावाह्य सम्पूज्य मध्ये, कलशं संस्थाप्य तत्र सुवर्णरजतताम्राद्यन्यतम- पात्रे पट्टवस्त्रे वा श्रीसूर्ययन्त्रमालिखेत् । तद्यथा—अष्टगन्धेन रक्तचन्दनेन वा मध्ये बिन्दुं विरच्य ततः षट्कोणं, वृत्तम्, अष्टदलं पुनः वृत्तम्, द्वादशदलं चतुरस्रं च क्रमेण कृत्वा परितः रेखात्रयं दिक्षु विलिख्य तथैव छायासंज्ञादिप्रतिमां सूर्यरथस्य प्रतिमां च संस्थाप्य विमलं

प्र० ६००

सुशोभितं मण्डपं ध्यात्वा तत्र नानारत्नरचितं मुक्ताद्यलङ्कृतं सिंहासनं स्मरेत् । ततः पूर्वद्वारे—ॐ द्वारश्रियै नमः । ॐ गणपतये नमः । पश्चिमद्वारे—ॐ द्वारश्रियै नमः । ॐ दुर्गायै नमः । उत्तरद्वारे—ॐ द्वारश्रियै नमः । ॐ महालक्ष्म्यै नमः । इति द्वारपालान् सम्पूज्य । अथ न्यासं कुर्यात् । ॐ अर्काय नमः मूर्ध्नि । ॐ रवये नमः ललाटे । ॐ सूर्याय नमः नेत्रयोः । ॐ दिवाकराय नमः कर्णयोः । ॐ भानवे नमः नासिकायाम् । ॐ भास्कराय नमः मुखे । ॐ पर्जन्याय नमः ओष्ठयोः । ॐ तीक्ष्णाय नमः जिह्वायाम् । ॐ सुवर्णरेतसे नमः कण्ठे । ॐ तिग्मतेजसे नमः स्कन्धयोः । ॐ पुष्णे नमः बाह्वोः । ॐ मित्राय नमः पृष्ठे । ॐ वरुणाय नमः दक्षिणहस्ते । ॐ त्वष्ट्राय नमः वामहस्ते । ॐ उष्णकराय नमः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः । ॐ भानुमते नमः हृदये । ॐ यमाय नमः उदरे । ॐ आदित्याय नमः नाभौ । ॐ हंसाय नमः कटयाम् । ॐ रुद्राय नमः ऊर्वोः । ॐ गोपतये नमः जान्वोः । ॐ सवित्रे नमः जङ्घयोः । ॐ विवस्वते नमः पादयोः । ॐ प्रभाकराय नमः जुल्फयोः । ॐ तमोध्वंसाय नमः सर्वाङ्गे । अथ षडङ्गन्यास—रत्नादेव्यै अङ्गुष्ठाभ्यां नमः । ॐ छायादेव्यै तर्जनीभ्यां नमः ।

ॐ संज्ञायै मध्यमाभ्यां नमः। ॐ विश्वधात्र्यै० अनामि०। ॐ अश्विन्यै० कनिष्ठिका०। ॐ दिव्यदेहायै० करतलपृष्ठा०। एवं हृदयादि। ॐ ह्रां सत्यतेजसे ज्वलज्ज्वालामालिने मणिकुम्भाय फट् स्वाहा अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ह्रीं ब्रह्मतेजसे ज्वलज्ज्वाला० तर्जनीभ्यां०। ॐ ह्रूँ विष्णुतेजसे० मध्यमा०। ॐ ह्रैं रुद्रतेजसे० अनामिकाभ्यां नमः। ॐ ह्रौं अग्नितेजसे० कनिष्ठिका०। ॐ ह्रः सर्वतेजसे० करतलपृष्ठाभ्यां०। एवं हृदयादि। ॐ भूर्भुवः स्वरोमितिदिग्बन्धः। ॐ ह्रां अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनी०। ॐ ह्रूं मध्यमा०। ॐ ह्रैं अनामि०। ह्रौं कनिष्ठिका०। ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां०। एवं हृदयादि। ॐ भूर्भुवः स्वरोमितिदिग्बन्धः। ॐ हं साम्-अङ्गु०। ॐ हं सीं तर्जनीभ्यां०। ॐ हं सूं मध्य०। ॐ हं सैं अनामिका०। ॐ हं सौं कनिष्ठिका०। ॐ हं सः करतलपृ०। एवं हृदयादि। ॐ भूर्भुवः स्वरोमितिदिग्बन्धः। ॐ भास्कराय नमः शिखायाम्। ॐ सू० ललाटे। ॐ भान० भ्रूमध्ये। ॐ जगच्चक्षुसे नमः चक्षुषोः। ॐ त्वष्ट्रे० मुखे। ॐ भानवे० कण्ठे। ॐ तिमिरनाशाय० स्तनयोः। ॐ जातवेदसे नमः नाभौ। ॐ कालात्मने नमः कट्याम्। ॐ उग्रवपुषे नमः गुह्ये। ॐ तेजोवपुषे० जङ्घयोः। ॐ

प्रभाकराय० पादयोः । इति न्यासः । अथ कलशपूजनम्—कलशमुखे—ॐ विष्णवे नमः
विष्णुमा० । ॐ लक्ष्म्यै० लक्ष्मीमा० । कण्ठे—ॐ रुद्राय० रुद्रमा० । ॐ गौर्यै० गौरीमा० ।
मूले—ब्रह्मविष्णुभ्यां० ब्रह्मविष्णुमा० । ॐ सावित्र्यै० सावित्रीमा० । मध्ये—ॐ मातृ-
गणेभ्यो० मातृगणान् आ० कुक्षौ—ॐ सप्तसागरेभ्यो० सप्तसागराना० । ॐ सप्तद्वीपेभ्यो०
सप्तद्वीपानावा० । ॐ वसुन्धरायै० वसुन्धरामा० । ॐ गङ्गायै० गङ्गामा० । ॐ यमुनायै०
यमुनामा० । ॐ सरस्वत्यै० सरस्वतीमा० । ॐ ऋग्वेदाय० ऋग्वेदमा० । ॐ यजुर्वेदा०
यजुर्वेदमा० । ॐ सामवेदा० सामवेदमा० । ॐ अथर्ववेदा० अथर्ववेद० । ॐ अष्टपर्वतेभ्यो०
अष्टपर्वतानावा० । ॐ अष्टदिग्गजेभ्यो० अष्टदिग्गजानावा० । ॐ गायत्र्यै० गायत्रीमा० ।
ॐ सावित्र्यै० सावित्रीमा० । ॐ सरस्वत्यै० सरस्वतीमा० । ॐ शान्त्यै० शान्तिमा० । ॐ
पुष्ट्यै० पुष्टिमा० । ॐ तुष्ट्यै० तुष्टिमा० । कलशस्य० इत्यादि पठित्वा गन्धपुष्पाणि प्रक्षिप्य
ॐ भूर्भुवः स्वरोमित्यन्तं पठित्वा गायत्रीं सर्वां वाचयित्वा प्रणवेन द्वादशवारमभिमन्त्र्य
ॐ सूर्याय० । ॐ रवये० । ॐ विवस्वते० । ॐ खगाय० । ॐ अरुणाय० । ॐ मित्राय० ।

प्र०
६०३

ॐ आदित्याय० । ॐ अंशुमते० । ॐ भास्कराय० । ॐ सावित्रे० । ॐ पूष्णे० । ॐ गभस्तये० । इत्यावाह्य पूजयेत् । अथ शंखाराधनम्——ततः पात्रे उदकमादाय शंखं पूरयित्वा गंधाक्षतपुष्पाणि प्रक्षिप्य ॐ पुरा त्वं सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे । निर्मितः सर्वदेवानां पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥ गर्भादेवादिनारीणां विशीर्येण तव प्रियः । तव नादेन पातालं पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ शंखमध्ये स्थितं तोयं भ्रामितं केशवोपरि । अङ्गलग्नमनुष्याणां ब्रह्महत्यायुतं दहेत् ॥ ३ ॥ शंखिनी शोधिनी चैव गरुडं धेनुमेव । शूलिनी चक्रिणी चैव कौमुदी प्रणमोदके ॥ ४ ॥ देवस्य त्वेति मूर्ध्नि त्रिवारमभिषिच्य शेषोदकेन कलशद्रव्याणि आत्मानं संप्रोच्य पुनः सम्पूर्य ॐ लक्ष्म्यै० । ॐ सरस्वत्यै० । ॐ तुष्ट्यै० । पुष्ट्यै० । ॐ ब्रह्माण्यै० । ॐ अनुमायायै० । ॐ पद्मगर्भायै० । ॐ पद्महस्तायै० । इति पूजयेत् । ततः द्वादशतन्तुनिर्मितसुदृढवर्तिकायुतमेकखण्डदी पृथक् पृथक् वा प्रज्वालयेत् । अथ पीठपूजा——ॐ आधारशक्त्यै नमः । ॐ मूलप्रकृत्यै० । ॐ कूर्माय० । ॐ अनन्ताय० । ॐ वराहाय० । ॐ पृथिव्यै० । ॐ सुवर्णमण्डलाय० । ॐ रत्नसिंहाय० । ॐ धर्माय० । ॐ अधर्माय० ।

प्र०

६०५

ॐ ज्ञानाय० । अज्ञानाय० । ॐ वैराग्याय० । ॐ अवैराग्याय० । ॐ ऐश्वर्याय० । ॐ अनैश्वर्याय० । ॐ ऋग्वेदाय० । ॐ यजुर्वेदाय० । ॐ सामवेदाय० । ॐ अथर्ववेदाय० । ॐ कृतयुगाय० । ॐ त्रेतायुगाय० । ॐ द्वापराय० । ॐ कलियुगाय० । ॐ मन्दराय० । ॐ पारिजाताय० । ॐ सन्तानाय० । ॐ कल्पवृक्षाय० । ॐ मूलप्रकृत्यै० । ॐ स्कन्दाय । ॐ नालाय० । ॐ पत्रेभ्यो० । ॐ पद्मेभ्यो० । ॐ यक्षेभ्यो० । ॐ केसरेभ्यो० । दलेभ्यो० । ॐ कर्णिकायै० । ॐ सूर्यमण्डलाय० । ॐ सोममण्डलाय० । ॐ वह्निमण्डलाय० ॐ ब्रह्मणे० । ॐ विष्णवे० । ॐ रुद्राय० । ॐ सत्त्वाय० । ॐ रजसे० । ॐ तमसे० । ॐ आत्मने० । ॐ अन्तरात्मने । ॐ परमात्मने० । ॐ चिदात्मकाय० । ॐ भूः पुरुषाय० । ॐ भुवः पुरुषाय० । ॐ स्वः पुरुषाय० । ॐ भुर्भूवःस्वः पुरुषाय० । ॐ अरुणाय० । ततः प्रतिमायाम् । 'ॐअश्मन्नूर्जम्' इत्यनुवाकेन सू 'सूक्तेन विष्णुसूक्तेन चाभिषेकं कृत्वा देवं जलादबहिर्निष्कास्य यन्त्रोपरि विन्यस्य प्राणप्रतिष्ठां कुर्यात् । अथाङ्गपूजा—ॐ आदित्याय नमः पादौ पूजयामि ।

प्र०

६०६

ॐ दिवाकराय० गुल्फौ पू० । ॐ भास्कराय० जङ्घे पू० । ॐ प्रभाकराय जानुनि पू० । ॐ सहस्रांशवे नमः उरु पू० । पूष्णे० गुह्यं पू० । ॐ त्रैलोकेशाय० कटिं पू० । ॐ हरिदश्वाय नाभिं पू० । ॐ रवये० उदरं पू० । ॐ दिवाकराय० हृदयं पू० । ॐ दशात्मकाय० स्कन्धौ पू० । अहस्कराय० हस्तौ पू० । ॐ त्रयीमूर्तये० कण्ठं पू० । ॐ सूर्याय० मुखं पू० । ॐ ब्रह्म-रूपाय० कर्णौ पू० । ॐ महेश्वराय० नेत्रं पू० । ॐ विष्णवे० ललाटं पू० । ॐ भाजवे० शिरः पू० । ॐ दिवाकराय० सर्वाङ्गं पू० ।

सूर्यस्य—अम्भोजिनीदलविलासि करोसि नाथ पादौ दधासि कमलेषु सुकोमलेषु । सौजन्यशीलमनुचिन्त्यनमाम्यहं त्वां सम्प्रार्थये च नवपीठमहाधिरोढुम् ॥ १ ॥ वृष्टिं तनोषि विदधासि च कं जनेषु जीवन्ति प्राणिनिकरा महसा तवैव । तस्मात्समागतवति त्वयि पद्मनाथे पाद्यं ददामि सहसा पदयोः कमेव ॥ २ ॥ गंगाजलेन यमुनामयजीवनेन पाटीरचूर्णनिकरेण विनिर्मितं यत् । सुस्वादुशीतलमनिन्द्यगुणैः समेतं दत्तं मयार्घ्यमिदमर्क गृहाण सद्यः ॥३॥ दुःखौ-

प्र० ६०७

घदैत्यदलनार्जितसुव्रतेन सौवर्णपात्रनिहितं विमलं करेण। शुद्धं परागमहितं मधुरं विविक्तं सूर्य त्वदीयमिदमस्ति गृहाण पेयम् ॥४॥ देवेशमानपरिरक्षणचिन्तयैव धात्रामृतन्तु निहितं न तु नाम तस्य। तत्कीर्त्यतेऽत्र पय एव वसुन्धरायां भानो गृहाण मधुरं तदिदं समोदम् ॥५॥ पीयूषतुल्यरजनीशमित्रं शीतं परीतञ्च सितारसेन। जाड्यापहारन्तव कीर्तनेन स्वीकार्यमेतद् दधि च त्वयैव ॥ ६ ॥ गन्धेन पूर्णं सरसं पवित्रं विनिर्मितं यन्मधुमक्षिकाभिः। तदद्य भानो मददायि रूपं क्षौद्रं निधेहि स्वमुखे पवित्रे ॥ ७ ॥ रसस्त्वया तीव्रकरैर्निपीतस्तथामृतं देवपरम्परासु। सितानलोके भ्रमताशिता या मयार्पितां तमिधुना गृहाण ॥ ८ ॥ आयुष्करं हृद्यमथानवद्यं सद्यः सुखाकारमनिन्द्यदेहम्। पात्रे घृतं शुभ्रघृतं मदीयं सहस्रभानो ससुखं गृहाण ॥ ९ ॥ विश्वात्मकोऽसि भगवन्करुणाकरोसि प्रीतिं करोषि बहुजाड्यमपाकरोषि। जाने दयालुरसि नाथ तथापि शङ्कां शीघ्रं जहासि यदि वस्त्रमलङ्करोषि ॥१०॥ कौशेयसूत्रैः कलितं पवित्रं महार्घमेतद्बहुगन्धयुक्तम्। तवोपयुक्तं मकरन्दसिक्तं लोकोत्तरं धारय चोत्तरीयम् ॥ ११ ॥ कौशेयसूत्रेण विनिर्मितं यत्

प्र० ६०७

गङ्गाम्बुना यच्च कृतं पवित्रम् । तद्दक्षिणस्कन्धनिवेशनाय समर्पये पूषन् यज्ञसूत्रम् ॥ १२ ॥ पाटीरचूर्णपरिमिश्रितवारिपृक्तं कश्मीरजेन कुमुदच्छविनामलेन । रक्तोत्पलेन च तथा परिपूरितं तं गन्धं गृहाण दिननाथ महोत्सवेऽस्मिन् ॥ १३ ॥ यथायथा त्वां भजते प्रवीणस्तथास्तथा भाग्यधनं ददासि । मदीयमप्यक्षतमस्तु पुण्यं तथोपहारोक्रियतेऽक्षतस्ते ॥ १४ ॥ अनन्तसौन्दर्य-समर्थनाय कण्ठे त्वदीये रुचिरा भवेद्या । गन्धांशमन्दीकृतभृङ्गमाला समर्प्यते सा नवपुष्पमाला ॥ १५ ॥ द्रव्यस्य भूरिनिवहं न दधामिभानो नाप्यस्ति पूजनविधौ विमलामतिर्मे । भक्त्या प्रणम्य परया पदयोस्तवाहं प्रागर्पयामि तुलसीदलमद्य शुद्धम् ॥ १६ ॥ कूपोपकण्ठमुपतिष्ठति या सदैव प्रीत्या परोपकरणस्य फलान्यधीते । एकाङ्घ्रिया घनतपस्कुरुते विविक्ते दूर्वां च तामिह ददामि पदोः समग्राम् ॥ १७ ॥ महीयस्ते तेजो जगति विदितं विघ्नकुलिशं करैरुग्रैर्यस्मादवसि धरणीमिति च पतिताम् । प्राणश्यन्तं सन्तं दिशसि सुकृतं भावविदितमवीरं सौभाग्यं भवतु तव-पादेष्विन् ! शुभम् ॥ १८ ॥ पुष्टिं तनोति विमली कुरुते शरीरं वातादिदोषनिकरानचिरेण

प्र० ६०९

हन्ति । तद्धूपद्रव्यमधुनाकमलैकबन्धो ! दत्तं मया कुरु करे दिश भक्तिभावम् ॥ १९ ॥ त्वच्चण्डभानुनिकरैर्मलिनीकृतेक्षणा दीपं निधाय करयोः पथि यान्ति भक्ताः । दोषं निवार्य घृतदीपममुं गृहीत्वा तेजस्विनो कु जनानवधामराशे ॥ २० ॥ पन्नगोरगस्तकरयोर्निहितं हिताय शिष्य त्वमेत्य गिरिणा मलयेन पूर्वम् । तद्दीयते सविनयं करयोस्तवार्क ! गन्धानुलेपनमिदं करमर्दनाय ॥२१॥ मधुरं शुभवर्णभूषितमभितः पक्वमिदं रसान्वितम् । दिननाथ गृहाण मे फलं सफलं मे कुरु कर्म पूषण ॥२२॥ यज्ञस्य साफल्यविधौ विशिष्टां शिष्टैः प्रदत्तां विनयानमद्भिः । श्रेयस्करीं प्रीतिपुरस्कृतां तां समर्पयाम्यर्क सुदक्षिणां ते ॥ २३ ॥ स्वभक्तिभावस्य शुभानि नीत्वा करौ च विज्ञाप्य हृदा समन्तात् । विनिर्मिता या सुमनोऽभिरामा तामञ्जलिं सूर्य कुरुष्व रिक्ताम् ॥ २४ ॥

अथावरणदेवता प्रथमविन्दौ मध्ये—सूर्याय नमः सूर्यमा० । तदक्षिणे—ॐ रत्नादेव्यै नमः रत्नादेवीमा० । ॐ छायायै नमः छाया० । ॐ संज्ञायै नमः संज्ञा० । इति प्रथमावरणार्चनम् ।

प्र० ६०९

षट्दले—ॐ गुं गुरुभ्यो नमः गुरूना० । पं० परमगुरुभ्यो० परमगुरूना० ।-परमेष्ठीगुरुभ्यो० परमेष्ठी-गुरूना० । पं परात्परगुरुभ्यो० ॐ पं परात्परगुरूना० । ॐ हराय नमः हरमावा० । ॐ गणेशाय नमः गणेश० । इति द्वितीयावरणार्चनम् । अष्टदले—ॐ त्रैलोक्यप्रकाशाय० त्रैलोक्यप्रका० । ॐ विश्वतोमुखाय नमः विश्वतोमु० । ॐ विवस्वते नमः विवस्वन्तमा० । ॐ सूक्ष्मात्मने नमः सूक्ष्मात्मनमा० । ॐ सर्वतोमुखाय नमः सर्वतोमुखमा० । ॐ सुवर्णरेतसे नमः सुवर्णरेतसमा० । ॐ मार्तण्डाय नमः मार्तण्डमा० । ॐ सहस्रांशवे नमः सहस्रांशमा० । इति तृतीयावरणा० । पुनः तत्रैव पूर्वादिक्रमेण अष्टदले—ॐ ब्राह्मै नमः ब्राह्मीमा० । ॐ माहेश्वर्यै० माहेश्वरीमा० । ॐ कौमार्यै नमः कौमारीमा० । ॐ वैष्णव्यै नमः वैष्णवीमा० । ॐ वाराह्यै नमः वाराहीमा० । ॐ नारसिंह्यै नमः नारसिंहीमा० । ॐ ऐन्द्र्यै नमः ऐन्द्रीमा० । ॐ चण्डिकायै नमः चण्डिकामा० । इति चतुर्थावरणार्चनम् । अष्टदलाग्रेषु—ॐ दिनेशाय नमः दिनेशमा० । ॐ इन्द्राय नमः इन्द्रमा० । ॐ विवस्वते नमः विवस्वन्तमा० । ॐ पतङ्गाय नमः पतङ्गमा० । ॐ धात्रे नमः धातारमा० ।

प्र० ६१०

ॐ अर्यम्णे नमः अर्यम्णमा० ! ॐ सवित्रे नमः सवितारमा० । ॐ शङ्करात्मने नमः शङ्करात्मानमा० । इति पञ्चमावरणार्चनम् । अथ द्वादशदलेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ अरुणाय नमः अरुणमा० । ॐ देवाङ्गाय नमः देवाङ्गमा० । ॐ भानवे नमः भानुमा० । ॐ रुद्राय नमः रुद्रमा० । ॐ विष्णवे नमः विष्णुमा० । ॐ गभस्तये० गभस्तिमा० । यमाय० यममा० । ॐ सुवर्णरेतसे नमः सुवर्णरेतसमा० । ॐ दिवाकराय नमः दिवाकरमा० । ॐ मित्राय नमः मित्रमा० । ॐ ब्रह्मणे नमः ब्रह्माणम० । ॐ सहस्रकिरणाय नमः सहस्रकिरणमा० । तत्रैव पूर्वादिक्रमेण——ॐ मित्रायै नमः मित्रामा० । ॐ तीव्रायै नमः तीव्रामा० । ॐ नन्दायै० नन्दामा० । ॐ वज्रहस्तायै नमः वज्रहस्तामा० । ॐ संज्ञायै नमः संज्ञामा० । ॐ भोगदायै नमः भोगदामा० । ॐ कामदायै नमः कामदामा० । सुभगायै नमः सुभगामा० । ॐ स्तुतायै नमः स्तुतामा० । ॐ चिन्तायै नमः चिन्तामा० । ॐ अश्विन्यै नमः अश्विनी० । ॐ सकलेश्वर्यै नमः सकलेश्वरीमा० । इति सप्तमावरणार्चनम् । चतुरस्रेषु पूर्वादिक्रमेण—ॐ

प्र० ६११

प्र०

६१२

इन्द्राय नमः इन्द्रमा० । ॐ अग्नये नमः अग्निमा० । ॐ यमाय० यममा० । ॐ निर्ऋतये निर्ऋतिमा० । ॐ वरुणाय० वरुणमा० । ॐ वायवे० वायुमा० । ॐ सोमाय० सोममा० । ॐ ईशानाय० ईशानमा० । ॐ ब्रह्मणे० ब्रह्माणमा० । ॐ अनन्ताय० अनन्तमा० । ॐ इत्यष्टमावरणार्चनम् । तत्रैव क्रमेण आयुधानि—ॐ वज्राय० वज्रमा० । ॐ शक्तये० शक्तिमा० । ॐ दण्डाय० दण्डमा० । ॐ खड्गाय० खड्गमा० । ॐ पाशाय० पाशमा० । ॐ अंकुशाय० अंकुशमा० । ॐ गदायै० गदामा० । ॐ त्रिशूलाय० त्रिशूलमा० । ॐ पद्माय० पद्ममा० । ॐ चक्राय नमः चक्रमा० । इति नवमावरणार्चनम् । पूर्वपश्चिमयोः—ॐ अश्विनीकुमाराभ्यां नमः अश्विनीकुमारमा० । ॐ अष्टवसुभ्यो नमः अष्टवसूनावा० इति दशमावरणार्चनम् । ॐ ऋग्वेदाय नमः ऋग्वेदमा० । ॐ यजुर्वेदाय नमः यजुर्वेदमा० । ॐ सामवेदाय नमः सामवेदमा० । ॐ अथर्ववेदाय नमः अथर्ववेदमा० । इत्येकादशमावरणार्चनम् । रथाग्रे—ॐ शक्त्यै नमः शक्तिमा० । ॐ धर्माय नमः धर्ममा० । अधर्माय नमः अधर्ममा० । ॐ त्रयीमयाय

प्र०

६१२

नमः त्रयोमयमा० । ॐ छायासूर्याभ्यां नमः छायासूर्यमा० । ॐ रत्नादित्याय नमः रत्ना-
दित्यमा० । अश्विनीभास्कराभ्यां नमः अश्विनीभास्करमा० । ॐ संज्ञादित्याभ्यां नमः संज्ञा-
दित्य० । ॐ धर्मराजाय नमः धर्मराजमा० । ॐ शनये नमः शनिमा० । ॐ सावर्णिमन्वन्तराय
नमः सावर्णिमन्वन्तरमा० । ॐ यमुनायै नमः यमुनामा० । ॐ तापिन्यै नमः तापिनीमा० ।
इति द्वादशावरणार्चनम् ।

* रथार्चनम् *

त्वं प्राणदातारमनन्तभानुं दिवादिशं धारयसि स्वमूर्ध्ना । भारोद्वहेते तृणकल्पमेत-
त्प्रेम्णासनं स्यन्दन मे गृहाण ॥ १ ॥ दिने दिने पुष्करलङ्घनाय त्वं सप्तकं धारयसे हरीणाम् ।
तथापि पादैश्चलसोतिहेतोर्गृहाण पाद्यं सुखदं पदेषु ॥ २ ॥ सुधाम्बुधौमिष्टमनन्तश्रेयो लावण्य-
मङ्गीकुरुषे च सिन्धौ । नीतञ्च यद्भक्तिरसेन युक्तं त्वयार्घ्यमश्वैः सममद्यपेयम् ॥ ३ ॥ त्वया
कृतः कालकलाविभागः तथर्तवः प्रीतिपरास्तवैव । अहं तु प्रीतिं कलये शताङ्ग ! गृहासि

प्र०

६१४

चेदाचमनीयमेतद् ॥४॥ यद्धेनुभिः शुद्धतृणानि भुक्त्वा प्रकल्पितं हृद्यमिदं विविक्तम्। पयोऽमृतं भक्तिपरो नरोऽयं ददाति चक्रिन् सततं गृहाण ॥५॥ न चन्द्ररूपं विमलं स्वरूपं गन्धेन कल्हार-सरोऽस्ति यस्य। हृद्येन दुग्धेन विनिर्मितं यत् दधित्वमेतत् रथ सन्निधे हि ॥६॥ परोपकारार्पित-विग्रहाभिर्विनिर्मितं यन्मधुमक्षिकाभिः। शताङ्गभानो सह सप्तवाहैरङ्गीकुरुष्वाद्य मधुत्वमेतत् ॥ ७ ॥ यज्जीवनं विज्ञवरैः प्रमीतं सुस्वादुसर्गैरभिनन्दनीयम्। दिवाकराश्वैः सहितो रथेश ! पिबोदकं वा घृतमेव वा त्वम् ॥८॥ कौशेयसूत्रैः नितरां पवित्रैर्विनिर्मितं ग्राम्यवधूसमूहैः। राका-निशानाथविचित्रदेहं वस्त्रं मदीयं रथ धारय त्वम् ॥ ९ ॥ यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं कौशेयसूत्रैः कलितात्मरूपम्। विशिष्टतेजः परिरक्षणाय तुरङ्गसङ्ग रथ ! धारयेदम् ॥१०॥ काम्यं मनोज्ञरचनं शुभसूत्रपृक्तं देवैर्महर्षिप्रवरैरभिनन्दनीयम्। सुस्पर्शमेव मधुराकृतिलोभनीयं दत्तं मयोपवसनं रथधारयेदम् ॥ ११ ॥ त्वच्चक्रयानास्मद्भाग्यचक्रं शिवस्य मार्गे प्रहितं करोषि। स्वीकृत्य गन्धं कुरु प्रेम येन स्वर्णे सुगन्धस्य समागमं स्यात् ॥ १२ ॥ रथेश सूर्यस्य साहाय्यमेत्य धान्यस्य

प्र०

६१४

वृद्धिं कुरुषे समन्तात्। तदक्षतीभूय कृतार्थतायां पादाम्बुजे तेऽद्य समर्पयेऽहम् ॥१३॥ पद्मैरकारि कठिनं तप एव वाप्यां प्राप्नोति येन सगुणैः सहप्रीतिवासम्। पूर्णं तपोऽस्ति कलये यदिपूर्ण-चक्रिन्! गृहाणासिवाहसहितो नव पद्ममालाम् ॥ १४ ॥ समीकं शुद्धमिदं करोति समूल-मुन्मूलयति प्ररोगान्। प्रीतिं परां कण्ठगतं ददाति गृहाण काष्ठेश दलं तुलस्याः ॥ १५ ॥ हरिन्मणेः सत्वमिदं गृहीत्वा कच्छेषु वासं विदधाति सद्यः। रथे शते घोटमुखेषु गत्वा दूर्वातृणं सद्गतिमाप्नुयात्तत् ॥ १६ ॥ गन्धर्वनीतोऽसि दधासि चक्रं गतागतं देवपथे तनोषि। स्वभक्तसम्पत्तियशो विधातुमवीरसौभाग्यमिदं गृहाण ॥ १७ ॥ मन्दारपुष्यैर्बहुगन्धयुक्तं पुरामरैः स्वर्गपुरे कृतं यत्। तदेव ते स्यन्दन! तोषणाय समर्पयेऽहं बहुधूपद्रव्यम् ॥ १८ ॥ न हेमपात्रे मणयो विभान्ति न पुष्पतैलं कलयापि चक्रिन्। तथापि भक्त्येकपरो नरोऽहं स्वस्नेहदीपं च समर्पयामि ॥ १९ ॥ सुवर्णपात्रे निहितं पवित्रं सुस्वादुकर्पूरपरागगौरम्। महर्षिवृन्दैरपि नन्दनीयं नैवेद्यमेतद्रथ मे गृहाण ॥ २० ॥ मयाहितं योग्यपदं रथेश!

प्र०
६१५

तनुष्व सौख्यं विपुलं विधेहि। सर्वं विजानासि वदामि किं वा फलं गृहीत्वा सफलं कुरुष्व ॥ २१ ॥ गन्धं ददाम्यद्य करे तवामुं रथेन्द्र! देहे तव लेपनाय। तवाश्ववृन्दाय तथातिघृष्टं स्वीकृत्य सर्वे शिवमादिशन्तु ॥ २२ ॥ यज्ञस्य सिद्धिं सकलां ददाति लोभञ्च दातुर्विदधाति भूयः। सुखं गृहीतुर्विदधाति तस्माद्ददामि ते स्यन्दन! दक्षिणां ताम् ॥ २३ ॥ पुष्पैर्विचित्रैर्नवगन्धमित्रैः प्रपूरितो मेऽञ्जलिरेष साधु। भावं विधातुं सुममार्दवं ते पुनर्गृहीतुं रथ! प्रार्थये त्वाम् ॥ २४ ॥

❀ समाप्त ❀

—श्रीदौलतरामगौड
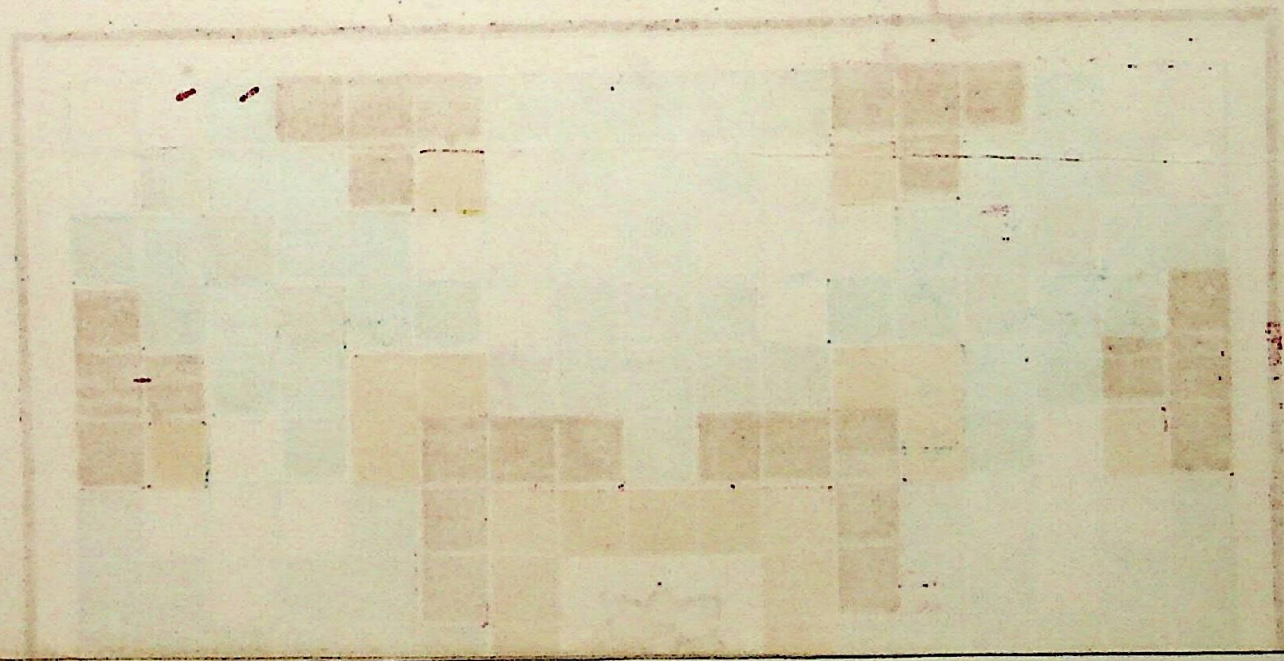
चतुर्लिंगतो भद्र चक्रम्
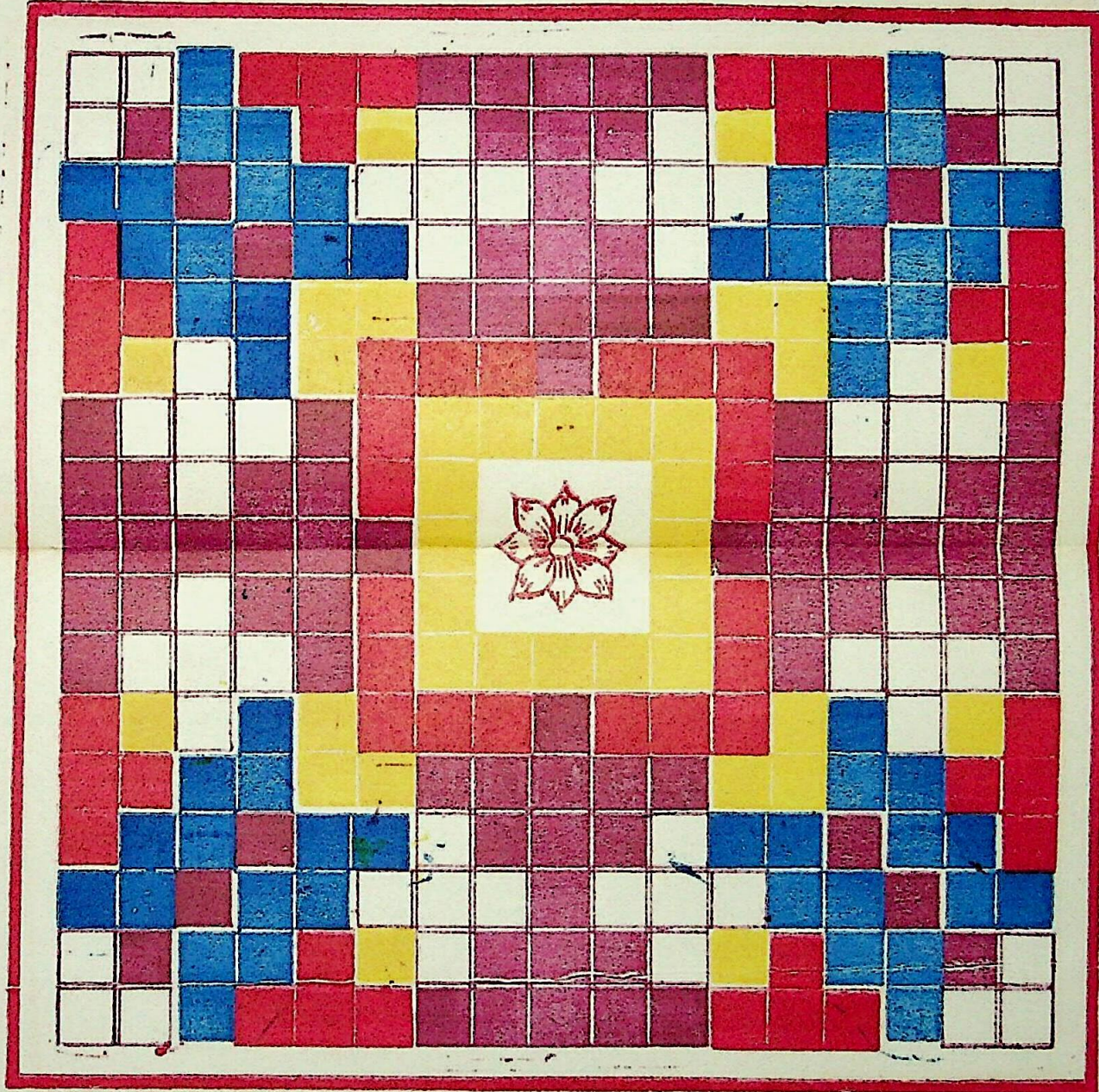
प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर, राजादरवाजा, वाराणसी।

सर्वतो भद्र चक्रम्
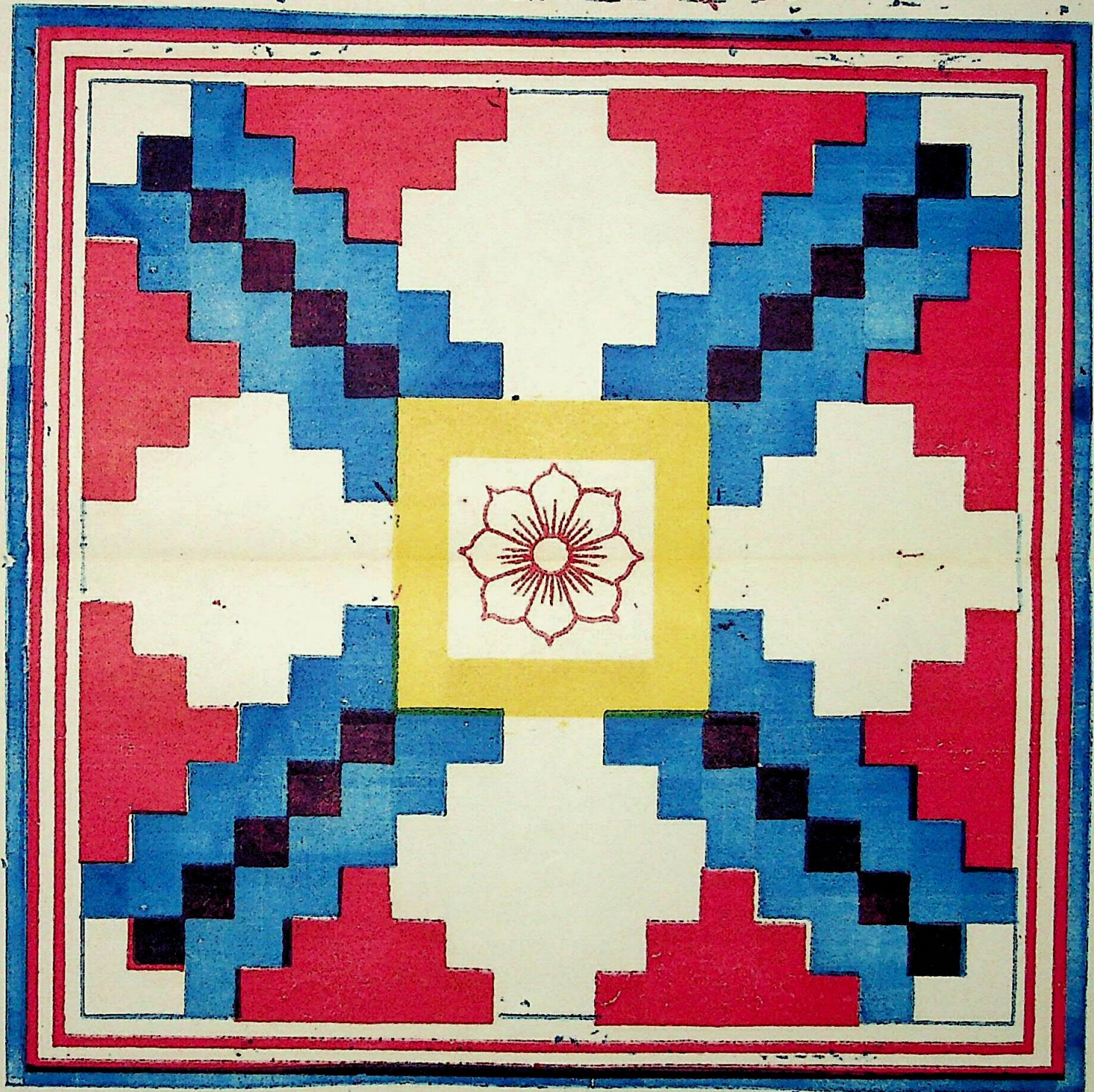
प्रकाशक-ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर, राजादरवाजा, वाराणसी।

एकलिंगतो भद्र चक्रम्
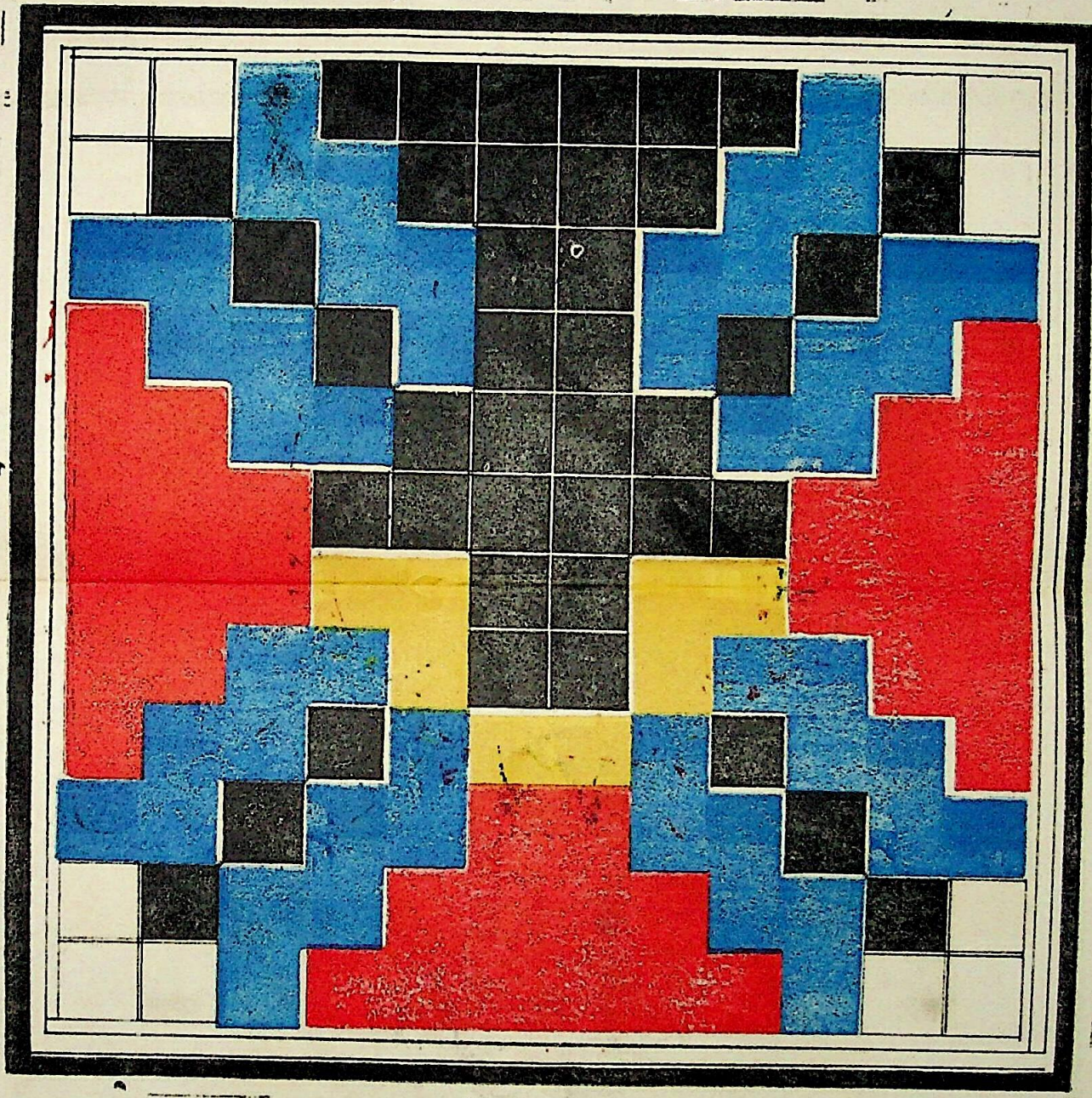
प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, राजादरवाजा. वाराणसी ।

द्वादशलिंगतोभद्रं हरिहर मंडल चक्रम्
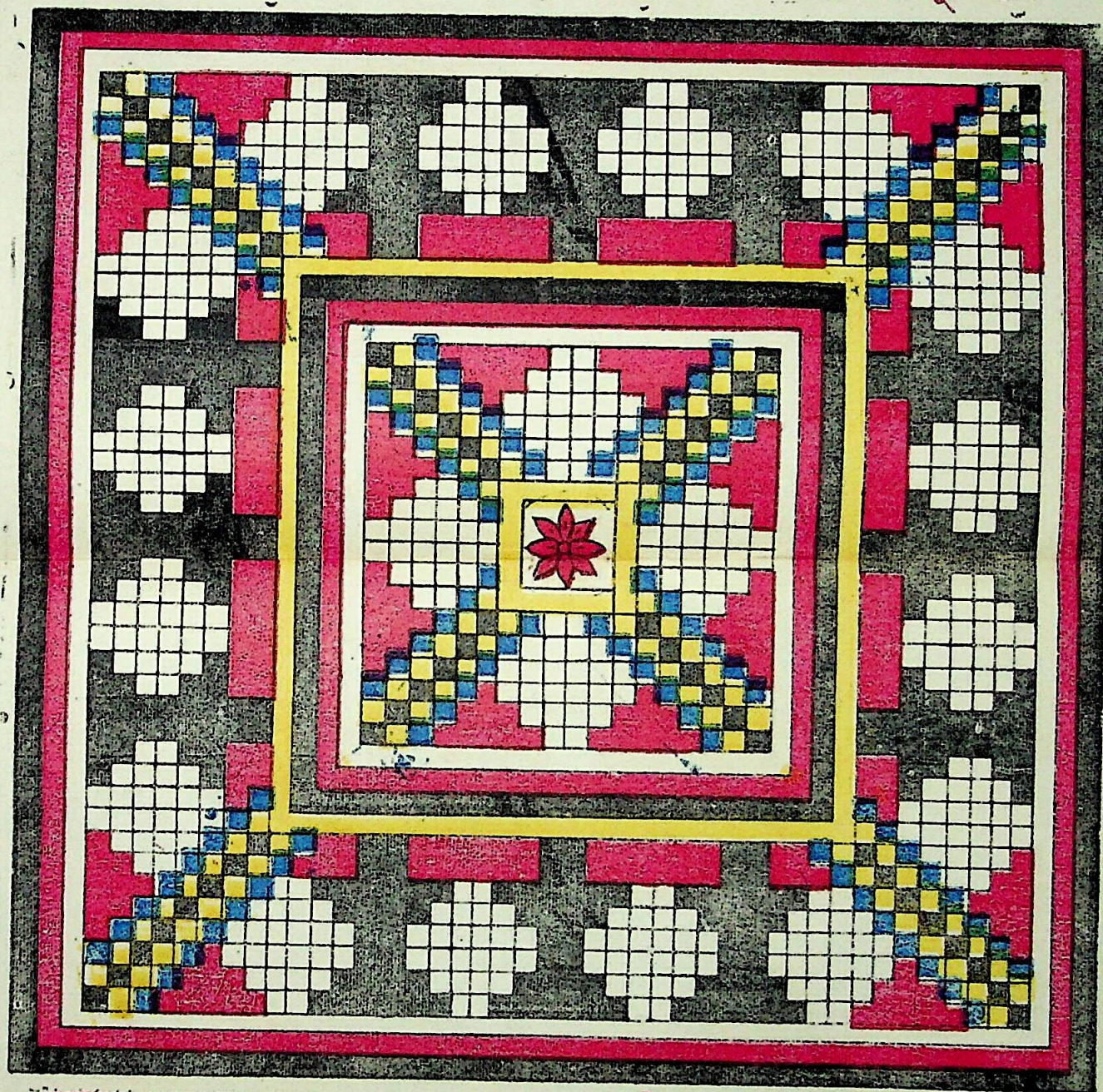
प्रकाशक—ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर, राजादरवाजा वाराणसी।

छत्तीस रेखा वाला

(हरिहरात्मक मंडल)
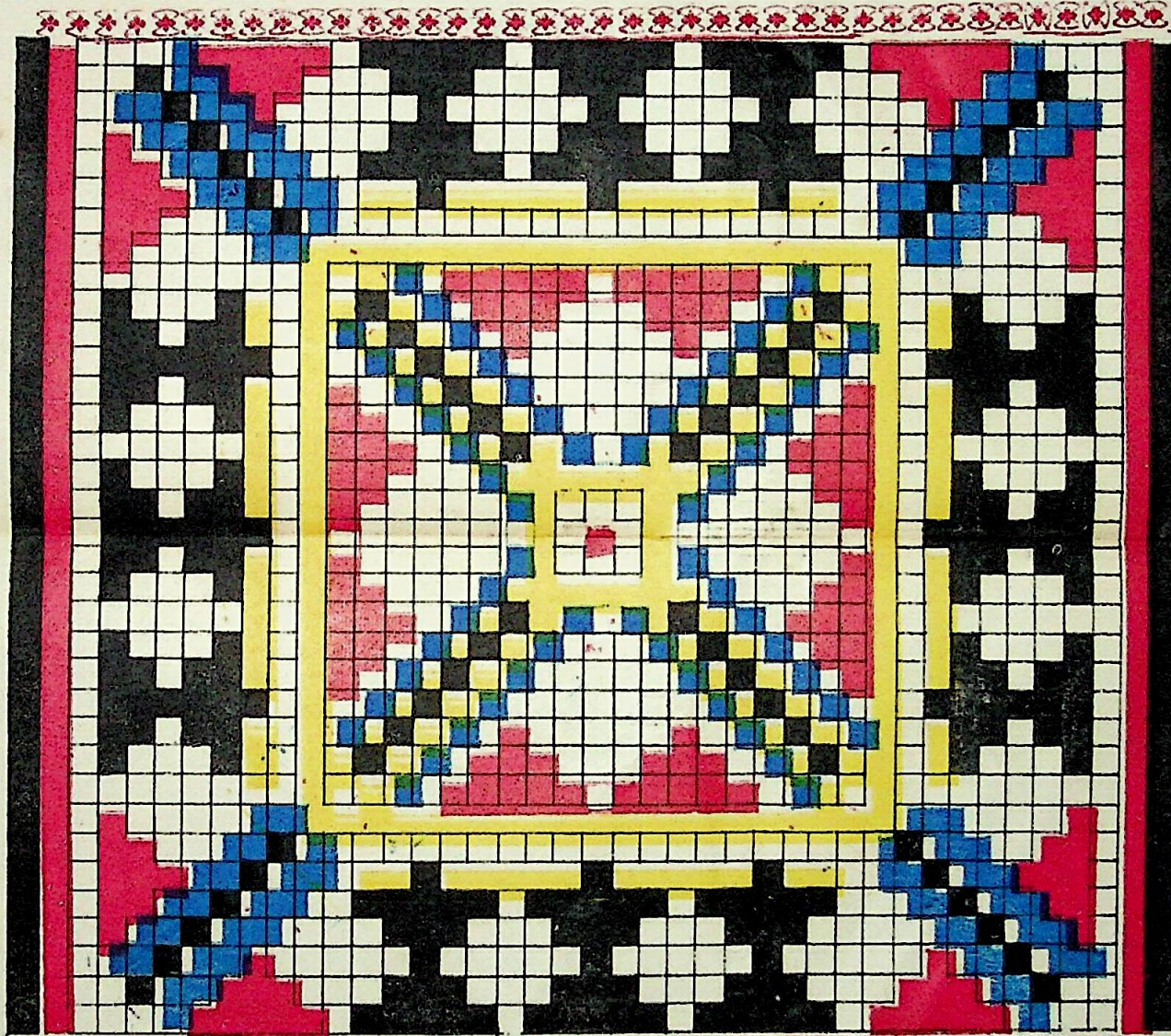
प्रकाशक–ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुकसेलर राजादरवाजा, वाराणसी

इति
श्रीप्रभु-विद्या-प्रतिष्ठार्णव
अर्थात
सर्वदेवप्रतिष्ठामयूख
(सरस्वती-भाषाटीका और चित्रों सहित)
प्रकाशकः—
ठाकुरप्रसाद एण्ड सन्स बुक्सेलर
राजादरवाजा, वाराणसी ।